309

श्रीहरिः

…द पोद्दार : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

24

…विश्वविद्यालय की पीएच.डी. उपाधि
…लिए प्रस्तुत शोधप्रबन्ध

t549
21-10-10

~~8739~~
झाँसी

शोधकर्ता
सद्गुरुशरण विद्यार्थी
एम.ए., बी.एड., बी.लिब.

…बी० लाल
…पीएच.डी., डी.लिट.
…लपति
…विश्वविद्यालय

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि "श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार: व्यक्तित्व एवं कृतित्व" विषय पर प्रस्तुत शोधप्रबंध शोधार्थी श्री सद्गुरुशरण विद्यार्थी की मौलिक रचना है तथा इन्होंने स्वयं इसके लिये शोध सामग्री उपलब्ध की है, सामग्री का वर्गीकरण और विश्लेषण किया है, शोध प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए मौलिक निष्कर्षों की उद्भावना की है तथा श्री पोद्दार जी पर प्राप्त प्रचुर प्रकाशित सामग्री की उपलब्धता में भी इस शोध प्रबन्ध की अपेक्षा एवं आवश्यकता अनुभव करने का सफल प्रयास किया है।

शोध प्रबन्ध में मापन के लिये जो मानक प्रस्तुत किये हैं, उनको श्री पोद्दार जी के साहित्य से ही खोजा गया है, तथा उन मानकों पर ही उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को आंका गया है। प्रश्नावली द्वारा सामग्री संकलन, न्यादर्शों के माध्यम से सांख्यकीय सारणीयन एवं रेखांकन आदि शोध की आधुनिक विधाओं का प्रयोग कर शोध-प्रबन्ध को शोध प्रक्रिया की दृष्टि से भी मौलिक एवं अनुकरणीय बनाया गया है।

श्री विद्यार्थी ने शोध छात्र के लिए अपेक्षित 200दिन की उपस्थिति के नियम की पूर्ति की है तथा लगभग 300दिन मेरे साथ मेरे निर्देशन में अपने शोध कार्य को पूरा किया है। मैं इनके परिश्रम तथा अध्यवसाय से सन्तुष्ट रहा हूँ। मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि यह शोध प्रबन्ध "व्यक्तित्व एवं कृतित्व" की दृष्टि से किये गये शोध कार्यों में अपनी पहचान बना रहा है और मानक के रूप में उल्लेख्य हो सकेगा।

दिनांक: 15-2-'01

निर्देशक
[illegible]
(डॉ०बी०डी०[illegible])
पूर्व कुलपति
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय

प्राक्कथन

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व
पर शोध कार्य करने के लिये जहाँ आत्मिक उत्साह था वहाँ "अभिनन्दन
ग्रंथ" तथा " कल्याण पथ:निर्माता और राही" जैसे विशाल आकार के
ग्रंथों में प्रचुर प्रकाशित सामग्री के संदर्भ में अनुत्साह भी था कि अब और
कौन सी सामग्री उपलब्ध होगी अथवा शोध कार्य के लिए मौलिकता कि
रूप में संभव होगी किन्तु इस बीच गोरखपुर वि0वि0 में संप्रस्तुत दो शोध
प्रबन्धों का संदर्भ मिला ।

[अ] श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार का भक्ति साहित्य:समीक्षात्मक अध्ययन
[डा0 कृपा बरनिया]

[आ] कल्याण सम्पादक : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार[डा0 सदानन्द गुप्त

इन शोध प्रबन्धों में पोद्दार जी के "भक्त" एवं "सम्पाद
व्यक्तित्व के अंकन का सफल प्रयास अवश्य किया गया है । इन शोध प्र
के अनुशीलन से स्पष्ट हुआ कि समग्र रूप से"व्यक्तित्व एवं कृतित्व"पर मौ
शोध कार्य करने के लिए पर्याप्त क्षेत्र है और सोत्साह इस कार्य को स
करना चाहिये ।

फिर भी अपने प्रयास में यह सावधानी रखी गई कि तथ्यों
की पुनरुक्ति न हो, किन्तु मौलिक अतिरिक्त तथ्यों का अनुशीलन एवं
किया जाय । अतएव "भक्त" एवं "संपादक" व्यक्तित्व के संदर्भ में इन शो
प्रबन्धों के निष्कर्षों को देना अनावश्यक समझा गया । ये शोध प्रबन्ध अप्रकाशि
इसलिए भी उनके निष्कर्षों का संदर्भ प्रस्तुत कर देना अपेक्षित था । अन्य
अन्यथा इस शोध प्रबन्ध के समग्र रूप के लिए तो इस सामग्री का आकलन
आवश्यक था ही ।

इतर प्रकाश सामग्री का वर्गीकरण, विश्लेषण एवं मापन कर
मौलिक तथ्यों का अनुशीलन किया गया और इस प्रकार सामग्री के

रूप में पुनरावृत्ति दोष से बचत हुई । प्रकाशित सामग्री को बाह्य एवं अन्तः साक्ष्य के रूप में प्रयुक्त करने का अवसर मिला जिससे शोध कार्य के सम्पादन में मौलिकता के साथ प्रामाणिकता का भी समाहार हुआ ।

शोध प्रबन्ध की प्रमुख अपेक्षा एवं विशेषता उसमें अपनाई गई शोध प्रक्रिया होती है । इस दृष्टि से इस शोध प्रबन्ध की अपनी पहचान बनी है तथा शोध मान दण्डों की पूर्ति हो सकी है । अपनाई गई शोध प्रक्रिया है—

— सामग्री के लिए वर्गीकरण एवं विश्लेषणकी प्रक्रिया अपनाई गई ।

— अंकित साहित्य के रूप में उपलब्ध प्रचुर पद रचना साहित्य का उपयोग पूर्वोक्त भक्ति परक शोध प्रबन्ध में हो चुका है । अतएव "रैन्डम सैम्पलिंग" की सांख्यकीय पद्धति के आधार पर सौ पदों का आकलन किया गया तथा इन 100पदों का समग्र अध्ययन प्रस्तुत किया गया जिससे प्राप्त निष्कर्ष समग्र साहित्य के लिए केवल दशमलव की श्रेणी की त्रुटियों की सीमा तक मान्य होंगे ।

इस सन्दर्भ में रेखाचित्र एवं रेखांकन के सीमित प्रयोग किये गये जिनके द्वारा आवृत्ति, तुलनात्मक न्यादर्श एवं मूल रुचि को खोज पाना संभव हुआ ।

श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अनेक कहानियाँ "भाई जी पावन स्मरण" में उपलब्ध है यह ग्रन्थ उनके निर्वाण के पश्चात् प्रस्तुत एवं प्रकाशित हुआ है । इसलिए इन कहानियों की सामग्री को निष्पक्ष एवं पूर्वाग्रह रहित माना जाना चाहिये । इसीलिए इस सामग्री को आधारभूत बाह्य साक्ष्य के रूप में प्रयुक्त किया गया है । फिर भी शोध की निश्चित रूपरेखा एवं परिकल्पना के संदर्भ में प्रश्नावली द्वारा सामग्री संकलन करना आवश्यक समझा गया । इस माध्यम से प्राप्त उत्तरावली से और भी मौलिक एवं प्रामाणिक सामग्री एवं तथ्य खोज पाना संभव हुआ है ।

श्री पोद्दार जी के साहित्य में मापन के विभिन्न न्यादर्श भी प्रस्तुत हुये हैं । अतएव भारतीय एवं इतर अन्यथा उपलब्ध मापन आदर्शों के परिपाटी क्रम में श्री पोद्दार जी के न्यादर्शों का अंकन किया गया है और उन्हीं के आधार पर श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व का मापन किया गया । यह मौलिक प्रयास अनायास ही संभव हो सका । व्यक्तित्व के सम्बन्ध में श्री पोद्दार

जी ने मानव, साधक, भक्त एवं सन्त तीन वर्गीकृत व्यक्तियों का आदर्श प्रस्तुत किया है । यह आपका मौलिक है तथा इसी आधार पर श्री पोद्दार जी के उक्त तत्व का अनुशीलन किया गया ।

श्री पोद्दार जी की "रचना प्रक्रिया एवं रचना प्रवृत्तियों को का प्रयास किया गया है । यह मौलिक चिन्तन है । इस दृष्टि से डा०सदानन्द जी के पूर्व का शोध प्रबंध "कल्याण संपादक:श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार" में इस विषय पर कार्य नहीं हुआ है । रचना प्रक्रिया एवं प्रवृत्तियों के संदर्भ सुलभ हुये और रचनाकार के रूप में श्री पोद्दार जी की छवि का अंकन हो सका ।

आत्मतोष को विनम्र निवेदन ही समझा जाय, जो इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करते हुए प्राप्त हुआ । इस विनम्र प्रयास के माध्यम से उन महात्मा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने का सुअवसर पाकर अपने को धन्य समझता हूँ । पुण्य प्रताप ही कहा जायगा कि शोध प्रबंध प्रस्तुत करने की विद्यानुमति से सदैव में संत- भगवंत चरित्र के अध्ययन-अनुशीलन करने का सौभाग्य मिला और इस आत्म कल्याण का योग सुलभ हुआ । उन साक्षात् प्रेम स्वरूप, परम भागवत, महर्षि के श्री चरणों में नतमस्तक होकर क्षमा प्रार्थना भी करता हूँ कि इस शोध संसाधन में प्रमादवश किसी प्रकार का अपराध बन पड़ा हो तो अपने क्षमा शील स्वभाव में क्षमा करें और प्रभु प्रेम का आशीर्वाद प्रदान कर कृतार्थ करें ।

शोध प्रबंध के प्रस्तुत करने में श्री पोद्दार जी से सम्बन्धित उपलब्ध प्रचुर प्रकाशित सामग्री का उपयोग किया गया है । स्वयं श्री पोद्दार जी भी अन्यान्य सामग्री के प्रस्तुत कर्ता हैं । अतएव श्री पोद्दार जी, अन्यान्य लेखकों एवं संपादकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ ।

श्री भाई जी के अभिन्न स्वरूप श्री राधाबाबा जी तथा वंदनीया माँ रामदेई जी ने इस शोध कार्य हेतु अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुये आशीर्वाद एवं संबल प्रदान करने की कृपा की है ।

श्री भाई जी की सेवा में रहने वाले [illegible] श्री कृष्णचंद जी अग्रवाल, श्री हरिकृष्ण जी दुजारी, श्री शिवकुमार जालान ने इस शोध कार्य के लिए न केवल प्रोत्साहन दिया अपितु श्री भाई जी से संबंधित प्रकाशनाधीन साहित्य जो अप्राप्य हो गया था तथा अप्रकाशित साहित्य देकर मुझे अनुगृहीत किया है । पं० श्री शिवनाथ दुबे, डॉ० पं०जानकीनाथ शर्मा, श्री श्रीसेन जी चोपड़ा, [illegible]

पंडा, श्री हरिकृष्ण जी पुजारी, श्री ने श्री भाई जी के साथ कार्य करने के समय की पुरानी एवं शिक्षाप्रद घटनायें बताकर मेरी जानकारी में वृद्धि की है, उक्त सभी अन्तेवासी सज्जनों के चरणों में कृतज्ञता पूर्वक प्रणाम करता हूँ ।

श्री भाई जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रमुख अध्येता, तथा उनके भाव लोक एवं भक्ति के सहृदय अधिकारी, भक्त चरित्र कोश के रचनाकार, परम संत महात्मा बनादास के वंशज परम श्रद्धेय डा0 भगवती प्रसाद सिंह जी ने भाई के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में तैयार की गई प्रश्नावली का निरीक्षण कर यथास्थान संशोधन करने की कृपा की थी उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करना मैं अपना पुनीत कर्तव्य मानता हूँ ।

श्रद्धेय डा0 सदानन्द जी गुप्त व डा0 कृष्णा जी बरतिया ने अपने शोध प्रबन्ध दिखाने तथा शोध निष्कर्षों सम्बन्धी उपयोगी सूचनायें देकर मुझे अनुगृहीत किया है उनके सौजन्य एवं सौहार्द के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ ।

जिन सज्जनों ने श्री भाई जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के सम्बन्ध में प्रेषित प्रश्नावली का उत्तर भेजने की भी कृपा की है मैं उनके प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ ।

इस विनम्र प्रयास में मेरे शोध निर्देशक स्वामी, आचार्यवर संतस्वभाव परम श्रद्धेय डा0 ब्रजवासीलाल जी ने अपना अमूल्य समय देकर पग-पग पर सौहार्द पूर्ण निर्देशन एवं पथप्रदर्शन प्रदान किया है जिसके अभाव में यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता था उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द और सामर्थ्य नहीं है ।

श्रद्धेय डा0 रामसकल जी [अध्यक्ष हिन्दी विभाग], दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय] ने शोध प्रबन्ध तैयार करने, मैं विषय सामग्री के वर्गीकरण एवं विश्लेषण में सहायक ग्रंथ सामग्री देकर मुझे उपकृत किया है । मैं श्रद्धेय डा0 कृष्ण जी एवं डा0 दुर्गाप्रसाद जी, डा0 रामशंकर त्रिवेदी जी ने मुझे समय-समय पर प्रेरणा एवं परामर्श

देकर अनुगृहीत किया है मैं नतमस्तक होकर इन सभी महानुभावों को वन्दन करता हूँ । और अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ इन गुरुजनों के आशीर्वाद सदा सुलभ बने रहें यही विनम्र कामना है ।

इस शोध प्रबन्ध की पाण्डुलिपि तैयार हो जाने के बाद पुनः सन्दर्भों के मिलाने, टंकण में हो गई या रह गई त्रुटियों के शुद्ध करने तथा सजाने संवारने में मेरे अनुज अरुणकुमार विद्यार्थी (एम०ए०, अंग्रेजी) तथा अम्बरीश शरण विद्यार्थी (बी०टेक) ने भरपूर सहयोग दिया है । उनके शुभ भावी एवं सुखमय जीवन हेतु श्रीभगवान् से प्रार्थना करता हूँ ।

सद्गुरुशरण विद्यार्थी
(सद्गुरुशरण विद्यार्थी)

अनुक्रमणिका (विषय)

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	प्राक्कथन	
	खण्ड I	
	श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार: व्यक्तित्व	
प्रकरण-1 (अ)	व्यक्तित्व-	
	1.1 व्यक्तित्व: परिभाषा एवं विवेचन	2
	1.2 पौर्वात्य विद्वानों का अभिमत	7
	1.3 पाश्चात्य विद्वानों का अभिमत	19
	1.4 व्यक्त एवं अव्यक्त व्यक्तित्व का स्वरूप	26
	1.5 व्यक्तित्व निर्धारण एवं नियमन तथा व्यक्तित्व के अध्ययन की कठिनाइयाँ	28
	1.6 निष्कर्ष	34
(आ)	भागवत एवं संत व्यक्तित्व-	37
	भागवत व्यक्तित्व:	
	1.1 श्रीमद्भगवद्गीता	39
	1.2 श्रीमद्भागवत	46
	1.3 वैराग्य संदीपिनी	47
	1.4 विनय पत्रिका	50
	1.5 श्रीरामचरितमानस	51
	1.6 अन्य भक्त कवियों के अनुसार संतलक्षण	62
	1.7 श्री पोद्दार जी: संतलक्षण	65

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	1.8 उपर्युक्त ग्रंथों एवं पोद्दार जी के आधार पर संत लक्षणों का तुलनात्मक विवरण	71
	1.9 निष्कर्ष	84
प्रकरण-2	बाह्य साक्ष्य एवं अंतःसाक्ष्य के आधार पर श्री पोद्दार जी का व्यक्तित्व	
	2.1 बाह्य साक्ष्य	89
	2.1.1 बाह्य व्यक्तित्व	89
	2.1.2 आन्तरिक व्यक्तित्व	91
	2.1.2.1 मानवीय विशेष गुण	91
	2.1.2.2 स्वभाव	101
	2.1.2.3 व्यवहार	103
	2.1.3 समग्र व्यक्तित्व	104
	2.1.3.1 मानव	106
	2.1.3.2 साधक	110
	2.1.3.3 भक्त	111
	2.1.3.4 सन्त	114
	2.2 अन्तःसाक्ष्य	118
	2.2.1 आत्मग्लानि	119
	2.2.2 मनोराज्य	123.
	2.2.3 प्रपत्ति	125
प्रकरण-3	श्री हनुमानप्रसाद जी का व्यक्तित्व	
	3.0 निर्माण की भाव भूमि एवं संस्कार	129
	3.1 पूर्वज एवं वंशपरम्परा	129

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	3.2 शिक्षा-दीक्षा	135
	3.3 विवाह	138
	3.4 विकास की युगीन परिस्थितियाँ	142
	3.5 कर्मकाण्ड की केन्द्रीभूत प्रेरणायें एवं मान मूल्य	148
	3.6 वेशभूषा-आरसिकता के वर्तमान स्वरूप	156
प्रकरण-4	मानव कर्मकाण्ड	
	4.1 विषय प्राक्कथन	165
	4.2 देश सेवा	167
	4.3 समाज सेवक	178
	4.4 समाज सुधारक	185
	4.5 आदर्श गृहस्थ	195
प्रकरण-5	साधक कर्मकाण्ड	
	5.0 विषय प्राक्कथन	198
	5.1 पाठ	201
	5.2 ध्यान	202
	5.3 संवेदन	202
	5.4 साधना हेतु गुरु की प्राप्ति	203
	5.5 ध्यान साधना सूत्र	204
	5.6 साधना की क्रियाशीलता	206
	5.7 साधना बाधा	210

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
प्रकरण-6	<u>भक्त एवं संत व्यक्तित्व</u>	
	6.1 संत का स्वरूप	213
	6.2 भगवन्नाम प्रचार	218
	6.3 आचरण परक तीर्थयात्रा एवं विशाल मंदिरों का निर्माण एवं जीर्णोद्धार	224
	6.4 धर्मगत स्थिति	227
	6.5 स्वभावगत स्थिति	235
	6.6 प्रभावगत स्थिति	249
	6.7 निष्कर्ष	258
प्रकरण-	<u>जीवन का सामान्य क्रम</u>	262
	– स्वास्थ्य व्यतिक्रम संबंधी विवरण	264
	– संयोगों की विभिन्न परिस्थितियाँ	265
	– राजनीतिक गतिविधियाँ	266
	– धार्मिक प्रचार-प्रसार	268
	– साधनात्मक उपलब्धियाँ	271
	– विविध सेवाकार्य	275
	खण्ड <u>II.</u>	
	<u>श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी का कृतित्व</u>	
प्रकरण-7	<u>कृतित्वगत विधा विभाग</u>	
	7.1 पद्य साहित्य	282
	7.2 गद्य साहित्य	282
	7.3 कृतियों के नाम एवं संक्षिप्त परिचय	283

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	7.4 भाव एवं तत्व चिन्तन	290
प्रकरण-8	कृतित्व किंवा प्रकाशित व्यक्तित्व	
	8.1 सम्पादन	296
	8.2 सम्पादन के आदर्श एवं मान	301
	8.3 टीका	307
	8.4 संशोधन	307
	8.5 साहित्य साधना की उपलब्धि	307
	8.5.1 प्राचीन धर्म ग्रन्थों का प्रकाशन	308
	8.5.2 भारतीय संस्कृति का पुनरुद्धार	310
	8.5.3 राष्ट्रभाषा की समृद्धि	311
	8.5.4 कम मूल्य पर प्रकाशन	312
प्रकरण-9	रचना प्रक्रिया	
	9.1 बाह्य साक्ष्य	320
	9.2 बाह्य प्रेरणा उपादान	323
	9.3.1 रचना प्रक्रिया	342
	9.3.2 रचना हेतु एवं प्रयोजन	344
	9.3.3 श्रीपोद्दार जी का काव्यादर्श	351
	9.4 रचना प्रवृत्ति	354
	9.5 लिपिका अध्ययन	365
प्रकरण-10	शब्दानुशीलन	
	पद रत्नाकर के सौ (रैण्डम सैम्पलिंग के आधार पर) पदों का विवरण	367

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	10.2 आख्यात रूपों का अर्थ परक विवेचन	377
	10.2.1 पूर्व व्युत्पादक आख्यात रूप पद	377
	10.2.2 पर व्युत्पादक आख्यात रूप	380
	10.3 क्रिया एवं क्रिया रूप	383
प्रकरण-11	<u>सांख्यिकीय अध्ययन</u>	
	11.1 शब्दानुशीलन, शब्द प्रयोग आवृत्ति	394
	11.2 कल्याण विशेषांक विवरण	397
	11.3 <u>पद रत्नाकर</u>-	
	-पद पंक्ति संख्या	400
	-पद के प्रथम शब्द के अनुसार पद संख्या	405
	-पद सम्बोधन	408
	11.4 -राग आवृत्ति	410
	11.5 आरती	414
	11.6 गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण	416
	<u>उपसंहार</u>	
	<u>पर्यावरण</u>-	
	श्री पोद्दार जी के पर्यावरण का प्रभाव.	420
	पर्यावरण मापन तथा मूल्यांकन.	421
	पर्यावरण की उपसंहृति.	422

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	कृतित्व-	
	तकनीकी अंग.	431
	विशेषतायें.	431
	प्रभावली-	432
	इस युग को उनकी देन.	432
	समाज/राष्ट्र पर प्रभाव.	433
	उनके किन कार्यों को पूरा किया जाय.	433
	उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि.	434
	समसामयिकता.	434
	सीमितताएँ-	435
	प्रामाणिक जीवन कालक्रम एवं घटनाक्रम.	435
	रचनाकाल साधन, निर्धारण.	436
	प्रश्नावली प्रयोग.	436
	विवादास्पद बिन्दु निर्णय.	436
	कृतित्व-रचना प्रक्रिया, अध्ययनशीलता.	436
	लिपिका अध्ययन, वैज्ञानिक, विश्लेषण, सारणीयन.	436
	-अनुगामी शोध दिशायें तथा शोधार्थी की अपेक्षा आपूर्ति, स्वीकृतियाँ.	437

प्रकरण संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	<u>परिशिष्ट</u>	
	प्रश्नावली.	440
	प्रश्नावली का विश्लेषण.	446
	साक्षात्कार सूची.	471
	वंश वृक्ष.	472
	जीवन धारा क्रम.	473
	सहायक ग्रन्थ सूची.	491

<u>रेखांक अनुक्रमणिका</u>

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1-	आवृत्ति (शब्द प्रयोग)	395
2-	अध्याय विशेषांक (पृष्ठ एवं प्रकाशित प्रतियाँ)	398
3-	पद पंक्ति संख्या	401, 402.
4-	पद के प्रथम शब्द के अनुसार पद संख्या	406
5-	पद सम्बोधन	409
6-	राग आवृत्ति	411
7-	छहों रागों का प्रतिशत	413
8-	आरती	415
9-	गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण	418

चित्रांकन

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	श्री पोद्दार जी का चित्र	0
2.	भागवत व्यक्तित्व	86
3.	भाई जी की अतुल सम्पत्ति	280
4.	पोद्दार जी की लिपि	364
5.	पत्र पुष्प	472

हनुमानप्रसादः व्यक्ति

प्रकरण-1 (अ)

व्यक्तित्व

1.1 - व्यक्तित्व-परिभाषा एवं विवेचन

1.2 - पौर्वात्य विद्वानों का अभिमत

1.3 - पाश्चात्य विद्वानों का अभिमत

1.4 - व्यक्त एवं अव्यक्त व्यक्तित्व का स्वरूप

1.5 - व्यक्तित्व निर्धारण एवं नियमन तथा व्यक्तित्व के अध्ययन की कठिनाईयाँ

1.6 - निष्कर्ष

शब्द "व्यक्ति" "व्यक्त" शब्द से बना है । "व्यक्त" का अर्थ है "प्रकट" तथा "व्यक्ति" का अर्थ है व्यक्त होने की क्रिया या भाव । इसका दूसरा अर्थ है मनुष्य या किसी और शरीरधारी का शरीर, जिसकी पृथक् सत्ता मानी जाती है । "व्यक्ति" शब्द में त्व प्रत्यय लगाने से शब्द व्यक्तित्व बनता है जिसके अर्थ हैं (1) व्यक्ति का गुण या भाव (2) वे विशिष्ट गुण, जिनके कारण किसी व्यक्ति की स्पष्ट और स्वतन्त्र सत्ता सिद्ध होती है ।[1]

1.1 व्यक्तित्व – परिभाषा एवं विवेचन :-

हिन्दी शब्द "व्यक्ति" का समानार्थी अंग्रेजी शब्द "परसन" (Person) है । इस शब्द से "परसनालिटी" शब्द बना है । परसनालिटी और परसन का स्रोत लैटिन भाषा का शब्द "परसोना" माना जाता है । परसोना का अर्थ होता है मुखौटा या नकाब अथवा वेशभूषा। प्राचीनकाल में अभिनेता अभिनय करते समय मुखौटा लगाते थे पात्र के कार्य के अनुसार वेशभूषा भी धारण की जाती थी इन्हें "परसोना" कहा जाता था । प्रो० जी०डब्लू० आलपोर्ट ने लिखा है कि सिसरो (106-43 ई०पू०) ने परसोना शब्द का प्रयोग चार अर्थों में किया है । (1) जैसाकि एक व्यक्ति दूसरे के सम्मुख प्रतीत होता है किन्तु वास्तव में वैसा नहीं होता (2) किसी व्यक्ति के जीवन का कार्य जो उसके व्यक्तित्व का परिचायक हो । (3) व्यक्तिगत गुणों का वह समूह जो किसी व्यक्ति और उसके कार्य को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जा सकता है । (4) महत्ता तथा गौरव ।

इन चारों अर्थों में मुखौटे (परसोना) के विभिन्न पक्षों का समावेश हो जाता है ।

---

(1) संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर -- रामचन्द्र वर्मा पृ0 1086.

परसनालिटी पर अध्ययन प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से प्रारम्भ हो गया था। केम्फ ने इसको परिभाषित करते हुए लिखा है "व्यक्तित्व आदत की उन व्यवस्थाओं का समन्वय है, जो वातावरण के साथ व्यक्ति के विशिष्ट अभियोजन का प्रतिनिधित्व करता है।"[1]

वर्ष 1924 में मार्टिन प्रिन्स ने अपनी पुस्तक "दि अनकान्शस" में "व्यक्तित्व को, व्यक्ति की सभी जैविक जन्मजात विन्यास, उद्वेगों, रुझानों, क्षुधाओं मूल प्रवृत्तियों तथा अर्जित विन्यासों एवं प्रवृत्तियों को योग कहा है।[2]

वैलेन्टाइन ने परसनालिटी (व्यक्तित्व) को जन्मजात एवं अर्जित प्रवृत्तियों का योग बताया था।[3]

काज और शैंक के द्वारा परसनालिटी (व्यक्तित्व) को परिभाषित करते हुए कहा है कि "व्यक्तित्व एक ऐसा प्रत्यय है जिसके अन्तर्गत व्यक्तित्व की सभी विचारात्मक संवेगात्मक एवं गत्यात्मक प्रतिक्रियायें तथा इन प्रतिक्रियाओं का संगठन सम्मिलित है।"[4]

---

1. Personality is the integration of those systems of habits that represent one individual's characterisfic adjustments t his environment. - Kempf

2. Personality isthe sum total of all the biological innate disporitions, impulses, tendencies, appetites and instincts of the individual, and the acquired dispositions and tenden- cies acquired by experience.
- Morton Prince. The unconscious, 2nd ed. 1924.

3. It is "the sum-total of innate and acquired disposition
- Valentine.

4. Personality is the concept under which we subscribe the individual's characteristic ideational, emotional and motor reactions and the characteristic organisation of these reponses. - Katz and Shanck.

वारेन तथा कारमाइकेल के अनुसार "व्यक्ति के किसी अवस्था पर उसके सम्पूर्ण संगठन को व्यक्तित्व कहते है ।[1]

जे०टी० मैकर्डी ने व्यक्तित्व को परिभाषित करते हुये कहा है कि "व्यक्तित्व रुचियों का वह समाकलन है जो जीवन के व्यवहार में एक विशेष प्रकार की प्रवृत्ति उत्पन्न करता है ।"[2]

ए० गैसेल के अनुसार, "व्यक्तित्व वह व्यापक अतिप्रतिमान है जो जीवन के व्यक्तिगत व्यवहार की विशेषता में निहित समाकलन को व्यक्त करता है ।"[3]

जी०डब्लू० आलपोर्ट के शब्दों में "व्यक्तित्व , व्यक्ति की उन मनोदैहिक व्यवस्थाओं का वह आंतरिक गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसके अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता है।"[4]

एच०जे० आइजेन्क के अनुसार "व्यक्तित्व, व्यक्ति की अभि-प्रेरणात्मक व्यवस्थाओं का सापेक्ष रूप से वह स्थिर संगठन है जिसकी उत्पत्ति जैविक अन्तर्नोदों सामाजिक तथा भौतिक वातावरण की अंतःक्रिया के फलस्वरूप होती है ।"[5]

---

1. Personality is "the entire organisation of a human being at any stage of his development." - H.C. Warren and Carmichael

2. Personality is an integration of patterns (interests) which gives a peculiar individual trend to the behavior of the organism. - J.T. Mac Curdy.

3. Personality is the pervasive super pattern which expresses the integrity and the characteristic behavioural individuality of the organism. - A Gesell.

4. Personality is the dynamic organisation within the individu of those psycho-physical systems that determine his unique adjustments to his environment. - G.W. Allport.

5. Personality is the relatively stable organization of a pers 's motivational despositions, arising from the interaction between biological drives and social and physical environment. - H.J. Eysenck. (1970).

व्यक्तित्व के अर्थ के बारे में मनोवैज्ञानिकों में मतैक्य नहीं है । उक्त प्रमुख परिभाषाओं के अतिरिक्त भी अनेक विद्वानों ने व्यक्तित्व को परिभाषित किया है । जिनमें व्यक्तित्व के भिन्न-भिन्न पक्षों पर बल दिया गया है । सुविधा की दृष्टि से इन परिभाषाओं को निम्नांकित चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है ।

(1) संग्राही

(2) समाकलनात्मक

(3) सोपानिक

(4) समायोजनात्मक

(1) संग्राही : संग्राही परिभाषाओं के वर्ग में उनको रखा जाता है जो व्यक्तित्व की समस्त अनुक्रियाओं प्रतिक्रियाओं एवं जैविक गुणों आदि के समुच्चय पर बल देती है । इस वर्ग में मार्टन प्रिन्स और कैम्फ तथा वेलन्टाइन द्वारा दी गई परिभाषाएँ आती है ।

(2) समाकलनात्मक : समाकलनात्मक परिभाषाओं में व्यक्तित्व के समाकलन को केन्द्र माना जाता है इनके अनुसार व्यक्तित्व विभिन्न प्रवृत्तियों का योग मात्र नहीं वरन उनके एकत्र किये जाने में उनमें एक प्रकार का जो समाकलनात्मक तत्व निहित रहता है वही उसमें विशेषता उत्पन्न करता है इस वर्ग में वारेन तथा कारमाइकेल, मैकिगकेन, काज एवं शैक तथा आइजनेक द्वारा दी गई परिभाषाओं को गिना जाता है ।

(3) सोपानिक : विलियम जेम्स तथा कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ सोपानो का वर्णन किया है। विलियम जेम्स ने व्यक्तित्व के प्रथम "स्व" के भौतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं शुद्ध अहं नामक चार सोपानो के रूप में विकास का क्रम दिया है ।

(5) समायोजनात्मक : इस वर्ग में उन परिभाषाओं को रखा जाता है जिनमें समायोजन पर ध्यान केन्द्रित किया गया है इस वर्ग में जी0डब्लू0 आलपोर्ट द्वारा दी गई परिभाषा रखी जाती है ।

मनोविज्ञान का उद्गम स्थल दर्शन है । विश्व के सभी दर्शनों में मनोविज्ञान सम्मिलित था । विज्ञान के विकास के साथ ही भौतिकवादी दृष्टिकोण बदलता गया और मनोविज्ञान ने अपना दार्शनिक आधार छोड़ना प्रारम्भ कर दिया । पहले मनोविज्ञान में आत्मा (सोल) की प्रधानता थी लेकिन सत्रहवीं शताब्दी में आत्मा को एक दार्शनिक एवं धार्मिक विषय कहकर उसके स्थान पर मन (माइण्ड) को ग्रहण किया जाने लगा । मनोविज्ञान का मूल स्रोत दर्शन होने के कारण मनोविज्ञान का इतिहास सत्रहवीं शताब्दी तक दर्शन का इतिहास ही है । सत्रहवीं शताब्दी में पहलीबार "साइकोलाजी" शब्द का प्रयोग हुआ है । पश्चिम के मनोवैज्ञानिक शरीर और मन के अविच्छिन्न सम्बन्ध को मानते हैं किन्तु मन से परे भी कुछ है इसके बारे में दृढ़तापूर्वक कहने में समर्थ नहीं हो पा रहे हैं । "ब्रेट का अमरग्रंथ "हिस्ट्री आफ साइकोलाजी" (मनोविज्ञान का इतिहास) तीन भागों में प्रकाशित हुआ था । पहला भाग सन् 1912 में तथा दूसरा व तीसरा भाग वर्ष 1921 में प्रकाशित हुए । पहले भाग के अठारहवें अध्याय में ब्रेट ने भारतीय मनोविज्ञान का उल्लेख किया है । उन्होंने वेदान्त, सांख्य, न्याय और वैशेषिक तथा बौद्ध दर्शनों में भारतीय मनोविज्ञान के स्वरूप पर प्रकाश डाला है ।"[1]

आधुनिक मनोविज्ञान में वैज्ञानिक प्रणाली के प्रभाव के कारण उन तथ्यों को विशेष महत्व दिया जाता है जिन्हें प्रयोग द्वारा सिद्ध किया जा सके आधुनिक मनोविज्ञान वस्तुनिष्ठता पर बल देता है । भारतीय चिन्तन में आत्मानुभूति और अन्तःकरण तथा ऐसी व्यक्तिनिष्ठता को

---

(1) मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा - डा0 सीताराम जायसवाल पृ0 4

ऋषियों के सूक्ष्म जीवन और चिन्तन पर आधारित है परन्तु निष्ठता से अधिक मान्य है । जीवन के दो पक्षों, अंतः और बाह्य में से अंतःपक्ष की प्रधानता भारतीय मनोविज्ञान की विशेषता है । भारतीय चिन्तन में "दर्शन ही जीवन है" की प्रधानता है । भारतीय दृष्टिकोण से दर्शन और जीवन एक है जब हम जीवन का अध्ययन करते हैं तब दर्शन का अध्ययन स्वाभाविक रूप से आवश्यक हो जाता है । भारतीय दर्शन आदर्शवाद की ओर उन्मुख है उसकी एक महत्वपूर्ण मान्यता अनेक में एक के देखने की है । भारतीय मनोविज्ञान शरीर और मन से आगे जाकर आत्मा के बारे में भी विचार करता है । जीवन का ध्येय है अपने आपको पहचानना अपने वास्तविक स्वरूप को जानना और अपने ईश्वरत्व को अनुभव करना । ईश्वर और कहीं नहीं, हमारे भीतर है, तथा इससे भी आगे बढ़कर हमीं ईश्वर है भारतीय मनोविज्ञान के अन्तर्गत "व्यक्तित्व" के अध्ययन में इस मान्यता को भी प्रधानता रही है ।

1.2. ऋग्वेदीय पुरुष सूक्त के प्रथम चार मंत्रों में किया गया पुरुष संबंधी वर्णन, मनोविज्ञान की दृष्टि से महत्वपूर्ण है । पुरुष अनन्त शक्ति सम्पन्न तथा सर्वत्र व्याप्त है अभी तक जो कुछ हुआ है और भविष्य में जो कुछ होगा वह सब पुरुष ही है संसार की रचना पुरुष ने की है इस कारण उस पर काल का प्रभाव पड़ता है किन्तु वह स्थायी नहीं होता है जब पुरुष को नानात्व की प्रतीत होती है तब उसे अपने स्वरूप की विस्मृति हो जाती है । यहाँ मन के कार्य कलाप यानी कामक्रोध रागद्वेष आदि आ जाते हैं । पाँचवे मंत्र में "पुर" शब्द आया है । पुर शब्द के अर्थ है निवास, रक्त, मांस आदि से निर्मित शरीर जिसमें मन और आत्मा का निवास है ।

वेदों में आत्मन्‌(आत्मा)शब्द आया है और वह प्रायः तीन अर्थों में प्रयुक्त हुआ है (1)शरीर की जीवन शक्ति का सूचक(2)सम्पूर्ण व्यक्ति और उसके शरीर के अवयव इन्द्रियाँ तथा वाणी और(3)आत्मन्‌ या स्वयं

का निज साधक अहंनाम । इस विवरण में व्यक्तित्व का मूल स्रोत हमें प्राप्त होता है । कठोपनिषद् के अध्याय 1 की तृतीय वल्ली में शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा और इन्द्रियों का वर्णन रथ के रूपक द्वारा करते हुये शरीर को रथ, इन्द्रियों को रथ के अश्व, मन को लगाम, बुद्धि को सारथी तथा आत्मा को रथी कहा है । इन्द्रिय के विषयों को मार्ग के रूप में स्वीकार करते हुये शरीर इन्द्रिय एवं मन से युक्त आत्मा को भोक्ता कहा है ।[1]

आत्मा रथी शरीर रथ, बुद्धि सारथी जान ।
मन रस्सी हय इन्द्रियाँ, मार्ग विषय पहिचान॥

इस रूपक से प्रकट होता है कि शरीर, बिना इन्द्रियों के निष्क्रिय रहेगा। इन्द्रियों से ही उसे ऊर्जा और गति मिलती है इन्द्रियाँ, मन के आदेश का अनुसरण करती है बुद्धि रूपी सारथी मन को अपेक्षित दिशा देता है । जब आत्मा का सम्बन्ध शरीर इन्द्रियों मन और बुद्धि से होता है तब उसके द्वारा संकल्प-विकल्प आदि से सम्बन्धित मानसिक क्रियाएँ होती है तथा बाद में उनकी अभिव्यक्ति कार्य व्यवहार में होती है । इन्द्रियाँ स्थूल जगत से सम्बन्धित है इनके विषय (शब्द स्पर्श रूप, रस और गंध) सूक्ष्म हैं । मन इनसे भी अधिक सूक्ष्म है । बुद्धि, मन की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म है और इन सबसे सूक्ष्म आत्मा है । अपने शुद्ध रूप में आत्मा सांसारिक कार्यों एवं व्यवहारों से सम्बन्ध नहीं रखती । कार्य और व्यवहार के लिए शरीर और आत्मा के बीच इन्द्रियों मन और बुद्धि का सक्रिय होना आवश्यक हो जाता है । इसके साथ इनके बारे में यह भी विचारणीय तथ्य है कि

---

(1) आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु ।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ॥ 1/3/3
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयान् तेषु गोचरान् ।
आत्मेन्द्रिय मनो [युक्तं] भोक्तेत्या हुर्मनीषिणः 1/3/4
कठोपनिषद्, अध्याय 1 वल्ली 3 श्लोक 3-4

शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि और आत्मा का सम्बन्ध स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्मतर की ओर अग्रसर होता जाता है ।

भारतीय मनोविज्ञान शरीर, इन्द्रिय और मन से आगे बुद्धि और आत्मा का भी अध्ययन करता है ब्रह्म व्यक्तित्व के क्षेत्र में बुद्धि और आत्मा का भी समावेश करता है । इन्द्रियाँ बहिर्मुख हैं उनको रास (मन) नियंत्रण में रखता है । रास, बुद्धि (सारथी) के हाथ में रहती है । इसलिये आवश्यक है कि व्यक्ति बुद्धि (विवेक) से इन्द्रियों को सम्यक् रूप से नियंत्रित करके उन्हें आत्मज्ञान की उपलब्धि के लक्ष्य की ओर प्रेरित करें । "आत्मा को अणु से भी अणुतर तथा महान् से भी महत्तर कहते हुये उसे जीव की हृदय गुहा में स्थित बताया गया है । निष्काम पुरुष अपनी इन्द्रियों के प्रसाद से आत्मा की महिमा को देखता है और शोक रहित हो जाता है ।"[1] अर्थात् आत्मा को जान लेने पर व्यक्ति शोक रहित अवस्था को प्राप्त कर लेगा । इसके लिए उसे निष्काम भाव से इन्द्रियों को कार्य में लगाना होगा । इसी को निष्कर्म योग कहा गया है । यह पूर्ण व्यक्तित्व वाले व्यक्ति का कार्य क्षेत्र एवं लक्ष्य इंगित करता है ।

माण्डूक्योपनिषद् के आगम प्रकरण में आत्मा ही को ब्रह्म बताते हुये आत्मा को चार पादवाला कहा गया है ।[2] प्रथम पाद वैश्वानर द्वितीय पाद तैजस, तृतीयपाद प्राज्ञः तथा चतुर्थपाद शिवस्वरुप तुरीय

---

(1) अणोरणीयान्महतो महीयान्-
आत्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम्
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको
धातु प्रसादान्महिमानमात्मनः ।।
कठोपनिषद् 1/2/20

(2) सर्वं ह्येतद् ब्रह्मायमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा चतुष्पात् ।।
माण्डूक्य उपनिषद् 1-2.

अवस्था कही गयी है । वैश्वानर को स्थूल विषयों का भोक्ता, तैजस् को सूक्ष्म विषयों का भोक्ता कहा गया है वैश्वानर का स्थान जागृत अवस्था है, जबकि तैजस् का स्थान स्वप्न अवस्था कही गयी है दोनों को सात अंगों वाला तथा उन्नीस मुख वाला बताया गया है प्राज्ञ का स्थान सुषुप्ति अवस्था है, जहाँ आनन्द की अवस्था है । चौथे पद का वर्णन वाणी द्वारा अशक्य कहा गया है इस अवस्था में आत्मा तुरीय में निवास करती है । यहाँ मुख्य बात जिसका संकेत करना है वह यह है कि प्रथम पाद वैश्वानर तथा द्वितीय पाद तैजस् जो क्रमशः जागृत एवं स्वप्न अवस्था के स्थान हैं तक ही पाश्चात्य की मनोविज्ञान की पहुँच हो सकी है । अभी स्वप्न अवस्था को पूरी तरह समझा नहीं जा सका है । भारतीय मनोविज्ञान जिसका आधार दर्शन है, इससे आगे जाता है । भारतीय विचारधारा में पूर्णता प्राप्त व्यक्तित्व का क्षेत्र जागृत और स्वप्न अवस्था से आगे जाता है ।

तैत्तरीय उपनिषद् में आत्मा का वर्णन करते हुये ब्रह्मानन्द वल्ली के प्रथम पाँच अनुवाकों में अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञान मय कोश तथा आनन्दमय कोश का उल्लेख किया गया है । अन्नमय कोश का आकार पुरुषाकार है । इसके भीतर प्राणमय कोश है इसका आकार भी पुरुषाकार बताया गया है प्राणमय कोश के भीतर मनोमय कोश है इसका अधिष्ठाता मन है जो संकल्प-विकल्प वाला है । मनोमय कोश भी पुरुषाकार है । मनोमय कोश के भीतर आत्मा ~~विज्ञानमय है आत्मा~~ विज्ञानमय है । विज्ञान मय कोश भी पुरुषाकार है । विज्ञानमय कोश का अधिष्ठाता निश्चयात्मिका बुद्धि है इसके भीतर आनन्दमय आत्मा है जिसका आकार भी पुरुषाकार है । यह परम आनन्द का स्थान है । इन कोशों में अन्नमय स्थूल इसी को प्राप्त कर लेना व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की स्थिति मानी गयी है । पश्चिमी मनोवैज्ञानिक मनोमय कोश की स्थिति तक का अध्ययन कर सके हैं ।

यह दर्शन जो असीम सत्ता के प्रति है: दृष्टि कोण है । उपनिषदों में स्पष्ट दर्शन के निश्चित रूप है इनमें पर्याप्त साम्य है अन्तर केवल व्याख्या और स्पष्टीकरण में प्रकट होता है।योगदर्शन के प्रणेता ऋषि पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों के निरोध को ही योग कहा है ।[1] जब चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है तब आत्मा और परमात्मा दोनों एक हो जाते हैं । योगशास्त्र में चित्त की त्रिगुणा-त्मक प्रवृत्ति के कारण पाँच क्लेश तथा अनेक परिणाम होते हैं । इन सब परिणामों से मुक्ति उस समय मिलती है जब पुरुष और बुद्धि में पूर्ण साम्य हो जाता है । पुरुषार्थ शून्य गुण जब अपने कारण में लय हो जाते हैं तब कैवल्य प्राप्त होता है, चैतन्य शक्ति (पुरुष) का अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित होना मोक्ष है ।[2] यही मनुष्य का अंतिम लक्ष्य है । इसी में व्यक्तित्व की पूर्णता है योग के आठ अंग है यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि । व्यक्तित्व के अंग शरीर और मन को उचित अवस्था में रखते हुये उनको जीवन के लक्ष्य कैवल्य प्राप्ति की ओर ले जाने के लिए आठ सोपान हैं ।

श्रीमद् भगवद्गीता के चौदहवें अध्याय में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन के प्रति कहा है व्यक्ति जो कुछ भी करता है उस पर सत्व रज तम गुणों का प्रभाव रहता है किसी कार्य में सतोगुण प्रधान रहता है तो किसी में रजोगुण की और किसी में तमोगुण की प्रधानता रहती है । जब सतोगुण का प्रभाव अधिक होगा तो देह और अन्तःकरण एवं इन्द्रियों में ज्ञान का प्रकाश एवं चैतन्यता होगी कार्यों में दूसरों की भलाई की पर सेवा का भाव बढ़ा हुआ होगा स्वार्थ का अभाव होगा । जब रजोगुण की प्रधानता होगी तो सब कर्मों में लोभ की प्रवृत्ति बढ़ीहुई होगी मन की चंचलता बढ़ जायेगी वह विषय भोगों की ओर आकर्षित होगा और तमोगुण की प्रधानता होने

[1] योग चित्तवृत्ति निरोध – योगदर्शन, समाधि पाद, 1/2.

[2] पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं ।
स्वरूप प्रतिष्ठा वा चित्त शक्तिरिति ।। योगदर्शन 4/34.

की दशा में कर्तव्य कर्मों से व्यक्ति मुख मोड़ कर प्रमाद, मोह एवं अज्ञान जनित कार्यों की ओर उन्मुख रहेगा । गुणों के आधार पर तीन तरह के व्यक्तियों का वर्णन किया गया है किन्तु इन गुणों से ऊपर उठे व्यक्ति के व्यक्तित्व को श्रेष्ठ मानती है उसे गुणातीत नाम से अभिहित किया है। अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से प्रश्न किया है कि हे प्रभो । इन तीनों गुणों से अतीत हुआ पुरुष किन-किन लक्षणों वाला होता है और किस प्रकार से आचरण करता है और किस उपाय से इन तीनों गुणों से ऊपर उठ जाता है ।[1] इस जिज्ञासा का उत्तर देते हुए भगवान श्री कृष्ण ने बताया है कि प्रकाश, प्रवृत्ति और मोह के प्राप्त होने पर जो सुख अथवा दुःख नहीं मानता और उनके प्राप्त न होने पर जो उनकी इच्छा नहीं करता जो उदासीन की तरह वह स्थिर रहता है, जिसे गुण हिलाते या विचलित नहीं करते, गुण ही अपना कार्य करते हैं, मानकर जो स्थिर रहता - विचलित नहीं होता, जो सुख-दुःख में समभाववान रहता है, स्वस्थ रहता है, मिट्टी के ढेले, पत्थर और स्वर्ण को समान मानता है प्रिय अथवा अप्रिय वस्तु प्राप्त होने पर जो एक सा रहता है, अपनी निन्दा या स्तुति को समान मानता है, जिसकी दृष्टि में मान और अपमान दोनों समान हैं, जो मित्रपक्ष और शत्रुपक्ष के बारे में समभाव रखता है और जिसने सब आरम्भों का त्याग कर दिया है, ऐसा पुरुष गुणातीत कहलाता है ।[2]

श्रीमद्भगवद्गीता में आदर्श पुरुष (व्यक्तित्व) के वर्णन कर्मयोगी, जीवन्मुक्त, योगारूढ़, भगवद्भक्त, ज्ञाननिष्ठ, गुणातीत और स्थितप्रज्ञ के रूप में किये गये हैं । संत विनोबा भावे ने "स्थितप्रज्ञ" को गीता का आदर्श

---

(1) कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ।।
श्रीमद्भगवद्गीता 14/21

(2) अनासक्तियोग - पृष्ठ 150-151. = महात्मागांधी द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता का हिन्दी रूपान्तर अनासक्ति योग में अध्याय 14 के श्लोक 22से 25 का अनुवाद.

।–।।

-पुरुष विनोबा बताते हुये उसे गीता का खास शब्द कहा जो गीता के पूर्व ग्रंथों में नहीं मिलता । गीता में ये आदर्श अलग-अलग आदर्श पुरुष भिन्न-भिन्न साधना बताने के सिलसिले में उपस्थित किये गये हैं । वे स्थितपुरुष से भिन्न कोई अन्य पुरुष हों, सो बात नहीं । "स्थितप्रज्ञ" के ही ये अनेक पहलू हैं। उन सबके दर्शन में स्थितप्रज्ञ के लक्षण गीता मे प्रायः कहीं-न-कहीं कुछ ही मिल हैं ।[1]

अर्जुन ने श्रीकृष्ण भगवान से पूछा था कि हे केशव समाधि में स्थित स्थितप्रज्ञ के क्या लक्षण हैं? वह कैसे बोलता है? कैसे बैठता है और कैसे चलता है ?[2] भगवान श्रीकृष्ण ने स्थितप्रज्ञ के लक्षणों का सविस्तार वर्णन गीता के द्वितीय अध्याय के श्लोक 55 से 72 तक में करते हुए बताया है कि जब मनुष्य मन में उठने वाली समस्त कामनाओं का त्याग कर देता है और आत्मा में आत्मा द्वारा ही संतुष्ट रहता है तब वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है । दुःखों से जो दुःखी न हो, सुखों की जो इच्छा न रखे तथा जो राग, भय और क्रोध से रहित हो, वह मुनि स्थिर बुद्धि कहा जाता है । जो सर्वत्र राग-रहित है और शुभ के प्राप्त होने पर उसका स्वागत नहीं करता अथवा अशुभ को प्राप्त करके अकुलाता नहीं, उसकी बुद्धि स्थिर है । जिस प्रकार कछुआ सब ओर से अपने अंगों को समेट लेता है उसी प्रकार यह पुरुष इन्द्रियों को उनके विषयों से जब समेट लेता है -- खींच लेता है, तब कहा जाता है कि उसकी बुद्धि स्थिर हो गई है । जो इन समस्त इन्द्रियों को वश में रखकर योगी को मुझमें तन्मय होकर रहना चाहिये क्योंकि जिसकी इन्द्रियाँ अपने वश में हैं उसी की बुद्धि स्थिर रहती है । चित्त की प्रसन्नता से उसके सारे दुःख टल जाते हैं और प्रसन्नता प्राप्त किये हुये पुरुष की बुद्धि तुरन्त ही स्थिर हो जाती है । जिसकी इन्द्रियाँ सब ओर से विषयों से बाहर निकलकर उसके वश में हो जाती हैं उस पुरुष की बुद्धि स्थिर हो जाती है । सारी

---

[1] स्थितप्रज्ञदर्शन - संत विनोबा भावे पृष्ठ 17.

[2] स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम ।। 1-12
2/54

कामनाओं का त्याग करके जो पुरुष स्पृहा ममता और अहंकार से रहित होकर इस संसार में रहता है वही शान्ति प्राप्त करता है ।

उपर्युक्त श्लोकों पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि स्थितप्रज्ञ व्यक्तित्व वाला पुरुष सुख-दुख में समानभाव से रागद्वेष, भय, क्रोध रहित होकर बिना किसी फल की इच्छा के अपने कर्तव्यों का पालन करता है वह अपनी इन्द्रियों को नियंत्रण में रखकर अपने में ही संतुष्ट रहता है । वह अपनी आत्मा की अमरता को जानता व मानता है अतः वह रागद्वेष आदि द्वन्द्वों को त्यागकर अनाशक्ति भाव से कार्य करता है । अतः परमशांति को प्राप्त करता है । इसप्रकार स्थितप्रज्ञ व्यक्तित्व का आधुनिक विज्ञान में जिस परिपक्व व्यक्तित्व (मैच्योर पर्सनालिटी) से अधिक श्रेष्ठ है । यही व्यक्तित्व का आदर्श हो सकता है जिसकी प्राप्ति प्रत्येक व्यक्ति का जीवन लक्ष्य होना चाहिये ।

श्रीमद्भागवत में भगवान श्री कृष्ण जी ने उद्धव से उत्तम व्यक्तित्व के लक्षण (पवित्रात्मा साधु के) इस प्रकार से बताते हैं । जो समस्त प्राणियों के प्रति कृपालु है, किसी के प्रति भी द्रोह नहीं करता, तितिक्षु (सर्दी-गर्मी को सहन करने की सामर्थ्य रखने वाला) सत्यशील, पवित्र अन्तःकरण वाला समदर्शी और सबका उपकार करने वाला है । जिसकी बुद्धि कामना रहित है जो अपनी इन्द्रियों को वश में रखता है, जो मृदु स्वभाव वाला, सदाचारी, अकिंचन, निस्पृह, मिताहारी, शांतचित्त, स्थिर मति और मेरे शरण है जो प्रमाद रहित, गंभीर अन्तःकरण वाला, धैर्यवान, भूख-प्यास और शोक-मोह तथा जन्म-मृत्यु शरीर मन और प्राण के इन छः गुणों को जीत चुका है अर्थात् इनसे प्रभावित नहीं होता । जो स्वयं मान नहीं चाहता अपितु दूसरों को मान देने को उत्सुक रहता है समर्थ है

सबका मित्र और दयालु तथा ... है ।[1] इन गुणों को धारण करने वाला व्यक्ति चरित्र आचरणों द्वारा ईश्वरवत होगा उसका व्यक्तित्व भागवत व्यक्तित्व कहा जायेगा ।

बौद्ध विचारकों के अनुसार व्यक्तित्व के निर्माण में पंच स्कंध शारीरिक और मानसिक तत्व प्रदान करते हैं । व्यक्तित्व पाँचों अथवा उनमें से कुछ स्कंधों का योग मानते हैं । पंच स्कंधों में रूप स्कंध, वेदना स्कंध, संज्ञा स्कंध, संस्कार स्कंध और विज्ञान स्कंध हैं । रूपस्कंध के क्षेत्र में पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु तथा उनसे निर्मित पदार्थ आते हैं । रूप स्कंध व्यक्तित्व के शारीरिक तत्व के आधार बनते हैं शेष चार स्कंध अर्थात् वेदना, संज्ञा संस्कार और विज्ञान स्कंध) व्यक्तित्व के अन्तःपक्ष (मन पक्ष) के निर्धारक होते हैं । व्यक्ति का भावनात्मक जीवन वेदना स्कंध पर तथा मानसिक प्रवृत्तियाँ संस्कार स्कंध पर आधारित होती है। स्कंधों के परिवर्तनशील होने के कारण व्यक्तित्व भी परिवर्तनशील हो जाता है ।

जैन दर्शन इन्द्रियों के शमन और त्याग पर सबसे अधिक बल देता है वह व्यवहारिक पक्ष देखता है और सम्यक् ज्ञान और सम्यक् व्यवहार को लेकर चलता है । जिस व्यक्ति का चरित्र अच्छा है उसे दुःख प्राप्त नहीं होते तथा जिसको जीव और जगत के सम्बन्ध में सम्यक् ज्ञान हो जाता है उसका जीवन सुखी हो जाता है। जैन विचारकों के अनुसार आत्मा अलौकिक अवश्य है किन्तु

---

(1) कृपालुरकृतद्रोहस्तितिक्षुः सर्वदेहिनाम् ।
सत्यसारोऽनवद्यात्मा समः सर्वोपकारकः ॥
कामैरहतधीर्दान्तो मृदुः शुचिरकिंचनः ।
अनीहो मितभुक् शान्तः स्थिरो मच्छरणो मुनिः ॥
अप्रमत्तो गभीरात्मा धृतिमाञ्जितषड्गुणः ।
अमानी मानदः कल्यो मैत्रः कारुणिकः कविः ॥

श्रीमद्भागवत 11/11/29-31.

उसमें भौतिक गुण भी है वह सूक्ष्म न होकर शरीरधारी है आत्मा के स्वरूप में पुद्गल (पदार्थ मैटर) का भी अंश होता है इसीकारण उसमें विस्तार और विरोध के गुण हैं। जैन मनोविज्ञान के अनुसार प्रत्येक जीव, शरीर और आत्मा का एक सम्मिलित स्वरूप है जो उसके कार्यों एवं व्यवहारों में प्रकट होता है। मन को जैन विचारकों ने आंतरिक चेतना के रूप में स्वीकार किया है वह एक प्रकार का साधन है जिसके द्वारा वह बाह्य संसार को ग्रहण करता है।

जैन मनोविज्ञान का सारतत्व यह है कि व्यक्ति अपने जीवन में ऐसे कार्य और व्यवहार करे कि वह कालान्तर में कर्मफल से मुक्ति पा सके। कर्म जीव का एक आवश्यक पक्ष है। सतत् अभ्यास और साधना की सहायता से जीव कालान्तर में वह स्थिति प्राप्त कर सकता है जो, सुख-दुख से परे है।[1]

महात्मा तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम से रावण के प्रति नीति कहलाते हुए संसार में पुरुषों के तीन प्रकारों का वर्णन कराया है - (1) प्रथम जो केवल कहते है करते नहीं, (2) दूसरे जो कहने के पश्चात् करते भी हैं और (3) तीसरे जो कहते नहीं बल्कि करके दिखाते हैं। इन तीन प्रकार के व्यक्तियों को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने पाटल (गुलाब) के पौधे रसाल (आम) और पनस (कटहल) के वृक्षों से की है। गुलाब केवल पुष्प देता है आम पुष्प तथा फल दोनों उपलब्ध कराता है और कटहल पुष्प नहीं बल्कि फल प्रदान करता है।[2]

---

(1) मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा - डॉ0 सीताराम जायसवाल पृ0-3029

(2) जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल रसाल पनस समा
एक सुमनप्रद एक सुमन फल एक फलइ केवल लागहीं
एक कहहिं, कहहि करहिं, अपर एक करहि कहत न बागहीं।
श्रीरामचरितमानस 6/89 छंद.

रामचरित मानस में राम के व्यक्तित्व का ही दर्शन है जो आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श मित्र, आदर्श गृहस्थ, आदर्श राजा है। उनके राज्य को ही आदर्श मानकर रामराज्य की स्थापना का महात्मा गांधी तथा उनके बाद के भारतीय राजनीतिक प्रतिपादन करते रहे है और आज भी कर रहे हैं। राम का यह आदर्श स्वयं उल्लेखनीय है जिसके लिये तुलसीदास जी कहते है कि श्री रामचन्द्र के मुख की छवि राज्याभिषेक की बात सुनकर न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न वनवास के दुःख से मलिन ही हुई।'[1]

श्री अरविन्द ने अपने 'सर्वांगपूर्ण योग दर्शन' में व्यक्तित्व की व्याख्या चेतना के विभिन्न स्तरों एवं सोपानों के संदर्भ में की है। डा० कृष्णदेव जी ने श्री अरविन्द के मानव व्यक्तित्व सम्बन्धी विचारों का अध्ययन करने के पश्चात् लिखा है कि अरविन्द के लिए मानवीय व्यक्तित्व केवल चेतन और अचेतन मन का एक अधूरा या पूरा संगठन नहीं है उसका अधिक महत्वपूर्ण भाग अतिचेतन है जो उसकी उच्चतर भावी अवस्थाओं का द्योतक है। वर्तमान मानवीय व्यक्तित्व अंश मात्र है हमारा अतिचेतन पूर्णतः समन्वय की दिशा दिखलाता है।

यदि हम अपने व्यक्तित्व को उच्चतर बनाने का उपाय नहीं जानते तो उसके वैज्ञानिक विश्लेषण मात्र से हमें क्या संतोष मिल सकता है यह प्रश्न श्री अरविन्द के सामने रहा है और उन्होंने इसका अध्ययन करके महत्वपूर्ण निष्कर्ष दिये है-प्रथम यह कि अति चेतन का उत्तरोत्तर चरितार्थ करके मानव प्रकृति में परिवर्तन किया जा सकता है और अति चेतन को चरितार्थ करने का उपाय है-'अभीप्सा'। "अभीप्सा" उन्नत होने, ऊपर उठने, विकसित होने की सच्ची गंभीर सतत अभिलाषा, इच्छा तथा भावना है। दूसरी आवश्यक बात है निम्न एवं अवांछनीय प्रवृत्तियों का नियमन। श्री अरविन्द

---

[1] प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवास दुःखतः

अयोध्याकाण्ड 2/छंद 2

के अनुसार व्यक्तित्व का अचेतन अंश आत्मा की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह मानवीय व्यक्तित्व को रूपान्तरित कर सकता है और दिव्य बना सकता है ।[1]

श्री अरविन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "दि डिवाइन लाइफ" में लिखा है --

"जब हम अपनी दृष्टि को सीमित तथा क्षणिक स्वार्थों से, उसकी अहंभावमयी व्यस्तता से हटाते है और केवल परम सत्य की खोज करने वाली रागद्वेष शून्य दृष्टि से संसार का अवलोकन करते हैं तो हमें सबसे प्रथम बोध होता है उस अनन्त सत्ता, अनन्तगति, अनन्तक्रिया की ऐसी अपारशक्ति का जो अपने सर्वत्र एवं सदैव अपने आपको उडेल रही है"।[2]

श्री अरविन्द का उपर्युक्त कथन दिव्य जीवन के संदर्भ में परिपक्व व्यक्तित्व की विशेषताओं को लक्षित करता है । परिपक्व व्यक्तित्व वाला व्यक्ति सभी प्रकार के स्वार्थों से मुक्त होता है न उसमें अंहकार होता है और न आसक्ति । वह निरन्तर अनन्त भाव में ही रहता है । श्री अरविन्द ने परिपक्व व्यक्तित्व की व्याख्या केवल भौतिक परिप्रेक्ष्य में ही नहीं अपितु दिव्य जीवन और आध्यात्मिक दृष्टि से भी की है ।

प्राचीन ऋषियों, तत्ववेत्ताओं, श्रीमद्भगवतगीता एवं श्रीमद्भागवत में परिलक्षित व्यक्तित्व तथा बौद्ध एवं जैन मतों में शरीर मन के विकास का तथा आत्मा के सम्बन्ध में व्यक्त विचारों तथा गोस्वामी तुलसीदास द्वारा मर्यादा पुरुषोत्तम राम के व्यक्तित्व पर तथा श्री अरविन्द के दिव्य जीवन एवं परिपक्व व्यक्तित्व के सम्बन्ध में व्यक्त विचारों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय विद्वान व्यक्तित्व के स्थूल रूप, शरीर एवं चेष्टा तथा सूक्ष्म शरीर के मन बुद्धि के अध्ययन तक ही सीमित नहीं रहते बल्कि उसके आगे चित्त अंहकार एवं कारण शरीर का ज्ञान प्राप्त करने की दिशा

---

(1) श्री अरविन्द का जीवन दर्शन - डा० इन्द्रसेन पृ० 45 पृ०

(2) 'दि डिवाइन लाइफ-भाग 1 पृ० 108.

इंगित करते हैं तथा स्थितप्रज्ञ व्यक्तित्व एवं भागवत व्यक्तित्व का आदर्श उपस्थित कर उस तक पहुँचने का व्यावहारिक मार्ग भी सामने रखते हैं ।

1.3 पाश्चात्य विद्वानों का अभिमत :-

मनोविज्ञान का आधार एवं स्रोत दर्शन है । विज्ञान का ज्यों-ज्यों विकास होता गया भौतिकवादी दृष्टिकोण की वृद्धि के कारण मनोविज्ञान का दर्शनशास्त्र से सम्बन्ध क्षीण होता गया है । इसी के फलस्वरूप केवल प्रत्यक्ष में प्रमाणित हो सकने वाले शरीर के तथा मन की क्रियाओं तक ही अध्ययन सीमित होता गया जैसा कि व्यक्तित्व की ऊपर दी गयी परिभाषाओं से प्रकट होता है । पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किये हैं । व्यक्तित्व के प्रकारों पर विचार करते हुए कुछ ने शरीर की बनावट के आधार पर कुछ ने काय रस के आधार पर वर्गीकरण किया है तो कुछ ने मनोदशा के आधार पर कुछ ने सामाजिक स्थिति के आधार पर क्रेत्समर ने(वर्ष 1925में) शरीर रचना के आधार पर चार प्रकार के व्यक्तित्व बतलाये हैं —

1. कृशकाय – तिकोना चेहरा, चपटा सीना, लम्बे एवं दुबले पतले हाथ-पैर व प्रकृति से संकोचशील ।
2. पुष्टकाय– सबल मांसपेशियाँ चौड़ा सीना, हाथ-पैर लम्बे, अण्डाकार चेहरा, प्रकृति से अन्तर्मुखी ।
3. तुन्दिल – सिर व पेट बड़ा, हाथ-पैर छोटे, कद छोटे, गोल सीना, प्रकृति से बहिर्मुखी ।
4. मिश्रकाय– उपर्युक्त लक्षणों का मिश्रित स्वरूप, ग्रंथि बीमारियों से ग्रसित।

डब्लू०एच०शेल्डन ने(वर्ष 1940में) शरीरों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया –

1. गोलाकार(कटि प्रधान) कोमल शरीर के एवं मोटे ।
2. आयताकार(अस्थि पेशीप्रधान) स्वस्थ एवं सुडौल ढाँचे वाले ।
3. लम्बाकार(आयतास्थि प्रधान) दुबले एवं पतले शरीर वाले ।

मन-विज्ञान के आधार पर युंग के अनुसार व्यक्ति मुख्यतः दो प्रकार के होते है :- (1) अन्तर्मुखी (2) बहिर्मुखी । (1) अन्तर्मुखी व्यक्ति एकान्तप्रिय, वास्तविक जीवन से निराश तथा काल्पनिक संसार में विचरण करने वाले होते हैं, इनमें लोगों की प्रधानता होती है इस श्रेणी में महात्मा, वैज्ञानिक एवं कलाकार आते हैं । (2) बहिर्मुखी प्रवृत्ति के व्यक्तियों में सामाजिकता के गुण होते है, वे सन्तुष्ट प्रसन्नचित्त एवं उदार हृदय, व्यवहार कुशल एवं आत्म-विश्वासी होते है-जैसे समाजसेवक, राजनीतिज्ञ आदि तीसरे प्रकार के व्यक्तित्व उक्त दोनों प्रवृत्तियों का मिश्रण होकर बनता है जिसे युंग ने उभयमुखी कहा है ।

सामाजिक दृष्टिकोण से स्प्रैन्गर ने व्यक्तियों को 6 वर्गों में विभाजित किया है :-

(1) आर्थिक - हर वस्तु का मूल्यांकन उसकी उपयोगिता के आधार पर करते हैं ।

(2) सैद्धान्तिक - सत्य प्राप्ति की ओर-उन्मुख सिद्धान्तवादी

(3) सौन्दर्यानुभवी - वे कलात्मक मूल्य के आधार पर वस्तुओं को आंकते हैं ।

(4) सामाजिक - दूसरों के दुःख-सुख में भाग लेने वाले ।

(5) राजनीतिक - नियंत्रण एवं शक्ति प्राप्त करने की इच्छा वाले ।

(6) धार्मिक - धार्मिक विचारों और आध्यात्मिकता को आदर्श मानने वाले ।

थार्नडाइक ने विचार की दृष्टि से व्यक्तियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है :-

(1) सूक्ष्म विचारक

(2) स्थूल विचारक

(3) प्रत्यय विचारक

चरनेकाडक ने इन्द्रियों की प्रधानता के आधार पर छः प्रकार के व्यक्ति माने है :-

(1) दर्शनालु, जिसकी नेत्र-इन्द्रिय प्रबल है ।

(2) श्रवणालु, जिसकी सुनने की शक्ति प्रबल होती है ।

(3) स्पर्शालु, जिसकी स्पर्श इन्द्रिय (त्वचा) की शक्ति सर्वाधिक विकसित हो ।

(4) घ्राणालु, जिसकी सूँघने की शक्ति की प्रधानता हो ।

(5) गमनालु, जिसके हाथ पैर दृढ़ हो ।

(6) मिश्रित, जिसमें दो या अधिक इन्द्रियाँ प्रधान हो

आइजनेक ने युंग के द्वारा वर्णित अन्तर्मुखी और बाह्यमुखी वर्गों को स्थिरता एवं अस्थिरता के आधार पर दो में भागों विभाजित करके व्यक्तित्व के चार प्रकार निर्धारित किये हैं-

(1) स्थिर अन्तर्मुखी

(2) अस्थिर अन्तर्मुखी

(3) स्थिर बहिर्मुखी

(4) अस्थिर बहिर्मुखी

व्यक्तित्व के गठन पर कैटल, स्टेगनर तथा आलपोर्ट ने विचार दिये है । व्यक्तित्व की पहचान का आधार विशेषक होते हैं विशेषक से आशय किसी व्यक्ति के विशेष प्रकार से कार्य करने की शैली से है । कैटल ने विशेषकों के दो भेद स्रोत विशेषक तथा सतही विशेषक माने हैं । स्टेगनर ने भिन्न प्रकार से वर्गीकरण करते हुये सामान्य विशेषक और अनन्य विशेषक को व्यक्तित्व के गठन का आधार माना है । आलपोर्ट ने प्रमुख और गौण दो भेद प्रस्तुत किये है ।

आलपोर्ट ने व्यक्तित्व की समग्रता के लिए यह आवश्यक माना है कि व्यक्ति को अपने जीवन के उद्देश्य का ज्ञान हो एक व्यक्ति अपने

सभी प्रयासों को उस पर केन्द्रित करता है जो वह बनना चाहता है और जिसके प्रति उसे विश्वास है कि वह उसके लक्ष्य की पूर्ति में सहायक होगा उसी दिशा में वह निरन्तर विकास करता है ।[1]

फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व के गठन में तीन प्रमुख तंत्र है जिनको उसने इदम्, अहम् तथा पराहम् कहा है जब इन तीनों के कार्यों में सामंजस्य होता है तब व्यक्तित्व का गठन सन्तोषप्रद रहता है जब इनमें सामंजस्य की कमी आ जाती है। कोई एक अधिक प्रभावी हो जाता है तो विसंगति उत्पन्न हो जाती है । फ्रायड के अनुसार व्यक्ति जो कुछ आनुवंशिकता से प्राप्त करता है।जन्म के समय की मूल प्रवृत्तियों की मानसिक अभिव्यक्ति इदम् में होती है।इदम् का सम्बन्ध अचेतन मन से होता है । व्यक्तित्व का निर्माण अपरिचित एवं अनजाने इदम् के आधार पर ही होता है ।

इदम् [Id] :- सुखानुभूति के लिए लालायित रहता है और वही कार्य करना चाहता है जिससे उसे सुख मिले । जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व में इदम् की प्रधानता होती है वह समाज का ध्यान नहीं रखता और न सामाजिक नियमों का पालन ही करता है । उसका मुख्य ध्येय कामजन्य सुखप्राप्त करना होता है ।

अहम् [Ego] :- फ्रायड के अनुसार "अहम्, इदम् का संगठित रूप है ।[2] बाह्य जगत से प्रभावित होकर इदम् का जो अंश चेतन बनता है वही अहम् है ।

अहम् के विकास के लिए शिक्षा अधिक सहायक होती है । वह यथार्थ के प्रति जागरूक रहता है और यथासंभव निम्नस्तरीय सुखों से अपने

---

[1] A person centers his efforts on becoming what he wants to become; and develops constantly in ways those in his belief lead to that end. – G.W. Allport

[2] The ego is the organised part of the id.

– Freud

[1-2]

को बताता है जिस प्रकार इदम् का सम्बन्ध अचेतन से होता है उसी प्रकार अहम् चेतन से सम्बन्धित है । व्यक्ति का विवेक तर्कपूर्ण चिन्तन उसके अहम् से सम्बन्धित होते हैं । जिस व्यक्ति का अहम् सामान्य एवं संतोषजनक रीति से विकसित होता है उसके व्यक्तित्व में सामाजिक गुणों की प्रधानता होती है ।

अत्यहम् (Super ego) :- व्यक्ति जितनी भी अच्छी बातें अपने माता-पिता और शिक्षक से सीखता है उससे उसके अत्यहम् का निर्माण होता है। व्यक्ति की नैतिक मान्यताओं का प्रमुख आधार अत्यहम् है । व्यक्ति को माता-पिता एवं शिक्षक से वांछनीय जीवन-मूल्य तथा आदर्श प्राप्त होते हैं साथ ही सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण का भी प्रभाव अत्यहम् पर पड़ता है । पाप-पुण्य गलत सही की धारणा अत्यहम् का प्रमुख भाग है ।

फ्रायड ने लिबिडो (कामसुख) पर अत्यधिक बल दिया है ।

एल्फ्रेड एडलर :- फ्रायड का शिष्य और सहयोगी रहा था बाद में वह उससे मतभेद हो जाने से अलग हो गया । उसने अपने विचारों को वैयक्तिक मनोविज्ञान के नाम से प्रचारित किया। एडलर ने सामाजिक मूल्यों को महत्वपूर्ण माना है, उसके अनुसार 'व्यक्ति का सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण उसके मानसिक जीवन की रूपरेखा निर्धारित करता है'। एडलर का मत है कि व्यक्तित्व स्वस्थ एवं संतुलित रखने के लिए व्यक्ति को अपने जीवन के लक्ष्य का स्पष्ट ज्ञान होना आवश्यक है । इसके लिये उसका कहना है कि व्यक्ति के जीवन का एक लक्ष्य हो और वह लक्ष्य सामाजिक हो। दूसरे शब्दों में उसके पीछे ऐसा आदर्श हो जो सबके कल्याण में सहायक हो । एडलर ने कहा है कि हमें बालक का बौद्धिक विकास करना है तो उसकी सामाजिकता को भी विकसित करना होगा ।

कार्ल युंग भी फ्रायड का शिष्य और सहयोगी रहा था । वह फ्रायड के लिबिडो पर अत्यधिक बल देने का विरोधी था उसने इसका महत्वपूर्ण

स्थान अवश्य माना किन्तु उसे ही सब कुछ नहीं माना। फ्रायड का मत था कि व्यक्तित्व का आधार जीवन के प्रथम 5 या 6 वर्षों में ही निश्चित हो जाता है, युंग का मत है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके सम्पूर्ण जीवन काल में विकसित होता रहता है। पूर्वार्द्ध में वह बहिर्जगत से प्रभावित होता है किन्तु उत्तरार्द्ध में व्यक्ति अपनी आंतरिक भावनाओं अथवा आंतरिकजगत में अधिक रुचि लेने लगता है यही व्यक्तित्व के विकास में आध्यात्मिक सहायक होता है। आगे चलकर वह आत्मसिद्धि प्राप्त करता है।

युंग ने स्पष्ट रूप से कहा है कि मनोविश्लेषकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने प्रौढ़ावस्था में व्यक्ति द्वारा आत्मसिद्धि प्राप्त करने के प्रयास की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया है। अध्ययन एवं अनुभव के आधार पर यह धारणा व्यक्त की है कि मानव विकास की प्रक्रिया जीवन-पर्यन्त चलती रहती है। जीवन के उत्तरार्द्ध में मनुष्य बाहरी तड़क-भड़क से मुख परिवर्तित कर वह जीवन के सत्य (आंतरिक जगत के रहस्यों) को जानना चाहता है उसकी रुचि धर्म और दर्शन की ओर बढ़ जाती है। इसलिए उसके जीवन में अन्तर्मुखता आ जाती है।

युंग ने अमेरिका, अफ्रीका तथा भारत की यात्राएँ की थी। युंग की अभिरुचि धार्मिक गाथाओं, रहस्यवाद तथा विश्व के विभिन्न धर्मों में भी थी। उसे प्रसिद्ध प्राच्यविद्या विशेषज्ञ "जिमर" का सहयोग हुआ। जिमर ने भारत के प्राचीन साहित्य तथा दर्शन का गहरा अध्ययन किया था। युंग ने "जिमर" की सहायता से भारतीय दर्शन, धर्म और पौराणिक गाथाओं का अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया। युंग ने मन (Mind) के स्थान पर चित्त (Psyche) शब्द को उचित समझा क्योंकि चित्त से चेतन तथा अचेतन दोनों का बोध होता है। उसने सामूहिक अचेतन तथा व्यक्तिगत अचेतन को मान्यता दी है।

इस प्रकार व्यक्तित्व में जहाँ फ्रायड ने लिबडो, काम-प्रवृत्ति पर तथा शैशव काल को ही व्यक्तित्व का आधार माना था । उसके सहयोगियों में से एडलर ने उससे अलग होने के पश्चात् व्यक्ति का पूरे जीवन काल में व्यक्तित्व के विकसित होने का प्रतिपादन किया तथा यह माना कि व्यक्ति में सामाजिक होने के तत्व प्रारम्भ से ही विद्यमान रहते हैं साथ ही व्यक्ति को उसके जीवन लक्ष्य का ज्ञान होना, स्वस्थ एवं संतुलित व्यक्तित्व प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। युंग ने भी व्यक्ति के जीवन-पर्यन्त होने वाले विकास का प्रतिपादन करते हुए जीवन के उत्तरार्द्ध में अन्तर्मुखता बढ़ जाने तथा धार्मिक एवं दार्शनिक प्रवृत्ति बढ़ जाने का मत व्यक्त किया । उसने यह भी कहा है कि व्यक्ति काल के साथ विकसित होते जाने पर वह बाह्य एवं आन्तरिक यथार्थ के सम्पर्क में आकर आत्मसंतुष्टि प्राप्त करने का प्रयास करता है । इसके पश्चात् नवफ्रायडवादियों ने व्यक्तित्व के विकास एवं प्रक्रिया पर अपने मत व्यक्त किये हैं इनमें ओटोरैंक, करेन, हार्नी, एरिक फ्राम प्रमुख हैं इन सभी ने फ्रायड के मत से भिन्न विचार दिये हैं। ओटोरैंक ने "जन्मत्रास" सिद्धान्त का प्रतिपादन करके मत व्यक्त किया है कि शिशु में जन्म के समय होने वाले त्रास से चिन्ता उपजती है इसे इच्छा शक्ति से दूर किया जा सकता है । उसने फ्रायड के इदम् के स्थान पर आवेग को मान्यता दी है । करेन हार्नी ने इदम् के स्थान पर अहम् को प्रमुख स्थान प्रदान किया है ।

एरिक फ्राम ने समाजशास्त्र और मनोविज्ञान का गहन अध्ययन किया था उसने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में सामाजिक तथा सांस्कृतिक तत्वों पर बड़ा बल दिया है । उसका मत है कि व्यक्ति की जब जैविक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती है तब भी वह पूर्ण सन्तुष्ट नहीं हो जाता बल्कि वह जीवन के उन तत्वों को प्राप्त करने का प्रयास करता है जो सूक्ष्म और अलौकिक हैं ।

कुछ दशकों से परा मनोविज्ञान शाखा कार्य कर रही है उसमें मृत्यु के पश्चात् के जीवन पर विचार किया जा रहा है । ब्रिटेन में 'सोसायटी

फार साइकीकल रिसर्च' नाम की संस्था ने अध्ययन कार्य किया है। संयुक्त-राज्य अमेरिका में प्रो० जे०बी० राइन ने उल्लेखनीय कार्य किया है। अब विचारक इस बात को मानने लगे हैं कि जीवन-मृत्यु के साथ ही आत्मा नहीं मरती है बल्कि किसी अन्य स्वरूप में जा सकती है प्रेतात्माओं की स्थिति को मान्यता दी जाने लगी है।

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व के क्षेत्र में अब शारीरिक क्रिया-कलापों तथा मानसिक प्रवृत्तियों से आगे बढ़कर नैतिक जीवन तथा आत्मसिद्धि की उपलब्धि की ओर विचार करने लगे हैं। परामनोविज्ञान शाखा मृत्यु के बाद के जीवन पर प्रयोग करके इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि वर्तमान जीवन तक ही व्यक्तित्व सीमित नहीं है। इस तरह पाश्चात्य विचारक धीरे-धीरे भारतीय दर्शन आत्मा की अनश्वरता की ओर उन्मुक्त होते जा रहे हैं जहाँ व्यक्तित्व को परिपक्वता और पूर्णत्व प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में जहाँ स्थितप्रज्ञ व्यक्तित्व अथवा भागवत व्यक्तित्व की उपलब्धि संभव हो पाती है।

1.4 व्यक्त एवं अव्यक्त व्यक्तित्व का स्वरूप :-

पश्चिमी विद्वानों ने व्यक्तित्व का क्षेत्र शारीरिक गठन, रंग-रूप एवं वेशभूषा तथा मानसिक प्रवृत्तियों, अभिरुचियों तथा क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं तक ही सीमित रखा था। शारीरिक बनावट उसके गठन, कार्य एवं व्यवहार ही व्यक्तित्व का व्यक्त स्वरूप था इसको स्वस्थ एवं संतुलित रखने में उचित आहार, व्यायाम, परिवार एवं समाज के वातावरण का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

अव्यक्त व्यक्तित्व में चेतन और अचेतन मन द्वारा स्फुरित क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं तथा प्रवृत्तियों को सम्मिलित किया गया है। व्यक्ति को प्रशिक्षित एवं मानसिक रूप से विकसित किये जाने के अवसर उपलब्ध कराने से व्यक्त तथा अव्यक्त व्यक्तित्व को प्रभावित किया जा सकता है इस कार्य में माता-पिता और शिक्षकों का महत्वपूर्ण योगदान

होता है । सामाजिक एवं सांस्कृतिक तत्वों का व्यक्तित्व के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है ।

आयुर्वेद के आचार्यों ने न केवल शारीरिक रोग वरन् मानसिक रोगों का अध्ययन करके उनके लिए उपचार तथा चिकित्सा विधि निर्धारित की थी । स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है । शरीर को पुष्ट और सुगठित बनाने के लिए व्यायाम, आसन, मालिश आदि का प्रावधान किया गया है उन सावधानियों का भी वर्णन है जिनके बरतने से शरीर को अस्वस्थ होने से बचाया जा सकता है । गीता में युक्ताहार, विहार का उपदेश दिया गया है। योग के अष्टांग साधनों में आसन, प्राणायाम का सम्बन्ध शारीरिक स्वास्थ्य से है । शेष यम, नियम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का सम्बन्ध अन्तस व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास से है ।

निःसन्देह शारीरिक स्वास्थ्य और शरीर का गठन व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण अंग है किन्तु व्यक्तित्व में यही सब कुछ नहीं है अपितु उसके क्षेत्र में आचार-विचार, सिद्धान्त, मनोवृत्ति, व्यवहार करने की रीति आदि भी सम्मिलित हैं । ऋषि अष्टावक्र जो शारीरिक दृष्टि से आठ स्थानों पर टेढ़े थे, जब वे राजा जनक की सभा में पहुँचे, तो ऐसे व्यक्ति को जो राजा के गुप्त प्रश्न का उत्तर देने के लिये पहुँचा था, सभी सभासद हँस पड़े । ऋषि ने व्यंग करते हुए कहा कि तुम्हारे सभासदों की दृष्टि केवल चर्म तक ही सीमित रह गयी है । इनमें किसी व्यक्ति के अन्तर्मन को जानने की दृष्टि नहीं है । बाद में उन्होंने न केवल राजा जनक के स्वप्न में देखे दृश्य एवं उसके आधार पर राजा के गुप्त प्रश्नों का उत्तर ही दिया अपितु उसे आत्मज्ञान कराकर पूर्व में बंदी बनाये गये सभी पंडितों, ऋषियों को मुक्त करा दिया । सुकरात देखने में कुरूप थे किन्तु अपने समय के माने हुए ज्ञानी शिक्षक, उपदेशक तथा सत्यप्रेमी थे । इसी विपरीत आचरण एवं कुत्सित चालों का गोस्वामी तुलसीदास जी ने उदाहरण निम्न चौपाई में प्रस्तुत किया है :-

होता है । सामाजिक एवं सांस्कृतिक तत्वों का व्यक्तित्व के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है ।

आयुर्वेद के आचार्यों ने न केवल शारीरिक रोग वरन् मानसिक रोगों का अध्ययन करके उनके लिए उपचार तथा चिकित्सा विधि निर्धारित की थी । स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है । शरीर को सुडौल और सुगठित बनाने के लिए व्यायाम, आसन, मालिश आदि का प्रावधान किया गया है उन सावधानियों का भी वर्णन है जिनके बरतने से शरीर को अस्वस्थ होने से बचाया जा सकता है । गीता में युक्ताहार, विहार का उपदेश दिया गया है। योग के अष्टांग साधनों में आसन, प्राणायाम का सम्बन्ध शारीरिक स्वास्थ्य से है । शेष यम, नियम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का सम्बन्ध अथवा व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास से हैं ।

निःसन्देह शारीरिक स्वास्थ्य और शरीर का गठन व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण अंग हैं किन्तु व्यक्तित्व में यही सब कुछ नहीं है अपितु उसके क्षेत्र में आचार-विचार, सिद्धान्त, मनोवृत्ति, व्यवहार करने की रीति आदि भी सम्मिलित हैं । ऋषि अष्टावक्र जो शारीरिक दृष्टि से आठ स्थानों पर टेढ़े थे, जब वे राजा जनक की सभा में पहुँचे, तो ऐसे व्यक्ति को जो राजा के गुप्त प्रश्न का उत्तर देने के लिये पहुँचा था, सभी सभासद हँस पड़े । ऋषि ने व्यंग करते हुए कहा कि तुम्हारे सभासदों की दृष्टि केवल चर्म तक ही सीमित रह गयी है । इनमें किसी व्यक्ति के अन्तर्मन को जानने की दृष्टि नहीं है । बाद में उन्होंने न केवल राजा जनक के स्वप्न में देखे दृश्य एवं उसके आधार पर राजा के गुप्त प्रश्नों का उत्तर ही दिया अपितु उसे शास्त्रार्थ कराकर पूर्व में बंदी बनाये गये सभी पंडितों, ऋषियों को मुक्त करा दिया । सुकरात देखने में कुरूप थे किन्तु अपने समय के माने हुए ज्ञानी विद्वान, उपदेशक तथा सत्यप्रेमी थे । इसी विपरीत आचरण एवं दूषित वालों का गोस्वामी तुलसीदास जी ने उदाहरण निम्न चौपाई में प्रस्तुत किया है -

सकि सुवेष जग बंचक जेऊ। बेष प्रताप पूजिअहिं तेऊ ॥
उघरहिं अंत न होइ निबाहू, कालनेमि जिमि रावन राहू॥ 1/6

कालनेमि ने मुनि का वेश बनाकर महावीर हनुमान के कार्य में बाधक बनाया। रावण, यति का वेश बनाकर आया था और सीता को हर ले गया था। राहु देवता का रूप धारण कर अमृत-पान में भाग लेना चाहता था इन तीनों को ऊपर से भला समझा गया था किन्तु इनके कार्य विपरीत पाये गये अतः तीनों का नाश हुआ। इन तीनों का व्यक्त प्रकट रूप अप्रकट से भिन्न था। इन उदाहरणों से यह भी स्पष्ट होता है कि अव्यक्त व्यक्तित्व का अधिक महत्व है क्योंकि यही व्यक्ति के वास्तविक स्वरूप का बोधक (?) होता है। शरीर प्रकट है, व्यक्त है, अन्तःकरण, प्राण (?), मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार अव्यक्त है। स्थूल शरीर मानव आकृति के रूप में व्यक्त है, सूक्ष्म और कारण शरीर अव्यक्त हैं किन्तु ये अपने गुणों, वृत्तियों से व्यक्त को अधिक प्रभावित करते हैं। संत व्यक्तित्व के पुरुष सामान्य मानव आकार के ही होते (?) किन्तु उनको नवनीत के समान कहा गया है जो दूसरों के कष्ट को देखते ही द्रवित हो जाते हैं। महात्मा गांधी का शरीर पहलवानों की तरह स्थूल और सुगठित नहीं था किन्तु व्यक्तित्व के आन्तरिक गुणों के अवलम्बन (?) पर उन्होंने राष्ट्र का नेतृत्व किया एवं अंग्रेजों से भारत को स्वतन्त्र कराया। साथ ही सत्य, अहिंसा को सार्वजनिक तथा सामूहिक रूप में उपयोग का मार्ग प्रशस्त किया। उक्त कार्य उनके व्यक्तित्व अव्यक्त स्वरूप के आधार पर सम्पन्न हुये।

1. व्यक्तित्व निर्माण एवं नियमन तथा

आलपोर्ट ने व्यक्तित्व व्यक्ति का ऐसा गत्यात्मक मनोशारीरिक गठन है जो उसके जीवन और समायोजन को प्रभावित करता है। व्यक्ति के जीवन का आदर्श क्या है? उसकी प्रेरणाएँ क्या है? और किन लक्ष्यों को

1॥ संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना।
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुःख द्रवहिं संत सुपुनीता॥
श्री रामचरितमानस 7/124/7-8.

लेकर जब कार्य करता है इन सबका प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पड़ता है।
आर्थर जे० जोन्स ने व्यक्तित्व के सात मुख्य तत्व माने हैं :-

(1) व्यक्ति का स्वरूप
(2) उसकी पोशाक
(3) बातचीत करने का ढंग
(4) चलने का तरीका
(5) कार्य करने की रीति
(6) कार्य कुशलता और
(7) स्वास्थ्य

व्यक्तित्व के निर्धारण एवं विकास में मुख्यतः दो प्रकार के तत्वों का प्रभाव रहता है :-

(क) जैविक तत्व
(ख) वातावरण-जन्य

(क) <u>जैविक निर्धारक तत्व</u> में

(1) शारीरिक संगठन और स्वास्थ्य
(2) नाड़ी संस्थान
(3) शरीर रसायन
(4) अन्तःस्रावी ग्रंथियाँ

(ख) <u>वातावरण-जन्य तत्वों में दस उपादान है</u>

(1) माता-पिता का आपसी सम्बन्ध
(2) अकेली संतान होना
(3) पारिवारिक स्थिति
(4) माता-पिता एवं बालक का सम्बन्ध
(5) साथी-संगी
(6) विद्यालय का जीवन
(7) घर की आर्थिक स्थिति
(8) सांस्कृतिक प्रभाव

{9} किशोरावस्था में प्रवेश

{10}वैवाहिक सम्बन्ध

इनके आगे ग्रंथों के अध्ययन एवं महापुरुषों के सम्पर्क तथा नजदीकी सम्बन्धी, मित्र आदि की मृत्यु का प्रभाव भी व्यक्तित्व की दिशा एवं विकास पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है ।

व्यक्तित्व के अध्ययन, करने के सम्बन्ध में जानकारी एकत्र करने हेतु जो विधियाँ अपनायी जाती है उनको दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है !-

{1} मानकीकृत परीक्षण

{2} अमानकीकृत विधियाँ

{1} मानकीकृत परीक्षण

मानकीकृत परीक्षण, मनोवैज्ञानिकों द्वारा निर्धारित विधि से किये जाते हैं, इनके द्वारा प्राप्त फल वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय होते है, इनमें मतभेद की संभावना कम होती है । यह अवश्य है कि ये परीक्षण स्थिति विशेष के संदर्भ में किये जाते हैं, इसलिए इस तरह से प्राप्त जानकारी किसी व्यक्ति से सम्बन्धित पूर्ण जानकारी नहीं मानी जा सकती । इस सम्बन्ध में यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि मानकीकृत परीक्षण के लिये व्यक्ति का परीक्षण के समय उपस्थित रहना आवश्यक है जो व्यक्ति उपस्थित नहीं है या जीवित नहीं है उसके बारे में यह विधि लागू नहीं हो सकती ।

अमानकीकृत विधियाँ

अमानकीकृत विधियों में निम्नांकित 7 मुख्य हैं !-

(1) प्रश्नावली विधि

(2) साक्षात्कार विधि

(3) निरीक्षण विधि

(4) प्रमापीकरण विधि

(5) आत्मकथा विधि

(6) समाजमिति विधि

(7) व्यक्ति इतिहास विधि

(1) प्रश्नावली विधि :-

यह सर्वाधिक प्रचलित विधि है इसमें सरल एवं स्पष्ट प्रश्न रखे जाते हैं। प्रयास यह रहता है कि अधिकांश प्रश्नों का उत्तर "हाँ" अथवा नहीं "दिया जा सके। प्रश्न ऐसे होने चाहिये जिनका उत्तर बिना हिचक के दिया जा सके, प्रश्न ऐसे रखे जाने चाहिये जो अध्ययन के प्रयोजन के अनुरूप हैं। प्रश्नावली को उपयुक्त समूहों में बाँट दिया जाना भी आवश्यक होता है। प्रश्नावली की पर्याप्तता की जाँच कर ली जानी चाहिये प्रश्नावलियाँ तीन प्रकार की होती है :-(1) बंद प्रकार, (2) मुक्त प्रकार, (3) मिश्रित। बंद प्रकार में प्रश्नों का उत्तर "हाँ" या नहीं" में दिया जाता है। मुक्त प्रकारमें उत्तरदाता प्रश्नों के उत्तर में स्वतन्त्रता पूर्वक अपनी राय दे सकता है इसलिये प्रश्नावली में पर्याप्त स्थान छोड़ना पड़ता है। मिश्रित प्रकार में दोनों प्रकार के प्रश्न होते हैं उसमें प्रश्नों के उत्तरों के लिए समुचित स्थान रखा जाता है।

साक्षात्कार विधि

इस विधि में साक्षात्कार करने वाला उत्तरदाता के उत्तरों से सम्बन्धित अन्य पूरक प्रश्न पूछ सकता है। गोपनीयप्रश्न भी पूछने एवं [illegible] का जानकारी लेने की सुविधा रहती है। व्यक्ति के जीवन

के महत्वपूर्ण पक्ष साक्षात्कार के समय सामने रहते हैं ।

{3} निरीक्षण विधि :-

इस विधि में किसी व्यक्ति के कार्यों एवं व्यवहारों का अनेक दिनों तक निरीक्षण करके अध्ययन किया जाता है इसका दिन-प्रतिदिन का अभिलेख रखा जाता है । यह निरीक्षण आकस्मिक, स्वतन्त्र नियंत्रित अथवा अर्ध-नियंत्रित होता है । इस विधि से व्यक्ति के सामाजिक एवं भावात्मक प्रतिक्रियाओं को सरलता से देखा एवं अधिक जाना जा सकता है। मानसिक रोगी के मनोभावों को जानने अथवा अध्यापकों द्वारा शैक्षिक परिस्थितियों में इस विधि का उपयोग अच्छा माना जाता है ।

{4} क्रम निर्धारण विधि :-

इसका उपयोग कई व्यक्तियों के बीच कार्य-व्यवहार अथवा परीक्षार्थियों के कृति के मूल्यांकन में किया जाता है यथा कार्य-व्यवहार उत्कृष्ट, उत्तम, सामान्य, असन्तोषजनक, निकृष्ट आदि ।

{5} आत्मकथा विधि :-

रॉबर्ट स्टोन, अल्टमैन तथा रॉबिन्स ने आत्मकथा के आधार पर व्यक्तित्व के अध्ययन की एक विधि माना है इस सम्बन्ध में उनका मत है कि आत्मकथा स्वतन्त्र रूप से लिखी गयी हो उससे व्यक्ति के जीवन-दर्शन एवं विचारों का अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है साथ ही उसकी अभिव्यक्ति की क्षमता भी जानी जा सकती है ।

{6} समाजमिति विधि :-

किसी समूह के सदस्यों के बीच किसी खास समय पर मौजूद पारस्परिक सम्बन्धों के जानने में उपयोगी होती है ।

(7) व्यक्ति इतिहास विधि :-

एच0बी0 इंगलिश और ए0सी0इंगलिश के अनुसार "व्यक्ति इतिहास वह अध्ययन है जिसमें सामाजिक मनोवैज्ञानिक शारीरिक जीवन सम्बन्धी पर्यावरण सम्बन्धी तथा व्यावसायिक सूचनाओं को इस उद्देश्य से एकत्र किया जाता है कि उनके प्रकाश में किसी एक व्यक्ति या पारिवारिक इकाई की सहायता की जा सके इसमें संतोष प्रद उपलब्धि हेतु आवश्यक है कि अध्ययन का उद्देश्य के साथ सामान्य तथ्य, पारिवारिक इतिहास, शारीरिक स्वास्थ्य, शैक्षिक इतिहास, व्यक्तित्व सम्बन्धी सूचनाएँ तथा सामाजिक सम्बन्धों, आदतों सिद्धान्तों का सही एवं तथ्यात्मक विवरण प्राप्त किया जाये ।

व्यक्तित्व के अध्ययन की कठिनाइयाँ

उक्त सभी विधियाँ अधिकतर छात्रों की कार्यक्षमता की जाँच प्रशासनिक दृष्टि से नियुक्त मनोरोग से पीड़ित व्यक्ति है की परीक्षा अथवा अपराध की छानबीन के सम्बन्ध में उपयोग की गइ हैं । इनमें से किसी भी एक विधि से उक्त व्यक्ति के व्यक्तित्व का अध्ययन किया जाना कठिन है जो अब जीवित नहीं है । उस व्यक्ति से साक्षात्कार नहीं किया जा सकता है, उससे प्रश्नावली का उत्तर नहीं लिखाया जा सकता है, उसके कार्यों एवं व्यवहारों का भौतिक दृष्टि से निरीक्षण नहीं किया जा सकता, समाज-मिति विधि का भी उपयोग नहीं है• क्रम-निर्धारण विधि भी इस सम्बन्ध में उपयोगी नहीं होगी। व्यक्ति इतिहास विधि का उपयोग इस तरह किया जा सकता है कि उसके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उसके परिवार के व्यक्ति सहकर्मियों मित्रों और प्रेमियों से साक्षात्कार करके तथा प्रश्नावली भेजकर उनसे सूचना एकत्र करके तथा उनके द्वारा लिखे विवेचन सम्बन्धी साहित्य से तथा उनके द्वारा लिखे

भेदों व गुणों से रूपात्मक विवरण प्रस्तुत किये जाये जिससे उनका मनो-वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषणात्मक अध्ययन करके व्यक्तित्व का आकलन हो सके । इस प्रकार के अध्ययन में सही तथ्यों को उजागर लाने हेतु सतत् सावधानी की आवश्यकता है ।

1.6 निष्कर्ष :-

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निम्नांकित निष्कर्ष निकलते हैं :--

----- व्यक्तित्व के अन्तर्गत बाह्यशारीर संरचना एवं व्यवहार, आचार-विचार तथा आंतरिक मनःस्थितियाँ करुणा, दया, क्षमा, उदारता, मृदुता, शान्ति, प्रेम, स्नेह, सहज भाव, बुद्धि, विवेक धैर्य और पुरुषार्थ आदि आते हैं ।

----- व्यक्तित्व के स्पष्टतः दो अंग हैं - बाह्य व्यक्तित्व एवं आंतरिक व्यक्तित्व । इन दोनों का समन्वय ही व्यक्तित्व का समग्र रूप प्रस्तुत करता है ।

----- व्यक्तित्व के दो अंगों में प्रमुखता आंतरिक व्यक्तित्व की होती है । आंतरिक व्यक्तित्व ही रूपान्तर रूप में बाह्य व्यक्तित्व में ही प्रकट होता है या वह अप्रकट - आंतरिक का बाह्य प्रकटत्व व्यक्तित्व होता है ।

----- आंतरिक व्यक्तित्व की सरल निष्कपट स्थिति की बाह्य, अभिव्यक्ति, शरीर संरचना तक को प्रभावित करती है । तथा शरीर के अवयवों की हाव भावगत भावभूमि में सरलता एवं सौम्यता की अभिव्यक्ति कर व्यक्तित्व के प्रति पूज्य भाव जाग्रत करती है । इसके विपरीत कपटपूर्ण मनःस्थिति के संदर्भ

में शरीर संरचना की संपूर्ण भाव-भूमि को प्रकट करती है । मुखाकृति को तो अन्तर का दर्पण ही समझना चाहिये ।

●●●●● आंतरिक व्यक्तित्व की स्थिति में मन का प्रमुख हाथ होता है। कपटपूर्ण व्यवहार से मन की तामस की स्थिति को सत् की स्थिति के रूप में प्रस्तुत एवं प्रकट किया जा सकता है और धोखा दिया जा सकता है किन्तु कालान्तर में इस कपट पूर्ण व्यवहार की कलई खुल जाती है ।

●●●●● मन की प्रवंचना शक्ति के कारण ही व्यक्तित्व के निर्धारण में कठिनाई आती है । व्यक्तित्व का वास्तविक स्वरूप निर्धारण करने के लिये विभिन्न विधियाँ प्रतिपादित की गई हैं जिनके द्वारा यह आशा की जाती है कि व्यक्तित्व की वास्तविकता एक सीमा तक सही आकलित हो सकेगी ।

●●●●● पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने कलात्मक रचना कार्य, सामाजिक कल्याण कार्य, तत्परता आदि जैसे उदात्त कार्य- कलापों को अहम् की तुष्टि का साधन माना है अतएव तथाकथित अच्छी मानी जाने वाली प्रवृत्तियों की पृष्ठभूमि में भी मन के कलुषित होने की संभावना हो सकती है ।

आंतरिक व्यक्तित्व को पकड़ पाना अत्यन्त दुरूह कार्य है । इसलिए व्यक्तित्व निर्धारण में सतत् सावधानी अपेक्षित है जिसके अभाव में केवल बाह्य व्यवहार, आचार-विचार का अध्ययन एकांगी होगा अथवा वह प्रवंचनात्मक स्थिति तक भी पहुँच सकता है ।

प्रकरण-1 [आ]

भागवत एवं संत दर्शितत्व

1.1 भागवत दर्शितत्व - श्रीमद्भगवद् गीता

1.2. भागवत दर्शितत्व - श्रीमद्भागवत

1.3 भागवत दर्शितत्व - वैराग्य संदीपिनी

1.4 भागवत दर्शितत्व - विनय पत्रिका

1.5 भागवत दर्शितत्व - श्रीरामचरित मानस

1.6. भागवत दर्शितत्व - अन्य भक्त कवियों के अनुसार संत लक्षण

1.7 भागवत दर्शितत्व - श्री पोद्दार जी-संत लक्षण

1.8 भागवत दर्शितत्व - उपर्युक्त ग्रंथों एवं पोद्दार जी के आधार पर संत लक्षणों का तुलनात्मक विवरण

1.9 निष्कर्ष

भागवत एवं संत कवयित्रियाँ

भागवत एवं संत कवयित्रियों की पृथक् स्थिति होने, धर्मप्रधान देश होने के कारण इस देश में समय-समय पर पृथक् पृथक् आचार-मत सम्प्रदायों की स्थापना होती रही है । प्रत्येक सम्प्रदाय के गुरुओं, उनके शिष्यों, एवं अनुयायियों की मान्यताओं से इन सम्प्रदायों का गठन होता रहा है । इनके दो वर्ग हैं -

(1) गृहत्यागी साधु, सन्यासी, योगी, नागा, स्वामी (अवधूत) महन्त आदि

(2) गृहस्थ संत, राजयोगी, आदि

सन्यासी अथवा त्यागी महात्माओं के आश्रम, अखाड़े आदि एक पृथक् संसार बनाये होते हैं जिनके आचार-विचार एवं व्यवहार अपने सम्प्रदाय के नियमों के अनुकूल पृथक् होते हैं । देवालय मंदिर आदि में देवपूजन का और कहीं-कहीं पृथक् आवासीय व्यवस्थाएँ होती हैं । इन सम्प्रदायों की पृथक् स्थिति एवं संगठन के कारण आपसी विवाद और संघर्ष भी हुआ करते हैं । इन गृह-त्यागी व्यक्तियों में सच्चे साधक एवं परमार्थगामी अपेक्षाकृत कम तथा दिखावा करने वाले व भेषधारी वर्गों के माध्यम से प्रभावित करने वाले व्यक्ति अधिक पाये जाते हैं । इसी कारण यह वर्ग कहीं-कहीं उपहास एवं अपमान का भाजन भी बना है । इन पर से पृथक् जनता का विश्वास भी कम होता जा रहा है । उक्त संदर्भ में गृहस्थ सन्तों की परम्परा प्रारम्भ हुई और गृहस्थ भक्तों की एक पृथक् स्थिति बनी ।

"श्रीमद्भगवद्गीता", "श्री मद्भागवत", श्री रामचरित मानस आदि धार्मिक ग्रंथों में इन्हीं गृहस्थभक्तों का अधिकांश में वर्णन मिलता है ।

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार की उच्चकोटि के भगवद्भक्त एवं गृहस्थ सन्त थे अतएव इस परम्परा का पृथक अध्ययन आवश्यक समझा गया ।

"भागवत" शब्द का अर्थ है – विष्णु से सम्बन्ध रखने वाला, वैष्णव सम्बन्धी, पवित्र दिव्य पुण्यशील । अतएव भागवत धर्म तत्त्व का अर्थ होता है-पवित्र धर्म तत्व, दिव्य धर्मतत्त्व ।

"सन्त" शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल के अनुसार दो प्रकार से संभावनाएँ हैं-प्रथम यह कि वह संस्कृत के "सत्" शब्द के बहुवचन "सन्तः" से हिन्दी में एक वचन में प्रयोग होने लगा हो ऐसी दशा में सन्त के अर्थ होंगे जो सत् है अथवा जिसे सत्य की अनुभूति हो गई है । दूसरी बात यह हो सकती है कि "शान्त" शब्द का अपभ्रंश संत या पश्चात् सन्त हो गया हो उस दशा में संत शब्द का अर्थ होगा जिसकी ~~भावनाएँ~~ कामनाएँ शान्त हो गई हों । पं० परशुराम चतुर्वेदी ने सन्त शब्द को अस् (होना) धातु से शतृ प्रत्यय लगाकर शब्द सत् बनना तथा उससे सन्त बन जाना माना है इस प्रकार "सन्त" शब्द शुद्ध अस्तित्व का बोधक होता है । सत् शब्द के अर्थ संस्कृत हिन्दीकोश के अनुसार (पुल्लिंग में) भद्र पुरुष, सद्गुणी व्यक्ति, ऋषि (स्त्री लिंग में) वर्तमान, विद्यमान, सत्य, वास्तविक, सद्गुण सम्पन्न, धर्मात्मा, कुलीन, श्रेष्ठतम, सम्माननीय, विद्वान, सुन्दर दृढ़, स्थिर, तथा (नपुंसक लिंग में) सर्व निरपेक्षसत्ता, अस्तित्व, वस्तुतः विद्यमान, सचाई, वास्तविकता ब्रह्म, ब्रह्म या परमात्मा ।[1]

"सत्" शब्द के पुल्लिंग प्रथमा विभक्ति के रूप, एक वचन में "सन्" द्विवचन में "सन्तौ" और बहुवचन में "सन्तः" बनते हैं उक्त विवेचन से सन्त शब्द की उत्पत्ति अस् और सत् से अधिक समीचीन प्रतीत होती है।

संस्कृत के ग्रंथ श्रीमद्भगवद्गीता या भगवदुक्त श्रीमद्भागवत में <u>वर्णित उत्तम भागवत, तथा हिन्दी के ग्रंथ रामचरित मानस में वर्णित सन्त</u>

1. संस्कृत हिन्दी कोश-वामन शिवराम आप्टे पृष्ठ - 1061

एक ही सिक्के के दो पहलू हैं इनका तुलनात्मक दृष्टि से विवेचन श्री पोद्दार जी के संतत्व के सन्दर्भ में नये आयामों की संभावनाओं हेतु अपेक्षित है । लक्षण धारकों से निर्धारित हुआ करते हैं । युगीन परिस्थितियों के अन्तर्गत नये आयामों को भी आदर्श एवं मानकों की स्थापना हेतु लेना पड़ता है इस प्रकार नये लक्षण प्रकट होते रहते हैं । यह अवश्य है कि इस प्रकार के नये लक्षण गिने चुने ही होते हैं । शास्त्रीय विवेचन सन्तों के निरीक्षण-परीक्षण के आधार पर प्रस्तुत होते है और वे ऐसे आदर्श प्रस्तुत करते हैं जो मानवमात्र के लिये जीवन आदर्श बन जाते हैं ।

भागवत सन्तत्व के लिये श्रीमद् भगवद्गीता में भगवद्भक्त (अध्याय 12) स्थितप्रज्ञ (अध्याय 2), गुणातीत (अध्याय 14) कर्मयोगी संन्यासी (अध्याय 5) दैवीसम्पद (अध्याय 16) तथा श्रीमद्भागवत में साधु के लक्षण एकादश स्कंध के अध्याय 11 में वर्णित हैं ।

सन्त सन्तत्व के लिए तुलसीदास की रचना वैराग्य संदीपिनी, विनय पत्रिका तथा श्रीराम चरितमानस तथा अन्य भक्त कवियों के स्फुट पद विस्तृत एवं तुलनात्मक विवेचन हेतु लेना उचित होगा ।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के द्वारा लिखे संत लक्षण एवं संतों की महिमा पर लिखे लेख एवं पद भी विषय पर विशद प्रकाश डालेंगे अतः उन्हें भी इस विवेचन में सम्मिलित किया गया है ।

1·1 भागवत सन्तत्व-श्रीमद्भगवद्गीता

गीता के अध्याय 12 के श्लोक 13 से 20 तक भगवान् श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन को अपने प्रिय भक्तों के लक्षण बताते हुए 'वह मेरे को प्रिय है,' (स मे प्रियः) शब्दों का प्रयोग पांच बार किया है । ये लक्षण गिनती में 40 हैं । इनमें से सात लक्षणों के दो-दो बार आने से 33 लक्षण ही रह जाते

हैं जो निम्नांकित प्रकार से हैं :-

{1} सब भूतों में द्वेष-भाव से रहित {2} स्वार्थ रहित सबका प्रेमी {3} हेतुरहित दयालु {4} ममता से रहित {5} अंहकार से रहित {6} सुख-दुख की प्राप्ति में सम {7} क्षमावान् {8} ध्यान योग में युक्त {9} लाभ-हानि में सन्तुष्ट {10} मन और इन्द्रियों सहित शरीर को वश में किये हुए हैं {11} दृढ़ निश्चयी {12} मन और बुद्धि को अर्पण किये हुए हैं {13} जिससे कोई भी प्राणी उद्वेग को प्राप्त नहीं होता {14} जो किसी जीव से उद्वेग को प्राप्त नहीं होता {15} जो हर्ष को प्राप्त नहीं होता {16} जिसको दूसरे की उन्नति देखकर डाह नहीं होता {17} जो भय रहित है {18} आकांक्षा रहित है {19} बाहर तथा भीतर से शुद्ध {20} दक्ष {21} उदासीन {22} दुःखों से मुक्त {23} जो सभी कार्यों के आरम्भ में कर्तापन के अभिमान का त्याग किये हुए है {24} शोक रहित {25} शुभ-अशुभ सम्पूर्ण कर्मों के फल का त्यागी {26} शत्रु-मित्र में सम {27} मान-अपमान में सम {28} सर्दी-गर्मी में सम {29} निन्दा-स्तुति में सम {30} मनन शील {31} रहने के स्थान में ममता रहित {32} स्थिर बुद्धिवाला {33} श्रद्धासहित धर्म रूप अमृत का सेवन करने वाला । इनके अतिरिक्त उद्वेग रहित {12/15}, हर्ष रहित {12/17} द्वेषभाव से रहित {12/16} आंकाक्षा रहित {12/17} दुख-सुख की प्राप्ति में सम {12/18} आसक्ति रहित {12/18} सन्तुष्ट {12/19} ये ऐसे लक्षण है जो दुबारा कहेगये है । इन लक्षणों की पुनरावृत्ति इन लक्षणों के महत्व को बढ़ा देती हैं ।

{1} अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ।।
संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनो बुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।।

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।

हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।

सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।

शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।

शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ।

अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।

श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥

गीता 12/13-20.

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय दो के श्लोक 54 में अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से पूछा कि स्थित प्रज्ञ अर्थात् समाधिस्थ के क्या लक्षण है? वह कैसे बोलता है? कैसे बैठता है? और कैसे चलता है? इस जिज्ञासा के उत्तर में भगवान श्रीकृष्ण ने 18 श्लोकों (श्लोक 55 से 72 तक) में स्थित प्रज्ञ के 14 लक्षण कहे हैं -

(1) मन में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं का त्याग (2) अपने में ही संतुष्ट (3) उद्वेग रहित मनवाला (4) सुख की स्पृहा रहित (5) राग से रहित (6) भय से रहित (7) क्रोध रहित (8) ममता रहित (9) शुभ-अशुभ वस्तुओं की प्राप्ति में समान भाव (10) इन्द्रियों को वश में रखने वाला (11) राग-द्वेष से रहित (12) सभी प्रकार के दुःखों से मुक्त (13) प्रसन्नचित्त (14) अहंकार रहित। इनमें से कामनाओं के त्याग के लिए पुनः तीन बार कहा है (1) सर्वान् कामान् विहाय (2/71) (2) सर्वे कामाः प्रविशन्ति (2/70) (3) स्पृहा रहित (2/71) इसलिए इस लक्षण की सबसे अधिक महत्ता हो जाती है। इसके अतिरिक्त एक जगह अनाभिस्नेह (2/57) तथा दूसरे स्थान पर निर्ममः (2/71) कहकर आसक्ति रहित होने पर बल देने का भाव प्रकट होता है। इसी तरह रागरहित होने की बात भी दो बार कही है तथा यह भी कहा है कि निराहार रहने से विषय तो निवृत्त हो जाते हैं किन्तु राग की निवृत्ति नहीं होती (रस वर्जं-2/59) राग, आसक्ति का ही रूप है। इसलिए यह मानना उचित होगा कि आसक्ति (राग) रहित होना कहने पर अत्यधिक बल देने का आशय प्रकट होता है।

यह भी उल्लेखनीय है कि इन्द्रियों की प्रबलता प्रदर्शित करते हुए जल में नाव को जैसे वायु द्वारा बलात् हर ले जाने का उदाहरण देकर तथा कछुवे की भाँति इन्द्रियों को समेटने अर्थात् वश में करने का उदाहरण कई

---

(1) प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ।।
(गीता 2/55)

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥

{गीता 2/56}

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

{गीता 2/57}

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

{गीता 2/61}

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥

{गीता 2/64}

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥

{गीता 2/65}

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

{गीता 2/68}

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥

{गीता 2/71}

श्लोकों में देकर इन्द्रियों को वश में रखने हेतु भी भगवान ने अधिक जोर दिया है। दूसरे शब्दों में भगवान ने स्थितप्रज्ञ व्यक्तित्व में अन्य लक्षणों के बीच इन्द्रियों के वश में रखने, समस्त कामनाओं का त्याग तथा आसक्ति रहित होने पर अधिकतम बल दिया है। अनासक्ति को केन्द्र बिन्दु मानकर ही महात्मा गांधी जी ने भगवद्गीता के अपने अनुवाद को "अनासक्ति योग" नाम दिया है।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता के अध्याय 14 के श्लोक 23 से 25 तक में गुणातीत व्यक्तित्व के लक्षण इस प्रकार बतलाये है — (1) उदासीन भाव से (साक्षी के सदृश) स्थित रहना (2) आत्मभाव में स्थित (3) दुःख-सुख में समान भाव (4) मिट्टी तथा सोने में समान भाव (5) प्रिय-अप्रिय की प्राप्ति में समान भाव (6) निन्दा-स्तुति में समान भाव (7) मान-अपमान में समान भाव (8) मित्र-शत्रु में समान भाव (9) धैर्यवान (10) सम्पूर्ण आरंभों में कर्तापन के अभिमान का त्याग।[1]

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 5 के श्लोक 7 से 12 तक कर्मयोगी संन्यासी के निम्नांकित लक्षण बतलाये है :-

(1) शरीर को वश में किये हुए (2) इन्द्रियों को वश में रखने वाला (3) विशुद्ध अन्तःकरण वाला (4) सभी प्राणियों के आत्म रूप परमात्मा में एकीभाव हुआ (5) सब कर्मों को परमात्मा में अर्पण करने वाला (6) आसक्ति रहित (7) कर्मफल का त्याग करने वाला।[2]

---

(1) उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते॥

(गीता 14/23-25)

(क्रमशः)

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः ।

सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥

{गीता 5/7}

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।

लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥

{गीता 5/10}

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि ।

योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥

{गीता 5/11}

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥

{गीता 5/12}

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 तक दैवी सम्पदा प्राप्त पुरुष के नीचे लिखे हुए 26 लक्षणों का वर्णन किया गया है :-

(1) अभय (2) अन्तःकरण की भली प्रकार स्वच्छता (3) तत्व ज्ञान के लिए ध्यान योग में दृढ़स्थिति (4) सात्विक दान (5) इन्द्रियों का दमन (6) अग्निहोत्र आदि कार्यों का आचरण (7) स्वाध्याय (8) तप (9) सरलता (10) अहिंसा (11) सत्य (12) क्रोधरहित (13) कर्तापन का त्याग (14) अन्तःकरण की शान्ति (15) किसी की निन्दा न करना (16) सभी प्राणियों में दया (17) इन्द्रियों के विषयों में आसक्ति का न होना (18) कोमलता (19) लोक और शास्त्र के विरुद्ध आचरण में लज्जा (20) चपलता रहित (21) तेज (22) क्षमा (23) धैर्य (24) बाहर-भीतर की पवित्रता (25) किसी से भी शत्रुभाव न होना (26) अभिमान न होना ।[1]

1.2 भागवत धर्मविवरण - श्रीमद्भागवत

श्रीमद्भागवत के स्कंध 11 के अध्याय 11 में उद्धव जी ने भगवान श्री कृष्ण से प्रश्न किया कि आपके मत से साधु कौन है?[2] भगवान श्रीकृष्ण ने साधु के नीचे लिखे 28 लक्षण बताये :-

---

(1) अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोग व्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ (गीता 16/1-3)

(2) साधुस्त्वयोत्तम श्लोक मतः की दृग्विधः प्रभो ।
श्रीमद्भागवत 11/11/26.

(1) समस्त प्राणियों के प्रति कृपालु (2) जिसका किसी के साथ वैर नहीं (3) तितिक्षावान (4) सत्यशील (5) पवित्र अन्तःकरण वाला (6) समभाव वाला (7) सबका उपकार करने वाला (8) कामना रहित (9) इन्द्रियों को वश में रखने वाला (10) मृदुस्वभाव (11) बाहर-भीतर से शुद्ध (12) अंकिंचन (13) इच्छारहित (14) मिताहारी (15) शान्त (16) स्थिर-बुद्धि (17) भगवान की शरण (18) भगवान के गुणों का मनन करने वाला (19) प्रमाद रहित (20) गम्भीर अन्तःकरण वाला (21) धैर्यवान् (22) भूख-प्यास, शोक, मोह, जन्म-मृत्यु इन छः गुणों को जीत लेने वाला (23) अभिमान रहित (24) दूसरों को मान देने वाला (25) सामर्थ्यवान (26) सबका मित्र (27) दयालु (28) तत्त्वज्ञाता।[1]

1.3 भगवान आगे श्लोक 33 में कहते हैं कि जो अनन्यभाव से भजते हैं वे श्रेष्ठ भक्त हैं ऐसा मेरा मत है।[2] साधु के लक्षण पूछने पर भगवान लक्षण बताने के बाद उसे भक्त श्रेष्ठ कहते हैं इससे सिद्ध होता है कि साधु और भक्त एक ही के दो नाम हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने "वैराग्य संदीपिनी" नामक छोटे से ग्रंथ की रचना की है 62 छन्दों के ग्रंथ में मंगलाचरण के बाद 26 छन्दों (दोहा, चौपाई में) सन्तस्वभाव का वर्णन है 9 छन्दों में संत महिमा का तथा 20 छन्दों में शान्ति वर्णन है।

---

(1) कृपालुरकृतद्रोहस्तितिक्षुः सर्वदेहिनाम् ।
सत्यसारोऽनवद्यात्मा समः सर्वोपकारकः ॥
कामैरहतधीर्दान्तो मृदुः शुचिरकिंचनः ।
अनीहो मितभुक् शान्तः स्थिरो मच्छरणो मुनिः ॥
अप्रमत्तो गभीरात्मा धृतिमाञ्जितषड्गुणः ।
अमानी मानदः कल्यो मैत्रः कारुणिकः कविः ॥
(श्रीमद्भागवत 11/11/29-31)

(2) भजन्त्यनन्यभावेन ते मे भक्ततमा मताः - श्रीमद्भागवत 19/11/33.

इस ग्रंथ के बारे में तुलसीदास जी ने लिखा है —

तुलसी वेद-पुरान-मत, पूरन सास्त्र विचार ।
यह विराग-संदीपनी, अखिल ग्यान को सार ।।
(वैरा०सं० 7)

वैराग्य-संदीपनी में संतों के लक्षण निम्नलिखित रूप में दिए गये हैं :-

(1) पराये कार्य में तथा परमार्थ में रत (2) सत्य बोलना या चुप रहना (3) विचार कर कुछ कहना (4) जो ऐसी वाणी जिसको सुनकर क्रोध गरमी शमित हो जाय (5) शरीर के तापों को हरने वाली शीतलतावाणी (6) आत्मानुभव कराने वाली तथा दुःख व भय को दूर करने वाली वाणी बोले (7) किसी को शत्रु न माने न किसी को मित्र सबको समान माने (8) इन्द्रियजित (9) भगवान के सिवाय किसी और विषय न चाह ऐसा अनन्यता (10) दुःख न सुख से रागद्वेष करना (11) जगत को मृगतृष्णा के समान मिथ्या माने (12) निष्कामी तथा सुशील (13) दूसरे की कठोर-वाणी तथा अत्याचार को सहन करना (14) अकिंचन (15) मन-वचनकर्म से किसी को दुखित न करे (16) कंचन कांच के समान माने (17) स्त्री को काठ के समान माने (18) साथी संगी को अपने समान संत बना देना (19) अहंकार न होना (20) दुख में दुखी न होना, सुख में सुख न मानना (21) आत्म ज्ञान होने से "मैं" "मेरे" का मोह नष्ट होना ।[1]

(1) तुलसी ऐसे कहुँ कहूँ, धन्य धरनि वह संत ।
परकाजे परमारथी, प्रीति लिये निबहंत ।।(वैरा०सं० 10)
की मुख पट दीन्हे रहैं, जथा अर्थ भाषंत ।
तुलसी या संसार में, सो विचार जुत संत ।।(वैरा०सं० 11)
बोलै बचन बिचारि कै, लीन्हें संत सुभाय ।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पंथ देत नहिं पाँय ।।(वैरा०सं० 12)
सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि ।
तुलसी यह मत संत को, बोलै समता माहि ।।(वैरा०सं० 13)

अति अनन्य गति इंद्री जीता । जाको हरि बिनु कतहुँ न चीता ॥
मृगतृष्णा सम जग जिय जानी । तुलसी ताहि संत पहिचानी ॥
{वैरा०सं० 15}

सील गहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मुख राम ।
तुलसी रहिए एहि रहनि, संत जनन को काम ॥
{वैरा०सं० 16}

निज संगी निज सम करत, दुरजन मन दुख दून ।
मलयाचल है संतजन, तुलसी दोष बिहून ॥
{वैरा०सं० 18}

कोमल बानी संत की, स्रवत अमृतमय आइ ।
तुलसी ताहि कठोर मन, सुनत मैन होइ जाइ ॥{वैरा०सं०19}
तन करि मन करि बचन करि, काहू दूखत नाहिं ।
तुलसी ऐसे संतजन, रामरूप जग माहिं ॥ {वैरा०सं०23}

कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काष्ठ पषान ।
तुलसी ऐसे संतजन, पृथ्वी ब्रह्म समान ॥ {वैरा०सं०27}

कंचन को मृत्तिका कर मानत । कामिनि काष्ठ सिला पहिचानत ।
तुलसी भूलि गयो रस एहा । ते जन प्रगट राम की देहा ॥
{वैरा०सं०28}

आकिंचन इन्द्रीदमन, रमन राम इक तार ।
तुलसी ऐसे संत जन, बिरले या संसार ॥{वैरा० सं० 29}

अहंबाद "मैं" "तैं" नहीं दुष्ट संग नहिं कोइ ।
दुःख ते दुख नहिं उपजै, सुख ते सुख नहिं होई॥{वैरा०सं०30}

सम कंचन काँचै गिनत, सत्रु मित्र सम दोइ ।
तुलसी या संसार में, कहत संत जन सोइ ॥{वैरा०सं०31}
मैं तैं मेट्यो मोह तम, उग्यो आतमा भानु ।
संत राज सो जानिये, तुलसी या सहिदानु ॥{वैरा०सं०33}

सन्तों की महिमा के वर्णन करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुये तुलसीदास जी ने लिखा है कि विमल विवेक वाले श्री शंकर जी (जिनके पाँच मुख हैं) और शेष जी (जो सहस्र मुख वाले हैं) सन्त की महिमा का वर्णन करने में समर्थ नहीं होते तब उनकी महिमा का वर्णन एक मुख से कैसे किया जा सकता है ।[1] आगे वे कहते हैं कि पृथ्वी को कागज समुद्र को स्याही और कल्पवृक्ष को कलम बनाकर गणेश जी से भी संतों की महिमा नहीं लिखी जा सकती है ।[2]

1.4 गोस्वामी तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में यह अभिलाषा व्यक्त की है कि (भगवान राम की) उनका स्वभाव सन्त जैसा हो जाय:-

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्री रघुनाथ कृपालु कृपा ते संत-सुभाव गहौंगो ।।
जथा लाभ संतोष सदा काहू सो कछु न चहौंगो ।
पर हित निरत निरन्तर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो ।।
परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो ।।
बिगत मान सम, सीतल मन, पर गुन नहिं दोष कहौंगो ।।
परिहरि देह जनित चिन्ता, दुःख-सुख सम बुधि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि, अबिचल हरि भगति लहौंगो ।।

(विनयपत्रिका 172)

इस पद में उन्होंने अपने में सन्तों के ।। गुणों को अपने में ही लाने की कामना की है जिनके अनुसार वह अपनी रहनी भी चाहते हैं

---

(1) को बरनै मुख एक, तुलसी महिमा संत की ।
जिन्ह के बिमल बिबेक, सेस महेस न कहि सकत ।।
(वै0सं0दो034)

(2) महि पत्री करि सिन्धु मसि, तरु लेखनी बनाई ।
तुलसी गनपत सों तदपि, महिमा लिखी न जाइ ।।
(वै0सं0 दो0 35)

क्योंकि इसी मार्ग पर चलकर उन्हें अविरल हरिभक्ति की प्राप्ति सुलभ होगी । ये गुण इस प्रकार है :-

{1} यथालाभ संतोष {2} किसी से कुछ भी न चाहना {3} निरन्तर दूसरे के हितकारी कार्यों में लगा रहना {4} मन-कर्म-वचन से यम नियमों का पालन करना {5} किसी के द्वारा भी कठोर तथा असहनीय वचन कहे जाने पर दुःखी न होना {6} अभिमान रहित हों {7} शांत स्वभाव {8} हानि-लाभ, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों से समभाव {9} दूसरों के गुण-दोष कुछ भी वाणी से न कहना {10} दैहिक चिन्ताओं का त्याग {11} दुःख-सुख में सम ।

1.5. सन्त तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में सन्तों के लक्षण बालकाण्ड, में बन्दना करने के प्रसंग में, {दोहा 3{क} तथा दोहा 6में} अयोध्याकाण्ड में मुनि वाल्मीकि के द्वारा वनवासी राम को रहने योग्य स्थान{निकेत}बताने के प्रसंग में{दोहा 127से131 तक}वर्णित हैं । अरण्य काण्ड में मुनि नारद जी के सन्तो के लक्षण पूछने पर श्रीरामचन्द्र जी के द्वारा {दोहा 44 से 46 में} सन्तो के उन गुणों का वर्णन किया गया है जिनके कारण भगवान सन्तों के वश में रहते हैं । किष्किन्धाकाण्ड में लक्ष्मण जी के {दोहा 13से16 के बीच}[लक्ष्मण जी के]प्रति वर्षा ऋतु तथा शरद ऋतु की शोभा का वर्णन करने के प्रसंग में संतो के 3 लक्षण कहे गये हैं।सुन्दरकाण्ड के 47 दोहे के बाद श्री रामचन्द्र जी ने शरण में आये विभीषण को अपना स्वभाव बताते हुए संत सज्जन के 11 लक्षण गिनाये हैं । लंकाकाण्ड में 79 व 80 दोहे में अधीर विभीषण के प्रति धर्ममय रथ का वर्णन करने के प्रसंग में गुणों का वर्णन किया गया है । उत्तरकाण्ड में भरत जी के द्वारा संतो के लक्षण पूछने पर श्री रामचन्द्र जी के द्वारा{दोहा 36से 38 के बीच}36 लक्षणों का वर्णन किया गया है । उत्तरकाण्ड में ही खगराज गरुड़ के द्वारा पूछे गये सप्त प्रश्नों में से चतुर्थ प्रश्न "संत असंत मरम तुम्ह जानहु।तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु" {रामचरित मानस 7/120/5}के उत्तर में काक भुशुण्डि जी ने{120 वें दोहे के बाद}संतो के स्वभाव का वर्णन किया है । इन सबका प्रकार वर्णन नीचे किया जा सकते

बालकाण्ड में तुलसीदास जी ने कहा है कि "साधु महिमा" का वर्णन करने में ब्रह्मा विष्णु कवि और विद्वानों की वाणी भी संकोच करती है (वर्णन करने में असमर्थ रहती है) उसका वर्णन मुझसे (तुलसीदास जी के) द्वारा उसी प्रकार संभव नहीं है जैसे मणि के गुणों का वर्णन साग बेचने वाले के द्वारा संभव नहीं होता।' इसके बाद उन्होंने संतों के 5 गुण-(1) सबमें समान भाव रखने वाले (2) जिनका कोई शत्रु नहीं (3) सरल बुद्धि वाले तथा (4) संसार के हित में लगे रहने वाले और (5) गुण-दोषमय संसार में से केवल गुणों को ग्रहण करने वाले कह कर उनसे भगवान राम के चरणों में प्रेम प्रदान करने की विनती की है।

अयोध्याकाण्ड में वाल्मीकि मुनि से रामचन्द्र जी ने पूछा-
"अस जिय जानि कहिअ सोइ ठाऊँ। सिय सौमित्रि सहित जहँ जाऊँ।"
(रा०च०मा० 2/125/5)

इस जिज्ञासा के उत्तर में मुनि वाल्मीकि जी ने भक्तों व सन्त पुरुषों के लक्षण बताये हैं जिनको धारण करने वालों के हृदय भगवान के बस रहने योग्य स्थान हैं। अयोध्याकाण्ड के 127 में दोहे के बाद 131 के दोहे तक में 14 स्थान गिनाये गये हैं जिनमें से 5 भक्त के शरीर

---

(1) बिधि हरि हर कबि कोबिद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी॥
सो मो सन कहि जात न कैसे। साक बनिक मनि गुन गन जैसे॥
(रामचरितमानस-1/2/11-12)

(2) दोहा- बंदउँ संत समान चित हित अनहित नहिं कोइ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोइ॥ (रा०च०मा०1/3(क))

दोहा- संत सरल चित जगत हित जानि सुभाउ सनेहु।
बाल बिनय सुनि करि कृपा रामचरन रति देहु॥
(रा०च०मा०1/3"ख")

दोहा- जड़ चेतन गुनदोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार॥
(रा०च०मा०)

की विभिन्न इन्द्रियों के कार्य से भगवान की पूजा अर्चा से सम्बन्धित है, आगे छः में स्वाभाव के सुधार हेतु गुणों का वर्णन है और एक से बारहवें, तक कुछ त्याग, तेरहवें में भक्त की तुष्टि एवं चौदहवें में भगवान के प्रति सहज स्नेह हो जाने की स्थिति का वर्णन है इनका वर्णन स्वभाव और प्रभाव के क्रम में किया गया प्रतीत होता है ।

(1) जिनके कान राम कथा सुनने से तृप्त नहीं होते । (2) जिनके नेत्र भगवान के रूप देखने हेतु लालायित रहते हैं (3) जिनकी जिह्वा भगवान के गुणों का ही वर्णन करती है (4) जिनकी नासिका प्रभु के प्रसाद को ग्रहण करती है (5) जो भोजन करके भगवान का प्रसाद मानकर ग्रहण करते हैं (6) जो देवता गुरु ब्राह्मण को देखते ही विनम्रता के साथ प्रणाम करते हैं (7) जिनके हाथ अनन्य विश्वास के साथ भगवान की नित्य पूजा करते हैं (8) जो श्रद्धा-भक्ति के साथ तीर्थ में जाते हैं (9) जो भगवान के नाम का नित्य जप करते हैं और परिवार जनों सहित नित्य पूजन करते हैं (10) जो विविध प्रकार से श्राद्ध व तर्पण तथा हवन करके ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं (11) जो अपने गुरुदेव को भगवान से भी बढ़कर मानते हुए उनकी सम्मानपूर्वक सब प्रकार से सेवा करते हैं और भगवान के चरणों में प्रेम होने की याचना करते हैं (12) जिनमें काम [13] क्रोध [14] मद [15] मान [16] मोह [17] लोभ [18] क्षोभ राग (19) द्रोह (20) कपट (21) दंभ और (22) माया का अभाव हो गया है (23) जो सबके प्रिय हैं (24) जो सबका हित करने वाले हैं (25) जो दुःख-सुख को समान समझते हैं (26) जो निन्दा-स्तुति में समबुद्धि रखते हैं । (27) जो भली प्रकार विचार करके सत्य और प्रिय वाणी बोलते हैं (28) जो अनन्यभाव से भगवान की शरणागत हैं (29) जो पर-स्त्री को माता के समान मानते हैं (30) जो पराये धन को विष के समान समझते हैं । (31) जो दूसरे की उन्नति देखकर प्रसन्न होते हैं (32) जो दूसरे को विपत्ति में देखकर विशेष कर विशेषरूप से दुखी होते हैं (33) जिनको भगवान प्राणों के समान प्रिय हैं (34) जो केवल भगवान की

माता-पिता, गुरु, स्वामी एवं मित्र समझकर उन्हीं के सहारे रहते हैं। {35} जो सब के गुणों को देखते हैं अवगुणों को नहीं देखते {36} जो गौ, ब्राह्मण की रक्षा के लिये कष्ट सहने को तैयार रहते हैं {37} जिनकी नीति निपुण के रूप में जानकारी है {38} जो भगवान के गुणों का स्मरण करते हैं तथा अपने अवगुणों को भी देखते रहते हैं {39} जिन्हें सभी प्रकार से भगवान का ही भरोसा है {40} जिन्हें भगवान के भक्तों का संग प्यारा लगता है {41} जो धन, घर, परिवार तथा मान-बड़ाई को त्याग करके केवल भगवान को ही चाहते हैं {42} जिन्हें स्वर्ग, नर्क, अपवर्ग सभी जगह समान रूप से भगवान को देखते हैं {43} जो मन-वचन कर्म से भगवान के सेवक हैं {44} जो भगवान से सहज प्रेम रखते हैं और जिन्हें कभी भी किसी वस्तु की चाह नहीं रहती है।'

{1} चौ०-सुनहु राम अब कहउँ निकेता। जहाँ बसहु सिय लखन समेता॥
जिन्हके श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहिं निरन्तर होंहि न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे॥
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहिं सुखारी॥
तिन्ह के हृदय सदन सुखदायक। बसहु बंधु सिय सह रघुनायक॥
दोहा- जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन गन चुनइ राम बसहु हिय तासु॥
प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा॥
तुम्हहि निवेदित भोजन करहीं। प्रभुप्रसाद पट भूषन धरहीं॥
सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी॥
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं॥
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा॥
तरपन होम करहिं बिधि नाना। बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना॥

तुम्ह तें अधिक गुरहिं जियँ जानी । सकल भायँ सेवहिं सनमानी ।।

दोहा- सबु करि मागहिं एक फलु। राम चरन रति होउ।
तिन्ह के मन मंदिर बसहु, सिय रघुनंदन दोउ ।।

काम कोह मद मान न मोहा । लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ।।
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ।।
सब के प्रिय सब के हितकारी । दुख-सुख सरिस प्रसंसा गारी ।।
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी ।।
तुम्हहिं छाँड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।
जननि सम जानहिं परनारी । धनु पराव बिष तें बिष भारी ।।
जे हरषहिं पर संपति देखी । दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी ।।
जिन्हहि राम तुम्ह प्रानपिआरे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे ।।

दोहा- स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात ।
मन मंदिर तिन्ह के बसहु सीय सहित दोउ भ्रात ।।

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं । बिप्र धेनु हित संकट सहहीं ।।
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका।।
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा ।।
राम भगत प्रिय लागहिं जेही । तेहि उर बसहु सहित बैदेही ।।
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई । प्रिय परिवार सदन सुखदाई ।।
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई। तेहि के हृदयँ रहहु रघुराई ।।
सरगु नरकु अपबरगु समाना । जहँ तहँ देख धरें धनु बाना ।।
करम बचन मन राउर चेरा । राम करहु तेहि के उर डेरा ।।

दो0- जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु ।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु ।।

श्री रामचरितमानस 2/128/3से131
दोहा तक

अरण्यकाण्ड में नारद ने आदरपूर्वक श्री रामचन्द्र जी से अनुरोध किया --

"संतन्ह के लच्छन रघुबीरा । कहहु नाथ भव भंजनभीरा"

रामचरितमानस 3/44/5

भगवान श्री रामचन्द्र जी ने भक्तों के उन 50 गुणों (लक्षणों) का वर्णन जिनके कारण भगवान संतों के वश में रहते हैं, इस प्रकार से किया है :-

(1) संत छः विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मद और मत्सर) को जीते हुए (2) पाप रहित (3) कामना रहित (4) स्थिर बुद्धि (5) सर्वत्यागी (6) बाहर-भीतर से पवित्र (7) सुख के धाम (8) असीम ज्ञान वाले (9) इच्छा रहित (10) मिताहारी (11) सत्यनिष्ठ (12) कवि (13) विद्वान (14) योगी (15) सावधान (16) दूसरों को मान देने वाला (17) अभिमान रहित (18) धैर्यवान (19) धर्म के ज्ञान और आचरण में निपुण (20) गुणों के घर (21) संसारी दुःखों का अभाव (22) संदेह रहित (23) भगवान के सिवा शरीर व घर की ममता का त्याग (24) अपने गुण सुनने में संकोच (25) दूसरे के गुण सुनने से प्रसन्न होना (26) समबुद्धि (27) शीतल स्वभाव (28) नीति का त्याग न करने वाला (29) सरल स्वभाव (30) सब से प्रेम करने वाला (31) जप-तप-व्रत-दान का आचरण (32) यम-नियमों का पालन (33) गुरु भगवान एवं ब्राह्मणों के चरणों के प्रेमी (34) श्रद्धावान (35) क्षमाशील (36) सबसे मित्रता रखना (37) दयावान (38) प्रसन्न चित्त (39) भगवान के चरणों में विशुद्ध भक्ति (40) वैराग्य (41) विवेकवान (42) विनयी (43) परमात्मा के तत्व का ज्ञाता (44) वेद पुराणों का यथार्थ ज्ञानी (45) दंभरहित (46) अभिमान रहित (47) मद रहित

{48} कुसंग का त्यागी {49} भगवान के चरित्रों का कहना व सुनना {50} निस्वार्थभाव से परोपकार में सब लगे रहना ।[1]

रामचरित मानस के किष्किधाकाण्ड में श्री रामचन्द्र जी ने वर्षा ऋतु की शोभा का वर्णन करते हुए संत को "खलों के कठोर वचनों का सहने वाला" तथा शरद्ऋतु की शोभा वर्णन करते हुए संत के दो अन्य लक्षण "मद और मोह से रहित होना" तथा आशाओं का त्याग करने वाला बताये हैं ।[2]

{1} चौ0- षट विकार जित अनघ अकामा । अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ।।
अमितबोध अनीह मित भोगी । सत्यसार कवि कोविद जोगी ।।
सावधान मानद, मद हीना । धीर धर्म गति परम प्रवीना ।।
गुनागार संसार दुख रहित विगत संदेह ।
तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहुँ देह न गेह ।।
निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं । पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं ।।
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती । सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती ।।
जप तप व्रत संजमनेमा । गुरु गोविंद विप्र पद प्रेमा ।।
श्रद्धा छमा मयत्री दाया । मुदिता मम पद प्रीति अमाया ।।
विरति विवेक विनय विग्याना । बोध जथारथ वेद पुराना ।।
दंभ मान मद करहिं न काऊ । भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ।।
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला । हेतु रहित परहित रत सीला ।।
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते । कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ।।

-- श्रीरामचरित मानस-3/44/6से3/45/8

{2} बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे । खल के वचन सह जैसें ।।

× × × ×

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा । जिमि लोभहिं सोषइ संतोषा ।।
सरिता सर निर्मल जल सोहा । संत हृदय जस गत मद मोहा ।।

—श्रीरामचरित मानस 4/13/4 से 4/15/3-4.

सुन्दरकाण्ड में शंकर जी ने पार्वती जी से कहा है संत अपकार करने वाला के प्रति भी उपकार करता है यही उसका बड़प्पन है ।[1] यह बात विभीषण के अपने बड़े भाई के द्वारा लात मारे जाने पर चरण पकड़ कर समझाने के प्रसंग में कही गई है । इसके आगे विभीषण जी ने भगवान राम की शरण में पहुँचने पर रघुकुल तिलक राम द्वारा विभीषण के प्रति संत के नीचे लिखे गुण/लक्षण कहे गये है :—
(1) घर परिवार की ममता का त्याग (2) समदर्शी (3) किसी भी प्रकार की इच्छा का न होना (4) मन में हर्ष-शोक न होना (5) किसी का भय न होना (6) भगवान की उपासना करना (7) परोपकार में संलग्न (8) नीति और नियमों में दृढ़ ।
इन गुणों को कहने के पश्चात् राम चन्द्र जीनेकहा है कि ये सभी गुण तुममें हैं इसीलिये तुम मुझे अत्यन्त प्रिय हो ।[2]

रामचरित मानस के लंकाकाण्ड में विभीषण ने श्रीरामचन्द्र जी को संग्रामभूमि पर बिना रथ के और महाबली रावण को रथ पर चढ़कर यु. करते देखा तब उसके मन में संदेह हुआ और उसने श्रीरामचन्द्र जी से शंका व्यक्त की —

---

(1) जननी जनक बन्धु सुत दारा । तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ।।
सबकै ममता ताग बटोरी । मम पद मनहिं बाँध बरि डोरी।।
समदरसी इच्छा कछु नाहीं । हरष-सोक भय नहि मन माहीं ।।
अस सज्जन मम उर बस कैसे । लोभी हृदय बसइ धनु जैसे ।।
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरे । धरउँ देह नहिं आन निहोरे ।।
सगुन उपासक परहित, निरत नीति दृढ़ नेम ।
ते नर प्रान समान मम, जिन्ह के द्विज पद प्रेम।।48।।
सुनु लंकेस सकल गुन तोरे । ताते तुम्हे अतिसय प्रिय मोरे ।।
(रा०च०मा० 5/47/1से5/48/1तक)

(2) उमा संत कइ इहइ बड़ाई । मंद करत जो करइ भलाई ।।
(रा०च०मा० 5/40/7)

13T/22

"नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना । केहि बिधि जितब बीर बलवाना ।।"

(रामचरित मानस 6/79/3)

भगवान रामचन्द्र जी ने रथ के वर्णन के बहाने उन गुणों का वर्णन किया है जिनके होने से भक्त इस महा अजय संसार को पार कर सकता है । वे गुण निम्नांकित हैं :--

(1) शौर्य (2) धैर्य (3) सत्य (4) शील (5) शक्ति (6) विवेक (7) इन्द्रियों का दमन(इन्द्रियजित) (8) पर-उपकार (9) क्षमा (10) दया (11) समत्वभाव (12) ईश्वर भजन (13) वैराग्य (14) संतोष (15) दान (16) सद्बुद्धि (17) विज्ञान(परमात्मतत्व का ज्ञान) (18) निष्पाप और स्थिर मन (19) मन का वश में होना (20) यम(अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) (21) नियम (शौच, संतोष, तप स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान) (22) ब्राह्मण और गुरु का पूजन ।[1]

इन गुणों को सुनने के पश्चात् विभीषण ने हर्षित होकर प्रभु श्री रामचन्द्र जी के चरण पकड़ लिये और कहा कि आपने इस बहाने मुझे महान उपदेश दिया है ।

दोहा - "सुनि प्रभु बचन बिभीषण, हरषि गहे पद कंज ।
एहि मिस मोहिं उपदेसेहु, राम कृपा सुख पुंज।।

(रामचरित मानस 6/80(क))

---

(1) सुनहु सखा कह कृपानिधाना । जेहिं जय होइ सो स्यन्दन आना ।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ।।
बल बिबेक दम परहित घोरे । छमा कृपा समता रजु जोरे ।।
ईस भजनु सारथी सुजाना । बिरति चर्म संतोष कृपाना ।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन को दंडा ।।
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना ।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा । एहि सम बिजय उपाय न दूजा ।।
सखा धर्ममय अस रथ जाकें । जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें ।
(रामचरित मानस 6/79/4-11)

रामचरित मानस के उत्तरकाण्ड में भरत जी ने संत-असंत के भेद अलग-अलग करके समझाकर कहने की प्रार्थना की है । इसके उत्तर में भगवान श्रीराम ने संत और असंतों की करनी तथा उनके लक्षणों का विस्तार से वर्णन किया है । उनमें संतो के लक्षण निम्नांकित प्रकार से है :---

{1} अपकार करने वाले का भला करना {चंदन, अपने काटने वाले कुठार को सुवासित कर देता है} {2} विषयों से अलिप्तता {3} शीलवान {4} सद्गुणों की खान {5} दूसरे का दुख देखकर दुःखी होना तथा दूसरों के सुख में सुखी होना {6} सबमें सर्वत्र एवं सब समय समता रखते है {7} उनका कोई शत्रु नहीं होता {8} मद से रहित {9} वैराग्यवान {10} लोभ रहित {11} डाह रहित {12} हर्ष रहित {13} भय से मुक्त {14} कोमल स्वभाव{15} दीनों पर दया {16} भगवान की विशुद्ध भक्ति वाले {17} सबको आदर देने वाले {{18} स्वयं मान रहित {19}कामना रहित {20} हरिनाम प्रेमी {21} शांत {22} विरति {23} विनयशील {24} प्रसन्नता के घर {25} शीतल {26} सरल प्रकृति {27} मैत्रीभाव {28} ज्ञानियों के चरणों में प्रीति {29} मन को संयमित रखने वाले {30} इन्द्रियों का निग्रह {31} नियमों का पालन करने वाले {32} नीति का कभी त्याग न करने वाले {33} कठोर वाणी का प्रयोग न करने वाले {34} निन्दा-स्तुति में समभाव रखने वाले {35} भगवान के चरणों से प्रेम करने वाले ।[1]

उत्तरकाण्ड में पक्षिराज गरुड़ ने काकभुशुण्डि से सात प्रश्नों का उत्तर देने की प्रार्थना की है, उन सात प्रश्नों में चतुर्थ प्रश्न है संत-असंतों का सहज स्वभाव क्या होता है?:--

"संत-असंत मरम तुम्ह जानहु । तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु ।।"

{रा०च०मा०7/120/5}

इसके उत्तर में काकभुशुण्डि जी ने बताया है कि संतो का सहज स्वभाव है पर उपकार और इसके लिये वे भोजवृक्ष की तरह नित्य ही कष्ट सहन करते है {अपनी खाल तक उधड़वा देते हैं} ।[1]

{1}

चौपाई - संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता । अगनित श्रुति पुरान बिख्याता ।।

संत असंतन्हि कै असि करनी । जिमि कुठार चंदन आचरनी ।।

काटइ परसु मलय सुनु भाई । निज गुन देइ सुगंध बसाई ।।

दोहा - ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड ।।

बिषय अलंपट सील गुनाकर । पर दुख दुख सुख सुख देखे पर ।।

सम अभूतरिपु बिमद बिरागी । लोभामरष हरष भय त्यागी ।।

कोमलचित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ।।

सबहिं मानप्रद आपु अमानी । भरत प्रान सम मम ते प्रानी ।।

बिगत काम मम नाम परायन । सांति बिरति बिनती मुदितायन ।।

सीतलता सरलता मयत्री । द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री ।।

ए सब लच्छन बसहिं जासु उर ।। जानेहु तात संत संतत फुर ।।

सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं ।।

दोहा - निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज ।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुन मंदिर सुख पुंज ।।

{श्रीरामचरित मानस 7/36/6से7/38दोहातक}

{2} चौपाई-

संत बिटप सरिता गिरि धरनी । पर हित हेतु सबन्ह कै करनी ।।

संत हृदय नवनीत समाना । कहा कबिन्ह परि कहै न जाना ।।

निज परिताप द्रवइ नवनीता । पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ।।

{श्रीरामचरित मानस 7/124/6-8}

सम्पूर्ण रामचरित मानस सुनने के पश्चात् गरुड़ जी ने अपना मत व्यक्त किया है "संत की सभी क्रियायें पर-हित से प्रेरित होती है ।" इसके अतिरिक्त अन्य तथ्य यह भी है कि संतों के हृदय को कवियों ने नवनीत के समान कहा है वहाँ कवियों की भूल प्रतीत होती है । इसके विपरीत सत्य यह है कि नवनीत स्वयं कष्ट से गर्मी पाकर पिघल जाता है किन्तु संत अपने कष्ट से नहीं दूसरों के कष्ट को देखकर द्रवित होते है दया करते हैं ।[1]

1.6 अन्य भक्त कवियों के अनुसार संत व्यक्तित्व

महात्मा सूरदास जी ने संत के लक्षण तो नहीं गिनाये किन्तु संत की महिमा में पद कहा है उसमें संत के दर्शन एवं साथ में रहने के फल का वर्णन है ।

जा दिन संत पाहुने आवत ।
तीरथ कोटि सनान करै फल जैसो दरसन पावत ।।
नयो नेह दिन-दिन प्रति उनके, चरण कमल चित लावत ।
मन वच कर्म और नहि जानत सुमिरत औ सुरावत
मिथ्यावाद उपाधि रहित है विमल-विमल जस गावत
बंधन कर्म जे पहिले सोऊ काटि बहावत ।
संगति रहे साधु की अनुदिन, भव दुख दूर बहावत ।
सूरदास संगति कर तिनकी, जे हरि सुरत करावत ।।50।।

—सूरसागर सार, सम्पादक—
धीरेन्द्र वर्मा पद संख्या-50

1. चौ0-संत विटप सरिता गिरि धरनी । पर हित हेतु सबन्ह कै करनी ।।
संत हृदय नवनीत समाना । कहा कविन्ह परि कहै न जाना ।।
निज परिताप द्रवइ नवनीता । पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ।।
——श्री रामचरित मानस 7/124/6-8

इस पद में संत क्या-क्या करते है यह स्पष्ट करते हुये कहा है कि संत {1} मन-वचन-और कर्म से भगवान का स्मरण करते हैं {2} साथ में बैठने वालों से भी भगवान का भजन कराते हैं {3} असत्य से दूर रहते हैं । इनके दर्शन से कोटि तीर्थों के स्नान फल के समान पुण्य की प्राप्ति होती है उनकी संगति से पहले के कर्मफल का नाश हो जाता है तथा भवसागर के दुःख समाप्त हो जाते हैं ।

संत गुलाब साहब ने जीवन के वही दिन गिनती में माने हैं जो संतों की संगति में बीतते हैं । उन्होंने और संत में अन्तर नहीं माना । ब्रह्मा विष्णु और महेश साधु के पीछे-पीछे चलते हैं । साधु की संगति से नीच पाकर जीव भी परम पद को प्राप्त कर लेता है ।[1]

भक्त शिरोमणि नरसीदास जी ने अपने पद "वैष्णव जन तो तेने कहिये पीर पराई जाने रे ।" में भगवद्भक्त {वैष्णवजन} के नीचे लिखे 22 लक्षण बताये है :-
{1} दूसरे की पीड़ा का अनुभव करने वाला {2} परोपकारी {3} अभिमान रहित {4} सहिष्णु {5} किसी की निन्दा न करने वाला {6} वाणी संयम {7} इन्द्रियजित् {8} स्थिर मन {9} समानदृष्टि {10} तृष्णा का त्यागी {11} पराई स्त्री को मातृवत मानने वाला {12} मौन {13} असत्य न बोलने वाला {14} दूसरे के धन कोष लेने वाला {15} मोह रहित {16} माया से मुक्त {17} मन में दृढ़ वैराग्य

{1} सो दिन लेखे जा दिन संत मिलाहिं
संत के चरन कमल की महिमा मोरे बूते बरनि न जाहिं ।।
जल तरंग जल ही से उपजे फिर जल माहि समाहिं ।
हरि में साध साध में हरि हैं, साध से अन्तर नाहिं ।।
ब्रह्मा विष्नु महेश साध संग पाछे लागे जाहिं ।
दास गुलाब साध की संगति, नीच परमपद पाहि ।।
—संत गुलाब साहब

हो [18] ईश्वर भक्त [नाम परायण] [19] लोभ रहित [20] कपट रहित [21] कामना रहित [22] क्रोध रहित ।[1]

आदर्श भक्त भगवत रसिक जी ने अपने प्रसिद्ध पद "इतने गुन जागे सो संत" में कहा है कि जिस व्यक्ति में नीचे लिखे 17 गुण हों वह संत है ।[2]

---

[1] वैष्णव जन तो तेने कहिये जे पीड पराई जाणे रे ।
पर दुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे ।।
सकल लोकमां सहुने वंदे, निन्दा न करे केनी रे ।
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन-धन जननी तेनी रे ।।
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मात रे ।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, पर धन नव झाले हाथ रे ।।
मोह माया व्यापे नहि जेने, दृढ वैराग्य जेना मनमां रे ।
रामनामशुं ताली लागी, सकल तीरथ तेना तनमां रे ।।
वणलोभी ने कपट रहित छे, काम क्रोध निवार्या रे ।
भणे नरसैंयो तेनुं दरसन करतां, कुल एकोतेर तार्या रे ।।

[गांधी-आश्रम भजनावली-पदसं0 102]

[2] इतने गुन जायें सो संत ।
श्री भागवत मध्य जस गावत श्री मुख कमलाकंत ।।
हरि को भजन साधु की सेवा सर्वभूत पर दाया।
हिन्सा लोभ दंभ छल त्यागें विष सम देखै माया।।
सहनशील आशय उदार अति धीरज सहित विवेकी।
सत्यवचन सब सो सुखदायक गहि अनन्य व्रत एकी।।
इन्द्रीजित अभिमान न जाके करै जगत को पावन ।
भगवत रसिक साधु की संगति तीनहुँ ताप नसावन ।।

[भगवतरसिक :भजनसंग्रह पद सं0 325]

(1) भगवान का भजन (2) साधु-संतों की सेवा (3) सभी प्राणियों के प्रति दया भाव (4) हिंसा त्याग (5) लोभ रहित (6) दंभ त्यागी (7) छल रहित (8) माया को विष के समान समझना (9) सहन शील (10) उदार (11) धैर्यवान (12) विवेक शील (13) सत्यवादी (14) सबको सुख देने वाला (15) एक निष्ठ भगवत्प्रेमी (16) इन्द्रियजित (17) अभिमान रहित ।

1.7 श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी के अनुसार संत लक्षण

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी ने अपने लेख 'सन्त महिमा' जो पहले कल्याण में प्रकाशित हुआ था तथा बाद में भगवच्चर्चा भाग ५ के पृष्ठ 1 से 33 तक में छपा है, में उपशीर्षक, "सन्त कौन है?" के नीचे लिखा है :-

"श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् ने अपने प्रिय भक्तों के निम्नलिखित चालीस लक्षण बतलाये हैं । ये लक्षण जिन पुरुषों में हो, वे ही संत हैं, इन्ही का कुछ न्यूनाधिक रूप से "गुणातीत" और "स्थितप्रज्ञ" आदि नामों से गीता में वर्णन है ।"

इसके पश्चात् श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 12 के आठ श्लोकों (13 से 20 तक) में दिए गये लक्षणों का हिन्दी में भावार्थ देने के पश्चात् श्री पोद्दार जी ने लिखा है :-

"ये सब गुण सिद्ध संत में स्वाभाविक होते हैं और साधक उनको प्राप्त करने के प्रयत्न में लगा रहता है, परन्तु यह नहीं समझना चाहिये कि संत में इतने ही परिमित संख्यक गुण हैं । सत्य स्वरूप परमात्मा में नित्य स्थित होने के कारण संत की अन्दर-बाहर की चेष्टा और क्रिया एक-एक सद्गुण और सदाचार ही है; वस्तुतः सन्त सद्गुणों के भण्डार ही होते हैं, उपर्युक्त चालीस गुण तो उन अनन्त सद्गुणों के तारतम्य बतलाये

गये है । और भी संक्षेप में कहें तो यों कह सकते हैं, जिनमें निम्नलिखित छः लक्षण हों, वे मुख्य विषय ही संत हैं :-

[1] नित्य सत्य परमात्मस्वरूप या भगवत्प्रेम में अचल स्थिर, [2] सर्वत्र सम दृष्टि, जीवमात्र में आत्मोपम प्रेम [3] राग-द्वेष काम-क्रोध और लोभ-अभिमान मानसिक दोषों का और मान-बड़ाई-प्रतिष्ठा की इच्छा का सर्वथा अभाव [4] स्वाभाविक ही समस्त प्राणियों के हित में रति [5] शांति, सरलता, शम, दम शीतलता, त्याग, सन्तोष, दया, अहिंसा, सत्य, निर्भयता, अनासक्ति, निष्कामता, निरहंकारता, निर्ममता, स्वाधीनता, निर्मलता, क्षमा, सेवा, तप आदि सद्गुण और सदाचारों का पूर्ण विकास और [6] हर एक स्थिति में अखण्ड असीम आनन्द ।

आगे लिखते हैं, "यद्यपि सन्त के लिये शास्त्रों में इस प्रकार के अनेक लक्षणों का निर्देश मिलता है, तथापि वस्तुतः सन्त समस्त लक्षणों से ऊपर उठे हुए होते हैं ।"

श्री पोद्दार जी ने संतों के लक्षण तथा उनकी महिमा के सम्बन्ध में पांच पदों की रचना की है जो पद रत्नाकर में संगृहित पद संख्या 1288, 1300, 1301, 1302, 1303, है । पद भिन्न-भिन्न समय पर रचे गये हैं । अतः संतों के लक्षणों की पुनरावृत्ति स्वाभाविक रूप से हो गयी है । किसी-किसी लक्षण को भिन्न-भिन्न शब्दावली में भी व्यक्त किया गया है । इनको क्रमबद्ध करने का प्रयास किया गया है क्रमबद्ध करने के पश्चात् उनका निम्नांकित रूप उभर कर आया है :-

[1] निर्लिप्त [शारीरिक] [2] सहिष्णु [3] इन्द्रियजित [4] परोपकार [5] सारे जग को हरिमय जानकर सेवा करना [6] शास्त्रानुसार आचरण [7] काम, क्रोध, मोह से रहित [8] समत्व भाव [निंदा-स्तुति, दुःख-सुख] [9] राग-द्वेष से रहित [10] सम्मान देना [11] निरहंकार

{12} वासना रहित {13} सात्त्विक प्रेम {14} सद एवं संयमी, {15} दयालु {16} भगवान में विशुद्ध भक्ति {17} उदार {18} क्षमावान {19} शान्त {20} सरलता {21} पवित्रता {22} निर्भय {23} शोक रहित {24} कपट रहित {25} दंभ रहित {26} प्रिय बोलने वाला {27} परनिंदा न करना {28} सर्वत्र मैत्रीभाव {स्थिर बुद्धि {30} अहिंसा {31} कोमल स्वभाव {32} मन का निग्रह करने वाला, {33} पर-दुःख दुःखी एवं परसुख सुखी {34} संतुष्ट {35} सर्वत्र भगवान का दर्शन {36} सभी कर्मों को भगवान की पूजा मानकर कार्य करना {37} दुःख-सुख में भगवान का मंगल विधान {38} भेदभाव रहित {39} सत्यवादी {40} सभी प्राणियों के साथ आत्मवत व्यवहार।[1]

{1}:अ:

संत महा गुन खानी।
परिहरि सकल कामना जग की, रामचरित चरन रति मानी ॥
पर दुख-दुखी सुखी पर-सुख तें, दीन-विपति निज जानी।
हरिमय जानि सकल जग सेवक उर अभिमान न आनी ॥
मधुर, सदा हितकर, प्रिय साँचे वचन उचारत बानी।
निरमल ज्ञान, मद-मोह-लोभ नहिं, सुख-दुख समकर जानी ॥
राम-नाम-पीयूष-पान-रत, सानद, परम अमानी।
पतितन को हरि - लोक पठावत जग आवत अस ग्यानी ॥

{पद रत्नाकर पद सं0 1288}

{1}:ब:

द्वेष-रहित, जो मित्र सबीका, दीन-दुःखियों का आधार।
ममता-अहं-शून्य, सम नित सुख-दुःख, क्षमी-वह संत उदार ॥

{पद रत्नाकर पद सं0 1300}

{1}:ग:

काम-क्रोध-लोभ-मद-विरहित, शोक-मोह-भय-भ्रमसे हीन ।
ज्ञानमूर्ति, निष्कामनिरत अति, पावन परम प्रेमरस-लीन ॥
नित्य शान्ति, आनन्द नित्य ही, मुदित नित्य अविछिन्न अत्यन्त ।
सहज सुहृद-हितरति स्वाभाविक, समता, ममता-रहित अनन्त ॥
वज्रादपि कठोर निज-हित को, पर-हित कोमल कुसुम-समान ।
ख्याति प्रतिष्ठासे भी अमद, नित्य ज्ञान-विज्ञान-निधान ॥
जिनमें भरे अखण्ड पूर्ण आनन्द, प्रेम शुचि, निर्मल ज्ञान ।
जिनके रोम-रोम में छाये रहते स्वयं नित्य भगवान ॥
जिनके तन-मन-वचन बहाते अविरत भगवद्-रसकी धार ।
ऐसे संतों के पद-कमलों में प्रणाम है बारंबार ॥

(पद रत्नाकर पद सं० 130)

{1}:घ:

दम्भ-मान-मद-पद-धन-वैभवका जो करते मनसे त्याग ।
दुःखयोनि इन्द्रिय-भोगोंमें भूल न रखते रंचक राग ॥
काम-क्रोध-लोभसे विरहित, दुराचार-दुर्नीतिसे हीन ।
ममता-अहंकार-मद-वर्जित, द्रोह-वैर-हिंसादि-विहीन ॥
"चमत्कार"-"अद्भुत"-"आश्चर्य"-सिद्धि-"दिखलाने की न कामना लेश ।
नहीं वासना तनिक "आत्मपूजन" की, पर "विरक्तका वेश" ॥
सरल अकृत्रिम, सादा जीवन दैवीसम्पद्-युक्त विशुद्ध ।
नहीं एक भी क्रिया-चेष्टा देह-चित्तकी शास्त्र-विरुद्ध ॥
शम-दम-त्याग-तितिक्षा-समता-सत्य-अहिंसा-सेवाभाव ।
शुचिता-नय-सहिष्णुता-क्षमा-विनय-अनभिमानका भाव ॥
प्राणिमात्र में देख नित्य प्रभुको, करते सबका सम्मान ।
सबका शुभ-हित-साधन करते, पावन परम धर्म यह मान ॥

अथवा सबमें देख नित्य प्रभु, आत्मा में सब सुख निहार ।
आत्मोपम सुख-दुःख सबहिं के जान सदा करते व्यवहार ॥
ऐसे जो आदर्श परम मानव हैं, वे ही "सच्चे संत" ।
उनका सेवक-संग सहज कर देता भव-बन्धनका अन्त ॥

(पद रत्नाकर पद पृ0 1302)

[illegible] पद:

पर-निंदा मिथ्या कहि भाखै, सुनै न कहीं काउ तें बात ।
सुनी कौ परशंसा अपनी, पर की सुनत सदा हरषात ॥
जीवन में निस्पृहता बरतै, करै सुजन की सुचि सत्कार ।
निज सुख भूल, देख पर कौं होय परम सुख मन उजियार ॥
सहज सदा सुस्थिर रहै शीतल चर, करै सबनि सौं निश्छल प्रेम ।
करै न निंदित कर्म, निभावै सु सरलता कौ नित नेम ॥
अहंकार-रहित रहै निर्मल बुध है, रहै परिग्रह-संग्रह-हीन ।
रहै न राग जग के पदारथनि, रहै सदा-हरिचरन-लीन ॥
निज-हित पर तें कबहुं न चाहै, करै सबनि सौं शुभ व्यवहार ॥
देखै सदा सबनि में हरि कौं, यही संत कौ सदाचार ॥

(पद रत्नाकर पृ0 1303)

जैसा कि ऊपर सदंर्भ दिया गया है श्रीमद्भगवत गीता में भगवद्भक्त के 35 लक्षण, स्थितप्रज्ञ के 14 लक्षण, गुणातीत के 10लक्षण, कर्मयोगी की सन्यासी के 6 लक्षण, दैवीसम्पद के 26 गुण तथा श्रीमद् भागवत में साधु के 28 लक्षण, वैराग्यसंदीपिनी में संत के 21 लक्षण विनयपत्रिका में 11 लक्षण, रामचरित मानस के बालकाड में संतों के 50 लक्षण, किष्किन्धाकाण्ड में 3 गुण, सुन्दरकाण्ड में 8 गुण, लंकाकाण्ड में 22 गुण तथा उत्तरकाण्ड में संतों के 35 लक्षण दिये गये है। नरसी भक्त ने वैष्णवजन के 22 लक्षण, भगवतरसिक जी ने संत के 17 लक्षण कहे है तथा श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी के पदों में 40प्रमुख लक्षणों का वर्णन मिलता है ।

रामचरित मानस के अरण्यकाण्ड में भगवान राम ने नारद मुनि को सन्तों के लक्षण सुनाने के बाद मुनि से कहा है कि सन्तो के इतने अधिक लक्षण है कि उनका वर्णन सरस्वती और वेद भी नहीं कर सकते ।

"मुनि सुन, साधुन्ह के गुन जते । सकहिं सारद श्रुति तेते ।।"

[मा0 3/48/8]

इसी तरह उत्तरकाण्ड में भगवान राम ने अपने प्रिय भाई भरत जी को सन्तों के लक्षण सुनाते समय वेद और पुराणों में सन्तों के अगणित लक्षण कहे गये है "[illegible]

"संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता । अगनित श्रुति पुरान विख्याता॥

[7/36/7]

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी ने अपने 'संतमहिमा' नामक लेख में गीता के अध्याय 12 में वर्णित भगवद्भक्तों के लक्षणों को लिखने के बाद लिखा है कि "यह नहीं समझना चाहिये कि सन्त में इतने ही परिमित संख्यक गुण है । सत्य स्वरूप परमात्मा में स्थित होने के कारण सन्त भी

अन्दर-बाहर की चेष्टा और क्रिया एक-एक सद्गुण और सदाचार ही है, वस्तुतः सन्त सद्गुणों के भण्डार होते हैं।"

वे आगे लिखते है "यद्यपि सन्त के लिये शास्त्रों में इस प्रकार के अनेक लक्षणों का निर्देश मिलता है तथापि वस्तुतः सन्त समस्त लक्षणों से ऊपर उठे हुए होते हैं।

1.8. इस प्रकार महात्मा तुलसीदास जी और भाई जी के द्वारा सन्तों के लक्षणों की संख्या इतनी ही है ऐसा नहीं कहा जा सकता है किन्तु यह आवश्यक समझा गया है कि गहन अध्ययन दृष्टिकोण से विभिन्न ग्रंथों एवं महापुरुषों के द्वारा वर्णित लक्षणों की सारिणी तैयार करके उन प्रमुख लक्षणों को छाँटा जाय जो कई ग्रंथों में उन्हीं शब्दों में या समानार्थी शब्दों में मिलते हैं।नीचे अंकित सारिणी के देखने से प्रगट होगा कि भक्तों एवं सन्तों के 40 लक्षण ऐसे है जिन्हें प्रमुख कहा जा सकता है।

सारिणी में संदर्भित ग्रंथों के लिये प्रयुक्त - संक्षिप्ताक्षर नीचे उन्हीं ग्रन्थों के नाम के सामने अंकित किये जा रहे है।

गी0	श्रीमद्भगवद्गीता
भा0	श्रीमद्भागवत
मा0	श्रीरामचरित मानस
वै0	वैराग्य संदीपनी
वि0	विनय पत्रिका
प0	पद-रत्नाकर

(1) आकांक्षा रहित:

अनपेक्ष:	न कांक्षति	सर्वान् कामान् प्रजहाति
गी012/16	गी012/17	गी0 2/55
सुखेषु विगत स्पृह:	सर्वे कामा:प्रविशन्ति	सर्वान् कामान् विहाय
गी0 2/56	गी0 2/70	गी0 2/71
नि:स्पृह:	न कामानां बीजानां	कामैरहत धी:
गी02/71	भा011/12/30	भा0 11/11/30
निरपेक्ष	अनीही	अकामा
भा011/14/16	भा011/11/30	मा03/44/7
काम रहित	अनीह	विगत काम
मा02/129/1	मा03/44/8	मा07/37/5
इच्छा कछु नाहीं	काहू सों कछु न चहौंगो	विगत काम
मा0 5/47/6	वि0पद सं0 172/2	प0पदसं01288
काम...विरहित	काम.....से विरहित	
प0 पद सं01301	प0पद सं0 1302	

(2) अहंकार रहित:

निरहंकार	न अति मानिता	निरहंकार:
गी012/13	गी0 16/3	गी0 2/71
अमानी:	महाभागो	मद,मान रहित
भा0 11/11/31	भा0 12/2/51	मा0 2/129/1
मद हीना	दंभ,मान,मद,करहिं न	गत मद
मा0 3/44/9	मा0 3/45/6	मा04/15/4
विमद	अमानी	अहंवाद "मैं" "तैं" नहीं
मा07/37/2	मा07/37/4	वै0 30

विमल मान	उर अभिमान न आनी	मद...नहिं
वि०पद सं०172/3	प०पद०सं० 1288	प०पद०सं०1288
अहं शून्य	मद-विरहित	[illegible]-मान-मद..त्याग
प०पद सं०1300	प०पद सं०1301	प० पद०सं० 1302
अहंकार-वर्जित	नहीं जरा भी.....मान	
प० पद० सं०1302	प०पद०सं०1305	

3) सम सुख दुःख में समः:

सम दुःख सुखः	सुख दुःखेषु समः	सम दुःख सुखः
गी० 12/13	गी० 12/18	गी० 14/24
सर्वहिता, सर्वभूत समः	समः	समदर्शी:
भा० 11/2/52	भा०11/11/29	भा०11/14/16
सम	समदर्शी	समता
मा० 3/45/2	5/47/6	मा० 1/69/6
सम	सुख-दुःख सहित	सम
मा० 7/36/2	मा०2/129/3	मा० 7/37/8
समान चित्त	दुखी दुःख नहिं आवै, सुख तैं सुख नहिं होइ।	
मा० 1/37/0	वै० 30	
सम	दुःख सुख समबुद्धि सहैंगो	
वि०पद सं०172/3	वि० पद सं० 172/4	
सुख दुःख समकर जानी	सम निज सुख-दुःख	समता
प० पद० सं०1288	प० पद०सं० 1300	प० पद सं० 1301
समता		
प० पद सं० 1302		

(4) ममता रहित:

निर्मम: — गी0 12/13
संगविवर्जित — गी0 12/18
अनभिस्नेह: — गी0 2/57

निर्मम: — गी0 2/71
संगं त्यक्त्वा — गी0 5/10
सबकै ममता ताग बटोरी — मा0 5/46/5

राग व मोहा — मा0 2/129/1
गतमोहा — मा0 4/15/4
...मोहि....नाहिं — प0पद सं0 1288

ममता...शून्य — प0 पद सं0 1300
मोह...तें हीन — प0 पद सं0 1301
ममता-रहित — प0 पद सं0 1301

ममता..वर्जित — प0पद सं0 1302
नहीं जरा भी जिन्हें ममता — प0 पद सं0 1305

(5) जितेन्द्रिय:

यतात्मा: — गी0 12/14
दम: — गी0 16/1
इन्द्रियाणि वशे — गी0 2/61

विजितात्मा — गी0 5/7
जितेन्द्रिय — गी0 5/7
दान्ता — भा0 11/11/30

बल विवेक दम परहित घोरे — मा0 6/79/6
दम — मा0 7/37/8

इन्द्रीदमन — वै0 29
इन्द्रीजीता — वै0 14
दम — प0पद सं0 1302

काछ रखै निज बस मैं सब — प0 पद सं0 1303
दम — प0पद सं0 1305

(6) द्वेष रहित:

सर्वभूतानाम् अद्वेष्टा — गी0 12/13
न द्वेष्टि — गी0 12/17
अद्रोह: — गी0 16/3

देह विसुकी:	अतुल द्रोह:	न द्रोह
गी0 2/64	मा0 11/11/29	मा0 11/2/48
न द्रोह	अपरा...पागी	अतुल रिपु
मा02/129/1	मा07/37/2	मा07/37/2
देह-रहित	द्रोह-वैर...विहीन	निर्वैर:
प0पद सं0 1300	प0 पद सं0 1302	मा011/14/16

नहीं जरा को फिकरें.........देह.......

प0 पद सं0 1305

(7) भगवत्स्वरूपों में विशुद्ध भक्ति:

वासुदेवो निलय:	न चहति भगवत्पद अरविन्दरस	
मा011/2/50	मा0 11/2/53	
जानत सोहत सहज तुम्हारी	तुम्ह सम सहज सनेह	
मा02/129/24	मा02/130/8	
कर नित करहिं राम पद पूजा	गोविन्द पद प्रेम	
मा0 2/128/4	मा0 3/45/3	
हरि-भजन,	सगुन उपासक	मम पद प्रीति अमाया:
मा0 6/69/7	मा0 5/48/0	मा0 3/45/4
मम भगति अमाया	ममता मम पद कंज	रसन राम इक तार
मा0 7/37/3	मा0 7/38/0	सं0 29
अविचल		
प0पद सं0 1301		

(8) परहित निरत/परोपकार:

जगत हित	सबके हितकारी	संत करत को अहु प्रसाद
मा01/3(क)/0	मा02/129/3	मा0 5/40/7

परहितरत	परहितनिरत	परहित
मा० 3/45/7	मा० 5/48/0	मा० 6/79/6
दंभन आचरनी	पर उपकार	परहितहेतु
मा०7/36/7	मा०7/120/14	मा०7/124/6
परकाजे परमारथी	परहित-निरत निरंतर	
सै० 10	वि०पद सं० 172/2	
परिहरि सकल कामना जग की	सर्वभूत हित रति	
प० पद० सं० 1228	प०पद सं० 1301	
सबका शुभ हित साधन करते	रत रहे जग कल्याण नित्य	
प० पद सं० 1302	प० पद सं० 1304	

[9] <u>शुचिता:</u>

शुचि:	विशुद्धात्मा	शुचि:	शुचि	
गी०12/16	गी० 5/7	भा०11/11/30	मा० 3/44/7	
अमल	शुद्ध	शुचि	शुचिता	शुचि
मा० 6/[illegible]/9	~~मा० प०पद०सं०~~ 3/44/7 ~~[illegible]~~	प०पद०सं० 1301	प०पद सं० 1302	प०पद सं० 1305

[10] <u>करुणा/कृपालु/दया:</u>

करुण:	कृपालु:	कारुणिक:	दाया
गी० 12/13	भा० 11/11/29	भा०11/11/31	मा० 3/45/6
कृपा	दीनन पर दाया	करुणा	
मा० 6/79/6	मा० 7/36/3	प० पद सं० 1302	
दयालु रहे दीनन पर	दया		
प० पद सं० 1303	प० पद सं० 1305		

(11) अर्पण या बुद्धि द्वारा/ मेरे चरणों में अर्पित:

मय्यर्पित मनो बुद्धिः — गी० 12/14
मत्परायणो ... — भा०11/11/30
[illegible] रखवारी — मा० 2/130/8

जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा — मा० 2/130/3
तुम्हहिं छाँड़ि गति दूसरि नाहीं — मा० 2/29/5

मन क्रम बचन मोहि प्रिय — मा० 3/45/0
रामचरन रति....... राम नाम पीयूष पान रत — प० पद सं० 1288

सदा हरि हरिजन में प्रीति — प० पद सं० 1303
प्रभु चिन्तन का चाव — प० पद सं० 1302

(12) तप नियम संयम:

तप: — गी०16/1
आचार व्रत संयम — मा०3/45/3
नियम संयम — मा०7/37/8
मन क्रम ध्यान नेम — वि०पद सं०172/2

शम, दम, नियम — मा०6/79/9
नियम — मा०7/37/8
तप — प०पद सं०1302
संयम — प०पद सं०1305

(13) संतुष्ट:

संतुष्ट — गी०12/14
संतुष्टः — गी०12/19
आत्मन्येव तुष्टः — गी० 2/55
संतोष — मा० 6/79/7

जथा लाभ संतोष सदा — वि०पद सं० 172/2
तृप्ति — प०पद सं० 1301
नित्य संतुष्ट — प०पद सं० 1299

(14) निर्भय:

भयमुक्तः — गी०12/15
अभयम् — गी०16/1
वीतभय — गी० 2/56
भय त्यागी — मा० 7/37/2

13T/41

थ माहीं	अथ....ते हीन	अथ-वर्जित
भा05/47/8	प0 पद सं0 1301	प0पद सं01302

(15) मृदु कोमल शीतल स्वभाव:

मार्दवम्	मृदु	शीतल	कोमलचित
गी016/2	भा011/11/30	भा03/45/2	भा07/37/3
शीतलता	कोमल कुसुम समान		मधुर
भा07/37/6	प0पद सं0 1301		प0 पद सं0 1288

(16) सत्यनिष्ठ:

सत्यम्	सत्यसार:	सत्य सार	सत्यशील
गी016/2	भा011/11/29	भा03/44/8	भा06/79/5
जथा उर्ध्व भंगिमा	साँचे स्याम उदारत		सत्य
के0 11	प0पद सं0 1288		प0पद सं0 1302

(17) सरलता:

आर्जवम्	सरलचित	सरल सुभाव	सरलता
गी016/1	भा01/3(8)/0	भा03/45/2	भा0 7/37/6
सरल अकृतिम	सरलता		सरलता
प0 पद सं01302	प0पद सं0 1303		प0 पद सं0 1305

(18) शान्त:

शान्तिः	शान्तः	शान्त
गी016/2	भा011/2/52	भा0 11/14/16

शांति   शीतल मन   निरंतर शान्ति

मां07/37/5 विनयपद सं0162/3   प0 पद सं0 1301

परम भागवत जीवन शान्त

प0 पद सं0 1299

[19] सर्व भूतात्म भूतात्मा:

सर्वभूतात्मभूतात्मा   "जे हरषहिं पर संपति देखी

गी0 5/7   दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी।।

मा0 2/129/7

पर दुःख दुःख सुख सुख देखे पर,   हरिमय जान सकल जग सेवक

मा0 3/37/1   प0 पद सं0 1288

प्राणिमात्र में देख नित्य प्रभु को   सबमें देख निजात्मा, आत्मा

प0पद सं0 1302   में सबकुछनिहार

प0 पद सं0 1302

देखे सदा सबनि में हरि कों,

प0 पद सं0 1303

[20] क्रोध रहित:

अक्रोधः   वीत क्रोधः   कोह न

गी0 16/2   गी02/56   मा0 3/44/7

मद विकार जित   क्रोध.....विरहित   क्रोध—विरहित

मा03/44/7   प0पद सं0 1301   प0पद सं0 1302

[21] स्थिर मति:

स्थिरमतिः   स्थिरमतिः   अचल   अचल मन

गी012/19   भा011/11/30   मा03/44/7   मा06/79/9

13T/43

(22) मान देने वाला:

मानदः | मानद | मानप्रद
भा0 11/11/31 | मा0 3/44/9 | मा0 7/37/4
मानद | करते सबका सम्मान | अधुन को तुरंत सत्कार
प0 पद सं0 1288 | प0 पद सं0 1302 | प0 पद सं0 1303

(23) मेरी लीला को कहने, सुनने एवं मेरा नाम जपने वाला:

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला — मा0 3/45/7
हंसनि जीहा जासु — मा0 2/128/0
मम नाम परायन — मा0 7/37/5
मंत्र राजु नित जपहिं तुम्हारा — मा0 2/128/6

कहनि हीय गुरु राम
दो0 17

(24) मैत्री भाव:

मैत्र: | मैत्र: | मैत्री | मैत्री
गी0 12/13 | भा0 11/11/31 | मा0 3/45/4 | मा0 7/37/6

सो नित्य सखी का,
प0 पद सं0 1300

(25) द्वेष रहित:

न द्वेष्टि | उद्वेगैः मुक्तः | दुःखेषु अनुद्विग्नमना:
गी0 12/15 | गी0 12/15 | गी0 2/56

छोभ न परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो

मा०2/129/1 वि० पद सं० 172/3

(26) <u>शत्रु मित्र में समः</u>

शत्रौ मित्रे समः मित्रारिपक्षयोः तुल्यः

गी० 12/18 गी० 14/25

संत समान चित हित अनहित नहिं कोय

मा० 1/3(क)/0

शत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि

बै० 13

शत्रु मित्र सम गेह

बै० 21

(27) तुल्य <u>निंदास्तुति में समः</u>

तुल्य निन्दास्तुतिः तुल्य निन्दात्मसंस्तुतिः

गी० 12/19 गी० 14/24

निंदास्तुति उभय सम सरिस प्रसंसा गारी

मा० 7/37/0 मा० 2/129/3

पर-निन्दा मिथ्या करि मानै, सुनै न कहै काउते बात

कं० पद सं० 1303

(28) <u>तितिक्षु</u>

शीतोष्ण समः तितिक्षुः परिहरि देह

गी० 12/18 भा० 11/11/29 विनयपद सं० 172

जनित चिंता | तितिक्षा

प० पद सं० 1302

{29} <u>हर्ष रहित:</u>

हर्ष मुक्तः | न हृष्यति | न हृष्यति
गी० 12/15 | गी०12/17 | मा० 11/2/48

हर्ष नहिं मन माहिं | हरष......त्यागी
मा० 5/46/6 | मा० 7/37/2

{30} <u>धैर्यवान:</u>

धीरः | धृति | धृतिमान् | धीर | धीरज
गी०14/24 | गी०16/3 | मा०11/11/31 | मा०3/44/9 | मा०6/69/5

{31} <u>क्षमाशील:</u>

क्षमी | क्षमा | क्षमा | क्षमी | क्षमा
गी०12/13 | मा०3/45/4 | मा०6/89/6 | प०पद सं०1300 | प०पद सं०1305

{32} <u>सत्य,प्रिय,हितकर,मधुर:</u>

परुष वचन कबहूँ न बोलाहिं
मा० 7/37/8

पर-गुन नहिं दोष कहोगो
वि०पद्सं० 172/3

कहहिं सत्य प्रिय वचन विचारी
मा० 2/129/4

मधुर,सदा हितकर,प्रिय साँचे वचन
उचरत बानी।
पं० पद० सं० 1288.

बाधा.....रहनित बसैं
प०पद सं० 1302

13T/46

[33] वैराग्य: विरति विरति विरागी विरति

मा03/45/5 मा06/79/2 मा07/37/2 मा07/37/5

त्याग सम [illegible] का सार [illegible]

व0 पद सं0 1297

[34] विनय: अति विनय विरोधी विनय विनती

मा0 2/228/3 मा03/45/5 7/37/5

शील [illegible] विनय

वै0 17 व0 पद सं0 1302

[35] दक्ष/बालापकम

में निपुण: दक्ष: नीति निपुण [illegible] परम प्रवीना

गी012/16 मा02/130/2 मा03/44/9

नहीं एक भी क्रिया-[illegible]..........आत्म-[illegible]

व0 पद सं0 1302

[36] प्रसन्न[illegible]: प्रसन्न चेतस्: मुदिता मुदिता मन

गी02/65 मा03/45/6 मा07/37/5

[37] [illegible] चिह्न: [illegible]: [illegible] चिह्न [illegible] चिह्न

भा011/2/49 मा03/44/7 भा0 11/11/31

[38] अकिंचन: अकिंचनः अकिंचन अकिंचन

भा011/11/30 मा03/44/7 वै0 29

[39] मानसिक व्यथा/

दुःखों का अभाव: गत व्यथः सर्वदुःखानां हानिः संसार दुःख रहित

गी012/16 गी0 2/65 मा0 3/45/0

[40] ज्ञानी: कोविद [illegible] वेद पुराना विज्ञाना

मा03/44/8 मा03/45/5 मा0 3/45/5

1.आ.9

-: निष्कर्ष :-

संत शब्द के पर्याय के रूप में साधु, स्थितप्रज्ञ, गुणातीत, दैवीसंपदा संपन्न, भगवद्भक्त आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं । इन सभी शब्दों के द्वारा भागवत व्यक्तित्व की व्याख्या हुई है ।

भागवत व्यक्तित्व की विशेषतायें निम्नलिखित हैं-

भागवत व्यक्तित्व के अन्तर्गत केवल आन्तरिक व्यक्तित्व का ही आकलन होता है, बाह्य शरीर संरचना संबंधी व्यक्तित्व का कोई महत्व नहीं है । इस दृष्टि से कह सकते हैं कि अन्य सामान्य व्यक्तियों के दो अंगों के स्थान पर भागवत व्यक्तित्व का एक ही आंतरिक अंग होता है; दूसरे शब्दों में भीतर-बाहर एक-ही व्यक्तित्व होता है । मन की प्रवंचना शक्ति के द्वारा अंतर को कुछ और रूप में बाह्य, प्रदर्शित करने का, प्रश्न ही नहीं उठता । जैसा अन्तर में वैसा बाहर होता है। अन्तर शुद्ध, निर्मल, सात्विक, पवित्र ही होता है । फलस्वरूप बाहर शरीर संस्थान का स्वरूप भी पवित्र और पूजनीय प्रकट होता है और पूजा भाव को जागृत करता है । यह भागवत व्यक्तित्व की प्रमुख एवं बड़ी विशेषता है जो अन्यान्य सामान्य व्यक्तियों में नहीं होती । मन बुद्धि और अन्तःकरण की उपर्युक्त स्थिति का प्रतिफल निम्नलिखित तीन स्थितियों में होता है— (1) कर्मस्थिति (2) स्वभाव स्थिति (3) प्रभावस्थिति ।

कर्मस्थिति :-

भगवत्पूजन, यज्ञ-हवन, तर्पण करना, दान देना, नाम-जप, भजन-कीर्तन, शास्त्रों का पठन-पाठन, भगवान् की लीलाओं का कथन -

कथा सुनना, तीर्थ यात्रा, सब प्राणियों में समदर्शन करते हुए सेवा करना, सदा दूसरों के हितकारी कार्यों में लगे रहना, अपना अपकार करने वालों का भी उपकार करना, यथार्थ सत्य प्रिय और मधुर वाणी बोलना, इन्द्रियनिग्रह, पवित्र रहना तथा तपस्या करना व दूसरों को सम्मान देना ।

स्वभाव स्थिति:-

आकांक्षा रहित, अहंकार शून्य, ममताहीन, उद्वेगरहित, द्वेष विहीन, शुद्ध स्वभाव, दयालु, आत्मनिष्ठ, सरल, अकिंचन, विनयशील, धैर्यवान, षट् विकाररहित, क्षमा, शील, सर्वत्र मैत्री भाव, मानसिक दुखों से अप्रभावित, भगवान के मन बुद्धि अर्पित कर उनके चरणों में निमग्न चित्त रखना ।

प्रभाव स्थिति :-

स्वयं की---निर्भय, संतुष्ट, स्थिर बुद्धि, प्रसन्नचित्त, आत्म-निष्ठ, सर्वत्र सब प्राणियों में समदर्शन, सुख-दुख, निन्दास्तुति में भगवान का लीलाविलास मानकर सम, अखण्ड असीम आनन्द का अनुभव करने वाला आनन्द/प्रभावित अन्य की सम्पर्क में आने वालों में विमल ज्ञान एवं शान्ति का निरन्तर संक्रमण तथा फलस्वरूप उनके मन, वाणी, कर्म में भगवद् भक्ति के प्रति प्रेम का जागृत होना और सदाचार की ओर प्रवृत्त होना ।

संक्षेपतः चित्त की अविरल प्रसन्नता, अखण्ड असीम आनन्द केन्द्रीभूत भाव है जो आन्तरिक गुणों एवं शरीर में कांति, आकर्षण एवं पूज्यभाव में प्रकट होता है । अखण्ड आनन्द व चित्त की ऐसी प्रसन्नता अनन्य भाव से किये गये निरन्तर भगवच्चिंतन से प्राप्त होती है ।

भजन सुनना, तीर्थ यात्रा, सब प्राणियों में भगवद्दर्शन करते हुए सेवा करना, सदा दूसरों के हितकारी कार्यों में लगे रहना, अपना अपकार करने वालों का भी उपकार करना, यथार्थ सत्य प्रिय और मधुर वाणी बोलना, इन्द्रियनिग्रह, पवित्र रहना तथा तपस्या करना व दूसरों को सम्मान देना ।

स्वभाव स्थिति:-

आकांक्षा रहित, अहंकार शून्य, ममताहीन, उद्वेगरहित, द्वेष विहीन, शुद्ध स्वभाव, दयालु, सत्यनिष्ठ, सरल, अकिंचन, विनयशील, धैर्यवान, षड् विकारजित, क्षमा, शील, सर्वत्र मैत्री भाव, मानसिक दुर्गुणों से अप्रभावित, भगवान के मन बुद्धि अर्पित कर उनके चरणों में विमल भक्ति रखना ।

प्रभाव स्थिति :-

स्वयं की---निर्भय, संतुष्ट, स्थिर बुद्धि, प्रसन्नचित्त, आत्म-निष्ठ, सर्वत्र सब प्राणियों में भगवद्दर्शन, सुख-दुःख, निन्दा स्तुति में भगवान का मंगलविधान मानकर सम, अखण्ड असीम आनन्द का अनुभव करने वाला शान्त/प्रभावित अन्य की सम्पर्क में आने वालों में विमल ज्ञान एवं शान्ति का विकरण संक्रमण तथा फलस्वरूप उनके मन, वाणी, कर्म में भगवद् भक्ति के प्रति प्रेम का जागृत होना और सदाचार की ओर प्रवृत्त होना ।

संक्षेपतः चित्त की अविरल प्रसन्नता, अखण्ड असीम आनन्द केन्द्रीभूत भाव है जो आन्तरिक गुणों एवं शरीर में कांति, आकर्षण एवं पूज्यभाव में प्रकट होता है । अखण्ड आनन्द व चित्त की ऐसी प्रसन्नता अनन्य भाव से किये गये निरन्तर भगवत्कीर्तन से प्राप्त होती है ।

संस्कृति

भागवत व्यक्तित्व की आंतरिक संरचना निम्नलिखित प्रकार से दिखाई जा सकती है।

भागवत व्यक्तित्व

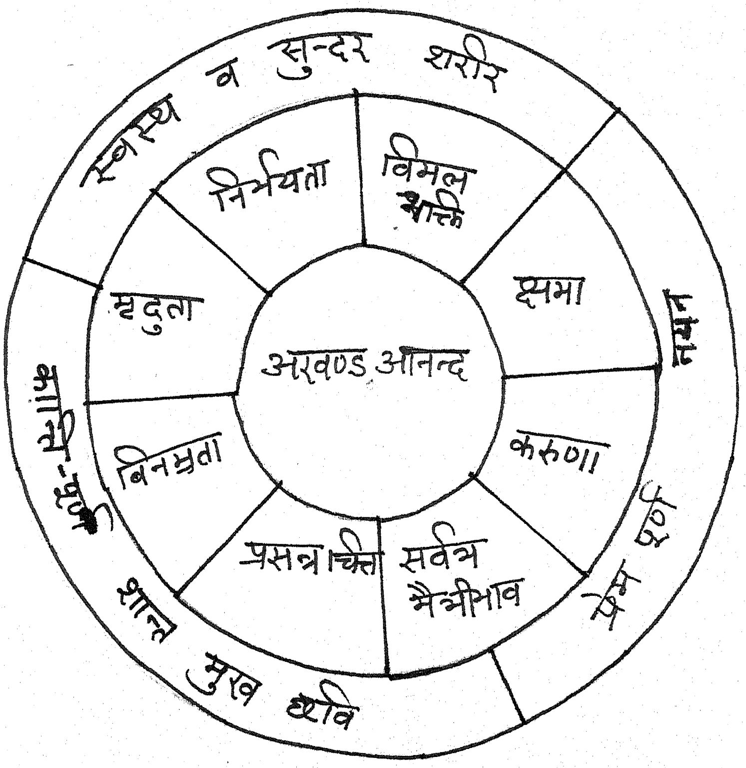

भागवत व्यक्तित्व की स्थिति को व्यक्तित्व की प्रगति रेखा का अंतिम स्वरूप कह सकते हैं :-

मानव व्यक्तित्व
साधक व्यक्तित्व
भक्त व्यक्तित्व
संत एवं भागवत व्यक्तित्व

इस प्रगति रेखा के विपरीत धार्मिक इतिहास में ऐसे भी उदाहरण हैं जिनमें मानव से भी अधोगत, दुष्ट, क्रूर, आततायी व्यक्तित्व सीधे भागवत व्यक्तित्व को प्राप्त हुए हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से उक्त प्रगतिपथ को मानकर अध्ययन किया गया है तथा उपर्युक्त उदाहरण अपवाद मान लिए गये हैं। व्यक्तित्व के अध्ययन का उद्देश्य ही यह है कि व्यक्तित्व को प्रगतिमुखी बनाया जाय तथा मानव, साधक, भक्त, संत एवं भागवत व्यक्तित्व रूपी मानक प्रस्तुत कर मानव मात्र को जीवन के परम लक्ष्य भगवान् को प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

प्रकरण-2

बाह्य साक्ष्य एवं अन्तः साक्ष्य के आधार पर श्री दीपदास जी का

व्यक्तित्व

2.1 बाह्य साक्ष्य

2.1.1 बाह्य व्यक्तित्व

2.1.2 आन्तरिक व्यक्तित्व

2.1.2.1 मानवीय विशेष गुण

2.1.2.2 स्वभाव

2.1.2.3 व्यवहार

2.1.3 समग्र व्यक्तित्व

2.1.3.1 मानव

2.1.3.2 साधक

2.1.3.3 भक्त

2.1.3.4 संत

[2.1.3.1–2.1.3.4: विकास क्रमगत व्यक्तित्व [पूर्ण व्यक्तित्व]]

2.2 अंतःसाक्ष्य

2.2.1 आत्म ग्लानि

2.2.2 वैराग्य

2.2.3 पुरोहित

[अन्य सम्प्रदायगत होने की भावना]

2.0 श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व के संबंध में "भाई जी पावन स्मरण" की श्रद्धांजलियों को बाह्य साक्ष्य के रूप में लिया जा सकता है। इससे अधिक प्रामाणिक सामग्री कदाचित् अन्यथा संभव नहीं होगी। इन प्रशस्तियों के किसी अंश को अतिशयोक्ति कहा जा सकता था यदि वह गिने-चुने कतिपय पूर्वाग्रही व्यक्तियों की होतीं। ये बहुसंख्यक देश-विदेश के गण्यमान्य प्रतिष्ठित महानुभावों की जिनमें विभिन्न पीठों के जगद्गुरु शंकराचार्यों, धर्माधिकारियों, राजाओं, राजनेताओं, मंत्रियों तथा प्रशासकों, मूर्धन्य विद्वानों, मनीषियों एवं साहित्यकारों तथा अन्यान्य समाज सेवी महानुभावों की ~~ममता~~ हैं। इसलिये इनमें किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह, अतिशयोक्ति अथवा अन्यथा कथन का कोई स्थान नहीं है। वस्तुतः ये आत्मा एवं हृदय की मर्मस्पर्शी अनुभूतियाँ हैं जो भाषा की सीमाओं में अधूरी अभिव्यक्ति हुई ही कही जायेंगी। श्रद्धा एवं भक्ति में आकण्ठ निमज्जित प्रेमियों की वेदना एवं पीड़ा हैं जो सहज एवं स्वाभाविक रूप में प्रवाहित हुई हैं। इनके आधार पर कृत अध्ययन प्रश्नावली के माध्यम से कृत सर्वेक्षण-अनुशीलन स्वतः प्रकट एवं अभिव्यक्त होने के कारण कई अधिक प्रामाणिक एवं महत्वपूर्ण है।

2.1.1 <u>बाह्य आकृति</u> :—

श्री पोद्दार जी भागवत व्यक्तित्व के महामानव थे इसलिए बाह्य आकृति उनके अन्तर की स्नेहिल एवं सुन्दर छवि थी। इसकी ओर भी कतिपय महानुभावों का ध्यान गया है। हँसमुख एवं मिलनसार,[1] मुख आशीर्वादमयी और स्नेह भरी मुस्कुरा,[2] अत्यन्त प्रसन्नचित्त[3]

[1] भाई जी पावनस्मरण पृ0 42 [श्री भागीरथ कानोड़िया]
[2] भा0पा0स्म0 पृ0 388 [श्री वासुदेव कायरा]
[3] भा0पा0स्म0 पृ0 76 [श्री राधाकृष्ण कानोड़िया]

खादी की धोती और कुर्ता-यह उनका पहनावा था ।[1] श्री गोयन्दकाजी सिर पर मारवाड़ी ढंग की पेंचदार पगड़ी बाँधे, कान में सोने की बाली पहने, एक संसार आसक्त गृहस्थ, भव्य आकृति, व्यापारी सेठ का चोला ओढ़े हुए थे । दूसरी ओर सर्वथा अकिंचन, दीन, संकोच-निधि श्री पोद्दार जी सदा हाथ जोड़े दैन्यभरी मुखमुद्रा बनाये, सर्वगुण सम्पन्न होने पर भी एक सर्वथा मोह मुक्त, अहं अकिंचनत्व का बाना धारण किये हुए थे ।[2] "मझोला कद, भरा-पूरा शरीर, उन्नत प्रशस्त ललाट, गेहुँआ रंग, ललाट पर गोपी चन्दन, की एक बिन्दी शोभा दे रही थी । प्रसन्नवदन, श्वेत शुभ्र खादी की धोती और खादी का ही कलीदार कुर्ता, पैरों में फलाहारी जूते, आत्मीयतापूर्ण आँखें-सिर से पैर तक जैसे हृदय ही हृदय हो।"[3]

उनके बाह्य व्यक्तित्व को समग्र दृष्टि से दो रूपों में प्रस्तुत किया गया है -

{1} आकर्षक व्यक्तित्व[4]

{2} उनके आभ्यन्तर व्यक्तित्व को "कृष्ण व्यक्तित्व" कहकर उनके व्यक्तित्व को और स्पष्ट किया गया है ।

बाह्य व्यक्तित्व 5 भौतिक तत्वों का संयोजन है । इन तत्वों के स्थान पर "कृष्णतत्व" को मान्यता दी गई है तथा श्री पोद्दार जी के बाह्य व्यक्तित्व का निर्माण इस कृष्ण तत्व से माना गया है । यह

{1} भा०पा०स्म० पृ० 379.

{2} श्री भीमसेन चोपड़ा, गीतावाटिका से प्राप्त टंकित सामग्री.

{3} "प्रेममूर्ति भाई जी" - श्री भुवनेश्वर नाथ मिश्र "माधव" भाई जी पावन स्मरण पृ० - 236.

{4} "उनके व्यक्तित्व में एक आकर्षण था जो उन्हें प्राप्त हुआ था सच्ची निष्ठा, सतत साधना और विशाल सहृदयता से ।"

— डॉ० गोपीनाथ तिवारी भा०पा०स्म० पृ०-242

मान्यता उनके व्यक्तित्व के अध्ययन की गहरी पकड़ है । वास्तविकता यह रही है कि पाँचों तत्व "कृष्णतत्व"[1] में अन्तर्लीन हो गये थे तथा मात्र एक कृष्णतत्व ही उनके व्यक्तित्व का आधार है ।[1]

इसी संदर्भ में उनके बाह्य व्यक्तित्व को "कल्याण मूर्ति" भी कहा गया है ।[2]

2.1.2 आंतरिक व्यक्तित्व :-

बाह्य साक्ष्य के आधार पर भी पोद्दार जी के आंतरिक व्यक्तित्व के अन्तर्गत मानवीय विशेष गुण, स्वभाव, व्यवहार का आकलन हुआ है । इनके द्वारा उनके वास्तविक व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं ।

2.1.2.1 मानवीय विशेष गुण :-

मानवीय विशेष गुणों में निम्नलिखित गुणों का उल्लेख हुआ है ---

आत्मीयता, परदुःखकातरता, निरंहकारिता, निर्भीकता, सहिष्णुता ।

{2} "कल्याण"
:अ: "कल्याण का संपादन करते-करते वे स्वयं "कल्याण मूर्ति" बन गये थे ।"
{वियोगीहरि, भा०प०र०म० पृ० सं० 46}
:आ: "भाई जी कल्याण और गीताप्रेस के समस्त प्रकाशनों की प्रति-मूर्ति थे और वे सभी भाई जी की प्रतिमूर्ति थे ।"
{श्री राधामोहन} भा०प०र०म० पृ: 179.

{2} "उनकी पार्थिव देह पंचतत्वों से निर्मित थी; परन्तु वस्तुतः तो वहाँ "कृष्णतत्व" के अतिरिक्त कुछ था ही नहीं ।"
{श्रीमती राधादेवी बालोटिया, भाई जी पावन स्म०51}

आत्मीयता

आत्मीयता का गुण "सीय राममय सब जग" जानने से प्राप्त होता है । यह वस्तुतः जीवन का सत्य तथा उदात्त जीवन की साधना है । आत्मीयता के साथ "स्नेहपूर्ण, मधुर, कोमल वृत्ति" का होना स्वाभाविक है ।

आत्मीयता के अन्यान्य उदाहरण प्रस्तुत हुए हैं । उनका सामान्य व्यवहार ही आत्मीयता पूर्ण था । कतिपय उदाहरण अवलोकनीय है :-

----'उनके आत्मीयता पूर्ण मधुर व्यवहार की छाप सम्पर्क में आने वाले पर अवश्य पड़ती थी ।'[1]

(श्री गंगाराम तिवारी)

----'प्राणिमात्र के प्रति उनकी आत्मीयता का प्रवाह अजस्र था ।'[2]

(श्री पशुपति सिंहानिया)

----'श्री भाई जी सबके साथ आत्मीयता से मिलते थे ।'[3]

(श्री लक्ष्मीपति सिंहानिया)

----'श्री भाई जी के स्नेह जल से सिंचित उनका परिवार बहुत विशाल है । वे सब के निजी आत्मीय थे ।'[4]

(स्वामी श्री [illegible] जी महाराज)

----'मेरे तो वे परम आत्मीय थे ।'[5]

(श्री विरदीचन्द्र पोद्दार)

परदुःख कातरता

---

(1) भा०प०रा०स्म० पृ० 32
(2) भा०प०रा०स्म० पृ० ४२ 41
(3) भा०प०रा०स्म० पृ०-43
(4) भा०प०रा०स्म० पृ०-55
(5) भा०प०रा०स्म० पृ०-75

आत्मीयता का परिणाम ही परदुःखकातरता है । इस गुण को "परदुःख सहिष्णु", "परोपकारी" "दयालु, स्नेही" , "उदार", "त्यागी", आदि विशेषणों से भी अभिहित किया गया है । मानवता के सिक्के के यह दो पहलू हैं- आत्मीयता और परदुःखकातरता । आत्मीयता का भाव जितना प्रगाढ़ होगा, परदुःखकातरता उतनी ही अधिक होगी। कतिपय उदाहरण अवलोकनीय हैं :-

---- 'उनके जैसे सरल, सहृदय, परदुःखकातर, निरभिमानी विरले ही होते हैं'।[1]

(श्री हरिभाऊ उपाध्याय)

---- 'उनके दर्शन स्वभाव के सरलता, कोमलता, और परदुःखकातरता आदि गुण सर्वविदित हैं'।[2]

(श्री बसन्त कुमार बिरला)

---- 'जनमात्र के दुःख से दुःखी होना उनका नैसर्गिक गुण था'।[3]

(डा०श्यामबिहारीलाल गुप्त)

---- 'श्री भाई जी का जीवन-"परहित सरिस धर्म नहिं भाई" का ज्वलन्त उदाहरण था'।[4]

(हजारी लाल कौशिक)

---- 'वे दीन-दुःखियों के परमात्मा थे, अन्नदाता परमेश्वर थे'।[5]

(हकीम शिरीन हैदर अली जौहरी)

---- 'दूसरों के उत्पीड़न को देखकर रन्तिदेव के समान "परदुःखअसहिष्णु" थे'।[6]

(श्री विट्ठलेश जी)

---

(1) भा०प०अ०ग्र० पृ०- 35
(2) भा०प०अ०ग्र० पृ०- 40
(3) भा०प०अ०ग्र० पृ०-72
(4) भा०प०अ०ग्र० पृ०-77
(5) भा०प०अ०ग्र० पृ०-65-66
(6) भा०प०अ०ग्र० पृ०-58

---- 'आर्थिक दृष्टि से भाई जी कोई धनी नहीं थे, लेकिन दीन दुःखियों के लिए वे कुबेर के समान थे'।[1]

[श्री भागीरथ कानोड़िया]

---- 'उनके पास से दुःखी से दुःखी प्राणी भी सुख की असीम निधि लेकर लौटता था'।[2]

[श्री नारायण प्रसाद शर्मा]

---- 'उनका सारा जीवन तथा दुःखियों के प्रति सदा सहानुभूति रखनेवाला व्यक्तित्व हमारी नजरों के सामने से कभी ओझल नहीं हो सकेगा'।[3]

[श्री चन्द्रभान गुप्त]

---- 'अपने जीवन में उन्होंने सर्वदा परोपकार किया और दूसरों की भलाई चाही'।[4]

[श्री गोपाल स्वरूप पाठक]

---- 'श्री पोद्दार जी के निर्मल चरित्र, साधु-स्वभाव, परोपकार-वृत्ति एवं निरभिमानता के कारण ही कल्याण की लोकप्रियता बढ़ती रही'।[5]

[श्री लक्ष्मीपति सिंहानिया]

---- 'श्री पोद्दार जी परम धार्मिक, परोपकारी, सहृदय एवं परम विद्वान व्यक्ति थे। उन्होंने अपना समस्त जीवन दूसरों का दुःख सुनने एवं उनकी भलाई करने में ही व्यतीत किया'।[6]

[श्री हरिकृष्ण डालमिया]

---- 'उनके स्नेह भरे स्वभाव को एवं सरल व्यक्तित्व को किसी के लिये भी भुलाना असम्भव है'।[7]

[श्री लक्ष्मीपति सिंहानिया]

---

[1] भा०पा०स्म० पृ०-42 [3] भा०पा०स्म० पृ०-54 [7] भा०पा०स्म० पृ०43
[2] भा०पा०स्म० पृ०-79 [4] भा०पा०स्म०-पृ०-18
[5] भा०पा०स्म० पृ०-42 [6] भा०पा०स्म०-पृ०-75

---- 'श्री हनुमान प्रसाद जी सदैव इस बात का विशेष ध्यान रखते थे कि सामने आने वाले किस बात से प्रसन्न होंगे। सामने वालों के जीवन में कोई कष्ट या बाधा की अनुभूति न हो वे [illegible] सोचते थे।'[1]

(डॉ० [illegible] कुमार मिश्रा)

---- 'बहुमुखी प्रतिभा, उच्चकोटि के [illegible] पुरुष, प्रेमी हृदय एवं उदारता ये सभी बातें थीं उनमें।'[2]

(मोहन मिश्रा ठाकुर)

---- 'वे अत्यन्त उदार प्रकृति के महापुरुष थे।'[3]

(श्री [illegible])

---- 'उनकी मधुर उदारता हृदय को प्रभावित करती है।'[4]

(स्वामी शरणानन्द)

---- 'वे इतने उदार और दयालु थे कि लोग उनके पास जो भी दुःख लेकर जाते थे, उनकी पूर्ति हो जाया करती थी।'[5]

(श्री हनुमान प्रसाद धानुका)

---- 'संकट-ग्रस्त प्राणियों के सहायतार्थ अनेक प्रकार के राहत कार्यों को गति देने में भी श्री भाई जी दत्तचित्त रहते थे।'[6]

(श्री गं० राम तिवारी)

---- 'उन्होंने प्राकृतिक और दैवी आपदाओं के समय गोरखपुर जनपद की अपार सेवा भी की।'[7]

(श्रीमती सुचेता कृपलानी)

---

(1) अ०प०रा०म० पृ०-40
(2) अ०प०रा०म० पृ०-34
(3) अ०प०रा०म० पृ०-74
(4) अ०प०रा०म० पृ०-12
(5) अ०प०रा०म० पृ०-43
(6) अ०प०रा०म० पृ०-32
(7) अ०प०रा०म० पृ०-36

---- 'उनका जीवन त्याग-तपस्यामय रहा ।'[1]

[श्री राधाकृष्ण बजाज]

निरहंकारिता

अहंकार का तत्व अति सूक्ष्म रूप में मानवीय दुर्बलताओं के साथ ही लगा रहता है तथा उससे मुक्त होना बड़ा कठिन और दुरूह होता है । जो इस पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, वे ही भगवान् की समीपता तथा अभिन्नता के सौभाग्य के अधिकारी होते हैं । "भाई जी" की इस भूमिका से अन्यतम उपलब्धि थी । वास्तविकता यह है कि जितनी निकटता आत्मीयता एवं परदुःखकातरता में होगी, उतनी ही सफलता निरहंकारिता में मिलेगी । निरहंकारिता की ही एक अपेक्षा 'प्रशस्ति से कोसों दूर' की स्थिति है । कतिपय अभिमत अवलोकनीय हैं :—

---- 'अपार विनम्रता के साथ वह निर्लोभ, निःस्पृह, निरहंकारता हैं, उनके सामने सिर झुक जाता ।'[2]

[विमला ठाकुर]

---- 'वे अहंकारहीन, दयामूर्ति, तपोमूर्ति, और मानवता के सच्चे पुजारी थे ।'[3]

[श्री दीनानाथ शर्मा]

---- 'श्री पोद्दार जी बिल्कुल दिखावा से रहित निरहंकारी, कर्तव्यपरायण और महान कर्मयोगी थे ।'[4]

[श्री हरिकिशन अग्रवाल]

---- 'उन जैसे तपोनिष्ठ, निरहंकार, अनासक्त, धर्मसेवी महापुरुष संसार में बहुत ही दुर्लभ हैं ।'[5]

[हरबंस लाल ओबेराय]

---

[1] भा०प०ता०स्म० पृ०-40 [4] भा०प०ता०स्म०पृ०-70

[2] भा०प०ता०स्म० पृ०-35 [5] भा०प०ता०स्म०पृ०-70

[3] भा०प०ता०स्म० पृ०-51

---- 'अपनी लोकप्रियता पर गर्व या घमंड उन्हें छू तक नहीं पाया।[1]

[स्वामी शरणानन्द जी]

ख्याति से कोसों दूर

---- 'कीर्ति-प्रसिद्धि की कामना ने उनका स्पर्श भी किया हो, ऐसा नहीं लगता।[2]

[श्री हीरालाल शास्त्री]

---- 'इतना सब करते हुए भी उन्हें अभिमान तथा ख्याति प्राप्ति की कोई लालसा नहीं थी।[3]

[चौधरी चरणसिंह]

---- 'पद-प्रतिष्ठा से सर्वथा दूर रहकर वे अपनी साधना में ही तल्लीन रहे।[4]

[श्री सीताराम शरण जी महाराज]

---- 'सच्चे आध्यात्मिक पुरुष होने के कारण वे सदैव आत्म-प्रशंसा तथा आत्म-विज्ञापन से दूर रहे।[5]

[श्री पद्मपति सिंहानिया]

---- 'श्री पोद्दार जी आत्म प्रशंसा से कोसों दूर रहते थे।[6]

[श्री दीनानाथ शर्मा]

---- 'अपने इस महत्व का गर्व उन्हें कभी स्पर्श तक नहीं कर सका।[7]

[श्री माधवाचार्य]

---- 'भौतिक प्रतिदान अथवा ख्याति की रंचमात्र भी कामना न रखते हुए अपना कर्तव्य पूरा करने में ही उनकी आस्था थी।[8]

[श्री कान्ति स्वरूप धवन]

---

[1] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-12
[2] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-35
[3] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-35
[4] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-15
[5] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-41
[6] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-51
[7] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-50
[8] भा०प०स्मा०ग्रं० पृ०-22

---- 'संसार की सब सुख-सुविधाओं तथा सम्मान की ओर ध्यान न देकर उन्होंने देश का जीवन समर्पित किया है।'[1]

(सूरजभान)

---- 'ख्याति और गौरव के पाने की उनमें रुचि थी ... जीवन बिताते हैं। लेकिन वे दोनों ख्याति और गौरव उनका अनुगमन करते हैं।'[2]

(के०पी०कुमारन नायर)

निर्भीकता

"अभय" भारतीय वैदिक संस्कृति की अपनी विशेषता है। निर्भीकता चरित्र के बल और आत्मविश्वास से आती है। जो व्यक्ति सदाचारी है, सत्याग्रही है, तथा सात्विक मनोवृत्ति का है वह ही निर्भीक हो सकता है। निर्भीकता भारतीय हे-मानव के उदात्त एवं आदर्श चरित्र की।[3] भाई जी की निर्भीकता उनके वेद अध्ययन की ही देन थी। कतिपय अभिमत दृष्टव्य है :--

---- 'उनके जैसे योग्य और निर्भीक व्यक्ति की आज बड़ी आवश्यकता है।'[4]

(स्वामी करपात्री जी)

---

(1) भा०प०ता०मा० पृ०-39 (2) भा०प०ता०मा० पृ०-67

(3): [illegible] (struck through)

(3) ॐ अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।। [अ०19/15/5]
ॐ अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।। (अ०19/15/6)

(4) भाई परमानन्द स्मरण पृ0 12.

2.10

---- 'मैं उनकी निर्भीकता का कायल हूँ ।'[1]

(श्री महेन्द्र नारायण अग्रवाल)

---- 'किसी सांस्कृतिक संकट के अवसर पर व्याख्यान के माध्यम से प्राप्त होने वाले उनके संतुलित किन्तु निर्भीक और प्रभावशाली उद्बोधन से देश सदा के लिये वंचित हो गया ।'[2]

(स्वामी लोकेश्वरानन्द)

---- 'वे युवावस्था में एक निर्भीक स्वातन्त्र्य-सैनिक और गोवध विरोधी आन्दोलन के अग्रणी सेनानी थे ।'[3]

(शिशिर कुमार सेन)

सहिष्णुता

सहिष्णुता मानव स्वभाव का उत्तम उपलब्ध है । चित्त की शान्ति, मन की असीम पूर्ण निर्मल तथा आत्मा के तोष से ही इस स्वभाव की निर्मिति होती है । भाई जी के लिए यह सहज वृत्ति बन गया था । सहिष्णुता की सीमा में अक्रोध, निरपेक्षता, निरीह, निःस्पृह, निःस्वार्थी जैसे गुण आते हैं तथा इन गुणों के समन्वित स्वरूप में ही सहिष्णुता संभव हो पाती है । महान संत पोद्दार जी भी सहिष्णुता मूर्तिमय थी । इस सहिष्णुता के फलस्वरूप ही उनकी लोकप्रियता संभव हुई तथा कठिनाइयाँ तक उनके सामने नतमस्तक हुए । निम्नलिखित अभिमतों में इस गुण का उल्लेख हुआ है ।

---- 'उनके समान निःस्पृह, धर्मसेवी, समाज की सेवा करने वाला और सबसे बढ़कर आध्यात्मिक साधक कहाँ मिल सकेगा ?'[4]

(श्री कमलापति त्रिपाठी)

---

(1) भा०प०स्मा० पृ०-39
(2) भा०प०स्मा० पृ०-56
(3) भा०प०स्मा० पृ०-62
(4) भा०प०स्मा० पृ०-23

---- 'उन जैसे निःस्पृह और परम उदार समाज सेवी के पुनीत कार्य लोगों के लिए सदैव ही अनुकरणीय रहेंगे।'[1]

(चौधरी चरण सिंह)

---- 'त्याग की महान गरिमा को सुरक्षित रखकर जिस प्रकार की निःस्पृह सेवा का उदाहरण आपने अपने जीवन के अन्त तक प्रस्तुत किया, वह किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा असम्भव है।'[2]

(वसुमति सिंगानिया)

---- 'वे स्वधर्म, स्वसंस्कृति और हिन्दू समाज के परमहितैषी एवं निःस्वार्थ सेवक थे।'[3]

(श्री रामगोपाल शालवाले)

---- 'श्री पोद्दार जी का निःस्वार्थ सेवा भाव एवं अलौकिक जीवन समाज तथा देश के लिए एक जाज्वल्यमान नक्षत्र की भाँति रहा।'[4]

(श्री गिरधर दास मूँदड़ा)

---- 'उन्होंने अपना निःस्वार्थ जीवन शिक्षा और संस्कृति के निमित्त अर्पण कर दिया।'[5]

(स्वामी प्रज्ञानन्द)

---- 'श्री भाई जी के समान निःस्वार्थ भाव से सेवा करने वाला दूसरा व्यक्ति आज देश में दिखाई नहीं पड़ता।'[6]

(श्री नारायण अग्नि व्यास)

---- 'क्रोध और द्वेष को उन्होंने जीत लिया था।'[7]

(शिवयोगी गिरि)

---- 'श्री भाई जी इस विकट कलिकाल में एक दिव्य पुरुष थे - एकदम निरीह, निर्लिप्त तथा निःसंग।'[8]

(बलदेव उपाध्याय)

---

(1) भा०प०तो०स्म० पृ०-36 (4) भा०प०तो०स्म० पृ०-44 (7) भा०प०तो०स्म० पृ०-46

(2) भा०प०तो०स्म० पृ०-41 (5) भा०प०तो०स्म० पृ०-59 (8) भा०प०तो०पृ० पृ०-47

(3) भा०प०तो०स्म० पृ०-38 (6) भा०प०तो०स्म० पृ०-69

2.1.2.2. स्वभाव :-

मानवीय गुणों का प्रभाव मनुष्य के स्वभाव एवं व्यवहार पर पड़ता है। इन गुणों के अनुकूल ही स्वभाव बन जाता है। सद्गुणों से प्राप्त स्वभाव को एक "साधु" स्वभाव से अभिहित किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत मनुष्य की सहृदयता, सात्विक वृत्ति, अमानी प्रकृति एवं सरलता आ जाती है। स्वभाव की विशेषता का उल्लेख प्रायः हुआ है। कतिपय अभिमत द्रष्टव्य हैं :-

.... 'श्री पोद्दार जी के निर्मल चरित्र, साधु स्वभाव, परोपकार वृत्ति एवं निरभिमानता के कारण ही 'कल्याण' की लोकप्रियता बढ़ी। उनके स्नेह भरे स्वभाव की एवं सरल व्यवहार को किसी के लिए भुलाना असम्भव है।[1]

[illegible]

.... 'पोद्दार जी निश्छल निष्कपट तथा स्नेह-सिक्त-वात्सल्य रहित स्वभाव, उनकी सात्विक मूर्ति के प्रथम दर्शन में ही सब लोगों के समक्ष प्रकट हो जाता था।[2]

[श्री निरंजन देव तीर्थ जी]

.... 'उनका स्वभाव सरल था'।[3]

[स्वामी करपात्री जी]

.... 'वे स्वभाव से भी मृदुल थे।[4]

[श्री देवकान्त बरुआ]

.... 'उनके स्वभाव की सरलता उनकी सौम्यता उनकी करुणा सब अनुकरणीय थी।[5]

[श्री हीरालाल शास्त्री]

.... 'स्वभाव बालोचित् सरल और सबके प्रति प्रेमपूर्ण तथा करुणा से आप्लावित।[6]

[वियोगी हरि]

---

[1] भा०प०स्म० पृ०-43 [2] भा०प०स्म०पृ०-10 [3] भा०प०स्म०पृ०-12
[4] भा०प०स्म० पृ०-22 [5] भा०प०स्म०पृ०-35 [6] भा०प०स्म०पृ०-46

.... 'उन्होंने अपने सुस्वभाव के कारण अनेक संत महात्माओं के भी [illegible] हृदयों को जीत लिया था।'[1]

(श्री [illegible] जी महाराज)

.... 'उनका स्नेह पूर्ण व्यवहार मुझे सदा स्मरण रहेगा।'[2]

(श्री [illegible]ानन्द शर्मा)

.... 'सरल स्वभाव के थे।'[3]

(श्यामलाल जी हकीम)

.... 'वे स्वभाव से इतने सरल और स्नेही थे कि प्रत्येक व्यक्ति उनके निकट आते ही उनसे बन्धुत्व का अनुभव करने लगता था।'[4]

(डा० [illegible] बिहारी लाल कपूर)

.... 'श्री भाई जी के स्वभाव की यह बड़ी विशेषता थी कि जिसे उन्होंने एक बार अपना कह दिया उसे जीवन भर अपना मानते रहे कभी उसके व्यवहार एवं चरित्र को नहीं देखा।'[5]

(श्री कुमार चन्द पोद्दार)

.... 'सबहिं मानप्रद आपु अमानी' - यह चौपाई उन्हीं में पूर्ण घटती थी।[6]

(श्री सीताराम शरण जी महाराज)

.... 'श्री चैतन्य महाप्रभु के "तृणादपि सुनीचेन" श्लोक के अनुसार स्वयं सर्वमान्य होते हुए भी वे अमानी थे और हृदय से सबका सम्मान करते थे।'[7]

(डा० [illegible] बिहारी लाल कपूर)

---

(1) भा०पा०स्म० पृ०-58
(2) भा०पा०स्म० पृ०-65
(3) भा०पा०स्म० पृ०-72
(4) भा०पा०स्म० पृ०-72
(5) भा०पा०स्म० पृ०-76
(6) भा०पा०स्म० पृ०-2815
(7) भा०पा०स्म० पृ०- 73

2.1.2.3 व्यवहार :-

व्यवहार में मनुष्य की आन्तरिक अभिव्यक्ति होती है तथा उसका व्यक्तित्व अंकित होता है। व्यवहार में सच्चाई और दिखावा का एक रूप होता है तथा बनावटी पूर्ण प्रदर्शनात्मक का दूसरा रूप। इस प्रकार व्यवहार से व्यक्तित्व का आकलन कठिन हुआ करता है। प्रायः प्रवंचना एवं अवसर के व्यवहार प्रदर्शित किया करते हैं। फिर भी निश्छल एवं निष्ठापूर्ण व्यवहार की वास्तविकता का अपना पृथक प्रभाव होता है जो अन्तर को छूता है और चित्त को आह्लादित करता है। ऐसे व्यवहार के धनी व्यक्तित्व समाज के पूज्य एवं आदर्श बन जाते हैं। श्री शिवाधार जी का व्यवहार मधुर, सरल, विनम्र, जैसी विशेषताओं से अभिहित किया गया है तथा उनको व्यवहार कुशल, मधुभाषी, मृदुभाषी कहा गया है। कतिपय उद्धरण अवलोकनीय हैं :-

....उनके आत्मीयता पूर्ण मधुर व्यवहार की छाप सम्पर्क में आने वाले पर अवश्य पड़ती थी।[1]

(श्री गंगाराम तिवारी)

....उनके व्यवहार में शालीनता, मृदुलता तथा गम्भीरता कूट-कूटकर भरी हुई थी।[2]

(डा० राम गोविन्द चन्द्र)

....उनका अनुद्वेजक व्यवहार तो सभी आत्मीयजन पदे-पदे अनुभव करते थे।[3]

(माधवाचार्य)

---

(1) भा०स०प० पृ०-32
(2) भा०स०प० पृ०-49
(3) भा०स०प० पृ०-50

....'उनके जैसा विनम्र व्यवहार निपुण, सर्वत्र भगवद्दृष्टि रखने वाला संत लोक में दुर्लभ है।'[1]

(श्री सुदर्शन सिंह चक्र)

....वे व्यवहारवादी भी थे।[2]

(श्री शंकर श्याम श्रीवास्तव)

....वे अपनी जीवन यात्रा में सनातन वैदिक धर्म के सिद्धान्त हृदय में दृढ़ करके तदनुसार जीवन व्यवहार करते रहे।[3]

(आदर्श चरणतीर्थ जी)

....भाई जी का व्यवहार इतना सुन्दर एवं मधुर था कि वह दूसरों के हृदय को अपनी ओर बरबस आकृष्ट कर लेता था।[4]

(श्री नारायण कान्त व्यास)

2.1.3 <u>समग्र व्यक्तित्व</u> :--

बाह्य एवं आंतरिक दोनों व्यक्तित्वों को समन्वित रूप में व्यक्त करने के उपक्रम में समग्र व्यक्तित्व का आकलन करने का प्रयत्न किया गया है। आन्तरिक रूप को बिना उद्घाटित किये बाह्य पक्ष पर लिखना उनके (श्री पोद्दार जी के) व्यक्तित्व के महत्व को कम करना है।[5]

इस प्रकार इस मुख्य संदर्भ के अन्तर्गत विभिन्न अभिमतों का निम्नलिखित एवं वर्गीकृत विवेचन प्रस्तुत किया जा सकता है। श्री

---

(1) भा०प०स्मा० पृ०-53

(2) भा०प०स्मा० पृ०-55

(3) भा०प०स्मा० पृ०-55

(4) भा०प०स्मा० पृ०-69

(5) भा०प०स्मा० पृ०-224

पोद्दार जी के व्यक्तित्व को अनेक विशेषणों से अंकित किया गया है। और इस प्रकार व्यक्तित्व की व्यापक एवं विशेषकारी छवि प्रस्तुत करने का प्रयास उनकी महत्ता को अंकित कर देने की कठिनाई को ही प्रकट करता है।[1] वस्तुत: श्री पोद्दार जी का व्यक्तित्व कुछ ऐसा ही था— अलौकिक, अपरिमित, एवं अतुल।

समग्र व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करने के लिए निम्नलिखित तीन दृष्टियों से अभिमत व्यक्त किये गये हैं :—

मानव
भक्त
संत

दिव्यभावापन्न व्यक्तित्व
{पूर्ण व्यक्तित्व}

मानव :-

'अद्वितीय महापुरुष',[2] 'गृहस्थ महात्मा',[3] 'आदरास्पद महामानव',[4] 'महान आत्मा',[5] ~~xxx~~ 'भारतीय महापुरुष',[6] 'मर्यादा पुरुषोत्तम',[7] 'धर्मप्राण महापुरुष',[8] 'अमरकीर्ति महापुरुष',[9] 'युग की महान विभूति',[10] 'युग पुरुष',[11] 'सच्चे अर्थ में महापुरुष',[12] 'विशिष्ट विभूति',[13] 'महात्मा',[14] 'असाधारण महापुरुष',[15] 'परमउदार महामानव',[16] 'महामनीषी',[17] 'सेवाव्रती महामानव'।[18]

{1} उनके व्यक्तित्व तथा क्रियाशील जीवन का समुचित वर्णन चाहे कितना ही लम्बा ग्रंथ क्यों न लिखो होना असम्भव है। भा०प०पो०स्मृ० पृ० 134.

{2} भा०प०पो०स्मृ० पृ०-103
{3} भा०प०पो०स्मृ० पृ०-108
{4} भा०प०पो०स्मृ० पृ०-122
{5} भा०प०पो०स्मृ० पृ०-143
{6} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-152
{7} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-169
{8} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-183
{9} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-201
{10} भा०प०पो०स्मृ०पृ०228
{11} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-232
{12} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-246
{13} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-266
{14} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-277
{15} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-334
{16} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-352
{17} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-364
{18} भा०प०पो०स्मृ०पृ०-374

भक्त :-

'श्री कृष्ण भगवद्भक्त,'[1] 'अतुलित भगवद्विश्वासी,'[2] 'भक्तावतार,'[3] 'परम भागवत,'[4] 'भगवत्कृपा प्राप्त,'[5] 'भगवान के एक यन्त्र,'[6] 'जन्मजात भक्त,'[7] 'भगवत्साक्षात्कार सम्पन्न,'[8] 'भक्तिकल्पलता महासिद्धि सम्पन्न,'[9] 'अनन्य भक्त,'[10] ।

सन्त :-

'परम विशुद्ध संत,'[11] 'मूर्तिमान संतत्व,'[12] 'गृहस्थ वेश में एक संत,'[13] 'सद्गृहस्थ महान संत,'[14] 'महान योग पुरुष संत,'[15] 'परम संत,'[16] 'महान संत,'[17अ] 'संतत्व के मूर्तिमान आविष्कारक,'[17ब] 'संतों की परम्परा,'[18]

2.1.3.1 मानव :-

मानव की स्वरूपस्थिति गीता में तथा अन्य शास्त्रों में की गई है उन्हीं विशिष्ट गुणों के सन्दर्भ में इस पावन स्मरण में भी श्री पोद्दार जी के मानव की विशिष्ट गुणमयी स्थिति से अवतारित किया है - अद्वेष्टा, सर्वभूत-प्रिय, ममता रहित, निरहंकार, सुख-दुःख में सम, क्षमाशील, संतत संतुष्ट, भगवान में दृढ़ निश्चय, मन व इन्द्रियों सहित शरीर को वश में किये हुए तथा ध्यान योग में लगा हुआ आदि । प्रस्तुत कृति में मानव के स्वरूप की अभिव्यक्ति निम्नलिखित पदों द्वारा की गई है ।

---

(1) भा०पा०स्म० पृ० - 92
(2) भा०पा०स्म० पृ० - 125
(3) भा०पा०स्म० पृ० - 1[illegible]0
(4) भा०पा०स्म० पृ० - 146
(5) भा०पा०स्म० पृ० - 273
(6) भा०पा०स्म० पृ० - 97, 287
(7) भा०पा०स्म० पृ० - 189
(8) भा०पा०स्म० पृ० - 328
(9) भा०पा०स्म० पृ० - 89
(10) भा०पा०स्म० पृ० - 167
(11) भा०पा०स्म० पृ० - 182
(12) भा०पा०स्म० पृ० - 196
(13) भा०पा०स्म० पृ० - 205
(14) भा०पा०स्म० पृ० - 266
(15) भा०पा०स्म० पृ० - 378
(16) भा०पा०स्म० पृ० - 365
(17) भा०पा०स्म० पृ० - 328 व (17) भा०पा०स्म० पृ० - 365
(18) भा०पा०स्म० पृ० - 288, 303, 317.

मानव :—

महामानव, महापुरुष, महान आत्मा, महाप्राण, विशिष्ट विभूति, महामनीषी, युग पुरुष ।

इस प्रकार मानव को पुरुष, आत्मा, प्राण, विभूति, मनीषी, संज्ञाओं से अलंकृत किया गया है —

मानव के साथ - महामानव ।

पुरुष के साथ - महापुरुष, युग पुरुष ।

आत्मा के साथ- महान आत्मा, महात्मा ।

प्राण के साथ - महाप्राण, धर्म प्राण ।

मनीषी - महामनीषी ।

—: महामानव :—

अभयं सत्त्व संशुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम ॥

भगवद् गीता में दैवी सम्पदा के जो 26 गुण बतलाये गये हैं वे इस महामानव में विद्यमान है ।[1]

[श्री विद्याधर जी शुक्ल]

—: महापुरुष :—

'वे कठिन से कठिन समस्या आ जाने पर भी विचलित नहीं होते है । बड़े धैर्य एवं शान्ति पूर्वक सभी समस्याओं को सुलझाया करते है । वे बड़े कर्मनिष्ठ भक्त महापुरुष है'।[2]

[स्वामी श्री भजनानंद जी सरस्वती]

[1] भा०पा०श०को० पृ० - 334 [2] भा०पा०श०को० पृ० - 231

-: युग पुरुष :-

'वे सन्मार्ग पर स्वयं ही नहीं चले बल्कि करोड़ों को चलाया। वे साधना पथ के पथिक अकेले ही नहीं बने, बल्कि लाखों को बनाया'।[1]

(श्री रघुनन्दन प्रसाद सिंह)

-: महान आत्मा :-

'उन्होंने इस युग में भारतीय चेतना के असीम अतल समुद्र का पुनः मन्थन कर उससे अनश्वर शान्ति के मणिरत्न निकालकर लोगों के हाथ में जिस संजीवनी सुधा का अक्षय पात्र रखा वह उन्हीं-जैसे महान आत्मा के अजेय पौरुष से सम्भव था'।[2]

(श्री सुमित्रानन्दन पंत)

-: महात्मा :-

'गरीबों को अनेक प्रकार के दान देना, अनाथों को अन्नवस्त्रादि से उपकृत करना इत्यादि अनेक प्रकार के सद्गुण उनमें स्वाभाविक थे। बहुत परोपकार करके भी वे उसे थोड़ा मानते तथा अपने सुकृत का प्रदर्शन नहीं करते थे। अपनी महत्ता का प्रदर्शन या ढिंढोरा पिटवाने के लिए यह परोपकार नहीं था किन्तु सर्वान्तर्यामी श्री हरि के प्रीत्यर्थ ही उनका कार्य आदर्श कर्मयोगी जनकराजा के जैसा रहा। धन्य हैं ऐसे गृहस्थ महात्मा ---'परोपकाराय सतां विभूतयः'।[3] (श्री रामदत्त जी पर्वतीकर)

---

(1) भा०पा०रा०स्मा० पृ० - 231.

(2) भा०पा०रा०स्मा० पृ० - 143.

(3) भा०पा०रा०स्मा० पृ० - 108.

-: महापुरुष :-

'निःस्पृह संत और जीवन्मुक्त मनीषी भारतीय संस्कृति के कण-कण को अपने जीवन में चरितार्थ करने से भारतीय महापुरुष के अभिधान से सार्थक सिद्ध हुए हैं'।[1]

[डा0 गोविन्द दास सेठ]

-: महामनीषी :-

'भाई जी बड़े ही सरल एवं मानव मात्र की सम्मान करने की क्रिया में अग्रणी थे। क्या मजाल कि कोई उन्हें पहले प्रणाम करले, ज्यों ही व्यक्ति सामने आया कि उनके दोनों हाथ उठ जाते थे और वे अपना प्रणाम निवेदन कर देते थे। भाई जी महामनीषी थे'।[2]

[श्री जगगोपाल जी मिश्र]

-: महान विभूति :-

'पोद्दार जी मेरी दृष्टि में ऐसे साधक, तपस्वी और चिन्तक व्यक्ति थे। प्रेम, विनम्रता और मान्यता उनके रोम-रोम में समाई हुयी थी'।[3]

[श्री विश्वम्भर सहाय]

-: विशिष्ट विभूति :-

'विशिष्ट विभूतियों में जो त्याग, तपस्या लोकोपकार भावना, समदर्शिता, सहिष्णुता, सुजनता, निरभिमानता, ईश्वर-

[1] भा0पा0स्म0 पृ0 - 151.

[2] भा0पा0स्म0 पृ0 - 364.

[3] भा0पा0स्म0 पृ0 - 230.

परायणता आदि सद्गुण होते हैं, वे सभी सद्गुण श्री पोद्दार जी में पूर्णतया अनुस्यूत थे"।[1]

[श्री बेनीराम जी शर्मा]

-: मर्यादा पुरुषोत्तम :-
....

"मैं मानव जीवन की परख साधारण बातों से करता हूँ। विद्वान, गुणी तथा योगी तो मनुष्य स्वयं होता है पर दूसरे को उसके सम्पर्क में आकर उसके साथ व्यवहार में जो अनुभूति होती है, उसी से उसकी मर्यादा पहचानी जाती है।........मैंने उन्हें निजी व्यवहार में मर्यादा पुरुष, आदर्श नागरिक तथा सत्यनिष्ठ पाया।"[2]

[श्री परिपूर्णानन्द वर्मा]

2.1.3.2. साधक :-

भाई जी पावन स्मरण में संगृहीत मूर्धन्य सन्यासी, साधु, भाषाविदों, द्वारा प्रेषित संस्मरणों में उन्हें श्रेष्ठ साधक कहा गया है—

[1] "पोद्दार जी मेरी दृष्टि में ऊँचे साधक, तपस्वी और चिंतक व्यक्ति थे।"[3]

[श्री विश्वम्भर सहाय जी]

[2] "वे साधन पथ के पथिक थे और साधना करते-करते सिद्धावस्था को प्राप्त हो गये थे।" श्री रामचरित मानस में आया है — "सिधाई साधक सिद्ध सयाने। त्रिविध जीव जग वेद बखाने।।" श्री भाई जी साधक थे और जीवन के अन्त तक साधक बने रहे। वे रोग ग्रस्त भी हुए परन्तु उस अवस्था में भी उनका साधन क्रम कुछ नहीं छूटा।[4]

[श्री रघुनन्दन प्रसाद सिंह]

---

[1] भा०पा०स्म०: पृ०: 266
[2] भा०पा०स्म०: पृ०169-170.
[3] भा०पा०स्म०: पृ०: 230.
[4] भा०पा०स्म०: पृ०: 228-232.

82.223

[3] "श्री भाई जी जीव मात्र के कल्याण की कामना से स्वयं साधना में रत रहे और उन्होंने लोगों को साधन-पथ में लगाया।[1]

[श्रीप्रकाशानन्द]

[4] 'उनका साधक जीवन सर्व साधारण के लिए आदर्श था। xxx उनकी साधना बहुमुखी थी; आचार नीति सम्बन्धी जो वैशिष्ट्य उनके जीवन में झलकता था, वह उनकी साधना की सहज परिणति के अतिरिक्त और कुछ न था। xxxx श्री भाई जी भक्तिसाधना के इस क्षेत्र में इस युग के अद्वितीय साधक थे।[2]

2.1.3.3. **भक्त :-**

भाई जी पावन स्मरण में संगृहीत सुप्रसिद्ध सन्यासी, साधु, आचार्यों द्वारा प्रेषित श्रद्धांजलियों में उन्हें श्रेष्ठ भक्तों के निम्नलिखित विशिष्ट गुणों से युक्त कहा गया है —

- "श्री कृष्ण भगवद्भक्त",
- "अप्रतिम भगवद्विश्वासी",
- "भक्तावतार",
- "परम भागवत",
- "भगवत्कृपा प्राप्त अधिकारी",
- "भगवान के एक यंत्र;
- "जन्मजात भक्त"
- "भगवद्भक्ति सम्पन्न",
- "भक्तिरूपा महासिद्धि सम्पन्न"
- "श्री राधामाधव के अनन्य भक्त"

-: श्रीकृष्ण भगवद् भक्त :-

"उनकी दृष्टि में श्री कृष्ण के सिवा और किसी की कोई सत्ता

[1] भा०पा०स्म० पृ० : 255. [2] भा०पा०स्म० पृ०:329-331.सं.

2.22.3T

नहीं थी ।....... वे साधु "श्रीकृष्णप्राण भगवद्भक्त" थे'।[1]

(स्वामी सनातन देव)

-: अप्रतिम भगवद्विश्वासी :-

'पूज्य भाईजी को भगवत्कृपा पर अटूट विश्वास था, जिसका प्रत्यक्ष अनुभव वे स्वयं किया करते थे और अपने सम्पर्क में आने वालों को भी कराते थे'।[2]

(श्री राधेश्याम जी खेमका)

-: भक्तावतार :-

'श्री प्रभु जगद्बन्धु सुन्दर ने वर्तमान समय को "युग संधि" कहा है। ....इस युग-संधिकाल में वे थे भक्तावतार । आध्यात्मिक ज्ञान-सम्पद और भाव-सम्पद इन दोनों के वितरण में वे "मुरिद" थे'।[3]

(डा० महानामव्रत ब्रह्मचारी)

-: परम भागवत :-

'नरसी मेहता के भजन "वैष्णव जन तो तेने कहिए, जो पीड़ पराई जाणे रे" की प्रत्येक पंक्ति के वे जीवित उदाहरण थे । इसलिए हम उन्हें "परम भागवत" के रूप में अनुभव करते हैं'।[4]

(श्री श्रीनारायण जी चतुर्वेदी)

---

(1) भा०पा०स्म० पृ० - 94.

(2) भा०पा०स्म० पृ० - 380.

(3) भा०पा०स्म० पृ० - 121-122.

(4) भा०पा०स्म० पृ० - 146.

-: अमरत्त्वा प्राप्त अधिकारी :-

....

'वे ज्ञान योग, भक्तियोग, ध्यानयोग, कर्मयोग, सभी में पूर्ण अनुभव युक्त एकमात्र अधिकारी, आचार्य कोटि के महापुरुष थे। प्रत्येक आध्यात्मिक अधिकारी साधक को आरम्भ से लेकर अंतिम स्थिति तक उनका मार्ग दर्शन स्थिति तक उनका मार्ग दर्शन प्राप्त होता था'।[1]

(स्वामी आत्मानन्द जी)

भगवान के एक अंग :--

'श्री भगवान के सभी प्रकार के अनुपम यन्त्र श्री पोद्दार बाबा थे — उनके हृदय पर अधिकार करके भगवान स्वयं ही कार्यकर रहे थे उनके भीतर और बाहर भगवान ही विद्यमान थे'।[2]

(श्रीसीतारामदास ओंकारनाथजी)

भगवत् शक्ति सम्पन्न :-

'"सबहिं मानप्रद आपु अमानी" — श्री भाई जी इस उक्ति के आदर्श रूप थे।........वास्तव में भाई जी सिद्ध पुरुष थे। उनको दैवी शक्ति प्राप्त थी। बिना दैवी शक्ति के उनके समान योग्यता प्राप्त नहीं हो सकती'।[3]

(श्री देवदत्त जी मिश्र)

भक्तिरूपा महासिद्धि सम्पन्न :-

'भाई जी में कोई सिद्धि थी या नहीं, इसका मुझे पता नहीं;

---

(1) भा०प०तो०स्म० पृ० - 173. (3) भा०प०तो०स्म० पृ० - 328.

(2) भा०प०तो०स्म० पृ० - 97.

परन्तु उन्हें सम्पूर्ण सिद्धियों की जननी भगवद् भक्ति तथा महासिद्धि प्राप्त थी – ऐसा मेरा विश्वास है ।[1]

[श्री गोविन्द दास जी]

श्री राधामाधव के अनन्य भक्त :—

'भाई जी भगवान श्री राधा माधव प्रभु के अनन्य रसनिष्ठ रसिक भक्त थे । आपने अपनी मर्मस्पर्शी लेखनी और जन-कल्याणी वाणी से भारत भूमि पर भगवान की भक्ति-भावना की भागीरथी बहाकर असंख्य नर-नारियों को भगवान के अभिमुख किया ।'[2]

[स्वामी श्री रंगीलीशरणजी]

2.1.3.3 भाई जी के सन्दर्भ में संत की निम्नलिखित कोटियाँ भाई जी पावन स्मरण में प्रस्तुत की गई है —
"संत", "विशुद्ध संत", "परम संत", "महान संत" इन चारों कोटियों के लिए श्री पोद्दार जी को योग्य एवं उपयुक्त पाया गया है । इन कोटियों पर विचार करें ।

[illegible]

संत :—'जो केवल ज्ञानी हो'।[3]

विशुद्ध संत :—'जो ज्ञानी ध्यानी दोनों हो'।[33]

– जो ज्ञानी ध्यानी ही नहीं निष्काम कर्मयोगी और अनन्य भगवत प्रेमी हो ।

–'ज्ञान शान्ति और भक्ति ही जीवन के परम लक्ष्य हैं इनमें एक की प्राप्ति हो जाने पर जीवमुक्त-कृतकृत्य हो जाता है पर पोद्दार भाई जी में तो इन तीनों का ही अद्भुत समन्वय

---

[1] भा०प०रा०स० पृ० – 353. [3] भा०प०रा०स० पृ० – 89.
[2] भा०प०रा०स० पृ० – 353. [33] भा० प० स्मा० पृ० - ८९

था । अतः उन्हें एकदम विशुद्ध संत कहना अनुचित न होगी ।'[1]

(स्वामी सनातनदेव जी)

परम संत :—

'उन्होंने एक बार प्रवचन में कहा था –"जैसी दृष्टि, वैसी सृष्टि" उनकी स्वयं की दृष्टि सदा दूसरों के गुणों को ही देखा करती थी, अवगुणों को नहीं । संत का स्वभाव है –"सर्वत्र पवित्रता एवं शुद्धता का दर्शन करना ।" वे परम संत थे ।'[2]

(श्री हरेन्द्रप्रसाद जी शर्मा)

महान संत :—

'आदर्श स्नेह, प्रेम, विचार एवं जीवन पद्धति के धनी को महान संत कहा जाना चाहिये ।'[3]

(श्री रूडोल्फ स्टेल, जर्मनी)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यह विभेदीय स्थितियाँ किंचित विभेदकारी प्रतीत होते हुए भी भाव-विभोर श्रद्धांजलियों के संदर्भ में प्रस्तुत होकर "संत", शब्द की व्यापक अर्थ सत्ता में "विशुद्ध", परम "महान" सभी विभेदों को आकलित कर लेती हैं । इसीलिए शास्त्रीय विवेचन के अन्तर्गत केवल "संत", "असंत" शब्दों का ही प्रयोग हुआ है । इन श्रद्धांजलियों का और अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि "संत" शब्द के आयाम में इन सभी का अन्यथा आकलन हुआ है ।

अन्यत्र संत के संदर्भ में कहा गया है —

'श्री पोद्दार जी त्यागपूर्ण, परिश्रमी, और मर्यादामय जीवन बिताने वाले गृहस्थ वेष में एक संत थे ।......उनके व्यवहार में विनम्रता का पुट बहुत अधिक था ।'[4]

(1) भा०प०स्म० पृ० – 92. (3) भा०प०स्म० पृ० – 378.
(2) भा०प०स्म० पृ० – 366. (4) भा०प०स्म० पृ० – 182.

[डा० कृष्ण दत्त जी भारद्वाज]

---- ‘वे एक आदर्श सद्गृहस्थ भक्त थे, “जो सीयराममय सब जग जानी”——की भावना से ओत-प्रोत होकर अपने अन्तर्यामी प्रभु का प्रकाश समस्त विश्व में बांटते रहे ।....यह भाव उनके निरन्तर ही सरलता, जनता जनार्दन के हित की भावना,

शी x सौहार्दपूर्ण स्वभाव, नम्रता तथा "राम चरण-रति-सद्गुण अनुपम

कु x गुणों वाले व्यक्तित्व के कारण ही था ।....उनके व्यक्तित्व में

पे श्रीमद भगवद्गीता की अनासक्ति भावना का पूर्ण समावेश पाया जाता है’।[1]

[श्रीरामदास जी महाराज]

---- ‘नम्रता पूर्ण व्यवहार, उज्ज्वल चरित्र, प्राणिमात्र की बिना किसी भेदभाव के सेवा, दुखी-दीन, कष्ट और आपत्तिग्रस्त

ह रोग और व्यथा से पीड़ित प्राणी उनके आराध्य ।

सही अर्थों में एक "संत" थे-संत के गुणों के मूर्तिमान प्रतीक’।[2]

[श्री कृष्ण दत्त भट्ट]

---- ‘वे ऐसे योगी थे कि जिनका अपनी स्तुति-निन्दा के प्रति समभाव था गीता में भगवान ने कहा है — "समत्व"योग उच्यते और इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।[3]

[श्री युगल सिंह खीची]

---- ‘उनके सार्वभौम संतत्व के आधार, सात्त्विक जीवन, लोक-कल्याण की भावना तथा स्वानुभूति परक साधन-वैशिष्ट्य हैं । बातचीत में एक बार उन्होंने मुझसे कहा था कि "मैंने अपने मन में किसी का भी कभी अहित नहीं सोचा, मैंने अपने

---

[1] भा०भा०ति०ग्र० पृ० - 196. [3] भा०भा०ति०ग्र० पृ० - 206.

[2] भा० भा०ति०ग्र०पृ० - 168.

हाथ से किसी का उपकार नहीं किया और वचन से किसी के प्रति द्वेष नहीं किया ।"

> 'तन करि मन करि, वचन करि काहु दुखत नाहिं ।
> तुलसी ऐसे संत जन, रामरूप जग माहिं ।।'[1]

भाई जी ऐसे ही लोक सन्त थे ।"

(श्री रामलाल)

..... "भाई जी कबीर, नानक, दादू, नरसी, नामदेव, एकनाथ, आदि गृहस्थ संतों की परम्परा में थे । इन संतों की भाँति उनकी भी यही मान्यता थी कि ईश्वर की आराधना या प्राप्ति के लिए घर छोड़ना आवश्यक नहीं है ।"[2]

(श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय)

<u>व्यक्तित्व :-</u>

संत, मानव एवं भक्त के समन्वित समग्र व्यक्तित्व को महान[3] तपःपूत[4] अवर्णनीय[5] लोकोत्तर[6] विशेषणों से अभिहित किया गया है । "महान व्यक्तित्व का आधार है - विनम्रता । इतने विशिष्ट धार्मिक नेता के मुख से या लेखनी से इतनी विनम्रता का प्रकट होना वास्तव में उनके महान व्यक्तित्व का द्योतक है । वे वस्तुतः विश्व बन्धुत्व के महान प्रतीक ही थे ।"[7]

(श्रीगंगाधर जी सोमानी)

---

(1) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-303
(2) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-318
(3) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-134
(4) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-274
(5) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-319
(6) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-222
(7) भा०पा०अ०ग्र० पृ०-136

'तपपूत: व्यक्तित्व का आधार है, प्रेम की चरमस्थिति तथा चित्त की पवित्रता। शरीर, मन, बुद्धि, इन्द्रिय सबका अस्तित्व भूलकर प्रेमी भक्त प्रेम की परम स्थिति तक पहुँचता है। श्री भाई जी ऐसे ही पहुँचे हुए भक्त थे'।[1] 'चित्त को पवित्र किये बिना लीला पुरुष की प्रतिष्ठा इस हृदय वेदी पर नहीं कर सकते'।[2]

{डा०के०पी०श्रुवद्राअव्वा}

'उनके व्यक्तित्व का मापक उनके कर्तव्य की थाह था या संत हृदय में विराजित विशुद्ध सरलता, कोमलता और परदुःखकातरता यह ऐसे सूक्ष्म तत्व हैं कि इनकी माप नहीं हो सकती न इनके मापक ही बन सकते हैं'।[3]

{श्री रामनिवास जी ढंढरिया}

संत, मानव तथा भक्त इन तीन दृष्टियों का समन्वित रूप ही "कृष्ण व्यक्तित्व" दृष्टि है जिसका उल्लेख इससे पूर्व किया जा चुका है। वस्तुत: कृष्ण तत्व के द्वारा उस परार्जित परब्रह्म की समरूपता, एकात्मता अथवा एकरसता का ही भान कराया गया है। जिस स्थिति में जीव और ब्रह्म की एकता हो जाती है तथा तद्स्थितिगत जीव ब्रह्म की भाँति कार्य करता हुआ किन्हीं सीमाओं में व्यावधानित अथवा परिबाधित नहीं हो पाता। श्री पोद्दार जी का ऐसा ही दिव्य व्यक्तित्व था जिसे "महान" कहें, "तप:पूत" कहें, "लोकोत्तर" कहें फिर भी रहता "वर्णनीय" ही है।

2.2. <u>अंत:साक्ष्य :—</u>

अंत:साक्ष्य के अंतर्गत श्री पोद्दार जी की अपनी अभिव्यक्तियाँ आती हैं। जो कहीं वाक्य के रूप में प्रकट हुई हैं, किसी पत्राचार में तथा अन्यत्र किसी के सम्पर्क में प्रस्तुत हुई हैं।

{1} भा०पा०स्म० पृ० – 274, {3} भा०पा०स्म० पृ० – 320
{2} भा०पा०स्म० पृ० – 275

इन संदर्भों में दो रूप प्रमुख रूप से उपलब्ध होते हैं ---

(1) आत्मग्लानि के प्रसंग

(2) मनोराज्य एवं प्रपत्ति के प्रसंग

आत्मग्लानि के प्रसंगों का संबंध यदि उनके दार्शनिक पक्ष से मान लिया जाय तो एक पतित एवं अधम दार्शनिक की छवि प्रस्तुत होगी अन्यत्र मनोराज्य एवं प्रपत्ति के प्रसंग विपरीत स्थिति को प्रस्तुत करते ही हैं तथा आत्मग्लानि के प्रसंगों का निराकरण करते हैं। इन आत्मग्लानि के प्रसंगों में गोस्वामी तुलसीदास की विनयपत्रिका के आत्मग्लानि के प्रसंगों का रूप देखा जा सकता है।

साधना की उन्नत स्थिति में "संत का वैश्वानर स्थूल शरीर विराट का विग्रह बन जाता है। संत का तेजस्व प्राणमय शरीर हिरण्यगर्भ विश्व का आधार हो जाता है।[1] इस प्रकार संसार के पतित एवं अधम जीव की आत्मग्लानि संत की अपनी आत्मग्लानि बन जाती है तथा संसार के उन ऐसे जीवों के लिए वह विकल एवं व्यग्र होकर परम पिता परमात्मा से उनके कल्याण के लिए हार्दिक प्रार्थना करता है। मनोराज्य तथा प्रपत्ति के प्रसंगों में उसकी अपनी व्यक्तिगत स्थिति का उद्घाटन ही नहीं होता है प्रत्युत ऐसी कल्याणकारी स्थिति की कामना मानव मात्र के लिए की जाती है।

2.2.1 आत्मग्लानि :---

साधक जब साधना में आगे बढ़ जाता है तो साधक के हृदय के प्रकाश में उसे अपने अन्तर की दुर्बलताएँ, कमियाँ दिखने लगती है जैसे अंधेरे में रखी वस्तुएँ दीपक के प्रकाश में स्पष्ट दिखने लगती है। उसको अपना हृदय स्पष्ट रूप से कलुषित प्रतीत होता है। भगवान द्वारा दी गई

---

(1) महात्मा भवानीशंकर जी (जिनका उल्लेख श्री पोद्दार जी ने अपने को प्रभावित करने वाले महापुरुषों की सूची में दिया है) का पत्र संकलन (अप्रकाशित).

सुविधाओं का सदुपयोग न करने के प्रति उसके हृदय में ग्लानि होती है तब अपने इष्टदेव के समक्ष इन्हें स्वीकार करने लगता है अपने को वह अवगुन खान, भरयो मन ही मन, कुटिल पापी कहता हुआ अपने उद्धार की प्रार्थना करता है । भक्त सूरदास जी अपने को 'कुटिल','खल', तथा 'कामी' कहते है —

'मो सम कौन कुटिल खल कामी ।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो ऐसो नमकहरामी ।।
भरि-भरि उदर विषय कौं धावौं जैसे सूकर-ग्रामी ।
हरिजन छाँड़ि हरी विमुखन की निसि-दिन करत गुलामी ।।
पापी कौन बड़ो जग मोते सब पतितन में नामी ।
सूर पतित को ठौर कहाँ है, तुम बिनु श्रीपति स्वामी' ।।

[भजन संग्रह , पदसं0 128]

सन्त तुलसीदासजी भी अपने को 'मलिन', 'पावँर',आदि कहते हैं —

'मोसम मंद मलिन पाँवर कौन जान तेहि पावन ।।
हरि निरमल मल ग्रसित हृदय,असंजस मोहि जनावत ।।
जेहिसर काक कंक सूकर क्यों मराल तँह आवत ।।'

[विनयपत्रिका पद 185पंक्ति सं0 4 से 6 तक]

पोद्दार जी उच्चकोटि के साधक भक्त थे । उन्होंने भी, अपने को "अभागी" "निर्लज्ज", "नीचे" नरक का कीड़ा,'कुकर्मपरायन' कहा है ।1

---

[1] 'माधव ! मो सम कौन अभागी ।।
करौं न पलक याद मैं तुम्हरी, नाहिं भगति उर जागी ।
हाय-हाय करतहि दिन बीतत, करौं नित्य चितागी ।।
मद-विषाद तें भरयौ रहौं, नित भटकत इत-उत भागी।।
मिलत न कबहुँ शांति-सुखमय थल, भोग-जगत जेहिं लागी।।

नाथ ! करहु अब सहज कृपा तुम, जागै तव विरहागी ।।
बनौं तुम्हारे पद-कमलनि कौ मधु-सेवक बड़भागी ।।'

(ख)

'नाथ ! हौं निपट निरंकुश नीच ।
नरक-कीट मैं परयौ रहौं नित पाप-तापके कीच ।।
करौं भगति की बात मनोहर, भीतर भरे विकार ।
अंतरजामी तुमहू तें मैं करौं कपट-ब्यौहार ।।
निज सुभावबस नाथ दयाकर पकरि उबारौ हाथ ।
पाप-प्रवाह पतित पामर कौं करौ, कृपालु ! सनाथ ।।'

(ग)

'को अपराधी मो सम आन?
प्रभु-वंचक, पर-वंचक, पुनि निज-वंचक, बेईमान ।।
मस्त रह्यौ भोगिन महँ भूल्यौ सब अविरत कौ भान ।
अधम, नित्य कुकर्मपरायन, तजि मानवता-मान ।।
मलिन विचार, कर्म सब गंदे, ममता-मद-अभिमान ।
काम-क्रोध कौ चेरौ, निसि-दिन करौं पाप हित जान ।।
नहीं धर्म कौ भय कछु मो मन, नहिं सत्पथ कौ ध्यान ।
बिसरि गए सब-दरसी उर मैं बसे सदा भगवान ।।
लूँ न नाम तुम्हारौ कबहूँ, करौं न कबहूँ ध्यान ।
भूला बनौं, तदपि मैं जाऊँ फिरि-फिरि तहँ विषम स्थान ।।
प्रभु मो नीच पतित पामर कौं करौ कृपा कौ दान ।
देहि-देहि निज राखौ चरननि महँ, निपट निराश्रय जान ।।'

(द)

'जनम सब बीत्यौ अघ के काम ।
फँस्यौ मोह-ममता मैं निसि-दिन, भज्यौ न चित दै राम ।।
लोगनि कह्यौ-"भजौ नित हरि कौं", धर्‌यौ साधु कौ भेष ।
मन मैं रही कामिनी-कंचन की कामना विसेष ।।
जैसे विष - पूरित घट-मुख मिसरी पय सोभा पावै ।
तैसेहिं कुटिल-हृदय मम मुख पर सुचि हरि-कथा सुहावै ।।
पापी परम, अधम, अभिमानी, वंचक, मन कौ कारौ ।
बिरद बिचारि दयानिधि अब मोहि निज चरननि मैं डारौ ।।'[द]

(य)

'मेरे अघ का पार नहीं है ।
इन्द्रिय लोलुप मैं अतिचारी ।
तोड़कर कुल मर्यादा सारी,
कुत्सित-कर्मी अत्याचारी,
कोई अघ इनकार नहीं है ।।
मेरे अघ का पार नहीं है ।'[य]

(अ) पद रत्नाकर पद सं० - 82
(ब) पद रत्नाकर पद सं० -101
(स) पद रत्नाकर पद सं०- 103
(द) पद रत्नाकर पद सं०- 106
(य) पद रत्नाकर पद सं०- 115

2.2.2. मनोराज्य :-

पोद्दार जी भक्ति भावना के अन्तर्गत भगवान श्रीकृष्ण से कहते हैं-हे माधव ! मुझको आप अपनी सखी बनाने की कृपा कीजिए—

'माधव ! मुझको भी तुम अपनी सखी बना लो रख लो संग ।
खूब रिझाऊँगी मैं तुमको रचकर नये-नये नित ढंग ॥'[1]

भगवान कृष्ण के परम उपासक श्री पोद्दार जी ने अपने आराध्य को वसुदेव देवकी का पुत्र मानते हुए नन्द यशोदा के द्वारा पालित पोषित माना है । उनके कृष्ण असुर समूह का नाश करने वाले हैं, वे प्रेमी हृदय को चन्दन की भाँति शीतलता प्रदान करते हैं, उनकी भौंहें कुटिल हैं, चितवन तिरछी है, नेत्र कमल के समान सरस, मुख अत्यन्त सुन्दर कामदेव के सौन्दर्य को हरण करने वाला, मुनि एवं परम हंसों को आकर्षित करने वाले हैं, उनके ओष्ठ अरुण, उन पर मुरली मधुर मुस्कान के सहित विराजमान है, भ्रमर समूह के मद का भंजन करने वाली घुँघराली अलकें हैं, मस्तक पर तिलक सुशोभित है, हृदय पर कौस्तुभ मणि तथा सुरभित सुमनों की माला । तात्पर्य यह कि वे अत्यन्त रूप एवं सौन्दर्य के निधान हैं, सभी ब्रज जन और ब्रज बालायें इस रूप सुधा का पान कर अपनी सुधि बुधि खोकर प्रसन्न हो रहे हैं । श्री पोद्दार जी की मनोकामना भी यही है कि वह भी "रूप सुधा मद पी पीकर" सम्मोहित हो जायें ।[2]

---

(1) ~~भ०र०ना०ग०म०~~ पद रत्नाकर पद क्रमांक 28 पृ० 12.

(2) 'जय वसुदेव-देवकी नन्दन, जयति यशोदा-नँदनन्दन ।
जयति असुर-दल निकंदन, जय-जय प्रेमीजन मानस-चन्दन ॥
बाँकी भौंहिं, तिरछी चितवन, नलिन-विलोचन रसवर्षी ।
वदन मनोहर मदन-दर्प-हर परमहंस-मुनि-मन-कर्षी ॥
अरुण अधर पर मुरलि मधुर मुसकान मंजु शुचि हारी ।
भाल तिलक, घुँघराली अलकें, अलिकुल-मद-मर्दनकारी ॥
गुंजाहार, सुशोभित कौस्तुभ सुरभित सुमनों की माला ।
रूप-सुधा-मद पी-पी सब सम्मोहित ब्रजजन ब्रजबाला ॥'

— पद रत्नाकर पद 825.

2.34

श्री पोद्दार जी भगवान अहेतुक कृपा के शुभअवसरका सुलाभ प्राप्त करने की कामना करते हैं ।

'राधामाधव पद कमल बंदौं बारम्बार ।
जिन्हकी अहेतुक कृपा तें यह अवसर सुभ-सार ।।'[1]

तत्पश्चात राधामाधव चरण प्रेम की आनन्दमयी स्थिति की अभीप्सा करते हैं ।

'राधामाधव-युगल के पुनर्मी पद जलजात ।
बसे रहैं मो मन सदा रहैं हरख उमगात ।।

× × ×

राधामाधव करौ मोहि निजकिंकर स्वीकार ।
सतत निज सेवा करौं जानि सार को सार ।।
राधामाधव ! जानि मोहि निज जन अतिमति हीन।
सहज कृपा तें करौनित सेवा मैं लीन ।।
राधामाधव ! बसौ तुम मेरे जीवन मांह ।
या सुखते कुम्यौ फिरौ सुनि मोर उर मांह ।।

× × ×

राधामाधव चरन रति रस के पारावार ।
डूब्यौ नहिं निकसौं कबहुँ पुनि बाहिर संसार ।।'[2]

प्रभु के चरणों में स्थान पाने की सुख कामना भक्ति की आश्रयण सहज वृत्ति रही है श्री पोद्दार जी भी यही कामना करते हैं ।

'श्री राधामाधव पद मेरी सुन लो, विनती परम उदार ।
मुझे स्थान दो निज चरणों में, पावन प्रभुवर कृपा अपार ।।'[3]

---

(1) पद रत्नाकर पद पृ0 31, पंक्ति 1 से 2 तक.
(2) पद रत्नाकर पृ0 33, पंक्ति 1से2तकसे10तक एवं 13से14तक.
(3) पद रत्नाकर पद पृ041, पंक्ति 1 से 2 तक.

आगे भक्त प्रवर पोद्दार जी राधामाधव के पद-पद्म का पराग पान करने के लिए सभी छल-छद्म छोड़कर मुग्ध बने रहने की आकांक्षा व्यक्त करते हैं ।

'बना रहे मन-मधुप निरन्तर राधामाधव के पद-पद्म ।
मस्त रहे रस सुधा पानकर अविरत त्याग सभी छल-छद्म ।।
मधुर नाम लीला गुण रस में रसना रहे निरन्तर लीन ।
श्रवण सतत गुण नाम श्रवण में लगे रहे ज्यों जल में मीन ।। ~~रूप माधुर्य ललाम~~ ।
सदा देखते रहें सविल रूप माधुर्य ललाम ।
घ्राणेन्द्रिय हो धन्य नित्य कर नित प्रभु तन सुगन्ध अभिराम ।।
पाती रहे त्वगिन्द्रिय उनका मंगलमय संस्पर्श महान ।
ऐसा नित्य बना दें जीवन रसमय मधुर सहज भगवान ।।'[1]

2.2.3 प्रपत्ति :—

श्री पोद्दार जी की अनन्य शरणागत होने की भावना का साक्षात्कार उनकी कतिपय अभिव्यक्तियों में हुआ है । इस स्थिति के प्रभाव का भी उल्लेख उन्होंने किया है । कुछ संदर्भ आये हैं जिनकी विवशता में संकोच एवं दुराव-छिपाव की स्थिति से उभरकर उनको कुछ कहना पड़ा है । यह अतः साक्ष्य प्रस्तुतियाँ उनके दिव्य व्यक्तित्व की झाँकी उपलब्ध कराती है जो अन्यथा संभव नहीं थी ।

अनन्य भगवत् स्थिति में श्री भाई जी भावसमाधि में पहुँच जाया करते थे तथा भौतिक जगत बहुत नीचे स्तर पर रह जाता था श्री पोद्दार जी के ही शब्दों में — "मेरा तो मन आजकल बहुत उपरत-सा रहता है । बेचारे लोग आते हैं —— अपनी-अपनी समस्या लेकर, पत्रादि भी लिखते हैं...... बहुतों की तो बातें ही आजकल मेरी समझ में नहीं आती । मन उनको ग्रहण ही नहीं करना चाहता, मानो संसार की बातों के ग्रहण करने की शक्ति से मन को लकवा मार गया हो ।[2]

[1] पद रत्नाकर, पद 30 42.
[2] पद पावन स्मरण 535.

अपनी इस स्थिति को उन्होंने कविता रूप में भी लिपि-बद्ध किया था ।

"नाथ ! तुम्हारी कितनी करुणा, कैसा अतुल तुम्हारा दान ।
हटा असद् माया का पर्दा , दिया स्वयं ही दर्शन ज्ञान ॥
नहीं रह गया अब तो कुछ भी अन्य, छोड़कर तुमको एक ।
मिथ्या जग में रमने वाले, रहे न मिथ्या बुद्धि विवेक ॥
आते लोग, सुनाते अपनी विविध समस्याओं की बात ।
सुलझाने को उन्हें सुझाते साधन, सविनय कर प्रणिपात ॥
कहूं उन्हें समझाऊं क्या मैं, जबन दीखता कुछ सत सार ।
सुलझाने वाले उस मन को गया सर्वथा मानो मार ॥"[1]

इस विलय स्थिति का प्रभाव दो रूपों में प्रतिलक्षित हुआ-

(1) उनका दुःख एवं पीड़ा में अविचलित ।

(2) भगवान् के समान सर्वव्यापकता ।

उनको अंतिम समय में अन्य संतमहात्माओं के समान घोर शारीरिक कष्ट सहने पड़े । उस अवधि की उनकी अभिव्यक्तियां उनके मन-मानस की अविचलित एवं शान्त स्थिति को प्रकट करती है :-

"भीषण कष्ट है, पर अन्दर ही अंदर मुझे बड़ा आनन्द है । पीड़ा के रूप में भगवान् के सम्पर्क की अनुभूति हो रही है ।"[2]

"शरीर ही बीमार होता है, आत्मा बीमार थोड़े ही होता है ।"[3]

भागवद् स्थिति की उस दशा में जब आत्मा और परमात्मा मिलकर एक होजाते हैं, जीव भी भगवान के समान अपनी सर्वव्यापकता का अनुभव करने लगता है । श्री भाई जी को यह स्थिति सुलभ हुई थी ।

"मैंने सब कुछ देखा है । मैं आप सबको देख रहा था, पर मुझे कोई नहीं देख पा रहा था । मैं आपरेशन थियेटर के बाहर लोगों के

---

(1) पद रत्नाकर पद सं० 1206. (3) पावन स्मरण पृ० 503.

(2) पावन स्मरण पृ० 502.

सज्जन भी था और थियेटर के अन्दर भी। मैं आपसे जो कुछ कह रहा हूँ, बिल्कुल सत्य कह रहा हूँ। मुझे कुछ बोलकर आपसे क्या लेना है।"[1]

इस प्रकार श्री पोद्दार जी के दिव्य भागवत् व्यक्तित्व के दर्शन अन्तःसाक्ष्य के आधार पर भी होते हैं। बाह्य एवं अन्तःसाक्ष्य दोनों दृष्टियों से श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व के विकास की गति का अवलोकन होता है। वास्तव, [illegible] के व्यक्तित्वों के उत्तरोत्तर विकास की अंतिम परिणति दिव्य भागवत् आर्ष व्यक्तित्व में हुई है जो साधकों के लिए प्रशस्त मार्ग प्रस्तुत करती है।

---o---

प्रकरण-3

श्री हनुमानप्रसाद जी का व्यक्तित्व

3.0 निर्माण की भाव भूमि एवं संस्कार

3.1 पूर्वज एवं वंश परम्परा

3.2 शिक्षा - दीक्षा

3.3 विवाह

3.4 विकास की कुलीन परिस्थितियाँ

3.5 व्यक्तित्व की केन्द्रीभूत प्रेरणाएँ एवं मानमूल्य

3.6 देवपुरुष-आस्तिकता के मूल मूर्तिमान स्वरूप

3.0 भारतीय संस्कृति में संस्कारों का महत्वपूर्ण स्थान है । ये संस्कार इस जन्म के भी होते है और पूर्वजन्मों के भी । पूर्व जन्म के संस्कार ही मनुष्य के जन्म और उसके जीवन की दिशा निर्धारित करते है । बालक अपनी ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से जो कुछ भी ग्रहण करता है. उस गृहीत ज्ञान का सूक्ष्म प्रभाव उसके मन पर पड़ता है. यह सूक्ष्म प्रभाव ही संस्कार है । ये संस्कार ही मनुष्य का निर्माण करते हैं । शिक्षा का उद्देश्य बालक को उचित संस्कार देना है । जीवन में श्रेष्ठता की प्रतिष्ठापना हेतु सत्संस्कार परमावश्यक तत्व है ।

धर्मपरायण पूर्वज का प्रभाव संतति पर पड़ता है। धार्मिक क्रिया-कलापों, पूजापाठ, यज्ञ, व्रत, दान, अनुष्ठान आदि, धार्मिक उत्सवों, पर्वों की पूजा का प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से प्रभाव परिवारीजनों के जीवन में पड़ता रहता है । धर्मपरायण सद्गृहस्थों के यहाँ साधु, सन्यासी, पंडितजनों का समादर होता है उनके प्रति परिवारीजन पूज्य भाव प्रदर्शित करते हैं, बालकों से भी प्रणाम कराते हैं. साधु-सन्तों का आशीर्वाद तथा सत्संस्कार आगे जीवन में सदाचरण और सत्कार्यों के सम्पादन कराने के रूप में फलीभूत होतेहैं ।

श्रीहनुमान प्रसाद पोद्दार जी के जीवन में अपने पितामह, पिता, दादी की धर्मपरायणता, ईमानदारी तथा कर्तव्यपरायणता का अमिट प्रभाव पड़ा ।

3.1 राजस्थान में रतनगढ़ नामक एक प्रसिद्ध स्थान है । वहाँ मारवाड़ी अग्रवालों के कई घराने बसे हुये है इनमें बंसिल गोत्र के अग्रवालों की एक शाखा "पोद्दार" नाम से प्रसिद्ध है । कहा जाता है कि इस शाखा के पूर्व-पुरुष हिन्दू राजाओं तथा मुस्लिम शासकों के यहाँ खजाने के

हिसाब-किताब का काम सौंपा जाता था। खजाने को फारसी में 'पोत' कहते हैं। 'दार' का अर्थ वाला या अधिकारी होता है इस प्रकार 'पोतदार' का अर्थ होता है- खजाने का अधिकारी, इसी तरह के शब्द हैं थानेदार, तहसीलदार, खातेदार, चौकीदार, अभी भी उ0प्र0 में खजाने की सेवाओं में "पोतदार" शब्द प्रयोग में आता है। पोतदार का तद्भव रूप "पोद्दार" हो गया। रतनगढ़ की पोद्दार शाखा के प्रवर्तक सेठ लखीराम थे। लखीराम जी की चौथी पीढ़ी में सेठ ताराचन्द हुए। इनकी गणना रतनगढ़ के प्रतिष्ठित व्यापारियों में होती थी। वह बड़े ही धर्मपरायण व्यक्ति थे इनके दो पुत्र कनीराम व भीमराज हुए। पिता ने दोनों पुत्रों को पैतृक व्यवसाय में लगा दिया। कनीराम जी व्यापार करने की दृष्टि से शिलांग (आसाम) चले गये इन्हीं की प्रेरणा से रतनगढ़ के कुछ अन्य व्यापारी भी शिलांग पहुंच गये। शिलांग पहुंचने के कुछ दिन बाद ही इन्हें सेना को खाद्य सामग्री की आपूर्ति करने का ठेका मिल गया। काम बहुत बड़ा होने के कारण उसको भली प्रकार संभालने के लिये कनीराम जी ने अपने पिता ताराचंद जी व छोटे भाई भीमराज को भी शिलांग बुला लिया। पूर्वी कमान के विभिन्न सेवा केन्द्रों में समय पर सामग्री उपलब्ध कराने की दृष्टि से शिलांग के अतिरिक्त गौहाटी (आसाम) तथा कलकत्ता (बंगाल) में दो शाखाएँ खोल दीं। इनका मुख्यालय शिलांग ही रखा और परिवार को भी शिलांग में ही रखा, वहीं से कलकत्ता व गौहाटी के कारोबार को संभालते रहे।

कनीराम जी कुशल व्यापारी थे, साथ ही धर्मप्राण गृहस्थ होने के कारण रामचरित मानस के प्रेमी भी थे, वे उसका नियमित रूप से पाठ करते थे और निर्धारित पाठ पूरा होने के पश्चात् ही अन्न ग्रहण करते थे। कनीराम जी की धर्मपत्नी श्रीमती रामकौर देवी भी धार्मिक प्रवृत्ति की थी। सामान्य पढ़ी लिखी होने पर भी सत्संग तथा

स्वाध्याय से शास्त्रों की गूढ़ बातों का वास्तविक अर्थ समझने की क्षमता उनमें थी, रामचरित मानस का पाठ और रामनाम का जप नियमित रूप से करती थी. सालासर के हनुमान जी को इष्ट मानती थीं । वे मितव्ययी थीं, गृहस्थी के खर्च में कटौती करके जो बचत होती थी उसका एक भाग सत्कार्यों में लगाती थी प्रत्येक अमावस्या और पूर्णिमा को ब्राह्मण-विद्यार्थियों को भोजन कराने का उनका नियम था । वे स्वयंपरिश्रम करती थी तथा घर के सदस्यों को भी काम पर लगाये रखती थी । गृहस्थी का सारा कार्य व व्यवहार वे स्वयं संभालती थीं, पति को गृहप्रबन्धका चिन्ता से मुक्त रखती थी जिससे अपना समय व शक्ति व्यापार में लगा सकें । कनीराम जी को व्यापार में आशातीतसफलता मिली। कनीराम जी को संतान न होने की चिन्ता थी । इसपर दम्पत्ति ने गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात् तय किया कि छोटे भाई भीमराज को दत्तक पुत्र बना लिया जाय । अपने पिता सेठ ताराचंद की सम्मति मिल जाने पर, श्री कनीराम जी ने भीमराज को दत्तक पुत्र घोषित कर अपनी सारी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बना दिया । भीमराज अपने बड़े भाई कनीराम जी को धर्म पिता तथा रामकौर देवी को धर्म माता मानकर आजीवन सेवा की । भीमराज का विवाह हो चुका था उनकी पत्नी रिखीबाई थी, विवाह के कई वर्षों तक सन्तान न होने से रामकौर देवी को नई चिन्ता ने आ घेरा । रामकौर देवी ने इसके निवारण हेतु सभी तरह के प्रयत्न किये । दान-पुण्य बराबर करती रहती थीं किन्तु रिखीबाई के सन्तान न होने से वे परेशान रहती थी । इसी सम्बन्ध में उन्हें अपने मूल स्थान रतनगढ़ के नाथ योगियों, मोती नाथ जी व चम्पानाथ जी जो अपनी अलौकिक सिद्धियों के लिये प्रसिद्ध थे, की याद आयी और अपने गुरु बाबा मेहरदास से इस सम्बन्ध में सलाह लेने की प्रेरणा हुई अतः वह पति की अनुमति प्राप्त करके एक नौकर को साथ लेकर रतनगढ़ चली आयी । रतनगढ़ में वे इन संतों की यथोचित सेवा करती रहती थी इसलिए इस परिवार पर सभी सन्त कृपाभाव रखते थे ।

रतनगढ़ आने पर रामकौर देवी ने अपने गुरु बाबा मेहरदास जी से रिखीबाई के सन्तान न होने की चिन्ता व्यक्त करते हुए, चिन्ता निवारण हेतु प्रार्थना की। बाबा मेहरदास जी ने स्थानीय लक्ष्मी-नारायण मंदिर में विष्णु सहस्त्रनाम के 108 सम्पुट पाठ कराने की प्रेरणा दी अतः यह अनुष्ठान किया गया। अनुष्ठान समाप्त होने पर साधु, ब्राह्मणों के भोजन तथा दरिद्रनारायण की सेवा की व्यवस्था की गई। अनुष्ठान के विधिवत पूर्ण होने पर बाबा मेहरदास जी ने कहा- "रामकौर! तेरा मनोरथ पूर्ण होगा। यह अभिमंत्रित जल तू अपनी बहू रिखीबाई को पिला देना। निश्चय ही एक भगवद्भक्त, धर्मात्मा पौत्र की प्राप्ति होगी जो वंश की कीर्ति को उज्ज्वल करेगा। उसका नाम हनुमान जी के नाम पर रखना।"

उक्त पुण्यानुष्ठान और सत्संग के कार्यक्रम के बीच एक दिन बाबा [illegible] जी को ज्ञात हुआ कि रामकौर देवी, भीमराज व रिखीबाई के सन्तान न होने के कारण दुःखी रहती है। बाबा [illegible] जी ने रामकौर देवी की चिन्ता की बात अपने गुरु बाबा मोतीनाथ जी (दंडियाँ बाबा) के समक्ष रखी और रामकौर देवी की अभीष्ट सिद्धि का प्रस्ताव भी रखा। बाबा मोतीनाथ जी (दंडियाँ महाराज) ने रामकौर देवी को सम्बोधित करते हुए कहा कि - "आज से एक वर्ष के अन्दर आपके एक सर्वगुण सम्पन्न पौत्र होगा - 'वह बहुत ही सुशील, विद्वान और भगवद्भक्त होगा'। इसके साथ ही पौत्र के जन्म के समय के लक्षण बताते हुए कहा कि जन्म के समय बालक के मस्तक पर श्रीरेखा, कंधों पर बाल, दाहिनी कांख पर काला तिल, होगा, मुँह में एक तार होगा जिसे अंगुली डालकर निकालने पर ही बालक रोयेगा। इस घटना के कुछ समय पश्चात् दंडिया महाराज ने अपना शरीर त्याग दिया।

रतनगढ़ में कई माह तक निवास करने के पश्चात् रामकौर देवी शिलांग वापस आ गयी वहाँ उन्हें ज्ञात हुआ कि रिखीबाई गर्भवती है।

3.4

समय पूरा होने पर अश्विन कृष्ण 12 शनिवार सम्वत् 1949 [17 सित0 1892 ई0] प्रातःकाल रत्नीबाई को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई।×

जन्म के समय नक्षत्रों की स्थिति निम्नांकित प्रकार से थी:—

विक्रम शुभ संवत् 1949

मास - आश्विन

पक्ष - कृष्ण

तिथि - द्वादशी

दिन - शनिवार

नक्षत्र - आश्लेषा

करण

योग

लग्न - तुला

सूर्यस्पष्ट 5.2.31.20

लग्नस्पष्ट 6.20.30.32

जन्मकुण्डली चक्र

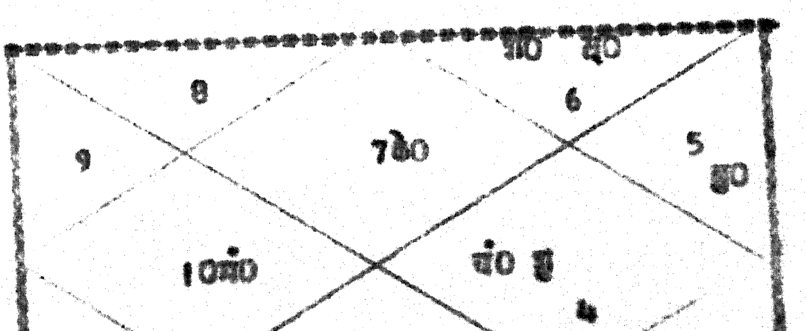

× कहीं भी जन्म समय का उल्लेख नहीं हुआ है। ज्योतिष के विद्वानों ने जन्मकुण्डली चक्र के द्वारा जन्मसमय का अनुमान लगाकर बताया कि प्रातः 10.00 या 10.15 का समय रहा होगा, जब जन्म हुआ।

3.5

बालक का जन्म हनुमान जी के दिन मंगलवार को हुआ तथा दृटियाँ महाराज द्वारा पूर्व में बताये गये सभी चिन्ह बालक में विद्यमान है। रामकौर देवी ने अपनी निष्ठा के अनुसार अपने इष्टदेव हनुमान जी का दिया हुआ मानकर बालक का नाम हनुमान बक्श (हनुमान जी का दिया हुआ) का रखा। प्यार का नाम मन्नूलाल पड़ा। स्वजनों ने उनको और छोटा करके "मन्नू" कहकर पुकारते है। किशोरावस्था तक हनुमान बक्श चलता रहा। कलकत्ता जीवन में साहित्यकारों से सम्पर्क होने पर हनुमान बक्श के स्थान पर नाम हनुमान प्रसाद लिखने लगे और वही प्रचलित हो गया।

बालक को अपनी माँ की गोद का सुख केवल एक वर्ष 9 माह ही मिल सका। श्रावण कृष्ण 1 संवत् 1951 को रिहीबाई सामान्य बीमारी में ही दिवंगत हो गयी। मातृहीन बालक के पालन-पोषण का भार दादी पर आ गया जिसको रामकौर देवी ने बखूबी निभाया। बालक ने रामकौर देवी को माँ कहना प्रारम्भ किया और यह सम्बोधन जीवन पर्यन्त चला। सम्वत् 1953 (सन् 1896) में आसाम में भीषण भूकम्प आया। सारा शिलांग कुछ ही क्षणों में नष्ट हो गया। कनीराम जी की कोठी पूरी तरह ढह गयी। उसके भीतर कनीराम जी की बहन का एक पुत्र व एक कन्या दब गयी। कनीराम उनकी बहन व रामकौर देवी किसी तरह बच गये। बालक हनुमान प्रसाद किसी व्रत के उद्यापन में निमंत्रण खाने गया हुआ था। ज्यों ही वह भोजन करके निकला, भूकम्प के कारण दीवारें व छत गिरने लगी उन्हीं के नीचे बालक हनुमान भी आ गया किन्तु भगवान् की कृपा से पत्थरों के बीच एक गुफा सी बन गयी और बालक सुरक्षित हो गया। रामकौर देवी अपने इष्टदेव हनुमान जी से प्रार्थना करती रही। बालक के सुरक्षित मिल जाने से दादी को पूर्ण विश्वास हो गया कि अपने प्रसाद रूप दिये गये बालक

की रक्षा हनुमान जी ने स्वयं उपस्थित होकर की है । भूकम्प से हुई भारी आर्थिक हानि के साथ ही स्वजनों की मृत्यु से कनीराम जी को गहरा धक्का लगा । वे अस्वस्थ हो गये और संवत् 1956 के अगहन माह के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को कनीराम जी का परलोक वास हो गया । पति की मृत्यु के बाद रामकौर देवी के साथ मात्र पौत्र रह गया था। उनका मन शिलांग से उचट गया और वह पौत्र को लेकर कलकत्ता और फिर वहाँ से रतनगढ़ चली आयी । धर्मपिता की मृत्यु के बाद संवत् 1958 में भीमराज जी ने शिलांग की दुकान बन्द कर कलकत्ते के व्यापार पर ध्यान देने लगे । बालक हनुमान प्रसाद की 6 वर्ष की उम्र तक परिवार के आर्थिक सामाजिक परिस्थितियों के कारण पढ़ाई की व्यवस्था नहीं हो सकी थी ।

3.2 शिक्षा-दीक्षा :—

रतनगढ़ में एक सरकारी प्राइमरी स्कूल था उसके अतिरिक्त निजी तौर पर पढ़ाने वाले गुरुओं की कई घरेलू पाठशालाएँ भी थी इनमें हिन्दी के साथ महाजनी की पढ़ाई होतीथी । पैतृक व्यवसाय में सहायता देने के लिये महाजनी का ज्ञान आवश्यक समझ कर हनुमान प्रसाद को जोखमल्ल की पाठशाला में प्रवेश कराया गया जहाँ उसे हिन्दी के साथ गणित और महाजनी का ज्ञान कराया गया। रोकड़खाता लिखने का सामान्य ज्ञान यहीं हुआ ।

संस्कृत का ज्ञान बाबा लक्ष्मनाथ के पास बैठकर गीता पाठ करने से हुआ । रामकौर देवी ~~के साथ~~ प्रतिदिन सत्संग के लिए बाबा लक्ष्मनाथ जी के स्थान पर जाया करती थी. वह अपने साथ बालक हनुमान प्रसाद को भी ले जाती थी । आश्रम में बेर के कई पेड़ थे । दादी सत्संग में बैठती, किन्तु बालक हनुमान प्रसाद का मन बेरों के लिए ललचाता ।

3.7

नाथ जी इन्हें बेर खाने की अनुमति दे देते । किसी दिन पहले से ही पके बेर तुड़वाकर रख लेते और इनके आने पर देते इस प्रकार झिझक टूट जाने पर लक्ष्मीनाथ जी ने इन्हें गीता के श्लोक सिखाने का निश्चय किया । एक श्लोक वे स्वयं कहते फिर इनसे दुहरवाते । एक श्लोक कंठस्थ हो जाने पर एक बेर इनाम में मिलता था इस पद्धति से हनुमान प्रसाद ने पूरी गीता कंठस्थ कर ली थी ।

रतनगढ़ में हनुमान प्रसाद 12 वर्ष की आयु तक रहे तभी तक पाठशाला का नियमित अध्ययन चल सका । कलकत्ता पहुँच जाने के बाद दुकान के कार्य के साथ, काली गोदाम के दूसरे तल्ले में चलने वाले बालकों के स्कूल पं0 अयोध्या प्रसाद शर्मा जी से इन्होंने कुछ दिनों तक अंग्रेजी का सामान्य ज्ञान प्राप्त किया था । इतनी सी पाठशाला की पढ़ाई से इन्हें सन्तोष नहीं हुआ। स्वाध्याय से इन्होंने न केवल हिन्दी बल्कि बंगला व गुजराती, मराठी का अच्छा ज्ञान अर्जित किया । कलकत्ता में रहने की अवधि में बंगाली युवकों से व्यावहारिक सम्पर्क के कारण बंगला एक प्रकार से इनकी मातृभाषा सी हो गयी थी पिता श्री भीमराज जी बंगला के अच्छे जानकार थे । वे अपने पास बैठकर साहित्य पढ़ाते थे तथा बंगला साहित्य पढ़ने के लिये प्रोत्साहित किया करते थे कुछ समय पश्चात् बंगाल के देश भक्तों के सम्पर्क तथा पत्र-पत्रिकाओं के अध्ययन तथा नजरबन्दी के समय बंगला भाषा में लिखे धार्मिक साहित्य का गहराई से अध्ययन करने से बंगला भाषा पर इनका आधिपत्य हो गया था। कल्याण सम्पादक की अवधि में पं0 गोपीनाथ कविराज जी के दार्शनिक निबन्धों का हिन्दी अनुवाद वे स्वयं किया करते थे । गुजराती, व मराठी सीखने का अवसर इन्हें बम्बई में रहने की अवधि में मिला । स्वाध्याय की प्रवृत्ति प्रारंभ से ही थी । रात्रि में नियमित रूप से दो तीन घण्टे अध्ययन करने का इन्होंने नियम बना लिया था ।

डा० भगवती प्रसाद जी द्वारा अपने ग्रन्थ 'कल्याणपथ: निर्माता और "राही" में श्री पोद्दार जी के स्वाध्याय एवं ज्ञानार्जन के लिये शब्द बार-बार पठनीय एवं जीवन में उतारने योग्य हैं "भाग्य की विडम्बना से इन्हें किसी मान्यता प्राप्त विद्यालय का छात्र बनने का गौरव प्राप्त नहीं हुआ, किन्तु लोकोत्तर प्रतिभा और अनवरत स्वाध्याय से इन्होंने उसकी कमी ही पूरी नहीं की, बल्कि एक सच्चे व्यापारी की भाँति सूद-दर-सूद लगाकर उसे बढ़ाया और असंख्य गुना कर दिया। पूँजी से व्यापार करना लौकिक परम्परा है, इस अलौकिक व्यापारी ने बिना लौकिक पूँजी के अपार अपार सम्पत्ति अर्जित कर ली। इस विस्मयकारी उत्कर्ष का कारण थी-उनके द्वारा की गयी अखण्ड आराधना। पोद्दार जी ने अक्षर पढ़ा कम — उसकी साधना अधिक की। इसी से उनकी लेखनी के स्पर्श से निर्मित शब्द "ब्रह्मसूत्र" और वाक्य "वेदवाक्य" की भाँति सर्वमान्य एवं माननीय बन गये। आदि गुरुओं से प्राप्त ज्ञानबीज को अपनी साधना के बल से इन्होंने वृक्ष बना दिया। भाग्य चक्र ने नियमित क्रम से इन्हें किसी प्रारंभिक पाठशाला का प्रमाणपत्र प्राप्त करने का अवसर न दिया। परन्तु उत्थान रागमार्ग से हुआ। विधिमार्ग से प्राप्त की गयी शिक्षा में योग्यता की स्वरता होती है, रागपथ इस निराले राही को नियति ने उससे दूर रखकर स्वाधीन असीम ज्ञान का अधिकारी बना दिया।"

दीक्षा :-

दादी रामकौर देवी की इच्छा थी कि हनुमान प्रसाद अध्यात्म निष्ठ सद्गृहस्थ बनें। विक्रमी सम्वत् 1957 में दादी ने अपने गुरु बाबा मेहरदासजी जो रतनगढ़ के निम्बार्क पीठ के आचार्य थे इस सम्बन्ध में चर्चा की। बाबा मेहरदास जी ने अपने प्रशिष्य ब्रजदास जी से हनुमान प्रसाद को द्वादशाक्षर मंत्र (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) की वैष्णवी दीक्षा दिला दी। गले में भागवती कण्ठी पहना दी गयी। तत्पश्चात निम्बार्क सम्प्रदाय की अपनी विशेषता है बालक हनुमान प्रसाद के हृदय

में राधातत्व का बीजारोपण उन्हीं प्रेरणा से सहज ही हो गया जो पूर्णरूप से विकसित हुआ गीतावाटिका गोरखपुर में जिसमें श्री राधा कृष्ण साधना मंदिर बन जाने एवं राधामाधव सेवा संस्थान स्थापित हो जाने से राधावाटिका भी कहा जाने लगा है ।

उपनयन संस्कार :-

संवत् 1957 में ही दादी रामकौर देवी ने विद्वान पं० छोटेलाल शर्मा जी से जो पहले रतनगढ़ की सेमसा पाठशाला में प्रधानाचार्य रहे थे और इस कारण पोद्दार परिवार से इनके अच्छे सम्बन्ध थे, बालक हनुमान प्रसाद का यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न कराया गया था। भारतीय परम्परा के संस्कार जब विद्वान और त्यागी महापुरुषों द्वारा सम्पन्न कराये जाते हैं तब चाहे तत्काल में प्रभाव परिलक्षित न हो परन्तु निश्चित रूप से भविष्य में उसका प्रभाव होता है । वर्ष 1957 विक्रमी हनुमान प्रसाद के प्रारंभिक जीवन का एक पुनीत वर्ष माना जायेगा जिसमें उन्हें द्विज और दीक्षित बनने का सुयोग मिला ।

3.3. विवाह :-

"हिन्दू समाज में विवाह एक पवित्र धार्मिक संस्कार है एवं महान यज्ञ है । मनुष्य पशु की भाँति अमर्यादित स्वेच्छाचारी न हो जाय उसकी इन्द्रिय चरितार्थ की वासना संयमित हो, भोग लालसा मर्यादित रहे, भावों में विशुद्धि बनी रहे । सन्तानोत्पादन के द्वारा वंश की रक्षा और पितृ ऋण का मोक्ष हो, भोग का स्वाद जानकर संयम के द्वारा मनुष्य क्रमशः त्याग की ओर अग्रसर हो सके, प्रेम को केन्द्रीभूत करके उसे पवित्र बनाने का बल प्राप्त हो, स्वार्थ का संकोच और परार्थ त्याग की बुद्धि जाग्रत होकर वैसे ही परार्थ त्यागमय जीवन का निर्माण हो और मैं मानव जीवन की सफलता रूप भगवत्प्राप्ति हो जाय इन्हीं सब पवित्र उद्देश्यों को लेकर हिन्दू

विवाह का पावन विधान है। विवाह से विलास वासना का सूत्रपात नहीं वरन् संयमनियमपूर्ण जीवन का प्रारंभ होता है।"[1]

मारवाड़ी समाज में उन दिनों बालविवाह की प्रथा होने के कारण, कांसल गोत्र तथा कनीराम भीमराज फर्म की अच्छी ख्याति के कारण दादी रामकौर देवी के पास 12 वर्षीय बालक हनुमान प्रसाद के विवाह के प्रस्ताव आने प्रारम्भ हो गये। आर्थिक स्थिति अच्छी होने के कारण रामकौर देवी को धन की प्राप्ति का लोभ नहीं था, चाह थी शीलवान सद्गुणी बहू की जो सद्गुणी और गृहलक्ष्मी के रूप में घर को सुव्यवस्थित एवं सुवासित कर सके। संयोग से रतनगढ़ में ऐसी ही कन्या मिल गयी और वह श्री गुलझुराय सुडारियाँ की पुत्री महादेवी बाई, अतः सगाई पक्की हो गई। विवाह के कुछ समय पूर्व महादेवी बाई को चेचक निकल आयी जिसके फलस्वरूप उनके सारे शरीर में चेचक के गहरे दाग हो जाने से रूप विकृत हो गया। सौन्दर्य शेष न रह जाने से पिता को बड़ी चिन्ता हुई वह रामकौर देवी के पास गये और दुःखी हृदय से सारी व्यथा कथा कह सुनायी। उस मर्यादानिष्ठ महिला ने लड़की के पिता गुलझुराम जी से, अपनी व्यवस्था जिन शब्दों में दी वे आज भी दूसरों के लिए आदर्श है जिनसे सभी को शिक्षा लेनी चाहिये।

"जैसे कन्या का वाग्दान एक बार ही होता है एक बार किसी पुरुष के साथ सम्बन्ध स्थिर हो जाने पर दूसरे पुरुष के हाथ उसे नहीं देना चाहिये, वैसे ही अपने पौत्र का वाग्दान मैं महादेवी के लिए कर चुकी हूँ। महादेवी के जीवित रहते मैं अपने वचन को कदापि नहीं छोड़ूँगी।"

श्री गुलझुराय जी को अत्यधिक प्रसन्नता हुई, शब्दों में व्यक्त नहीं कर सके अपने अश्रुपूरित नेत्रों से कृतज्ञता ज्ञापित कर उस पूज्य महिला

---

(1) अ०द०प०अ०ग्रं० पृ० - 666

को सादर नमस्कार कर अपने भाग्य को सराहते वे घर चले गये । दादी रामकौर देवी ने बालक हनुमान प्रसाद को बुलाकर उनको सारी बातें बतायी और विवाह के सम्बन्ध में राय पूछी तो हनुमान प्रसाद ने उत्तर भी बड़ा ही धार्मिक एवं आदर्श बोधक दिया "इसमें मेरी सम्मति की क्या आवश्यकता है? आप जो करेंगी मेरे लिए अच्छा ही होगा ।"

फिर क्या था भीमराज जी को कलकत्ता पत्र भेजकर उनकी सहमति मांगी गयी उन्होंने अपनी सहमति भेज दी तथा वह कलकत्ता से रतनगढ़ पधारे । ज्येष्ठ बदी 4 संवत् 1961 को विवाह संस्कार सम्पन्न हो गया । कुछ दिन रतनगढ़ रुकने के पश्चात् भीमराज जी रामकौर देवी और हनुमान प्रसाद को लेकर कलकत्ता वापस चले गये । कलकत्ता में हनुमान प्रसाद का जीवन पिता की देखरेख में व्यवस्थित रूप से चलने लगा । पिता जी पगयापट्टी की पारख कोठी में अपनी कपड़े की दुकान पर बैठते थे हनुमान प्रसाद दुकान का काम सीखने लगे । कुछ समय में ही परिश्रम एवं सूझबूझ से इस कार्य में इन्हें पूरी जानकारी हो गयी । इनके सद्व्यवहार व ईमानदारी से काम करने के कारण ग्राहकों की संख्या में वृद्धि हुई, पुत्र ने धीरे-धीरे काम संभालना प्रारम्भ किया, पिता को परमार्थ के कार्यों का समय मिलने लगा ।

विक्रमी वर्ष 1966 के ज्येष्ठ कृष्ण 8 को महादेवी ने पुत्र को जन्म दिया किन्तु प्रसूतिगृह में ही ज्येष्ठ शुक्ल 6 को पुत्र को रामकौर देवी को सौंप महादेवी गोलोक सिधार गयी । इसके बाद दो माह के भीतर ही बालक भी इस संसार से चल बसा । हनुमानप्रसाद का मन पत्नी व पुत्र की मृत्यु से अत्यधिक भारी रहने लगा । स्वामी शंकरानन्द नाम के एक मद्रासी महात्मा कलकत्ता पधारे । हरिराम गोयन्का के बगीचे में इन्होंने सात दिन की समाधि लगाकर लोगों को अचंभे में डाल दिया, हनुमान प्रसाद पर स्वामी जी का स्नेह था, स्वामी जी

राजनीति में उग्र विचार धारा के समर्थक थे। हनुमानप्रसाद इनके घनिष्ट सम्पर्क में रहने के कारण इसी धारा में ढलने लगे थे। पिता को इनके राजनीति की रुझान को देखकर दुकान के काम की तथा इनके भविष्य की चिन्ता होने लगी उन्होंने परम्परा को आगे बढ़ाने हेतु इनका दूसरा विवाह तय कर दिया। दादी की और पिता की आज्ञा को हनुमानप्रसाद टाल नहीं सके और श्री मंगलूराम सरावगी की पुत्री सुन्दरीबाई के साथ हनुमानप्रसाद का विवाह वैशाख कृष्ण 3 सम्वत् 1968 ई0 को सम्पन्न हो गया। इस समय हनुमान प्रसाद की उम्र 19वर्ष के लगभग थी।

दुर्भाग्यवश इनके पिता बीमार हो गये और स्वास्थ्य सुधार की आशा से उन्हें रतनगढ़ ले जाया गया। सावधानी पूर्ण चिकित्सा के बाद भी इनके स्वास्थ्य में गिरावट आती गयी और श्रावण कृष्ण 6 सम्वत 1969 वि0 को भीमराज जी परलोक वासी हो गये।

रतनगढ़ में पितृ क्रिया करने के पश्चात् हनुमानप्रसाद अपनी पत्नी, दादी, विमाता गोराबाई तथा दो बहनों कमलाबाई व पूर्णाबाई को लेकर कलकत्ता आ गये तथा दुकान का कारोबार देखने लगे किन्तु इनका मन पूरी तरह नहीं लगता था। राजनीतिक गतिविधियों में इनका समय तो जाता ही था। मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी की ओर से अकाल सेवा, बाढ़ पीड़ित सहायता चिकित्सा आदि की व्यवस्था में भी हनुमानप्रसाद सेवाभावियों में अग्रगण्य थे। धार्मिक प्रवृत्ति इनमें पहले से ही पिता के साथ रहकर काम करने की अवधि में सत्संगों के आयोजन, हिन्दू क्लब, हिन्दू सभा के काम में भाग लेते रहने की प्रवृत्ति बढ़ती गई थी जो इनका काफी समय लेती थी।

इसी बीच पुनः पारिवारिक विपत्ति में फंस गये द्वितीय पत्नी सुन्दरीबाई ने संवत् 1975 की माघ कृष्ण 12 को पुत्र को जन्म दिया।

6 दिन के अन्तर से माता व पुत्र दोनों संसार छोड़कर चल बसे ।

इस घटना से हनुमानप्रसाद को गहरा धक्का लगा वे राजनीति तथा समाज सेवा में रात-दिन व्यस्त रहने लगे । दादी रामकौर देवी ने इनका ध्यान उधर से हटाने तथा वंश चलाने की दृष्टि से गृहस्थी बसाने हेतु हनुमान प्रसाद से अनुरोध किया । दादी की किसी आज्ञा व अनुरोध से इन्कार नहीं कर सके । इनका तीसरा विवाह गौहाटी के सीताराम सांगानेरिया की पुत्री रामदेईबाई से हो गया । इस समय इनकी उम्र 24 वर्ष की थी ।

3.4 विकास की पुनीत परिस्थितियाँ :—

पौधे के उगने एवं बढ़ने में भूमि खाद, पानी एवं वातावरण का महत्वपूर्ण योगदान होता है । उसी प्रकार मनुष्य के विकास को तत्कालिक परिस्थितियाँ प्रभावित करती है । मनस्वी एवं साहसी व्यक्ति ही कठिन परिस्थितियों के बीच रास्ता निकालकर अथवा स्वयं रास्ता बनाकर सफलता के शिखर पर पहुंचते हैं ।

हनुमान प्रसाद पोद्दार को किसी मान्यता प्राप्त विद्यालय में अध्ययन करने का अवसर नहीं मिला । 13 वर्ष की अवस्था में उनको पिता के साथ रहकर कलकत्ता की पगयापट्टी की पाररवकोठी वाली कपड़े की दुकान के काम में लग जाना पड़ा । पिता भीमराज जी व्यापार के साथ ही इनके चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान देते थे । श्री पोद्दार जी ने वसीयतनामा में लिखा है "पिता जी भी बड़े सात्विक पुरुष थे, उनसे भी संयम की शिक्षा मिली । यों भी जीवन के प्रारंभ में ही मुझे भोग-सुख के विरुद्ध त्याग तथा संयम का क्रियात्मक सजीव पाठ मिला । तदनन्तर कलकत्ता में स्वदेशी युग के क्रान्तिकारी आन्दोलन से भी बहुत बड़ी नियमानुवर्तिता, संयम, त्याग और सादगी की क्रियात्मक शिक्षा,

मिली, क्योंकि उस समय आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य ही था — 'देश के लिए-तन-मन-धन-सर्वस्व अर्पण कर देना।"

रात में भीमराज जी दुकान पर सत्संग कराते थे जिसमें नियमित रूप से 10-15 व्यक्ति आया करते थे। भीमराज जी स्वयं ही रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत की कथा पढ़कर सुनाया करते थे। धार्मिक कार्यों में भी इनकी रुचि थी। उन्होंने सनातन धर्म प्रचारिणी सभा नाम एक संस्था की स्थापना की थी यह संस्था बाहर से पंडितों एवं संत-महात्माओं को आमंत्रित करके उनके व्याख्यान का आयोजन कराती थी। होशियारपुर के प्रसिद्ध सनातन धर्मोपदेशक स्वामी जगदीश्वरानन्द भारती इसी सभा के निमंत्रण पर कलकत्ता पधारे। सनातन धर्म प्रचारिणी सभा के कार्य में हनुमान प्रसाद सक्रिय सहयोग करते थे। भीमराज जी साधु एवं सन्यासियों तथा दीन-दुःखियों की सेवा करते रहते थे। आपत्ति के समय पर बिना भेदभाव के - आपद्-ग्रस्त लोगों की सहायता भीमराज जी तन मन धन से करने के कारण वे कलकत्ता में लोकप्रिय हो गये थे। हनुमान प्रसाद भी इन कार्यों में हाथ बटाते थे। साधु, सन्यासी के प्रति सम्मानभाव, दीन दुःखियों के प्रति आत्मभाव जाग्रत करने एवं बढ़ाने में पिता जी ने प्रत्यक्ष रूप से सहायता तथा प्रेरणा दी। गायों के प्रति भीमराज के हृदय में अपार श्रद्धा थी। गौरक्षा की भावना से जब सिन्धी महात्मा हरानन्द जी जब कलकत्ता आये तो भीमराज जी ने न केवल स्वयं उनको आर्थिक सहायता दी वरन् उनके साथ जा-जाकर इस पुनीत कार्य हेतु चन्दा इकट्ठा कराया। इसका अमिट प्रभाव हनुमानप्रसाद के जीवन में देखा पड़ा। भीमराज जी पंडितों एवं साहित्यकारों का सम्मान करते थे तथा उनकी आर्थिक सहायता भी देते थे इस कारण उनकी दुकान पर साहित्य प्रेमी आते ही रहते थे हनुमान प्रसाद भी उनके आदर-सत्कार में समय व सहयोग देते थे, इस प्रकार से न केवल परिचय बढ़ा अपितु प्रभाव भी पड़ा कि उन्होंने

साहित्य का गहराई से अध्ययन प्रारम्भ कर दिया तथा गोष्ठियों में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। 19 जुलाई सं0 1905 को लार्ड कर्जन के द्वारा बंगभंग की घोषणा किये जाने से पूरे बंगाल में देश प्रेम की अभूतपूर्व चेतना जागृत हो उठी थी, उसमें विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आवाहन किया गया। विद्यार्थी विद्यालय छोड़कर सड़कों पर आ गये, सब जगह देश प्रेम के गीत गाये जाने लगे। पत्र-पत्रिकाओं, कविताओं, लेखों में विदेशियों के अत्याचार तथा स्वदेश प्रेम के स्वर गूंजने लगे। हनुमानप्रसाद इस प्रवाह से कैसे बच सकते थे। इनके पिता के मित्र पं0 दुर्गाप्रसाद मिश्र ने "इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका" का संदर्भ देकर स्पष्ट किया कि इंगलैण्ड से जो कपड़े भारत आते हैं उनमें मांडी देने में जानवरों की चर्बी उपयोग की जाती है इस तथ्य की जानकारी से हनुमानप्रसाद के हृदय में विदेशी कपड़ों के प्रति घृणा का भाव जाग्रत हो गया और उसने दृढ़ निश्चय किया कि विदेशी कपड़ा नहीं पहनना है। अतः ब्रिटेन से आने वाले कपड़े का विकल्प खोजा गया और ढाका की मिलों का कपड़ा प्रयोग में लाना शुरू किया। स्वदेशी आन्दोलन के बढ़ते चरण से प्रभावित होकर हनुमान प्रसाद ने गंभीरतापूर्वक विचार करने के बाद निश्चय किया कि हाथ के कते-बुने सूत का कपड़ा ही पहना जाय। निश्चय दृढ़ था, हनुमान प्रसाद ने राजस्थान से मंगवाकर मोटीखादी की धोती पहनना प्रारंभ कर दिया। इस मोटी खादी को दर्जी सिलते नहीं थे फलस्वरूप इन्हें एक वर्ष तक कुर्ता-कमीज के स्थान पर, खादी की चद्दर से शरीर ढककर रहना पड़ा। यह ध्रुव सत्य है कि महात्मा गांधी का खादी प्रचार दो वर्ष बाद प्रारम्भ हुआ। हनुमानप्रसाद पोद्दार का खादी प्रेम व खादी पहनने सम्बन्धी व्रत गांधी जी के प्रचार के पूर्व से चल रहा था।

बंग-भंग के विरुद्ध बंगाल में विरोध तीव्ररूप धारण कर चुका था अतः भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में रखा गया। उसी समय हनुमान प्रसाद की आयु केवल 15 वर्ष थी फिर भी बंगाली युवकों

के बीच इनका सम्मान था । अंग्रेजी सरकार ने दमन नीति अपनायी थी उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप चार गुप्त समितियों का गठन हुआ:- [1] समाज सुधार समिति [2] राष्ट्रीय विचार-प्रचार समिति [3] राजनीतिक समिति तथा [4] अंतरंग समिति । इनकी गतिविधियों से मुहाती संन्यासी स्वामी शंकरानन्द का घनिष्ठ सम्बन्ध था । श्री घनश्यामदास बिड़ला व श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार दोनों से स्वामी जी की बड़ी आत्मीयता थी । स्वामी जी हनुमानप्रसाद को व्यापार से राजनीति की ओर पूरी तरह खींच लाये । इन समिति के सदस्यों को कुछ प्रतिज्ञाएँ करनी पड़ती थी ।

यथा — [1] समिति के आदेशों का पूर्ण रूप से पालन

[2] उसके कार्यों को गुप्त रखना, देश तथा समाज सेवा के लिए त्याग करना।

समिति में जिन सदस्यों को सम्मिलित किया जाता था उन्हें पहले अलग रखा जाता था उनको प्रशिक्षण भी दिया जाता था — सदस्यों को 5 नियमों का पालन अनिवार्य था :-

[1] सूर्योदय से पूर्व उठना ।

[2] व्यायाम करना ।

[3] श्रीमद्भगवद्गीता का नियमित रूप से पाठ करना ।

[4] समिति की कार्यवाहियों को गुप्त रखना ।

[5] आपस में भ्रातृत्व में प्रेम व्यवहार रखना ।

हनुमान प्रसाद का स्वभाव था कि जिस नियम को स्वीकार करे, जिस प्रतिज्ञा का संकल्प करे उसको पूरे हृदय से पालन करना। संवत 1969 [1912ई0] में मारवाड़ी प्रमुख युवकों ने मारवाड़ी सहायता समिति की स्थापना की उसने अकाल सेवा, बाढ़ सेवा, चिकित्सा आदि की व्यवस्था को हाथ में लिया हनुमान प्रसाद पोद्दार संयोजकों में प्रमुखी में वह तनमन धन से पूरी तरह सहायता कार्य में जुटे गये ।

इसी समय मारवाड़ी युवकों के मानसिक विकास की पुष्टि तथा राष्ट्रीय प्रेम को बढ़ाने हेतु साहित्य सम्वर्द्धिनी समिति की स्थापना हुई इस समिति ने ही सबसे पहले अनुवाद सहित गीता प्रकाशित की। पं० बाबूराव विष्णु पराड़कर इसके सम्पादक थे। आवरण पृष्ठ पर भारत माता का एक हाथ में गीता तथा दूसरे हाथ में तलवार धारण किये चित्र छापा गया था। इसकी हजारों प्रतियाँ विप्लववादी युवकों में वितरित की गई इसको सरकार ने क्रान्तिका खुला आवाहन मानकर, गीता की शेष प्रतियाँ जब्त कर ली तथा दमनकारी नियम जारी किया।

देशभक्ति की परिभाषा अरविन्द घोष ने "देशात्मबोध" के रूप में की। देश भक्ति को धर्म के रूप में मान्यता देने की प्रेरणा गीता तथा स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रतिपादित वेदान्तदर्शन से ग्रहण की गयी। मातृभूमि की रक्षा अपना सर्वस्व त्याग तथा हँसते-हँसते मृत्यु का आलिंगन करने की प्रेरणा गीता द्वारा उपदिष्ट तत्वज्ञान से मिली। हर क्रान्तिकारी के पास गीता की प्रति अनिवार्य रूप से रहती थी।

सेठ श्री जयदयाल गोयन्दका, जिनकी मारवाड़ी समाज में आध्यात्मनिष्ठ महापुरुष के रूप में ख्याति थी। जब कलकत्ता आते तो श्री [illegible] व श्री केदारनाथ जी श्री सेठ जी के सत्संग की व्यवस्था कराते थे। वर्ष 1910 ई० में उनके कलकत्ता आने पर बागा पट्टी में श्री हरबक्स जी [illegible] की दुकान पर सत्संग का आयोजन हुआ। यह स्थान हनुमान प्रसाद की दुकान के सामने पड़ता था। दुकान का कामनिपटाकर हनुमान प्रसाद नित्य श्री सेठ जी के सत्संग में जाने लगे। उनका प्रेम भरा व्यवहार, दम्भहीन स्वभाव तथा मौलिक विचारों से हनुमान प्रसाद प्रभावित हुए तथा अपनी दुकान पर भी सत्संग का आयोजन किया। राजनीतिक तथा सामाजिक विचार मन में घोर मार रहे थे.

साथ ही परिवार एवं व्यापार सम्बन्धी कर्तव्यों का भी बोध था । सत्संग से इनके मन को कुछ सान्त्वना मिली। अरविन्द घोष, बड़ौदा से कलकत्ता आ गये थे और नेशनल कालेज में प्रधानाचार्य के पद का कार्य करने लगे थे । उन्होंने राष्ट्र की सोयी आत्मा को जगाने की दृष्टि से तथा अपने विचारों का प्रचार-प्रसार करने के लिए 'कर्मयोगिन' अंग्रेजी की तथा 'वंदेमातरम्' (अंग्रेजी), धर्म (बंगलाभाषा में) पत्र निकाले थे । हनुमान प्रसाद अरविन्द से प्रभावित हुये तथा स्नेहभाजन भी बने।

महात्मागांधी सन् 1915 ई0 में रंगून से लौटते वक्त कलकत्ता रुके तो हिन्दू सभा की ओर से, जिसके हनुमान प्रसाद मंत्री थे, उनको दक्षिण अफ्रीका में की गयी सेवाओं के प्रति आभार प्रकट करते हुए अभिनन्दन पत्र दिया गया था ।

पं0 मदनमोहन मालवीय जी उसी वर्ष हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए धन एकत्र करने हेतु कलकत्ता आये उस समय हनुमान प्रसाद की मारवाड़ी समाज में मान्यता थी वे मालवीय जी को लेकर मारवाड़ी सेठों के पास गये तथा लाखों रुपया दान में दिलाया । श्री रूड़मल गोयनका जी ने अपना विशाल पुस्तकालय विश्वविद्यालय को दान दे दिया । इस प्रकार वे मालवीय जी के स्नेह पात्र बन गये ।

युग की पुकार ने 13 वर्ष के बालक को पढ़ने के स्थान पर दुकान पर काम सीखना पड़ा उसमें सफलता मिली । [पिताजी के साहित्य] पिता जी के साहित्य प्रेमी, धार्मिक प्रवृत्ति के तथा उदारस्वभाव के होने के कारण साहित्यकारों से परिचय बढ़ा साथ ही साहित्य के अध्ययन में रुचि बढ़ी, हिन्दूसभा, सनातन धर्म प्रचारिणी सभा के कार्यों में समय व धन देने का स्वभाव बना । क्रान्तिकारी विचार के व्यक्तियों के सम्पर्क से मातृभूमि के लिए सर्वस्व त्याग की भावना जागृत हुई । गीता पढ़ने की आदत बनी । समाज-सुधार के कार्यों में समय देने से मारवाड़ी

समाज में प्रतिष्ठा बढ़ी । बाढ़ सेवा, अकाल सेवा तथा चिकित्सा के क्षेत्र की सेवाओं में अग्रगामी होने के कारण समाज में नवयुवक होने पर भी प्रतिष्ठा स्थापित हुई ।

श्रीअरविन्द, गांधी, तिलक, गोखले, महामना मालवीय से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुए । राष्ट्रीय कार्यों में अधिक समय व्यतीत होने लगा । अन्ततः रोड़ाकाण्ड में इन्हें जेल भेज दिया गया । वहाँ से इनको अनिश्चित काल के लिये नजरबन्दी का आदेश देकर बांकुड़ा जिले के सिमलापाल स्थान में रखा गया व्यापार घाटे में चल रहा था । परिवार की आर्थिक दशा खराब थी सिमलापाल में इन्हें भगवन्नाम जपने की प्रेरणा मिली जिससे इनके मन को शान्ति मिली [इनको] भगवन्नाम में जप के प्रभाव से इन्हें दादी की बीमारी में तथा बुआ की बीमारी में देखने के लिए पेरोल में जाने का अवसर दिया गया ।

बम्बई में रेल की पटरी पार करते समय अदृश्य शक्ति ने लाइन से खींचकर दूर कर दिया उससे इनका भगवान पर विश्वास बढ़ा ।

3.5 **व्यक्तित्व की केन्द्रीकृत प्रेरणाएँ एवं मानमूल्य**

व्यक्तित्व के विकास में तात्कालिक परिस्थितियों के साथ ही साथ महापुरुषों के सान्निध्य, उनके वचनों, प्रवचनों तथा प्रभावोत्पादक पत्र-पत्रिका ग्रंथ एवं घटना विशेष आदि का योगदान हुआ, करता है । वह इनसे प्रेरणा लेता है जीवन को महत्वपूर्ण बनाने के लिए संकल्प लेता है कुछ मानमूल्य निश्चित करता है और उन आदर्शों पर आरूढ़ रहता है । किसी भी सफल व्यक्ति के जीवन का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि किन-किन घटनाओं ने उसे किस प्रकार प्रभावित किया है तथा उसने किस प्रकार की सीख ली तथा कैसा निश्चय किया और कैसा आचरण करके जीवन को सफल बनाया है । हनुमान प्रसाद

पोद्दार का यज्ञोपवीत संस्कार 8 वर्ष की अवस्था में हुआ, उसी वर्ष निम्बार्क सम्प्रदाय की स्थानीय पीठ में उसे वैष्णवी दीक्षा दी गयी। उसे भागवती कंठी पहनायी गई। उसमें राधापरत्व का बीजारोपण सहज ही हुआ जो आगे चलकर इतना बढ़ा कि उसने उन्हें अपने समय का महान राधामाधव का उपासक प्रेमी एवं उन्हीं की लीला का चितेरा बना दिया।

दादी-गृहस्थी की कुशल संचालक तथा मर्यादानिष्ठ महिला थी उसने गुलाबराम जी से कन्या के चेचक से कुरूप हो जाने के बाद भी स्पष्ट शब्दों में अपनी राय व्यक्त की थी "कन्या का वाग्दान एक बार ही होता है एक बार किसी पुरुष के साथ सम्बन्ध स्थिर हो जाने पर दूसरे पुरुष के साथ उसे नहीं देना चाहिये उसी प्रकार मैं अपने पौत्र का वाग्दान मैं महादेवी के लिए कर चुकी हूँ। महादेवी के जीवित रहने मैं अपने वचन को कदापि नहीं छोडूँगी।"

इस बारे में बालक हनुमान प्रसाद ने अपनी राय यह दी थी कि "आप जो करेंगी मेरे लिए अच्छा होगा इसमें मेरी राय की क्या आवश्यकता है"। बालक हनुमान प्रसाद ने अपने दिए वचन के पालन में कठिन परिस्थिति आ जाने पर भी दृढ़ रहने का क्रियात्मक पाठ अपनी दादी रामकौर देवी से लिया और जीवन में दिये गये वचनों तथा लिये गये व्रत या नियम का पालन जीवन पर्यन्त किया। इसका दूसरा उदाहरण 13 वर्ष की आयु में विदेशी वस्तुओं का प्रयोग न करके स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग करने का व्रत लेना है।

विदेशी कपड़े में माड़ी देने में जानवरों की चर्बी का उपयोग किये जाने की जानकारी हनुमान प्रसाद को पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र ने "इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका" दिखाकर दी थी जिससे उन्हें विदेशी कपड़ों से घृणा हो गयी। 13 वर्ष की छोटी आयु में हनुमान प्रसाद

ने हाथ के कते-बुने कपड़े पहनने का व्रत लिया था उस समय खादी बहुत मोटी बनती थी जिसको दर्जी सिलते भी नहीं थे। अतः इन्हें एक वर्ष तक खादी का सिला कुरता या कमीज नहीं उपलब्ध हो सके इन्होंने व्रत में दृढ़ रहकर खादी की चादर ओढ़कर ही काम चलाया किन्तु खादी से भिन्न कपड़ा पहनने से दृढ़ता से इन्कार कर दिया। इसका पालन उन्होंने अन्तसमय तक किया। पिता के धार्मिक पुनीत दुकान पर नित्य ही रात्रि में रामायण श्रीमदभागवत की कथाओं के सुनाने, साधु-सन्यासियों, दीन-दुखियों की सेवा करने तथा सनातन धर्म के सम्वर्धन के प्रयासों, गायों के प्रति पूज्य भाव इनकी रक्षा हेतु धन दान देना, चन्दा कराने, साहित्य के प्रति सम्मान भाव तथा आर्थिक सहायता देते रहने के क्रियात्मक उदाहरणों से, हनुमान प्रसाद के हृदय पर अमिट प्रभाव पड़ा। अपनी उम्र के अनुसार उसने पिता जी के इन कार्यों में सहयोग दिया बल्कि इन कार्यों के पीछे मूल भावना का अध्ययन कर उन्हें अपने आगामी जीवन में उतारा भी। उन्होंने उसी समय निश्चय कर लिया था जहाँ तक बन सके, जीवन को पवित्र रखना, चरित्रवान बनना, ख्याति से दूर रहकर चुपचाप काम करना तथा किये गये सत्कार्यों के लिए किसी प्रकार के पुरस्कार की न तो चाहना करना और न उन्हें स्वीकार करना।"

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी की लोकमान्यता उनकी निष्काम सेवा से बढ़ती जा रही थी। गोरखपुर के कलेक्टर ने "रायसाहब" का खिताब देने का प्रस्ताव किया जिसके लिए श्री पोद्दार जी ने अस्वीकार कर दिया। इसके कुछ समय पश्चात् गोरखपुर मण्डल के कमिश्नर ने इन्हें "रायबहादुर" का खिताब देने की पहल की। उसे भी उन्होंने स्वीकार करने में असमर्थता व्यक्त कर दी। इसके बाद प्रदेश के गवर्नर सर हेग ने इन्हें "सर" की पदवी देना चाहा। इसको भी पोद्दार जी ने स्वीकार नहीं किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार द्वारा उन्हें सर्वोच्च उपाधि "भारत रत्न" से विभूषित करने का प्रस्ताव

तत्कालीन गृहमंत्री पं० गोविन्द बल्लभ पंत जी के द्वारा भेजा गया। श्री पोद्दार जी ने अपनी असहमति व्यक्त करते हुए "उपाधि" को व्याधि सहोदर मानने का कारण बताया।

इस तरह श्री पोद्दार जी ने कलकत्ता प्रवास की अवधि में लिये गये संकल्प "सार्वजनिक सेवा के लिये" किसी प्रकार का लौकिक पुरस्कार स्वीकार न किया (जीवन) का अंत समय तक स्वयं पालन करके सभी को शिक्षा दी।

श्री पोद्दार जी ने अपने वसीयतनामा में लिखा है —

"पिता जी बड़े धार्मिक पुरुष थे, उनसे भी संयम की शिक्षा मिली। यों जीवन के प्रारम्भ से ही मुझे भोगसुख के विरुद्ध त्याग तथा संयम का क्रियात्मक सजीव पाठ मिला। तदनन्तर कलकत्ता में स्वदेशी युग के क्रान्तिकारी आन्दोलन से भी बहुत बड़ी नियमानुवर्तिता, संयम, त्याग और सादगी की क्रियात्मक शिक्षा मिली, क्योंकि उस समय आन्दोलन का उद्देश्य ही था — 'देश के लिए तन-मन-धन — सर्वस्व अर्पण कर देना।"

बालक हनुमान प्रसाद को बाबा [illegible] जी ने श्रीमद् भगवद् गीता कंठाग्र करादी थी। कलकत्ता में हनुमान प्रसाद का सम्पर्क महात्मा शंकरानन्द जी व अन्य विप्लववादी नवयुवकों से हुआ। गुप्त समितियाँ बनायी गयी, सदस्यों को 5 नियमों का पालन करना पड़ता था, उनमें एक नियम रखा गया गीता का नियमित रूप से पाठ करना। कलकत्ता में सबसे पहले सानुवाद गीता प्रकाशित की गयी जिसके आवरण पर भारतमाता का चित्र छापा गया था भारत माता के एक हाथ में गीता थी दूसरे में तलवार। इस की प्रतियाँ सभी विप्लववादियों में वितरित की गयी इसको सरकार ने जब्त कर ली। ~~कुछ समय पश्चात्~~ कुछ समय पश्चात् हनुमान प्रसाद ने साहित्य सम्वर्द्धिनी समिति द्वारा

नयी सजधज में बढ़िया और गीता हाथ में लिये गीता प्रकाशित करायी । श्री जयदयाल गोयन्दका जी गीता पर प्रवचन किया करते थे। हनुमान प्रसाद उनके मौलिक विचारों से प्रभावित हुए थे और सत्संग में नित्य जाते थे । संवत् 1979 (1922 ई0) में गोयन्दका जी बम्बई में पधारे वहाँ 10 दिन तक सत्संग तथा प्रवचन होते रहे । वहीं तय हुआ कि हनुमान प्रसाद जी सत्संग करायेंगे । कुछ ही दिनों के अभ्यास के अनन्तर पोद्दार जी का गीता पर धारा प्रवाह प्रवचन चलने लगा, यह क्रम कई वर्षों तक चला पोद्दार जी बम्बई के मारवाड़ी विद्यालय में प्रतिदिन एक घण्टे तक गीता की शिक्षा देने के लिए नियमित रूप से विद्यालय जाया करते थे ।

'य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥ (18/68)

"जो पुरुष मुझसे प्रेम करके इस परम रहस्य युक्त गीता शास्त्र को मेरे भक्तों में कहेगा वह निःसंदेह मुझे ही प्राप्त होगा ।"

पोद्दार जी ने स्थान-स्थान पर जीवन का लक्ष्य- भगवत्प्रेम या भगवान की प्राप्ति कहा है । उस लक्ष्य की प्राप्ति का रास्ता भगवान ने अपने मुख से ऊपर के श्लोक में बतलाया है, गीता के प्रचार-प्रसार तथा अगाध प्रेम का यह भी एक कारण है । गीता के प्रति उनका अगाध प्रेम बाद में गीता प्रेस के रूप में प्रस्फुटित हुआ जिसके द्वारा उन्होंने कोटि-कोटि व्यक्तियों की आध्यात्मिक सेवा की । गीता की प्रतियाँ विभिन्न आकार में मूल, अर्थ सहित, पदच्छेद अन्वय युक्त, केवल भाषा में, शंकरभाष्य, रामानुजाचार्य कृत भाष्य आदि में छापकर लागत मूल्य पर उपलब्ध करायी गयीं । 'कल्याण' का चौथे वर्ष का विशेषांक 'श्रीमद्भगवद्गीतांक' के नाम से निकाला गया । इसके बाद चौदहवें वर्ष में "गीता तत्वांक" नाम से पुनः विशेषांक निकाला गया अंग्रेजी मासिक 'कल्याण कल्पतरु' के तीन वर्षों में गीता नम्बर 1, 2, 3 के रूप में गीता का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया गया

जिससे अंग्रेजी भाषी जनता गीता के सिद्धान्त एवं महत्त्व को समझ सके । यह सारा लेखन कार्य उनकी गीता के प्रति उत्कट निष्ठा को प्रकट करती है ।

भगवन्नाम के प्रति विश्वास तथा अनन्य आश्रय

—उलटहिं नाम जप जागत भारी । जिमिहिं सुमिरत होंहि सुखारी ॥

22 वर्ष की अवस्था में हनुमान प्रसाद पोद्दार जी के सम्बन्ध में गिरफ्तार किये गये तथा अलीपुर सेंट्रल जेल में रखे गये उस समय उन्हें गुप्तचरी की दयनीय स्थिति के कारण कुछ घबराहट हुई। इस घबराहट में उन्हें भगवान् के नाम की याद आयी। नाम का अभ्यास न होने पर भी षोडश मंत्र "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे हरे कृष्ण हरे कृष्ण हरे हरे" का जप किया इससे उनकी घबराहट दूर हो गयी यह जप इनका जीवन साथी बन गया । शिमलापाल नजरबंदी के समय भगवन्नाम जप के प्रभाव से दो बार अनायास पैरोल पर घर जाने एवं बीमार दादी और बाबा और बीमार पुत्री को देखने जाने की स्वीकृति मिली थी ।

भगवन्नाम जप इनका अन्तसमय तक चलता रहा था । भगवन्नाम-प्रचार हेतु कल्याण का 39वें वर्ष (संवत् 2021 का) का विशेषांक "भगवन्नाम महिमा तथा प्रार्थना अंक" निकाला । कल्याण का प्रथम विशेषांक "भगवन्नामांक" नाम से निकाला गया था । श्री पोद्दार जी ने अन्तिम भाषा में लिखा है- "मुझे जो कुछ लाभ हुआ उसमें संतकृपा के साथ साथ तीन चीजों की प्रधानता है -

(1) सबमें भगवान को देखना.

(2) भगवत्कृपा पर अटूट विश्वास.

(3) भगवन्नाम का अनन्य आश्रय.

यही मेरी प्रमुख सम्पत्ति है ।"

[illegible] का दर्शन

हनुमान प्रसाद पर देशबन्धु चितरंजन दास जी की दान-शीलता का बड़ा असाधारण रूप का अमिट प्रभाव पड़ा। देशबन्धु के सम्पर्क में आकर उन्होंने देखा कि सुबह से शाम तक दासबाबू जितना कमाते हैं वह शाम को दान कर देते हैं। मुंशी के पास मनीआर्डर फार्म पहले से भरे रखे रहते थे रुपया आते ही डाकखाने भेज देते थे। देशबन्धु की दानशीलता अपने ढंग की अनूठी थी, भारत दान सुख्यात होता था। एक बार महात्मा गांधी देशबन्धु से मिलने उनके घर गये। पोद्दार जी भी वहीं थे। बापू ने देशबन्धु से कहा "दासबाबू! आपका धन तो रुपये में बारह आने लोग ठग ले जाते हैं।" देशबन्धु ने जो उत्तर दिया उसे पोद्दार जी ने जीवन सूत्र बना लिया। उत्तर इस प्रकार था "बापू! मेरी समझ यदि आप होते तो अवश्य यही बात होती, पर मेरा तो रुपया-पैसा कमाना भगवान की सेवा में लगाना है। मैं तो इन्हें भगवान समझकर देता हूँ। भगवान की चीज को भगवान के हाथों में अर्पित करता हूँ।16"

पोद्दार जी को दान देने में असंकोच के अभाव तथा दानशीलता को अमल स्वरूप मानने की प्रेरणा मिली वह उनके जीवन का आदर्श बन गया।

हनुमान प्रसाद जी के पिता भीमराज जी के एक मित्र डा० शरद् चन्द्र बनर्जी थे वे हनुमान प्रसाद पर बहुत स्नेह करते थे। वे हो-मियोपैथी पद्धति से दवा करते थे, तंत्र मंत्र में भी विश्वास करते थे। वे दवा के पैसे नहीं लेते थे। रोगियों को स्वयं घर जाकर दवा दे आते थे। रोगियों से कहते थे - "भगवान पर विश्वास करो, भगवान की कृपा से सब कुछ हो सकता है"। इनके सम्पर्क में आने से पोद्दार जी को कई बातों की प्रेरणा मिली यथा - परोपकार करना, सेवा करना

। हेतु उनके मामले में कुछ चाहना नहीं भगवान की कृपा पर अगाध विश्वास रखना आवश्यक काम अपने हाथों करना । ये प्रेरणा पोद्दार जी के जीवन आदर्श के निर्माण में सहायक बनी ।

ईमानदारी व्यवहार :—

"नेक कमाई का पैसा ही पूज्य पिता जी को स्वीकार था । दूसरों का पैसा अथवा दूसरे की चीज भूल से भी घर में न आ जाय इसका वे बड़ा ध्यान रखते थे । उनकी मान्यता थी कि भूल से भी आयी हुयी या रह गयी पराई चीज घर को बरबाद करके जायेगी । जब तक पराई चीज लौटा न दी जाती तब तक इन्हें चैन नहीं मिलता था ।" पिता जी के उक्त सिद्धान्त को बताते हुए उं एक दिन की घटना का भी पोद्दार जी ने उल्लेख किया था जिसमें 100/- भूल से पुर्जे में जुड़ने से रह गये थे । हिसाब-किताब रखने वाले केवल सिंह ने पिता जी को बताया तो पिता जी ने शाम को ही रुपये लौटाने को कहा और यह भी कहा शाम हो गयी तो क्या हुआ अभी देकर आओ । देकर आये बिना हम रोटी नहीं खायेंगे । जब तक यह पैसा हमारे पास रहेगा हम रोटी नहीं खायेंगे। यह पैसा हमारे घर में दो दिन रहा अतः दो दिन का ब्याज भी देकर आओ ' यह घटना पोद्दार जी ने स्वयं बताई थी। पिता भीमराज जी के हृदय में गायों के प्रति बड़ी श्रद्धा थी जब महात्मा रामानन्द जी गौशाला कार्य हेतु चंदा लेने आये तब भीमराज जी ने स्वयं चंदा तो दिया ही, दूसरे सेठों के पास जा-जाकर चंदा दिलाया । अकाल के समय गायों के चारा की व्यवस्था कराने में मदद करते थे, हनुमान प्रसाद भी इन कार्यों में सहायता देते थे । राजस्थान में सन् 1967-68 में भीषण सूखा पड़ा पोद्दार जी ने कई लाख रुपये इकट्ठे कर जगह जगह से चारा खरीदकर राजस्थान भिजवाया । गौ रक्षा तथा गौहत्या निषेध के लिए आन्दोलन में पोद्दार जी ने पूरी तरह सहयोग दिया । 'कल्याण' का एक वर्ष का 'गोअंक'

निर्लोभिता, निरभिमान । भगवान बुद्ध का मार्ग मध्यम मार्ग ही है [illegible]
[illegible] उनके भक्त पोद्दार जी [illegible] भाई जी के जीवन की
केन्द्रीभूत प्रेरणाएँ थे तो [illegible] क्यों न बनाते ।

ऊपर पोद्दार जी के व्यक्तित्व के विकास में प्रेरणा स्रोतों एवं उन जीवन-मूल्यों का विवरण दिया गया है जिन पर, पोद्दार जी का मानस व्यक्तित्व आधारित रहा है । यही.... उनका जीवन स्रोत -प्रेम माता के प्रति उत्कट श्रद्धा व प्रेम, गुप्तदान, धर्मनिष्ठ, गौ सेवा, ... ईमानदारी, सबसे अन्तर्दान, भावकृपा पर अटूट विश्वास और भगवन्नाम का अनन्य आश्रय - उनके मानव से महामानव तक के मार्ग के सम्बल और दिशा निर्देशक रहे हैं ।

3.6 वेशभूषा - आस्तिकता के मूर्तिमान स्वरूप

वेशभूषा किसी व्यक्तित्व के केवल बाह्य स्वरूप को ही प्रदर्शित नहीं करती अपितु उसके आन्तरिक भाव भी परिलक्षित करती है । व्यक्तित्व के विचार मन की स्थिति से गहरा सम्बन्ध रखते हैं, मन की स्थिति आहार-विहार पर निर्भर होती है ।" जैसा खाय अन्न वैसा बने मन, 'जैसा पीये पानी वैसी बने वाणी" की लोकोक्ति अनुभव पर आधारित है । वस्त्रों के चयन में मन के भाव ही झलकते हैं । जो भगवद्भक्त हैं, धर्म परायण हैं ईश्वर के प्रति आस्था ~~वान~~ है उसके वस्त्र स्वच्छ, धुले हुए सादे एवं तड़क-भड़क विहीन, होंगे तथा चेहरा शान्त एवं प्रसन्न होगा । 'सादा जीवन है, उच्च विचार' भारतीय जीवन का मूल मंत्र, प्रारम्भ से ही रहा है ।

भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक होने के कारण भाई जी की वेशभूषा भी तदनुरूप थी । उन्होंने 13 वर्ष की अवस्था से ही हाथ की कती-बुनी खादी पहनने का व्रत लिया था । जिसका उन्होंने आजीवन पालन किया । वे श्वेत ~~शुद्ध~~ शुभ्र खादी की धोती व [illegible] का श्वेत खादी का कुरता पहनते थे । घर में अधिकतर खादी की बनियान

3.20

पहने रहते थे। शीतकाल में मोटी स्वदेशी ऊनका लोवर तथा सिर पर कनटोपा धारण करते थे। पैरों में साधारण जूते या चप्पल पहनते थे। यज्ञोपवीत और शिखा-धारण करते थे, उन्नत ललाट पर गोपी चन्दन की बिन्दी उनकी अलग ही शोभा प्रदर्शित करती थी। श्री भुवनेश्वरनाथ जी मिश्र ने सन् 1952 में हुए प्रथम साक्षात्कार के समय उनके प्रेममय व्यक्तित्व की छवि का वर्णन निम्नांकित शब्दों में किया है :—

"मझोला कद, भरा-पूरा शरीर, उन्नत प्रशस्त ललाट, गेहुआँ-रंग, ललाट पर गोपी चन्दन की एक बिन्दी शोभा दे रही थी। प्रसन्न वदन, श्वेतशुभ्र खादी की धोती और खादी का ही कालरदार कुर्ता, पैरों में कपड़े के जूते, आपादमस्तक शिखाग्र से पैर तक जैसे हृदय ही हृदय। क्या यह व्यक्ति लाखों में एक है ऐसा अद्भुत प्रेममय व्यक्तित्व मिलना कठिन है।"[1]

श्री प्रफुल्लचन्द्र ब्रह्मचारी जी ने भाई जी के वेशभूषा के बारे में प्रथम भेंट के समय अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं :-

"मैं समझता था, हनुमान प्रसाद पोद्दार कोई बड़े धनिक, गोरे, सुन्दर, सजे-धजे, मान-सम्मान के इच्छुक व्यक्ति होंगे। वे तो श्यामवर्ण, छितरी दाढ़ी वाले सर्वथा देहाती वेशधारी, सीधे-सादे संत सदृश व्यक्ति निकले। यथार्थ में वे गृहस्थ-वेश में संत ही थे।[2]

श्री पोद्दार जी जी त्यागपूर्ण, परिश्रमी और अतिशय जीवन व्यतीत करने वाले गृहस्थ-वेश में एक संत थे। जिस मार्ग का वह दूसरों को उपदेश देते थे, उस पर स्वयं भी चलते थे। श्री जय गोपाल जी मिश्र ने भाई जी की विनम्रता का वर्णन करते हुए लिखा है :-

(1) भाई जी पावन स्मरण पृ० - 256.

(2) भाईजी पावन स्मरण पृ० - 100

"भाई जी बड़े ही सरल एवं मानअपमान की सम्मान करने की क्रिया में अग्रणी थे । क्या मजाल कि कोई उन्हें पहले प्रणाम कर लें, ज्यों ही व्यक्ति सामने आया कि उनके दोनों हाथ जुड़ जाते थे और वे अपना प्रणाम निवेदन कर देते थे । उनके इस विचित्र स्वभाव से परिचित होने के कारण मैं भाई जी को प्रणाम करने में जल्दी करता, क्योंकि सदा मैं भाई जी को नत होकर प्रणाम निवेदन करने का आदी था किन्तु भाई जी मुझसे पहले ही माथा टेककर बड़ी हैरत में डाल देते थे ।"[1] डा० श्री सत्येन्द्रनाथ जी ने भाई जी को 'मध्ययुगीन प्रेमी संत की वैष्णव वेश का नवीन संस्करण' के रूप में अपनी मान्यता व्यक्त करते हुए उनके बाह्य व्यक्तित्व एवं वेश का वर्णन निम्नांकित शब्दों में किया है:-

"उनका व्यक्तित्व अतीव आकर्षक था । गौरवर्ण, उज्ज्वल आनन, ममताभरी दृष्टि, ओठों पर सहज मुस्कान, तेजपूर्ण उन्नत ललाट और उस ललाट पर पीत गोपी चन्दन, जो वैष्णव-हृदय श्री पोद्दार जी की राधा उपासना का प्रतीक था । खादी के शुभ्र वस्त्रों में उनकी निर्मलता एवं राष्ट्रीयता झलकती थी ।"[2]

आस्तिकता और सात्विकता से पोद्दार जी का कण-कण सिक्त था । धर्मभावना और आध्यात्मिकता का प्रचार-प्रसार "कल्याण" का प्रमुख उद्देश्य रहा है । पोद्दार जी उसके रक्षार्थ सतत्, प्रयत्नशील रहे जब भी इसके अस्तित्व पर संकट आया उन्होंने उस संकट का यथा शक्ति विरोध किया, रूस में हुई ईश्वर-विरोधी कार्यवाहियों की उन्होंने खुलकर आलोचना करते हुए उसे एक भयंकर पाप की संज्ञा दी । भगवान के दर्शन के समय प्राप्त हुए दिव्य निर्देश के अनुपालन में भगवन्नाम प्रचार यात्रा की व्यापक योजना तैयार की गयी थी इसका मुख्य उद्देश्य देशभर में घूम-घूम कर भगवन्नाम की महिमा बताते हुये नाम जप करने का

---

[1] भाई जी पावन स्मरण पृ० - 364.

[2] भाई जी पावन स्मरण पृ० - 363.

नियम दिलाना तथा संकीर्तन मण्डल की स्थापना करना । प्रथम यात्रा बंगाल और आसाम की तथा दूसरी नाम प्रचार यात्रा बम्बई एवं राजस्थान की हुई । कल्याण के सम्पादकीय विभाग में "नाम जप विभाग" की स्थापना की गई । भारतवर्ष के सभी प्रमुख तीर्थों की यात्रा हेतु विशेष ट्रेन से की गई जिसमें 600 यात्री साथ गये । हर स्थान पर कुल व तीर्थ यात्रियों का समुचित अभिनन्दन, भजन-कीर्तन करके किया गया, इससे देश में पाश्चात्य अंधानुकरण के युग में, आस्तिकता को बढ़ावा मिला । कल्याण का वर्ष 32 का विशेषांक "तीर्थांक" के नाम से निकालकर भारतवर्ष के लगभग 1800 तीर्थों की महिमा तीर्थ यात्रा की विधि, तीर्थ दर्शन का फल, तीर्थ सम्बन्धी मानचित्र तथा तीर्थों में पहुँचाने वाले मार्ग और ठहरने के स्थान बताये गये । "भगवन्नाम महिमा और प्रार्थना अंक" नामक कल्याण का 39 वें वर्ष का विशेषांक निकाला गया । जिसमें भारतीय संस्कृति के मूल स्त्रोत वेद, शास्त्र और पुराणों में से भगवन्नाम की महिमा सम्बन्धी अंश संकलित किये गये । 40वें वर्ष में "धर्मांक" नाम से विशेषांक निकालकर सनातन धर्म की व्याख्या देते हुए पोद्दार जी ने स्पष्ट किया है कि 'धर्म वही है जो सर्वभूतहित साधन में लगा रहता है' और सनातन धर्म ही ऐसा धर्म है जो सर्वव्यापक होने के साथ ही सबके हित में बात ध्यान में रखता है ।

वर्ष 1968 से गीता वाटिका में अखण्ड नाम कीर्तन चल रहा है ।

गीतावाटिका में राधा जन्माष्टमी का उत्सव विशेष रूप से मनाया जाता था और अब भी मनाया जाता है । भाई जी इस उत्सव में विशेष रुचि लेते थे । एक भक्त ने निम्न रूप में वर्णन किया है —"प्रभात फेरी प्रारम्भ होती, साढ़े पाँच बजे से "राधिकारमण" "अर्जुन नयन" का मधुर स्वर कानों में रस-सुधा उड़ेलने लगता और हरे राम हरे राम" संकीर्तन प्रारम्भ होता ।

भाव-विभोर उन्मत्त से नृत्य करते लोग ऊपर भाई जी के पास जाते और भाई जी अपने कमरे से बाहर छतपर आकर खड़े हो जाते । मुख पर स्वाभाविक मुस्कान,श्वेत खादी के वस्त्र और मस्तक पर पीत चन्दन का गोल टीका—दोनों हाथ जोड़े भाई जी खड़े है - नेत्र सजल है कीर्तन करने वाले गाते नाचते उनके चरणों में टूट पड़ते और भाई जी का वरदहस्त मस्तक पर पा कृतकृत्य हो जाते । ऐसा अनुपम दृश्य उपस्थित हो जाता जो मात्र अनुभवगम्य ही था - शब्द उसका चित्रांकन नहीं कर सकते । लगभग साढे आठ बजे विशाल पंडाल में बिछी दरी पर आकर गरिमा के मूर्तिमान रूप भाई जी भी आकर बैठ जाते - वही सादा वेष, स्वाभाविक मुस्कान और स्नेहिलनयन । न ऊँचा आसन है, न ऊँचा मंच,सहसा देखकर विश्वास नहीं पाता कि यही है बैठे । एक मूक प्रश्न चिन्ह लिये श्रोता मंत्र मुग्ध से बैठे रहते । भाई जी का प्रवचन प्रारम्भ हो गया - एक होड़ सी लगी है सबमें उनका प्रवचन रिकार्ड करने की । सामने की चौकी पर दस बारह माइक लगे हैं - टेपरिकार्डिंग से की लाइन लगी है - परन्तु भाई जी को इससे कोई प्रयोजन नहीं, उन्हें तो भगवद्भाव का वितरण करना ही मात्र अभिप्रेत था और उसे वे करते रहते।[1]

पं० श्री सुरतिनारायणमणि जी त्रिपाठी ने भाई जी के व्यक्तित्व के बारे में नीचे लिखा विवरण दिया है —

"उत्कृष्ट लेखक एवं सफल सम्पादक होने के अतिरिक्त भाई जी एक प्रभावशाली वक्ता भी थे । उनकी भाषण शैली बड़ी प्रभावोत्पादक एवं सरल होती थी । प्रवचनों की भाषा सुललित एवं मुहावरे दार रहती थी । श्री भाई जी बीच-बीच में उपनिषद, स्मृति एवं पुराणों द्वारा विषय को बड़ा सुबोध एवं रोचक बना देते थे और श्रोतागण मंत्र मुग्ध होकर बड़े मनोयोग पूर्वक उनके प्रवचनों का श्रवण करते थे । श्री भाई जी एक सनातन धर्मनिष्ठ संत थे । उनकी भारतीय जीवन-दर्शन में

---

[1] भाई जी पावन संस्मरण पृ0 599-600.

असाधारण आस्था थी, उन्होंने उसी का उपदेश दिया तथा तदनुरूप जीवन बिताया । उन्होंने जगत को शिक्षा दिया कि किस प्रकार गार्हस्थ्य जीवन के सभी कर्तव्यों एवं दायित्वों का निर्वाह करते हुए अनासक्त रहा जा सकता है । जैसे-जैसे उनके जीवन का संवरण काल समीप आने लगा, वे समाधिस्थ रहने लगे । गीताप्रेस और गीतावाटिका को उन्होंने तीर्थ स्थल बना दिया । देशभर के साधु महात्मा भी, जो उनसे मिलने, उनसे ज्ञान एवं प्रेरणा प्राप्त करने तथा उनके आदर्शानुकूल जीवन यापन करने के उद्देश्य से आते थे, उनको तीर्थ स्वरूप अनुभव करते थे ।"[1]

भाई जी के आस्तिकता के मूर्तिमान स्वरूप का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ डा० श्री विद्यानिवास जी को, जिनको उनके ऐसे स्वरूप से आस्तिकता संक्रमित होती प्रतीत हुई । उन्हीं के शब्दों में इसका वर्णन देना उचित प्रतीत होता है ।"

"श्रद्धेय भाई जी में दो गुण ऐसे थे, जो सहज ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेते थे । एक तो आस्तिकता का संस्पर्श और दूसरा विनय । "कल्याण" की यात्रा भाई जी की आस्तिकता की निरन्तर अथक साधना की ही यात्रा है । भाई जी की आस्तिकता बड़ी संक्रामक थी । वे "नास्ति" को पल भर में "अस्ति" में परिवर्तित कर देते थे, क्योंकि उनकी दृष्टि में "नास्ति" कहीं था ही नहीं । कल्याण के किसी अंक में जिसे मैंने कुछ होश में आने पर सावधानीसे पढ़ा था, सुखिया जी की एक कहानी थी । "अस्ति" "अस्ति" भावना किस प्रकार सरल और सूधे व्यवहार में प्रस्फुटित हो उठती है और किस प्रकार आसपास के सभी लोगों में चैतन्य शक्ति की धारा प्रवाहित कर देती है । उस कहानी के पढ़ने के बाद इसका प्रभाव आपकी मन पर गहरा है । भाई जी, जाने क्यों, उस कहानी के सुखिया जी के स्वरूप में जब-जब उनसे भेंट हुई, मैंने देखा है । इतना

[1] भाई जी पावन संस्मरण पृ० 105.

गहरा प्रभाव डालने की क्षमता होते हुए भी जो सबसे अधिक विस्मय जनक बात उनमें थी, वह थी अतिशय विनय शीलता । वे यह अनुभव करने का अवसर ही नहीं देना चाहते थे कि जो आत्मीयता प्रवहमान हो रही है, उसमें उनका सान्निध्य ही सबसे बड़ा कारण है ।"[1]

---

§1§ भाई जी पावन संस्मरण पृ0 224.

प्रकरण-4

मानव व्यक्तित्व

4.1 विषय प्राक्कथन

4.2 देश सेवक

4.3 समाज सेवक

4.4 समाज सुधारक

4.5 आदर्श गृहस्थ

4.0 मानव व्यक्तित्व के अन्तर्गत मानव की उन दुर्बलताओं और सबलताओं का आकलन होता है जिसके संदर्भ में संसारी क्रियाकलापों को गति मिलती है तथा उन्माद एवं प्रमाद के अवसर मानव जीवन के मायालोक के उल्लेखनीय अंग बनते हैं ।

मानव जीवन मनुष्य की दुर्बलताओं और सबलताओं का योग होता है । एक वे मनुष्य होते हैं जो दुर्बलताओं से उबर नहीं पाते और अपना जीवन नष्ट कर देते हैं । दूसरे दुर्बलताओं से संघर्ष करते हुए जीवन पथ के अनेक झंझावातों को पार कर सफल सिद्ध होते हैं ।

महान् आत्माओं ने जहाँ अपनी सफलताओं की चर्चा परिवेश विशेष में ससंकोच की है वहाँ अपनी दुर्बलताओं को उजागर करने में कोई संकोच नहीं किया है । वस्तुतः उनके जीवन की दुर्बलताएं भी उनके लिए उन्नति की सोपान बनी हैं तथा इस दृष्टि से उनका उल्लेख अन्य विवेकशील व्यक्तियों के लिए आदर्श प्रस्तुत करते है ।

पोद्दार जी ने महात्मा गांधी की भाँति अपनी आत्मकथा नहीं लिखी है, फिर भी यथावसर उन्होंनें अपनी मानवीय दुर्बलताओं को उजागर करने में कोई संकोच नहीं किया ।

यह बड़े सौभाग्य एवं प्रभु की अपार कृपा का ही प्रसाद कहा जायेगा कि श्री पोद्दार जी उस समय अवतीर्ण हुए जब देश में स्वतंत्रता संग्राम की लहर चल रही थी । जन-जन का हृदय इस लहर से आंदोलित था । जो व्यक्ति अंग्रेजों की सेवा में थे तथा विवश होकर उनके अत्याचारों के प्रति मौन थे, वे भी हृदय से देश के तथा स्वतन्त्रता सेनानियों के प्रति सद्भावना एवं सहानुभूति ही नहीं प्रच्छन्न प्रेम एवं सहायता का रुख अपनाये हुए थे । इस प्रकार के वातावरण में तुलसीम

4.1

के जीवन की संभावित दुर्बलताओं के अवसर स्वतः कम हो गए थे। त्याग, तपस्या और सेवा एवं बलिदान की भावनाएँ प्रबल थीं तथा चरित्र निर्माण में योग दे रही थी। भाई जी का देश के उच्चकोटि के नेताओं यथा गांधी, अरविन्द, लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय आदि से सम्पर्क हुआ।

4.1 पोद्दार जी का जन्म शुभ संस्कारों के साथ हुआ उनकी आचारिक पवित्रता सहज ही संभव हुई तथा विपरीत परिस्थितियों में भी वे विचलित नहीं हुये। एक अवसर पर श्री राम नारायण जी रुइया बम्बई वालों ने उन्हें अपने कारोबार के देखने के लिए एक लाख रुपये वार्षिक वेतन पर आमन्त्रित किया इस प्रलोभन को उन्होंने नम्रता पूर्वक टाल दिया। उनका उत्तर था "गोरखपुर कुछ दिन के लिए "कल्याण" का काम संभालने के उद्देश्य से जाना हुआ है और वहाँ से गंगा तट पर एकान्त में भजन करने का मन है।"[1]

तरुणी प्रकरण में उनके आचारिक एवं चारित्रिक बल तथा उच्च स्तरीय सांस्कारिक संकल्प के दर्शन होते हैं। उन्हीं के शब्दों में — "देवि! मेरा विवाह हो चुका है। ऐसी स्थिति में अपने धर्म परम्परागत आचार और जातीय संस्कृति की आज तक सुरक्षित मान्यताओं को छोड़कर यह शरीर तुम्हें अपनाने में विवश है।"[2]

[4.2] मनुष्य से उत्पन्न होने वाली संततिकों मानव शब्द से अभिहित किया गया। पिता के गुण पुत्र में उतरना ही चाहिए, क्योंकि श्रुति कहती है— 'आत्मैव जायते पुत्रः' अर्थात् आत्मा ही पुत्र के रूप में जन्म

{1} भा० पा० स्मा० पृ० : 486/487.

{2} भा० पा० स्मा० पृ० : 418.

4.2

लेती है ।" सद्गुणों से अलंकृत होने पर यही मानव, महामानव की कोटि में पहुँच जाता है और विपरीत आचरण करने पर तथा आसुरी सम्पत्ति का आश्रय लेकर एवं "खाओ, पिओ और मस्त रहो" के सिद्धान्त को जीवन में उतारने वाला व्यक्ति मानव नहीं कहला सकता।

महापुरुष जहाँ रहते हैं, वह धारित्रीधन्य है जहाँ वे चलते-फिरते हैं, वे स्थान सम्मानास्पद बन जाते हैं । उनके रहन-सहन, जीवन व्यापार का समाज अनुकरण करने लगता है । श्रीमद्भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय में दैवी प्रकृति एवं आसुरी प्रकृति के मनुष्यों का भगवान ने अपने श्रीमुख से वर्णन किया है । दैवी सम्पद सम्पन्न व्यक्ति के नीचे लिखे 26 गुण श्री भगवान ने अर्जुन के प्रति कहे हैं ।

(1) भय का अभाव
(2) अन्तःकरण की अच्छी तरह से स्वच्छता
(3) ज्ञान और योग में निष्ठा
(4) दान
(5) इन्द्रियों का दमन
(6) यज्ञ
(7) स्वाध्याय
(8) तप
(9) सरलता
(10) अहिंसा
(11) सत्य
(12) अक्रोध
(13) त्याग
(14) शान्ति
(15) चुगली न करना
(16) प्राणियों पर दया
(17) इन्द्रिय विषयों में आसक्ति न होना ।
(18) नरम स्वभाव
(19) मर्यादा
(20) अचंचलता
(21) तेज
(22) क्षमा
(23) धैर्य
(24) बाहर भीतर की शुद्धि
(25) किसी के प्रति द्रोहभाव न होना
(26) निरभिमान

इसके बाद भगवान ने आसुरी प्रकृति वाले मानवों के नीचे लिखे छः लक्षण बतलाये हैं ~~कहकर~~ वे कहते हैं कि दैवी सम्पद् (प्रकृति) मोक्ष

देने वाली और आसुरी सम्पद् [प्रकृति] बंधन में डालने वाली होती है हे अर्जुन ! तू शोक मतकर क्योंकि तू दैवी सम्पद् [प्रकृति] वाला व्यक्ति है । आसुरी सम्पद् में 1-दंभ [पाखण्ड], 2- दर्प [घमण्ड], 3- अभिमान 4- क्रोध, 5- कठोर वाणी और, 6- अज्ञान है । श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार जी में दैवी सम्पद् के सभी गुण, आसुरी प्रकृति के एक भी लक्षण नहीं थे इसके जीवन की विभिन्न घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में देखना उचित होगा । वह आदर्श देश प्रेमी, आदर्श देश सेवक, आदर्श समाज सुधारक, आदर्श सम्पादक, आदर्श लेखक, आदर्श कवि, आदर्श गो-भक्त, भारतीय संस्कृति के उन्नायक, आदर्श विचारक, आदर्श प्रेरक, आदर्श गुरु, आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श पिता, आदर्श सद्गृहस्थ आदर्श अतिथि सेवी, आदर्श ज्ञानी, आदर्श त्यागी, आदर्श दानी, आदर्श ब्राह्मण सेवक, आदर्श अतिसेवी, आदर्श उपदेशक, आदर्श भगवद्भक्त, आदर्श भगवद् विश्वासी सन्त, आदर्श महामानव तथा मर्यादा पालक थे ।

इतिहास के पन्नों में इतने आदर्श रूप में विकसित गुण किसी एक व्यक्ति में नहीं मिलते है इन आदर्श गुणों तथा दैवी सम्पद् पर [विचार] साथ-साथ विचार किया जा रहा है ।

4-2 श्री हनुमानप्रसाद ने देश सेवा का व्रत संघर्ष की भूमिका के साथ स्वदेशी आन्दोलन एवं विप्लव पार्टी धारा के प्रभाव में आकर लिया था जो अन्त तक किसी न किसी रूप में चला । क्रान्तिक संगठनों

---

[1] दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ॥ गीता 16/4.
दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ।
मा शुचः संपदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥ गीता 16/5.

में दैवी सम्पद् के गुणों अभय, सत्व, दम और धैर्य त्याग(गुणों) का होना प्राथमिक आवश्यकता मानी जाती है पोद्दार जी में ये गुण प्रचुर मात्रा में थे । संवत् 1962वि0(1905ई0)में बंगभंग की घोषणा के प्रतिक्रिया में पूरा बंगाल अंग्रेजी सरकार के विरोध में एक जुट हो गया । राजा मणीन्द्रचन्द्र की अध्यक्षता में एक विशाल सभा आयोजित की गयी थी जिसमें समस्त विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का व्रत लिया गया । इंगलैण्ड से आने वाली सभी वस्तुओं को अग्नि को समर्पित किया जाना आम बात हो गयी । विद्यार्थियों ने विद्यालयों का बहिष्कार कर दिया तथा वे देशभक्ति के गीत गाते सड़कों पर घूमने लगे । पत्र-पत्रिकाओं के लेख और कविताओं में देशभक्ति की ही गूँज थी । इंगलैण्ड में बनी वस्तुएँ भारत के बाजारों में बिके उसके बदले भारत का धन इंगलैण्ड जाय, इस प्रकार से हो रहे भारत का आर्थिक शोषण को रोकने हेतु प्रबुद्ध भारतीयों ने आह्वान किया कि भारतीय जनता भारत में बनी वस्तुओं का उपयोग करे तथा विदेशी वस्तु का बहिष्कार करे । इसी के अगले विकास क्रम में प्रबुद्ध वर्ग विदेशी साहित्य तथा विदेशी नौकरी का भी त्याग करने लगा । विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का सकारात्मक रूप स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार था । पोद्दार जी की आयु केवल 13 वर्ष की थी, इनके पिता श्री भीमराज के मित्र पं0 दुर्गाप्रसाद मिश्र ने इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका देखकर इन्हें बताया कि इंगलैण्ड से जो कपड़े भारत में आते हैं उनमें माड़ी देने में जानवरों की चर्बी का प्रयोग किया जाता है । शुद्ध वैष्णवी प्रकृति के हनुमानप्रसाद को विदेशी कपड़ों से घृणा उत्पन्न हो गयी उन्होंने विदेशी कपड़े का किसी भी प्रकार से प्रयोग न करने का संकल्प ले लिया । इस व्रत के पालन हेतु ढाका मिलों के कपड़े प्रयोग किये । कुछ समय बाद इन्होंने मिल के कपड़े के स्थान पर हाथ के कते व बुने कपड़े पहनने का व्रत लिया । इस नियम के पालन में 2-3 वर्षों तक बहुत कठिनाई उठानी पड़ी । एक वर्ष तो इन्हें हाथ की

बनी खुली मोटी खादी के दर्जियों द्वारा सिल न सकने के कारण चद्दर ओढ़ कर ही बदन ढाँकना पड़ा था । देश-प्रेम का यह प्रथम आन्दोलन पुत उस समय किया था जब गाँधी जी का खादी प्रचार आन्दोलन प्रारंभ नहीं हुआ था । दो वर्ष बाद सं0 1964 वि0 में इंण्डियन नेशनल कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में हुआ । श्री हनुमान प्रसाद 15 वर्ष की आयु में कांग्रेस के सदस्य बने । उस समय कांग्रेस में गरम दल और नरम दल दो भाग हो गये थे । हनुमान प्रसाद को गरम दल के उग्रवादी सिद्धान्त ही पसंद आये इसे वे देश को शीघ्र स्वतन्त्र कराने हेतु उचित मार्ग समझते थे अतः इसी के प्रचार प्रसार में प्राणपण से लग गये ।

अंग्रेज सरकार ने अपनी दमन नीति से कुचल राष्ट्रीय आन्दोलन के कर्णधारों को सशस्त्र क्रान्ति का मार्ग उचित प्रतीत हुआ सरकार की दमन नीति से बचते हुए सशस्त्र क्रान्ति को सफल बनाने हेतु गुप्त समितियाँ बनाई गई हनुमान प्रसाद इसके सक्रिय सदस्य बने। स्वामी शंकरानन्द नाम के महाप्राण महात्मा जो राजनीति में उग्र विचारधारा के समर्थक थे, हनुमान प्रसाद को अपने विचारों से प्रभावित किया। स्वामी जी ने इन्हें प्रेरित किया कि तत्कालीन परिस्थिति में अपना सर्वस्व त्याग कर देश को यथाशीघ्र स्वतन्त्र कराने हेतु आत्म बलिदान ही श्रेयस्कर मार्ग है । हनुमान प्रसाद हिन्दू क्लब के सदस्य थे जिसमें क्रान्तिकारी दृष्टिकोण के विकास के लिये युवकों को लाठी-चलाने, तलवारों के साथ-साथ बन्दूक, पिस्तौल चलाने की शिक्षा दी जाती थी । क्रान्ति के अगले चरण के रूप में अनुवाद सहित गीता प्रकाशित की गई । जिसके मुखपृष्ठ पर भारत माता का बहुरंगा चित्र प्रकाशित किया गया भारत माता के एक हाथ में गीता तथा दूसरे में तलवार थी । इस गीता की हजारों प्रतियाँ वितरित की गयीं । सरकार ने इस गीता-प्रकाशन को सशस्त्र क्रान्ति का खुला आह्वान मानते हुए कार्यालय पर छापा मारकर सभी प्रतियाँ जब्त कर लीं । हनुमान प्रसाद ने "साहित्य संवर्द्धिनी समिति"

के माध्यम से कुरुक्षेत्र भारतमाता के चित्र सहित गीता पुनः प्रकाशित कराई थी। देशभक्तों को मातृभूमि की रक्षा के लिए सर्वस्व अर्पण करने और हँसते-हँसते मृत्यु का आलिंगन करने की प्रेरणा गीता के अध्याय दो के उपदिष्ट ज्ञान से मिलती थी। जिसमें शरीर के नष्ट होने पर आत्मा को अविनाशी कहते हुए भारतवंशी अर्जुन को युद्ध के लिए भगवान् ने प्रेरणा दी है।[1] भगवान आगे कहते हैं कि इस अविनाशी आत्मा को शस्त्रादि काट नहीं सकते, इसको अग्नि जला नहीं सकती।[2] विदेशी सरकार शरीर को ही दण्ड दे सकती है, आत्मा अजर अमर है इस ज्ञान को धारण करने वाले देशभक्त सरकारी दमन चक्र का सामना हँसते-हँसते करते थे। गीता से उन्हें यह ज्ञान भी मिलता था कि जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्य ही होगी और जिसकी मृत्यु होती है उसका पुनः जन्म होना भी ध्रुव सत्य है। इसलिए जब मृत्यु होनी ही है। तब उसका शोक या भय क्या किया जाय। देश को स्वतन्त्र कराने का जो प्रत्यक्ष धर्म उपस्थित हो गया है उस धर्मयुक्त युद्ध से बढ़कर दूसरा कल्याणकारी कर्तव्य दूसरा नहीं है। देशभक्त इस धर्मयुद्ध के लिए स्वतः आगे बढ़कर आते थे क्योंकि भगवान ने गीता के श्लोक 2/32 में अपने आप प्राप्त हुये और खुले हुए स्वर्ग द्वार को भाग्यवान् लोगों को ही प्राप्त होने वाला बताया था। यह भी कहा गया था कि यदि तू धर्मयुक्त संग्राम को नहीं करेगा तो स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा।[4]
यदि तुम मारे गये तो स्वर्ग....

---

(1) अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्,
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ।। गीता 2/17.
अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः,
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ।। गीता 2/18.

(2) नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः,
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः,।।गीता 2/23.

(3) यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्,
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ।।गीता 2/32.

(4) अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि,
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि।। 2/33.

को प्राप्त होगे और जीत गये तो पृथ्वी का भोग करोगे इसीलिए है । अर्जुन (देशभक्तों) इस धर्मयुद्ध के लिये दृढ़ निश्चय होकर कमर कसो। तुम्हारे लिये (देशभक्त के लिए) सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-विजय पराजय एक समान है इस भावना से युद्ध करोगे तो तुम्हें पाप नहीं लगेगा। शोक रहित होकर तथा हानि-लाभ, जय पराजय को समान समझते हुये लड़ने का गीतोपदिष्ट प्रत्येक देशभक्त, क्रान्तिकारी के मस्तिष्क एवं हृदय पर प्रभावी रहता था ।[1] प्रत्येक क्रान्तिकारी के पास से गीता की प्रति रहती थी वह नियमित रूप से अध्ययन करता था तथा प्रेरणा प्राप्त करता रहता था । देश के कर्णधार एवं प्रमुख देशभक्त के लिए गीता प्रेरणा स्रोत थी । "स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" का नारा देने वाले" बाल गंगाधर तिलक ने 'गीता रहस्य' (कर्मयोग) नाम की विस्तृत टीका लिखकर सभी भारतवासियों को कर्म करने की प्रेरणा दी है । अरविन्द घोष जो क्रान्तिकारियों के अगुवा माने जाते थे ने "एसेज आन गीता" लिखी है ।

बंगाल और विशेषकर कलकत्ता उन दिनों राष्ट्रीय क्रान्ति का मुख्य कार्यक्षेत्र बन गया था । देश के सभी नेता वहाँ पहुँचते रहते थे। स्थानीय सामाजिक संस्थाएँ इन नेताओं का स्वागत करती थी, अभिनन्दन पत्र तथा देश की स्वतन्त्रता की लड़ाई हेतु आर्थिक सहायता प्रदान, करती थी । मारवाड़ी सहायक समिति तथा हिन्दू सभा ये दो प्रमुख संस्थाएँ इन कार्यों में आगे रहती थी । हनुमानप्रसाद पोद्दार इन दोनों के

---

(1) हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृत निश्चयः ॥
गीता 2/36.

सुख दुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥ गीता 2/38.

प्रमुख कार्यकर्ता के रूप में सम्बद्ध थे । हिन्दू सभा के वे मंत्री थे और उसी के हैसियत से सन् 1915 में महात्मा गांधी का स्वागत अल्फ्रेड थियेटर में किया था । बाल गंगाधर तिलक, गोपालकृष्ण गोखले से भी परिचय इसी प्रकार के स्वागत समारोहों के माध्यम से हुआ था। पं० मदनमोहन मालवीय जी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना हेतु धन संग्रह करने की दृष्टि से कलकत्ता पहुँचने पर हिन्दू सभा की ओर से उनका अभिनन्दन हनुमान प्रसाद पोद्दार किया गया था । राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्य से कलकत्ता गये थे । उनके ठहरने एवं व्याख्यान आदि की व्यवस्था भी हनुमान प्रसाद ने की थी । सुभाषचन्द्र बोस हनुमान प्रसाद के निस्वार्थ सेवात्मबोधी और उच्च नैतिक आदर्शवादी एवं सेवाभावी व्यक्तित्व से प्रभावित हुये थे एक ही क्षेत्र में कार्य करते हुए दोनों में घनिष्ठ प्रेम-भाव स्थापित हो गया था । अरविन्द घोष से इनका निकट का सम्बन्ध स्थापित हो गया था । क्रान्तिकारी समिति के सक्रिय सदस्य होने से जब 1908 में जब कृष्ण कुमार मित्र अश्विनी कुमार दत्त आदि को देश निकाले का दण्ड दिया गया तब हनुमान प्रसाद ने मुकदमों की पैरवी में दौड़-धूप की थी उसी समय मानिकतल्ला बम विस्फोट के मामले में भी अरविन्द घोष, खुदीराम बोस, बारीन्द्र घोष आदि के विरुद्ध मुकदमा चलाया गया तब उसकी पैरवी में हनुमान प्रसाद ने दौड़-धूप की थी । इन सब मुकदमों की पैरवी तथा गुप्त समितियों में सक्रिय भाग लेने के कारण पुलिस की निगाह में चढ़ गये और इनकी गतिविधियों का पुलिस द्वारा सतर्कतापूर्वक निरीक्षण किया जाने लगा था । "रोडकाण्ड" सन् 1914 ई० की दूसरी महत्वपूर्ण घटना थी । आर० बी० रोडा एंड कम्पनी विदेशों से आग्नेयास्त्र मंगाने वाली प्रमुख कम्पनी थी। कंपनी से आयी 50 हजार कारतूस तथा 50 पिस्तौलों की 10 पेटियाँ 26 अगस्त 1914 को गायब हो गयी थी । इस मामले की जाँच

होती रही। लगभग 2 वर्ष बाद 16 जुलाई 1916 को श्री हनुमानप्रसाद अपने 2 अन्य साथियों के साथ राजद्रोह के अपराध में बन्दी बनाकर जेल भेज दिये गये । 15 दिन डुरान्डाहाउस कारागार में रखे गये वहाँ से अलीपुर सेन्ट्रल जेल भेजे गये। तीन सप्ताह बाद इन्हें बांकुड़ा जिले के शिमलापाल गाँव में नजरबन्द किया गया जो 21 माह तक चला उसके बाद मई 1918 में बंगाल से निष्कासन का आदेश दे दिया गया ।

मातृभूमि की गौरव रक्षा के निमित्त अपना सर्वस्व अर्पित करने वालों को घरवालों की फटकार, समाज में तिरस्कार, पुलिस के कोड़े, बिजली के शॉक, जेल में असहनीय यंत्रणायें बाद में देश निकाला, आजीवन कारावास और फाँसी का तख्ता मिलता था किन्तु वे सब मातृभूमि के सपूतों को ये कष्ट और यातनायें पुष्पमाला सी लगती । इन भीषण यातनाओं की यह कल्पना पहले से करके ही मातृ सेवा के पथ पर उतरता था। हनुमानप्रसाद पोद्दार जी ने क्रान्तिकारी गुप्त समितियों के कार्यों में कार्य करते समय इन सबका अनुमान पहले ही लगा चुके थे। उनमें सेवाभाव और त्याग तो था ही। निर्भयता [दैवी सम्पद] के गुण का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि वर्ष 1916 में रोडा काण्ड में गिरफ्तारी किये जाने की सूचना श्री फूलचन्द चौधरी के माध्यम से एक माह पूर्व मिल गयी थी किन्तु पकड़े जाने के भय से न तो कहीं बाहर भागकर छिपे और न क्रांतिकारी गतिविधियों से विरत हुये, अपितु उनका पूर्ववत संचालन करते रहे थे । इन गतिविधियों तथा समाज सेवा के अन्य कार्यों में अधिकाधिक समय देने के कारण उनके व्यापार में उत्तरोत्तर कमी आती जा रही थी तथा घर की आर्थिक स्थिति बिगड़ती जा रही थी। इनके अतिरिक्त घर में तीन महिलाओं और दो बच्चियों के अतिरिक्त कोई पुरुष नहीं था जो व्यापार सुधारने में मदद करता फिर भी मातृभूमि की पुकार को यह अनसुनी नहीं कर सके । समाज सेवा तथा देश सेवा

के कार्यों में कष्ट सहकर भी लगे रहना वास्तविक तप एवं दम, इन्द्रिय निग्रह का प्रत्यक्ष उदाहरण था ही किन्तु जब श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार अलीपुर जेल में थे और उनके श्वसुर श्री मंगतराम सरावगी जेल में मिलने गये उस समय पोद्दार जी ने उनके प्रश्नों का जो उत्तर दिया था वह उनके त्याग मय मनोभूमि तथा संतुलित विचारों को उद्भासित करता है साथ ही उस समय के क्रान्तिकारियों के मनोभावों का आभास कराता है ।

श्री हनुमान प्रसाद को उस दिन घटिया किस्म का चावल स्वयं पकाकर खाने के लिए दिया गया था । उनकी कोठरी गन्दी व मच्छरों से भरी हुई थी । उनके श्वसुर सरावगी जी ने पूछा "आपने तो ऐसे चावल जीवन में छुये भी नहीं होंगे, इनसे पेट की ज्वाला कैसेशान्त होगी तथा इस निर्जन गंदी और मच्छरों से भरी कोठरी में जिन्दगी कैसे कटेगी?" श्री हनुमान प्रसाद जी का उत्तर था " दुःख और सुख की अनुभूति मन की मान्यता पर है, यह तो भगवान का दिया गया प्रसाद है इसको मैं प्रेम पूर्वक खाता हूँ इसमें दुख की कोई बात ही नहीं है ।"

ऐसा था, उनका धैर्य, उनका तप, उनका इन्द्रिय निग्रह, उनका त्याग एवं स्वाध्याय से विकसित अध्यात्मनिष्ठ मानसिक संतुलन ।

शिमलापाल में 21 माह तक नाम-जप और ध्यान साधना के कारण हिन्सात्मक राजनीति से तथा अंग्रेजों को शत्रु मानकर उनकी हत्या करके देश को स्वतंत्र कराने के प्रयासों के औचित्य से उनका विश्वास हट गया था । महात्मागांधी और सेठ जमनालाल बजाज के सम्पर्क में आने के कारण वे अहिंसात्मक राजनीति के पक्षधर हो चले थे । सेठ जमनालाल बजाज की लेमिंग्टन रोड पर स्थित कोठी "मणि भवन" सभी राष्ट्रीय नेताओं के लिए अतिथि गृह था । मणि भवन में आतिथ्य सम्बन्धी सभी व्यवस्था का भार श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार को सेठ जमनादास जी ने सौंप रखी थी इस कारण से पोद्दार जी देश के चोटी के सभी नेताओं के सम्पर्क में

..॥

आते गये । भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सन् 1919 में अमृतसर के अधिवेशन में, कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में जो 1920 में लाला लाजपतराय की अध्यक्षता में हुआ था तथा दिसम्बर 1920 में नागपुर के अधिवेशन में एवं दिसम्बर 1921 के अहमदाबाद अधिवेशन में भाग लिया था। इसके पश्चात् उन्होंने सक्रिय राजनीति से उपरामता ग्रहण कर ली ।

कांग्रेस का उद्देश्य देशवासियों में परतन्त्रता के प्रति असन्तोष की भावना को बढ़ाते हुए स्वतन्त्रता प्राप्ति की उत्कट भावना उत्पन्न ~~भावना उत्पन्न~~ करना तथा अपने देश-संस्कृति धर्म और पूर्वजों के प्रति निष्ठा व श्रद्धा की भावना तथा आत्मबल का जागृत करना था किन्तु इसके लिए जहाँ भारत की जनता में देश-प्रेम बढ़ाया जाता था वहीं रागद्वेष, प्रतिस्पर्धा, स्वार्थवृत्ति एवं घृणा बढ़ रही थी । महात्मा गांधी के अहिंसात्मक, सत्यनिष्ठा युक्त आग्रह पद्धति से निष्ठावान व्यक्तियों की निर्माण प्रक्रिया, महात्मा सेठ जयदयाल गोयन्दका के सत्संग, भगवन्नाम जप एवं स्वाध्याय से पोद्दार जी के विचारों में परिवर्तन आतागया। उन्होंने देश-सेवा को साधन माना, साध्य नहीं । उनकी दृष्टि में देश-सेवा भगवान् की प्राप्ति में साधन रूप में ही रह सकती थी । देश की यथार्थ से देशसेवा के लिए व्यक्तियों में धर्म और संस्कृति के प्रति आस्था उत्पन्न करने विचारों को संस्कारित करने तथा सत्यनिष्ठ बनाने की वह आवश्यक समझने लगे थे उनका मत हो गया कि सच्चे अर्थ में स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए सांस्कृतिक जागरण, धार्मिक निष्ठा व आध्यात्मिक उत्कर्ष हेतु सदाचार एवं नीति पर आधारित प्रेरणाप्रद धार्मिक साहित्य के सृजन, प्रचार व प्रसार की सर्वप्रथम आवश्यकता है, जिस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये । इस विचार सरिणी ने राजनीति के तत्कालीन क्रिया-कलापों से अध्यात्मनिष्ठ हो समाज सेवा की ओर जीवनधारा को मोड़ दिया । फिर भी देश पर जब संकट के बादल घिरे, उन्होंने अपनी सशक्त लेखनी (?) से देशवासियों को कर्तव्य बोध कराया तथा देश के कर्णधारों को भी [illegible]

चेतावनी देने से नहीं चूके। भारत विभाजन के पूर्व 'कल्याण' के मार्च 1947 के अंक में तीन लेख "वर्तमान राजनीति का स्वरूप", 'हिन्दू मुस्लिम समस्या में मनोवैज्ञानिक भूल' तथा 'कांग्रेस सरकार की भूल' प्रकाशित किये थे। मई 1947 के अंक में "भयानक खतरा और तुरन्त कर्तव्य पालन की आवश्यकता", जून 1947 के अंक में "जहाँ हिन्दू मृत्यु का मुकाबला कर रहे हैं", जुलाई 1947 के अंक में "भारत के विभाजन के बाद क्या होगा?", अगस्त 1947 के अंक में "अत्याचार का प्रतिकार" सितम्बर 1947 के अंक में "पंजाब में अत्याचार और हमारी सरकार" नवम्बर 1947 के अंक में "हिन्दुओं का दुर्भाग्य" शीर्षकों के अन्तर्गत लेख प्रकाशित किये थे। भारत वर्ष के गणतन्त्र घोषित होने के बाद प्रथम चुनाव 1952 के प्रारम्भ में हुए थे उसके पूर्व दिसम्बर 1951 के कल्याण में "गणतन्त्र तथा मतदाताओं का कर्तव्य" एवं "वोट किसको दें" लेख लिखकर प्रकाशित किये थे।

'जनतंत्र या असुरतंत्र' लेख द्वारा उन्होंने चुनाव के समय होने वाले भ्रष्टाचार के प्रति जनता का ध्यान आकर्षित करते हुए गीता के 16 वें अध्याय में वर्णित आसुरी-सम्पदा के लक्षणों को वर्तमान विकास से मिलान किया है, दूसरे लेख 'जनतन्त्र की रक्षा कैसे हो?' लिखकर सुझाव दिया है कि वर्तमान में सबसे पहले दलों की भावना को भूलकर सभी सरकारें परस्पर में सहयोग, प्रेम तथा समन्वयात्मक नीति से शासन करें एक प्रदेश दूसरे प्रदेश के अभाव की पूर्ति करें। शिक्षा पद्धति में शीघ्र से शीघ्र आमूल परिवर्तित किया जावे।

"पाकिस्तान युद्ध और हमारा कर्तव्य" "पाकिस्तान, चीन संदर्भ में हमारा कर्तव्य' तथा 'विजय और विश्व शान्ति के साधन" चीन पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के लिये आध्यात्मिक साधन भी किए जावे।" लिखे थे एक अंश उद्धृत किया जा रहा है।

"यह याद रखना चाहिये कि भारत लड़ने नहीं गया था न जाना चाहता था । युद्ध संबंधी जहाँ जितनी जैसी आवश्यकता है व्यक्तिगत स्वार्थों तथा परस्पर दोष देखना कहना एवं आलोचना करना छोड़कर उसकी पूर्ति के लिए यथासाध्य तन, मन, धन से सबको प्रयत्न करना ही चाहिये। मैं अपने धर्मरक्षक नेपाल नरेश माननीय श्री महेन्द्र महाराज से सादर निवेदन करता हूँ कि इस संकट के समय वे भारत की पीठ ठोंककर सनातनधर्म के चिर धीररक्षक और सफल प्रहरी की महान् कार्य सम्पादन कर यशस्वी बनें ।"

1962 में भारत भूमि पर चीन द्वारा किये गये विश्वासघात पूर्वक आक्रमण करने के अवसर पर पोद्दार जी ने 26 पंक्तियों का एक पद रचकर देशवासियों को प्रबोध किया था ।

"यह विश्वासघात यह आया दस्यु भयानक का धर वेश,
उसके इस दुःसाहस, दुष्ट कुवृत्ति का है कर देना शेष ।
शांत न बढ़ने करने हैं, करना है विषदन्तों का भंग,
जिससे हो जाये विष-वर्जित निर्मल उसके सारे अंग ।।"

—पद रत्नाकर पद सं0 1499 का अंश

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार का जीवन अध्यात्मनिष्ठ महामानव तथा गृहस्थ वेश में एक महान संत एवं सच्चे सन्यासी का था । वह मोह-ममता से दूर थे । किसी का अहित स्वप्न भी नहीं चाहते थे । उनके हृदय में उत्कट देश प्रेम की धारा प्रवाहित थी । कलकत्ता-निवास-अवधि में ही उन्होंने अपना सर्वस्व देशहित लगा देने का निश्चय करके ही क्रान्ति सम्बन्धी योजनाओं में भाग लेना प्रारम्भ करके ही किया था । वह सर्वस्व-बलिदान की भावना जीवनपर्यन्त अक्षुण्ण रही । 'देशात्मबोध ही देशभक्ति है" का भाव उन्हें सतत रहा । भारत के विभाजन के समय

उन्होंने भारत माँ का अंग विच्छेद किया जाना ही अनुभव नहीं किया उन्हें हार्दिक वही पीड़ा हुई जैसा उनके स्वयं के अंग काटे जाने पर होती । भारत विभाजन का उन्होंने यथाशक्ति विरोध किया था । भारत के किसी भी प्रदेश चाहे वह आसाम हो या बिहार अथवा राजस्थान जहाँ भी भूकम्प बाढ़, अकाल की स्थिति उत्पन्न हुई वे अपनी सारी शक्ति के साथ तत्काल सहायता एवं सेवा हेतु उपस्थित होते रहे थे ।

4-3 भारत विभाजन से पूर्व क्वेटा के भूकम्प के समय प्रभावित लोगों की सेवा सहायता हेतु कल्याण के माध्यम से सभी सहृदय भाइयों से अपील की गई थी । बिहार को भी भूकम्प के कारण भीषण तबाही का सामना करना पड़ा था गीता प्रेस ने उस समय सेवादल सहायता सामग्री के साथ भेजा था, बिहार में कुओं की सफाई एवं पेयजल की आपूर्ति की व्यवस्था, वस्त्र, भोजन व अन्न के वितरण की व्यवस्था की गई थी । वर्ष 1948 में राजस्थान में अनावृष्टि के कारण सूखा पड़ जाने से त्राण दिलाने हेतु सेवादल गीताप्रेस की ओर से भेजने की व्यवस्था पोद्दार जी ने की थी । सन् 1940 में बंगाल के भीषण अकाल में सहायता प्रदान की गयी । द्वितीय विश्वयुद्ध के समय कलकत्ता से भागकर आये हजारों नागरिकों की रेल्वे स्टेशन रतन शहेवान गढ में व्यवस्था की गई थी । 1942 में बीकानेर राज्य में अतिवृष्टि से पीड़ित जनता की गीताप्रेस की ओर से सेवा की गई । 1946 [संवत 2003] में नोआखाली काण्ड से पीड़ित हिन्दुओं की सहायता की व्यापक व्यवस्था गीताप्रेस सेवक मण्डल द्वारा की गई थी । पूर्वी उत्तर प्रदेश के बाढ़ पीड़ितों की सहायता पहुचाने में गीताप्रेस सेवक मण्डल सदैव आगे आता रहा। सन् 1966 में बिहार के क्षेत्र में अकाल पड़ जाने पर व्यापक ढंग से सेवा की व्यवस्था की गई ।

पोद्दार जी की लोकव्यापी सूखा तथा अतिवर्षा से पीड़ित प्राणियों

4.15

की सहायता हेतु लेख लिखकर अपील की थी जिसका कुछ अंश उद्धृत करना समीचीन होगा ।" विपरीत वर्षा, अतिवर्षा, सूखा आदि के कारण मनुष्यों तथा गौ आदि पशुओं का कष्ट भी बहुत ही बढ़ रहा है बिहार, आसाम, उड़ीसा, दक्षिण के कई स्थान तथा गुजरात आदि में तो अवर्षा तथा अतिवर्षा के कारण भयानक कष्ट था ही इधर उ0प्र0 बिहार, राजस्थान एवं पश्चिम बंगाल में विशेषरूप से अवर्षा तथा अतिवर्षा से भयानक प्रलय काण्ड सा हो गया है । राजस्थान में अच्छी नस्ल की लाखों गौएँ घास-चारा तथा जल के अभाव में कराल काल का ग्रास बनने जा रही है और मनुष्यों की भी बड़ी संख्या अकाल पीड़ित है । बेचारे छोटे पशु-पक्षियों की बात तो पूछना ही कौन है? इसी प्रकार बंगाल में लाखों मनुष्य पीड़ित है । गांव के गांव बह गये हैं । हजारों मनुष्य अकस्मात् मृत्यु के मुँह में चले गये हैं । पशु कितने बहे-मरे हैं, इसका तो हिसाब ही नहीं है ।

आशा है सहृदय सज्जन मुक्तहस्त दान देने और सेवा करने वाले उत्साही कार्यकर्ता गण के द्वारा पूरी सेवा करने का पुण्य लूटेंगे । चारा-भूसा के लिए भी अपील की गयी है । श्री गजाधर जी सोमानी का पता है - श्री निवास हाउस, वाडवी रोड, फोर्ट बम्बई ।

इधर, गीताप्रेस की ओर से भी गीताप्रेस सेवादल के बीकानेर के उत्साही कार्यकर्ताओं के द्वारा बीकानेर तथा कोलायतल जी में भूखी गौओं को यत्किंचित् चारा-दाना देने का कार्य चल रहा है । उसमें भी पर्याप्त व्यय हुआ है और हो रहा है । इस सम्बन्ध में किन्हीं को कुछ पूछना हो तो वे गीताप्रेस-सेवादल गीता प्रेस, पो0 गीताप्रेस गोरखपुर को पत्र लिखकर पूछ सकते हैं ।

सभी को उत्साह के साथ दैवी-प्रकोप प्राणियों की सहायता सेवा को परम कर्तव्य मानकर तन-मन-धन से इस परम आवश्यक, अत्

महान पवित्र कार्य में सहयोग देना चाहिये और यह पवित्र कार्य करना चाहिये, भगवान् की सेवा मानकर, भगवान की ही प्रेरणा से, भगवान की दी हुई सम्पत्ति-शक्ति के द्वारा निरभिमान होकर-अत्यन्त विनम्र भाव से । ख्याति-प्रतिष्ठा या अन्य किसी भी लौकिक-पारलौकिक लाभ की इच्छा नहीं रखनी चाहिये ।"

1967 में बिहार काण्ड अकालपीड़ितों को गीताप्रेस सेवादल ने सहायता प्रदान की । 1969 में आसाम में तूफानग्रस्त क्षेत्र में सेवा की गई । यही नहीं पूर्वी पाकिस्तान के तूफान पीड़ितों को भी श्री पोद्दार जी ने सहायता पहुँचायी क्योंकि उनकी दृष्टि में पूर्वी पाकिस्तान के निवासी भाई ही थे तथा भगवान के स्वरूप थे । वह विपद्ग्रस्तों की सेवा अत्यन्त कुशलता, निष्ठा और उदारता से करते थे सत्यनिष्ठा तथा प्रबन्ध पटुता से प्रभावित होकर सरकार ने अनेक सेवा कार्यों में राजकीय अनुदानों का वितरण गीता प्रेस के माध्यम से कराया था । इनके तपोनिष्ठ, सेवा परायण तथा सदाचारी व्यक्तित्व की छवि समाज के सम्पन्न व्यक्तियों पर प्रभावी थी और वे गीताप्रेस के माध्यम से लोक सेवा में लगाये जाने वाले धन को सुपात्र के हाथों में ही पहुँचने के लिए आश्वस्त रहते थे तथा प्रचुर मात्रा में धन देते थे । यह भी सत्य है कि पोद्दार जी ने किसी प्रकार के सहायता कार्यों के लिए कभी जनता से धन देने की अपील नहीं निकाली ।

श्री पोद्दार जी ने "सेवा की सात आवश्यक बातें" लेख में लिखा है "सेवक में जब ये सात बातें होती है, तब सेवा सर्वाङ्ग-सुन्दर तथा परम कल्याण-कारिणी होती है —(1) विश्वास (2) पवित्रता (3) गौरव (4) संयम (5) शुश्रूषा (6) प्रेम और (7) मधुर भाषण । इसका भाव यह है कि सेवक को अपने तथा अपने सेवाकार्य में विश्वास होना चाहिये । विश्वास हुए बिना जो सेवा होगी वह ऊपर ऊपर से होगी-दिखावा मात्र होगी । सेवक के हृदय में विशुद्ध सेवा का पवित्र

भाव होना चाहिये, वह किसी बुरी वासना-कामना को मन में रखकर सेवा करेगा तो सेवा अपवित्र हो जायेगी और उसका अधःपतन होगा । जिसकी सेवा की जाय उसमें गौरव बुद्धि,पूज्य बुद्धि होनी चाहिये । ....इसीलिए कहा गया है कि जिसकी सेवा की जाय, उसे भगवान् मानकर सेवा करे । सेवक की इन्द्रियाँ संयमित होनी चाहिये ।...... सेवक में सेवा तथा सेवा के प्रति प्रेम होना चाहिये । प्रेम होने पर कोई भी सेवा भारी नहीं लगेगी तथा सेवा करते समय आनन्द की अनुभूति होगी जिससे नया-नया उत्साह मिलेगा और साथ ही सेवक को मीठा बोलने वाला होना चाहिये । कटु भाषी सेवक की सेवा मर्माहत करती है और मधुर भाषण की बड़ी प्रिय लगती है । मधुर भाषण स्वयं ही एक सेवा है ।"

श्री पोद्दार जी ने देश सेवक की पहचान नीचेअंकित अपने रचित एक पद में दी है ।

"देश में है, देश में हूँ, देश-मैं-है दो नहीं ।
देश का ही स्वार्थ मेरा, है न अंतर कुछ कहीं ।।
देश का है लाभ मम, नुकसान मम नुकसान है ।
देशसेवक की यही, बस-एक ही पहचान है ।।

—पद रत्नाकर- पद सं०1541.

श्री पोद्दार जी का यह पद अरविन्द जी की देश भक्ति देशात्मबोध का नाम है की व्याख्या है । इस व्याख्या एवं गौरवपूर्ण अर्थ को पोद्दार जी ने अपने जीवन में पूरी तरह चरितार्थ किया था । भारत देश के किसी भाग का चाहे बटवारा हो या कहीं अकाल या बाढ़ हो या महामारी हो उनका हृदय पीड़ा से ममहित होता था और वे इस संकट व्याधि को दूर करने के लिए उसी तरह प्रयत्नशील हो जाते थे जैसे कि अपने शरीर के कष्ट को दूर करने हेतु कोई व्यक्ति तुरन्त उपचार हेतु दौड़ पड़ता है । उक्त तात्कालिक एवं अल्पकालीन सेवाओं

के अतिरिक्त पोद्दार जी ने स्थायी प्रकृति के सेवा कार्यों में भी अपना अमूल्य योगदान दिया है तराई और पहाड़ी क्षेत्र में कुष्ठरोग का प्रभाव अधिक होता है। गांधी स्मारक निधि की उत्तर प्रदेश शाखा ने उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल में कुष्ठ रोगियों की चिकित्सा एवं सेवा के निमित्त एक सेवाश्रम खोलने का निश्चय किया था परमार्थ आश्रम के बाबा राघवदास जी और पोद्दार जी के प्रयास से वर्ष 1951 में तिलक जयंती के दिन गोरखपुर में कुष्ठ सेवाश्रम की स्थापना की गयी। एक दो वर्षों तक गांधी स्मारक निधि से सहायता मिलती रही उसके बाद इस आर्थिक व्यवस्था का सारा दायित्व पोद्दार जी पर आ गया। इस सेवाश्रम में रोगियों की चिकित्सा, भोजन तथा आवास की स्थायी व्यवस्था है इस आश्रम ने समाज से उपेक्षित हजारों कुष्ठ रोगियों की चिकित्सा द्वारा स्वास्थ्य लाभ कराने अतिरिक्त जीविकोपार्जन के लिए औद्योगिक शिक्षा की व्यवस्था की है।

वर्ष 1955 में गोरखपुर में मूकबधिर विद्यालय की स्थापना पोद्दार जी के प्रयास से हुई। 1965 में इस विद्यालय का एक अलग भवन बनवा दिया गया उसके लिए अलग प्रबन्ध समिति बना दी गई। बच्चों को औद्योगिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे से समाज में सुख सुविधा पूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।

समाज व्यक्ति का समष्टि रूप है। व्यक्ति के सुधरने पर, ही समाज का सुधार सम्भव है। व्यक्ति घटक है। समाज व्यक्त एवं अव्यक्त दोनों है। व्यक्त रूप समाज के घटक हैं। उन्हीं की सेवा ही समाज सेवा, उन्हीं का सुधार ही समाज सुधार कहा जा सकता है। समाज में पुरुष, नारी, बालक, बालिका, वृद्ध सभी आते हैं। चारों वर्ण तथा चारों आश्रमों के व्यक्ति आते हैं। गृहस्थ इन सबका आधार है, उत्पत्ति की दृष्टि से भी और जीविका की दृष्टि से भी। समाज के ही अंग कुष्ठ के रोगी भी हैं। तथा विकलांग मूक बधिर भी एवं आपत्तिग्रस्त भूकम्प, बाढ़, सूखा से पीड़ित व्यक्ति भी।

4.19

जिस प्रकार व्यक्ति का स्वस्थ रहना उसके सुख समृद्धि एवं शान्ति के लिए आवश्यक है उसी प्रकार समाज का स्वस्थ रहना भी समाज में सुख शान्ति बनाये रखने के लिए आवश्यक हो जाता है । व्यक्ति के स्वास्थ्य के शत्रु हैं - गलत एवं अशिष्ट कर आदतें उनसे उत्पन्न रोग उसी प्रकार समाज के स्वास्थ्य के शत्रु हैं । समाज में उत्पन्न एवं पनप रहीं कुरीतियां, गलत रीति-रिवाज यथा बाल विवाह वृद्ध विवाह, दहेज प्रथा, वेश्या वृत्ति, होली के पर्व पर अशिष्ट व्यवहार, विवाहों के अवसर पर गन्दे गीत सिनेमा की बढ़ती प्रवृत्ति, पाश्चात्य सभ्यता की अंधानुकरण नकल, शिक्षा का बिगड़ता स्वरूप तथा कथित शिक्षित वर्ग में भारतीय संस्कृति के प्रति उपेक्षा भाव, देवी-देवताओं के प्रति भाव का अभाव तथा धर्म भावना के प्रति अनास्था एवं विरोध अथवा अनीश्वर वाद, समाज में बढ़ती स्वार्थ भावना तथा चोरी की प्रवृत्ति है।

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार ने जब वे मात्र 20 वर्ष के थे मारवाड़ी सहायक समिति के माध्यम से संवत् 1969 (सन् 1914) में वर्दवान की प्रलयंकारी बाढ़ में सहायता पहुँचाई थी । समिति एक होम्योपैथिक, आयुर्वैदिक, औषधालय भी चलाती थी । शिमलापाल में श्री हनुमान प्रसाद होम्योपैथिक दवा बाँट कर रोगियों की सेवा करते थे । बम्बई में अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की स्थापना की गई थी । उसके माध्यम से समाज सुधार के कई प्रकार के कार्य इन्होंने किये थे । गुण्डों द्वारा प्रवंचित स्त्रियों के उद्धार का काम इन्हीं दिनों किया गया । उन दिनों होली के त्यौहार पर हुल्लड़बाजी होती थी । यह स्वयं ही इस हुल्लड़बाजी तथा अशिष्ट व्यवहार के शिकार हुये थे । इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप इन्होंने होली के वीभत्स रूप के स्थान पर नगर संकीर्तन तथा शिष्ट गीतों का प्रचार करने का निश्चय किया था । पहले तो परम्परा वादी लोगों ने (जैसा कि स्वभावतः होता है) विरोध किया, किन्तु साथियों के साथ घर-घर जाकर अशिष्टता से होने वाली हानियों को समझाने पर विरोध

त्याग कर शिक्षा आयोजनों में सम्मिलित होने लगे थे, कुछ वर्षों के लगातार प्रयास से इस योजना में सफलता मिली थी तथा श्री पोद्दार जी ने बम्बई हिन्दू समाज सुधारक नेता के रूप में प्रसिद्धि भी पाई थी। विवाह में गन्दे गीतों के स्थान पर गाये जाने योग्य मारवाड़ी भाषा में गीतों की रचना पोद्दार जी ने की थी जिसका उपयोग उनकी बहिन चन्दाबाई के विवाह के समय किया गया। यह गीत बहुत पसंद किये गये। इससे पूर्व से चले आ रहे अश्लील गीतों के स्थान पर सदाचार एवं ईश्वर की भक्ति से पूर्ण गीतों का प्रचलन हुआ इन गीतों को "मारवाड़ी धार्मिक गीत" नामक पुस्तिका के रूप में गीताप्रेस गोरखपुर ने सन् 1935ई0 में प्रकाशित भी किया था। गीतों में से कुछ शिक्षाप्रद पंक्तियाँ इस प्रकार से थीं —

"डरपो मत, प्रभु जी को ध्यान धरो, डरपो मत।
पाप कर्म से दूर रहो, पुन्य कर्म में चित्त ल्यावो।।
परमेश्वर को रूप समझ कर, पति की सेवा खूब करो।
तन-मन-धन सब अर्पण करद्यो, पति की सेवा के खातिर।।
एक मात्र पति की सेवा से, भवसागर से तिर ज्यावो।
पर पुरुषाँ ने उमर देखकर, पिता पुत्र भाई समझो।।
पर पुरुषाँ की प्रीति सेवी, नरक भोग दुख ही भारी।
जो नारी निष्काम भाव से, पति सेवा में मन ल्यावै।।
उनके दुख नहिं व्यापै, फिर सुहाग सुख भोग करै।

— मारवाड़ी धार्मिक गीत से

खादी पहनने का व्रत पोद्दार जी ने सन् 196 में लिया था। सं0 1979 (सन् 1922ई0 में) अपनी छोटी बहिन चंदाबाई के विवाह में सब कपड़े खादी के ही काम में लाये गये थे। परम्परागत चुनरी के स्थान पर पीले रंग में रंग कर खादी के वस्त्र को ही प्रयोग किया गया था। पोद्दार जी ने बम्बई में रह कर गुप्त रूप से अनाथों, निर्धन विद्यार्थियों,

विधवाओं तथा रोगियों की सेवा तन-मन-धन से करते रहते थे। आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी फिर भी अपने आवश्यक कार्यों को रोककर या उनमें कटौती करके भी दीन-दुखियों की सेवा करते थे। गोरखपुर आने के बाद इनका सेवा क्षेत्र बढ़ता ही गया था। वर्तमान शिक्षित नवयुवकों के आचरणों, विलासी, अनीति अकर्मण्य और धर्मशून्य जीवन को देखकर वे बहुत मर्माहत हुए थे। उन्होंने शिक्षा का यथार्थ उद्देश्य वर्तमान शिक्षा, सह-शिक्षा के दुष्परिणामों पाठ्य पुस्तकों में शृंगार, गन्दे नाटकों एवं उपन्यासों की भरमार, यौन साहित्य के प्रचार, विलासिता पूर्ण रहन-सहन, पाश्चात्य पद्धति के विद्यालय और होस्टल एवं परस्पर गन्दे पत्र व्यवहार की कुचालों एवं भड़कीले चित्रपटों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुये इनसे नवयुवकों एवं युवतियों को बचाने हेतु आग्रह "वर्तमान शिक्षा "नामक पुस्तक" (सन् 1936ई0) गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित की थी।

4-4 सिनेमा का कितना दुष्प्रभाव नवयुवकों पर पड़ता है इस सम्बन्ध में पोद्दार जी के पास विद्यार्थियों को, नवयुवकों के पत्र आया करते थे। एक कालेज के विद्यार्थी का 13½ पृष्ठ का लम्बा पत्र आया था जिसमें लिखा था "मैं कालेज का एक नवयुवक विद्यार्थी हूँ — मेरे पिता जी गरीब हैं लेकिन मैं इकलौता लड़का हूँ इसलिये वे मुझे कालेज में पढ़ाते हैं। xx मैं सिनेमा का एक जबरदस्त शौकीन हूँ xxx जब पैसा नहीं होता तब किताबें बेच कर क्षणिक सुख (सिनेमा दर्शन) प्राप्त करता हूँ xxx माता पिता को भुलाकर फिर किताबें खरीदता हूँ। आजतक करीब 300 सिनेमा मैंने देखे हैं xxx मेरे शरीर और मन का घोर पतन हो चुका है। मैं पड़ोसी बहिन को बहिन और माता जी की बहिन को मौसी कहने लायक नहीं हूँ।xxx मेरी पढ़ाई खतम हो गई है। मैं सिनेमा की बलि होता जा रहा हूँ।"

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार ने "सिनेमा-मनोरंजन या विनाश का साधन"

4.22

नामक पुस्तिका विक्रम संवत् 2010 [1953ई0] में प्रकाशित की थी । इसमें उन्होंने नागपुर के "युगधर्म" पत्रिका में छपे लेख का अंश उद्धृत किया है । "जो लोग यह समझते हैं कि सिनेमा केवल मनोरंजन की एक वस्तु एवं तरोताजगी का एक साधन मात्र है, वे मेरी दृष्टि में कुछ हद तक भूल करते हैं जिसका प्रभाव हमारे देश के बालकों एवं तरुणों पर पूर्णरूपेण पड़ रहा है उसे मनोरंजन की वस्तु दिल बहलाने का साधन तथा रिफ्रेशमेंट कहना बुद्धिमानी का लक्षण नहीं है, जब कोई क्रिया जीवन पर अधिक प्रभाव डालने वाली हो जाती है तब वह मनोरंजन न होकर संस्कार बन जाती है ।xxx प्रत्येक चित्र में रोमांस और शृंगारिक भावों को गुदगुदाने वाली उद्दाम वासना को प्रदीप्त करने वाली सामग्री भरपूर रहती है जिसका स्पष्ट परिणाम दर्शकों के मन पर पड़ता है । वे इसे मनोरंजन समझकर लाभ नहीं लेते । इसे मनोरंजन कहना स्वतः को धोखा देना है।"

सिनेमा का असर हमारे दैनिक जीवन पर भी बुरी तरह पड़ रहा है । हमारे कपड़े-लत्ते और हमारी घर की पोशाक में हमारे नवयुवक और नवयुवतियाँ सिनेमा के नट-नटियों को आदर्श मानने लगी हैं । xxx जिन कपड़ों को सुरुचि पूर्ण महिलायें भी आज पहनते लज्जा का अनुभव करती हैं, उन्हें धारण कर हमारे युवक गर्व से सीनातान कर निकलते हैं यह सिनेमा की ही देन है । "पोद्दार जी ने लेख में नीचे लिखे शब्दों में अनुरोध किया है —"अन्त में हमारी अपने पाठक-पाठिकाओं से यह विनीत प्रार्थना है कि वे मनोरंजन के प्रलोभन में पड़कर सिनेमा न देखें, कैसी भी फिल्म क्यों न हो, सभी में दोष उत्पन्न होने का डर है । बहुत सोच विचार करने बाद ही यह प्रार्थना की गई है कि लोक-परलोक में कल्याण चाहने वाले नर-नारियों को सिनेमा बिल्कुल नहीं देखना चाहिये, न अपने बच्चों को दिखाना चाहिये और न उनमें देखने की शौक पैदा करनी चाहिये । कम से कम परमार्थ के मार्ग में तो यह बहुत बड़ा विघ्न है । xxx यह ठीक है कि हमारे इसके लिखने से न तो सिनेमा संसार पर कोई खास असर होगा, न सरकार के ही कान पर जूँ रेंगेगी तथा न इसको "मनोरंजन" मानने वाले

4.23

शौकीन नर-नारी ही अपना मत बदलेंगे, तथापि हमारे पाठक-पाठिकाओं को "कल्याण" परिवार के सदस्य मानकर हम उनसे बार-बार इतनी प्रार्थना तो अवश्य करेंगे कि वे जहाँ तक बने "सिनेमा" देखना बिल्कुल छोड़ दें। हमें आशा है कि बहुत से पाठक-पाठिका हमारी प्रार्थना पर ध्यान भी देंगे।"

निश्चित रूप से इसका अनुकूल प्रभाव कल्याण के पाठकों पर पड़ा। क्योंकि उनका यह अनुरोध आचरण पर आधारित था। "कल्याण" का सम्पादकीय विभाग एवं गीताप्रेस के कर्मचारी वर्ग पर इस नीति का व्यापक प्रभाव पड़ा था।

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी की इच्छा थी कि कल्याण द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का पालन सबसे पहले अपने ही घर कल्याण परिवार में हो और कल्याण जैसे आध्यात्मिक पत्र के सम्पादन से सम्बद्ध लोग पूर्णरूप से आध्यात्मिक जीवन बितावें तथा उनके सम्पर्क में आने वाले लोग भी अपना जीवन साधनामय बनावें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने वैशाख शुक्ल 4, 1986 में एक साधन समिति की स्थापना की थी। इसके सदस्य सदाचारपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। यह समिति 4 वर्षों तक चली इसके बाद यह समिति भंग कर दी गई किन्तु पुनः पूर्व सदस्यों के अनुरोध पर कुछ परिवर्तन-परिवर्द्धन के साथ 16 नियम निर्धारित किये गये। इसके साथ 9 उपनियम भी रखे गये।

इसके पश्चात् साधक संघ के सदस्यों के लिये "साधक दैनन्दिनी" प्रकाशित की जाने लगी। जिसमें 12 ग्रहण करने के लिये तथा 16 त्याग के नियम अंकित किये गये। एक पृष्ठ में 1 से 15 तारीख के नियमपालन के चिन्ह लगाने के लिये खाने रखे गये हैं दूसरे पृष्ठ में 16 से 31 तारीख तक के प्रत्येक दिन के लिये खाने रखे गये हैं। ग्रहण के नियम हैं ये —
(1) सबमें भगवद्बुद्धि (2) भगवद्स्मरण (3) सूर्योदय पूर्व जागरण (4) प्रातः स्मरण और प्रणाम (5) गुरुजन अभिवादन (6) संध्या-गायत्री सेवन

{7} गीता एवं रामायण का अध्ययन {8} संतजन-स्वाध्याय {9} भगवन्नाम जप {10} संध्या वन्दन {11} पवित्र वस्त्र धारण {12} नियम पालन निरीक्षण {13}

<u>त्याग के 16 नियम हैं</u> :-

{1} पराये अहित का त्याग {2} असत्य का त्याग {3} परस्वापहरण का त्याग {4} पर स्त्री-परपुरुष का स्पर्श त्याग {5} क्रोध का त्याग {6} परापवाद का त्याग {7} मिथ्या साक्ष्य का त्याग {8} अश्लील विनोद का त्याग {9} वर्ज सेवन का त्याग {10} मादक वस्तु का त्याग {11} समय नष्ट करने की प्रवृत्ति का त्याग {12} वेश्यानृत्य का त्याग {13} चित्रपट दर्शन त्याग {14} धूम्र त्याग {15} अभक्ष्य-खान-पान का त्याग {16} हिंसायुक्त वस्तुओं का त्याग {चमड़े के जूते, चर्बी युक्त साबुन, लाख की चूड़ियाँ}

प्रत्येक भूल के लिये एक समय का उपवास अथवा भगवान के किसी नाम का 1000 जप अथवा "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे " इस षोडशाक्षर मंत्र की एक माला जप प्रायश्चित स्वरूप करने का प्राविधान कर दिया गया है। गीताप्रेस में कर्मचारी कार्य प्रारम्भ के पूर्व एक प्रार्थना करते थे अब भी करते हैं। 12 पंक्तियों की यह प्रार्थना पोद्दार जी ने बम्बई के आवास काल में लिखी थी तथा "पद कुंज" में प्रकाशित हुई थी। —

"कर प्रणाम तेरे चरणों में लगता हूँ अब तेरे काज।
पालन करने को आज्ञा तब मैं नियुक्त होता हूँ आज ॥
अन्तर में स्थित रहकर मेरे, बागडोर पकड़े रहना।
निपट-निरंकुश चंचल मन को, सावधान करते रहना ॥

× × × × × ×

सम्पादकीय विभाग के कर्मचारी वर्ग की दिन चर्या क्रम 6 बजे प्रातःकाल

4.25

से प्रारम्भ होता था उस समय सभी लोग स्नान ध्यान से निवृत्त होकर सामूहिक कीर्तन के लिए एकत्र हो जाते थे, ढोलक करताल, झांझ आदि के साथ 7 बजे तक कीर्तन होता था कीर्तन के बाद पं० चिम्मनलाल गोस्वामी एक पद मधुर स्वर में सुनाते थे उसके पश्चात् पोद्दार जी का प्रवचन होता था । उसके बाद भोजन करके साढ़े दस बजे तक एक बड़े आम के वृक्ष के नीचे चटाई बिछाकर काम प्रारम्भ कर देते थे । सभी कार्यकर्ता अक्रोध, सत्यभाषण, सर्वत्र भगवद् भाव तथा प्रतिक्षण घंटे पर भगवान का स्मरण तथा स्मरण आने पर उसे देर तक स्थिर रखने का प्रयास इन प्रमुख नियमों का स्वेच्छा से पालन करते थे । अपने अनुभव डायरी में लिखा करते थे । पोद्दार जी ने इस प्रकार अपने निकटवर्ती लोगों का जीवन साधनामय तथा आध्यात्मिक बनाया तथा अपने सम्पर्क वालों को त्यागमय जीवन बनाने की प्रेरणा दी । वे लोक जीवन को भगवान् की प्रत्यक्ष लीलाकृति मानते हुये उसके सद् स्वरूप की रक्षा, पोषण एवं विकास में सर्वत्र एवं सर्वदा यथाशक्ति सहयोग देने को तत्पर रहते थे । वे समाज सेवा को भगवत्सेवा ही मानते थे । इस दृष्टिकोण से वह ऐसे मानव समाज के निर्माण के इच्छुक थे जिसमें सर्वत्र नैतिकता के साथ सबके हित एवं कल्याण हेतु सभी घटक प्रयत्नशील हों । इसीलिए जब और जहाँ भी समाज में पतन अथवा विघटनकारी प्रवृत्तियों की जानकारी हुई उन्होंने उसको दूर करने में दूसरों को सहयोग देने एवं दूसरों से सहयोग लेने का प्रयास किया ।

उन्होंने समाज में फैल रहे भ्रष्टाचार की ओर पाठक-पाठिकाओं का ध्यान आकर्षित करते हुये "आज का भ्रष्टाचार और बचने का उपाय" शीर्षक से लेख लिखकर कल्याण में प्रकाशित किया । "तमाखू से हानि" "नैतिक पतन और उससे बचने के उपाय" पर लेख लिखे । "दहेज" प्रथा का विरोध करते हुये समाज के लोगों से नीचे लिखे शब्दों में अपील प्रकाशित की —
"मैं ईश्वर और मानवता के नाम पर देश के लोगों से, युवकों से और

उनके अभिभावकों से अपील करता हूँ कि वे दहेज न लेने की प्रतिज्ञा करें और अपने को तथा समाज को इस बढ़ते हुए पाप और दुःख से बचावें ।"

कल्याण का 20 वें वर्ष का विशेषांक "गो अंक" के नाम से निकालकर धार्मिक तथा सांप्रदायिक आग्रह से ऊपर उठकर अत्यन्त ही संतुलित एवं वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत करके गोरक्षा का समर्थन किया गया । साथ ही गौ का विभिन्न धर्मों एवं संप्रदायों के अन्तर्गत स्थान, गोपालन की महिमा और गो दुग्ध की वृद्धि के उपाय, आयुर्वैदिक चिकित्सा के अन्तर्गत गोदुग्ध, गोबर और गोमूत्र की उपयोगिता प्रतिपादित की गई थी। प्रत्येक सद्गृहस्थ से गोपालन की अपेक्षा की गई थी तथा हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में गोपालन, गो वंश संवर्द्धन एवं गोवंश की रक्षा में सहयोग दे सकता है । वैज्ञानिक तथ्यों एवं दूसरे देशों में गौ की संख्या, गो दुग्ध के प्रयोग का विवरण देकर गोवंश संवर्द्धन, देश एवं समाज की तात्कालिक आवश्यकता बताई गई थी इससे लोग प्रभावित हुये ।

पाश्चात्य सभ्यता और वर्तमान शिक्षा का गहरा प्रभाव भारत के युवा वर्ग एवं नारी समाज में पड़ा है । नारी जो भारतीय संस्कृति में लज्जा, श्रद्धा की मूर्ति मानी जाती थी अपने प्राचीन एवं पवित्र स्वरूप को त्याग कर पाश्चात्य सभ्यता के रंग में ओत-प्रोत होती जा रही थी । समाज के एक बड़े भाग के ऊपर इस प्रकार के बढ़ते प्रभाव से पोद्दार जी चिन्तित हुये और उन्होंने कल्याण, के 22 वें वर्ष का विशेषांक "नारी अंक" (जनवरी 1948 में) निकालकर प्रबुद्ध वर्ग को सावधान किया तथा भारतीय दृष्टिकोण से नारी की महत्ता, धर्म, कर्तव्य तथा प्राचीन एवं वर्तमान समाज में उसकी स्थिति और उसमें अपेक्षित सुधार तथा जीवन में उतारने योग्य बिन्दु देते हुये वीरांगना, पतिव्रता, सती साध्वी, भक्तिमती, महिलाओं के तीन सौ से अधिक चरित्र दिये गए हैं । उसमें नारी जीवन से सम्बद्ध विविध

[illegible] समस्याओं तथा कार्यों का मार्मिक विवेचन किया गया है । पाश्चात्य सभ्यता से आक्रान्त वर्तमान नारी [समान नारी] समाज की मानसिकता को बदलने की आवश्यकता तथा भारतीय संस्कृति के परम्परागत आदर्शों की रक्षा एवं प्रचार-प्रसार हेतु रचनात्मक सुझाव दिए गये हैं । "भारतीय घरों से लुप्त होती हुई गृह-लक्ष्मियाँ आज की सबसे बड़ी आवश्यकता' इसी सन्दर्भ के लेख हैं । पोद्दार जी ने "नारी शिक्षा" और "स्त्रीधर्म प्रश्नोत्तरी" नाम की पुस्तकें अलग से लिखकर प्रकाशित करके नारी धर्म को भारतीय संस्कृति में वर्णित आदर्शों को जीवन में उतारने की प्रेरणाप्रद शिक्षा दी है ।

'हिन्दू-संस्कृति-अंक' के रूप में कल्याण के 24वें वर्ष का विशेषांक जनवरी 1950 में निकालकर उन्होंने संस्कृति किसे कहते हैं? हिन्दू-संस्कृति के मूलतत्व, उसकी वैशिष्ट्यता, मान्यताओं में हिन्दू-संस्कृति, हिन्दू-संस्कृति की अन्य धर्मों पर प्रभाव, वर्णाश्रम धर्म की वैज्ञानिकता, हमारी प्राचीन वैज्ञानिकता आदि विषयों में गवेषणात्मक तथ्य दिए गये हैं । भारतीय चित्रकला, भारतीय आयुर्वेद, भारतीय ज्योतिर्विज्ञान, हिन्दू स्थापत्यकला पर विवेचना की गई है इसके अतिरिक्त हिन्दू-संस्कृति के आधार पर निर्मित आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप, और वर्तमान व्यवस्था से बेहतर सिद्ध किया गया था । पोद्दार जी हिन्दू संस्कृति को मानव संस्कृति का पर्याय मानते थे । "मानव धर्म" पुस्तक लिखकर पोद्दार जी ने धर्म को सभी मतमतान्तरों से ऊपर उठकर मनुस्मृति में बताये गये धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध धर्म के दस लक्षणों का विवरण किया था । कल्याण के 33वें वर्ष [1959 जनवरी] में 'मानवता-अंक' प्रकाशित किया था इस अंक के अन्त [पृष्ठ 703 में] "क्षमा प्रार्थना" में पोद्दार जी ने लिखा था —

"हम मानव हैं । मानवता हमारी सम्पत्ति है, हमारी स्थिति है और वस्तुतः हमारा स्वरूप है । पर आज वही मानवता हमसे छीनी जा रही है और हम असहाय होकर सर्वस्व लूट को देख रहे हैं । मानवता के

संरक्षक है-एक मात्र भगवान। वे ही मानवता के परम और चरम लक्ष्य हैं। उसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जीव को मानव बनने का सौभाग्य दिया गया है। इन्द्रियों के भोग तो सभी शरीरों में है, परन्तु उन भगवान् को भुलाकर उपभोक्ता का भार भोग को दे दिया है और उसी को जीवन का साध्य और साधन बना लिया है। इसी से आज "त्याग" और "कर्तव्य" का स्थान अर्थ और अधिकार ने ले लिया और इसी से आज असुर को अवसर मिल गया हमारी मानवता को छीनने, लूटने और मारने का। इसी बुरी स्थिति से निकलने का एक मात्र उपाय है भगवान को फिर से मानवता का संरक्षक और लक्ष्य बनाना, फिर से समस्त भूतों में भगवान के दर्शन करके अपने प्रत्येक कर्म के द्वारा उनकी पूजा करना। इसी उद्देश्य से "कल्याण का यह मानवता अंक" प्रकाशित किया जा रहा है।"

बालक राष्ट्र की निधि तथा उसके भविष्य के निर्माता एवं रक्षक हैं। उनके समुचित लालन-पोषण तथा शिक्षा-दीक्षा पर ही देश का सर्वांगीण विकास संभव होगा इसी दृष्टिकोण से कल्याण के 27वें वर्ष में (जनवरी 1953 में) कल्याण का विशेषांक "बालक-अंक" के रूप में निकाला गया। जिसमें बालक के विकास में माता-पिता, गुरुजन, समाज तथा राष्ट्र का दायित्व कितना है इसका विस्तार से वर्णन करने के साथ ही साथ बालिकाओं और किशोरों के जीवन को सात्विक एवं निर्दोष बनाने तथा उसे आदर्श रूप में ऊपर उठाने वाले रचनात्मक साधन बताये गये हैं। भक्त, कर्मयोगी, दयालु, माता-पिता के भक्त, गुरुभक्त, वीर, ईश्वर विश्वासी, मेधावी, धर्म पर बलिदान होने वाले गुणवान् बालकों के चरित्र दिए गये हैं। विज्ञान और औद्योगिक विकास के साथ आधुनिक युग में बालकों में ईश्वर के प्रति आस्थाहीनता, उच्छृंखलता तथा नैतिकता का उत्तरोत्तर ह्रास देखकर उनके जीवन में भारतीय आदर्शों के अनुकूल सात्विकता, आस्तिकता, कर्तव्य निष्ठा, सेवा परायणता आदि गुणों को विकसित

कहानियों के माध्यम से पुनर्लिखित किया गया था ।

"बालकों की दैनिक प्रार्थना" तथा "बालक का मनोरथ" नाम से दो पद पोद्दार जी ने रचे थे जो पद रत्नाकर में पद संख्या 1493 व 1494 के रूप में छपे हैं ।

कल्याण के प्रथम अंक में सम्पादकीय निवेदन में पोद्दार जी ने लिखा था कि— " सम्पादक का विचार है कि इस "कल्याण" के द्वारा यथासंभव उन प्रातः स्मरणीय ऋषि-मुनियों और महापुरुषों की दिव्य-वाणी का ही प्रचार किया जाये जो अपने अलौकिक तेज से पथभ्रष्ट पथिकों को कल्याण के सुन्दर मार्ग पर लाने में समर्थ हैं । स्वलिखित लेखों में भी यथासाध्य महापुरुषों के वचनों को ही आधार बनाने का विचार है ।"

कल्याण पत्र को पोद्दार जी ने अपनी निश्छल प्रकृति, निस्पृहता दैन्य, अहंकार शून्यता, परोपकार, भावना एवं सर्वत्र समदर्शन की भावना तथा सम्प्रदायवादी विचारधारा के आधार पर 44 वर्ष तक प्रकाशित करके पत्र को देश और देश के बाहर धर्म प्रेमी पुरुषों के हाथों में पहुँचाकर हिन्दी हिन्दू-संस्कृति की अभूतपूर्व सेवा की है । विशेषांक अपने विषय में विश्व-कोष माने जाते हैं । उन्होंने सर्वदा यह प्रयास किया है कि एक भी त्रुटि छपने में न रह जाये इसके लिए उन्हें स्वयं भी कठोर परिश्रम करना पड़ता था । संदर्भों को अच्छी प्रकार से मूलग्रन्थ से मिलाकर देख लिया जाता था। कल्याण में छपी विषय-वस्तु को प्रामाणिक माना जाता रहा है । पोद्दार जी आदर्श सम्पादक, आदर्श प्रेरक एवं उपदेशक रहे हैं । उपदेश उन्होंने अपने स्वयं के जीवन में, आचरण में, उतार कर दिया है । केवल वाणी से उपदेश देना उनके लिये श्रेय नहीं था । साधक संघ के सदस्यों को प्रेरणा देने का काम उनके तथा श्री गोयन्दका जी के ऊपर था । उन्होंने कुछ सदस्यों के नियमों का उल्लंघन करने पर साधन समिति को भंग करा दिया था ।

चार माह बाद साधकों के अनुरोध पर दूसरी साधक समिति बनी थी । ऐसा था उनका आचरण-परक जीवन दर्शन ।

उनकी उत्कट इच्छा गंगा तट में रह कर भगवद् भजन करने की थी । बम्बई से इसी आकांक्षा के कारण गोरखपुर आये थे । गोरखपुर से भी उन्होंने गंगा तट जाकर भजन करने के लिए अपने निर्देशक, गुरु श्री जयदयाल जी गोयन्दका से अनुमति मांगी थी, अनुमति न मिलने से वह गोरखपुर में ही रह गये । वह जीवन पर्यन्त गृहस्थ रहे और सच्चे अर्थों में एक सद्गृहस्थ का जीवन यापन किया । वे भारतीय संस्कृति के पुजारी थे । जीवन के हर क्षेत्र में उसका पालन करते थे और दूसरों से भी पालन करने का आग्रह किया करते थे । उनका प्रथम विवाह महादेवी जी से हुआ था । वाक्-दान के बाद महादेवी को भीषण चेचक निकली जिससे उनका चेहरा कुरूप हो गया था किन्तु इन्होंने अपने स्नेह, व्यवहार में किसी प्रकार की कमी नहीं आने दी । पत्नी की मृत्यु पर बहुत दुखी एवं उदास रहते थे । दूसरा विवाह तथा दूसरी पत्नी की मृत्यु पर तीसरा विवाह करने में अपनी दादी रामकौर देवी की आज्ञा का पालन किया । पत्नी रामदेई जी उनको भगवान का स्वरूप ही मानती थी । इन्हीं की कृपा से रामदेई जी को भी विष्णु भगवान के दर्शन हुये । इनकी अन्तिम संतान सावित्री देवी फोगला है जिनका लालन-पालन हिन्दू-संस्कृति के आधीन किया गया, उसे संस्कारवान् बनाने में कोई कसर नहीं रखी गई । पुत्र न होने पर उन्होंने कभी खेद प्रकट नहीं किया । पुत्र व पुत्री समान हैं ऐसी भावना रखी । पुत्री के पुत्रों, पुत्रियों को [illegible] व पालन-पोषण, शिक्षा-दीक्षा में भी भारतीय संस्कृति के आदर्शों का ध्यान रखा गया । संध्या, भजन, श्राद्ध, हर तर्पण विधिवत् करते कराते थे । वर्णाश्रम धर्म को मान्यता देते थे । सद्गृहस्थ के सभी कर्तव्यों का यथोचित पालन करना तथा परिवारीजनों से पालन कराना अपना धर्म कर्तव्य समझते थे । "गृहस्थों के साधारण नियम" लेख में उन्होंने 21 बातें लिखी थी ।

"पंच महायज्ञ" लेख में मनुस्मृति के तीसरे अध्याय में वर्णित पंच महायज्ञों का जो संक्षिप्त विवरण तथा उनको करने का ढंग समझाया है ।-

> "अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
> होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् ॥
> पंचैतान्यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः ।
> स गृहेऽपि वसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते ॥
>
> (मनु03/70-71)

अध्यापन (स्वाध्याय) ब्रह्मयज्ञ या ऋषियज्ञ है, तर्पण पितृयज्ञ है, होम देवयज्ञ है, बलि भूतयज्ञ है और अतिथि सत्कार मनुष्य यज्ञ है । जो पुरुष अपनी शक्ति के अनुसार इन पाँच महायज्ञों को करता है, वह गृहस्थाश्रम में रहने पर भी नित्य हिंसा के पाप से लिप्त नहीं होता है।

4.5 पोद्दार जी ने इस प्रकार की नाना बातें (मानने की और छोड़ने की) लिखकर गृहस्थों के कर्तव्यों का विशद वर्णन किया है । वे आदर्श गृहस्थ के रूप में माने भी जाते रहे हैं । स्वाध्याय के आधार ही वे बिना किसी विद्यालय में शिक्षा पाये इतने धुरन्धर विद्वान हुए थे । स्वाध्याय उनके दैनिक कार्यों में प्रमुख कार्य था। बलिवैश्वदेव का वे पालन करते थे, अतिथि सत्कार भी वे बड़ी प्रसन्नतापूर्वक अमानी रूप में करते थे । कोई भी उनके पास से निराश नहीं लौटता था । दान भी वे गुप्त रूप से प्रतिदिन करते थे । त्यागवृत्ति ऐसी थी कि उन्होंने गोरखपुर के जीवन में गीताप्रेस से किसी पुस्तक के लेखन अथवा सम्पादक कार्य हेतु आर्थिक सम्बन्ध नहीं रखा । सत्य का पालन वे स्वयं करते थे तथा अपने सम्पर्क में आने वाले साधक परिकर सभी से कराने का नम्रतापूर्वक आग्रह करते थे। अहिंसा का पालन साधक दैनन्दिनी में किया था वह कभी भी चमड़े का जूता नहीं पहनते थे । दयाभाव एवं क्षमाभाव, अक्रोध, अद्रोह उनके जीवन में पूरी तरह प्रतिष्ठित थे । सर्वत्र भगवान का दर्शन करना उनकी सहजवृत्ति बन चुकी थी । साधक के प्रत्येक सदस्य को इसका अभ्यास करना होता था।

कल्याण सम्पादक मण्डल के लिये भी यह नियम अनिवार्य था । जब सब जगह भगवान ही है उन्हीं का कार्य वे करते थे तब किसी के प्रति द्रोह करना उनके प्रति क्रोध करना संभव ही नहीं था किसी की भी बुराई न करने का नियम न उनके आचरण में था । बल्कि कल्याण सम्पादन के नीति-निर्देशों में था । चपलता, लोलुपता उनके पास नहीं फटकती थी । इस प्रकार गीता के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 में गिनाये गये दैवीसम्पद के सभी गुण उनमें विद्यमान थे । इस प्रकार वे दैवीसम्पद युक्त मानव थे ।

वे भक्तों के भी आदर्श थे । सेवाभावी तथा आदर्श कवि थे । पद रत्नाकर में संकलित 1557 पद उनको महात्मा तुलसीदास, महात्मा सूरदास और अष्टछाप के भक्त कवियों के समकक्ष बना देते है ।

प्रकरण-5

श्री पोद्दार जी का साधक व्यक्तित्व

5.1 -पाठ

5.2 -ध्यान

5.3 -संवेदन

5.4 -साधना हेतु गुरु की प्राप्ति

5.5 -ध्यान साधना शुरू

5.6 -साधन की क्रियाशीलता

5.7 -साधन बाधा

श्री पोद्दार जी: साधक व्यक्तित्व

5-0 श्री पोद्दार जी का मूल व्यक्तित्व एक साधक का था जो मानव से भक्त और भक्त से संत व्यक्तित्व तक के विकास की भूमिका बना था । साधक और साधना दो साधारणतया समानार्थी समझे जाने वाले शब्द हैं किन्तु क्रियात्मक रूप में साधन का प्रतिफल साधना होता है । साधन के अन्तर्गत आराध्य के लिए पूजा पाठ जप आदि किए आते हैं जिससे प्रेमजागृत होता है तथा साधना का लक्ष्य ध्यान, स्मरण तथा तद्गत के क्रम में प्रतिफलित होता है ।

श्री पोद्दार जी के साधक व्यक्तित्व का विकास साधन और साधना के सोपानों में क्रमशः हुआ तथा यह विकास ही उनके मानव, भक्त एवं संत व्यक्तित्व का प्रतिपादक सिद्ध हुआ ।

साधक व्यक्तित्व का बीजारोपण – अल्पायु में ही हुआ जब 8 वर्ष की आयु में निम्बार्क पीठ के आचार्य बाबा श्री मेहरदास के प्रशिष्य बाबा श्री व्रजदास जी से सं0 1957 में वैष्णवी दीक्षा प्राप्त की । राधातत्व इस संप्रदाय की विशेषता है । इस प्रकार अन्यथा राधातत्व का ही बीजारोपण हुआ । क्रियात्मक दीक्षा के अन्तर्गत 'हनुमत्कवच', "हनुमान चालीसा" का नित्य पाठ दिनचर्या का अनिवार्य अंग बन गया ।[1] दादी से अन्य देवताओं की स्तुतियाँ भी सीख ली तथा

---

[1] भाई जी पावन स्मरण पृ0 – 414.

5.1

सूर्य, गणपति, देवी तथा शिव स्तोत्रों का नियम से पाठ करने लगे । यह प्रथम चरण था उनके साधन का । द्वितीय चरण के अंतर्गत अलीपुर जेल डेटिन्यू की दिनचर्या आती है । यह सं0 1973 की बात थी जब उनकी आयु २४वर्ष की थी पोद्दार जी इस संबंध में स्वयं लिखते हैं —

"ऐसे तो पहले भी सप्तशती के पाठ[नवरात्र में]तथा नित्य प्रति शिव महिम स्तोत्र, हनुमानकवच, सूर्यकवच, तथा गोपाल सहस्रनाम आदि के पाठ-जप आदि बहुत करता था, किन्तु वास्तविक जप [षोडशाक्षर नाम मंत्र] यहीं से शुरू हुआ ।[1].....यहीं नाम महात्म्य का परिचय मिला जो आजीवन उनका सहचर रहा ।

यहीं से तृतीय चरण के अन्तर्गत साधना का क्षेत्र "ध्यान एवं स्मरण" प्रारम्भ हुआ । नाम निष्ठा के अनेक चमत्कारों जैसे, ज्वर से मुक्ति, बीमार दादी व बीमार बुआ जी से मिलने की इच्छा की पूर्ति हेतु पैरोल पर जेल से अवकाश स्वीकृतियाँ, से आराध्य के ध्यान और स्मरण का उपक्रम संभव हुआ तथा ध्यान की प्रगाढ़ता में भगवान् के दर्शन होने लगे ।

द्वितीय, तथा तृतीय चरण में मानव सेवा के रूप में साक्षात् भगवत् सेवा का प्रारम्भ हुआ एवं उत्सुकता जागृति हुई ।

उनकी दैनिकचर्या का रूप निम्न लिखित रूप में साधन एवं साधना का सम्मिलित एवं समन्वित कार्यक्रम बना —

साधन
- प्रातः ५ बजे उठते ही - षोडशाक्षर मंत्र की 30 माला का जाप
- स्नानादि के पश्चात्

[1] भाई जी पावन स्मरण पृ0 - 434.

संध्या वंदन, गीता व विष्णुसहस्त्रनाम का पाठ ।

हर समय नाम जप का क्रम अखण्ड बना रहे, यह प्रयत्न ।

साधना – ध्यान – तीन बार प्रातः, अपराह्न, रात्रि – सब मिलाकर 8 घण्टे

क्रियात्मक – रोगियों की सेवा ।[1]

साधन और साधना के अन्तर्गत अन्य क्रियाओं का समायोजन एक महत्वपूर्ण शंका समाधान कहा जायेगा । तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों में देश सेवा प्रधान एवं प्रमुख कर्तव्य था । उससे पृथक साधन एवं साधना को मानना समाधान-अपेक्षी शंका थी । श्री पोद्दार जी ने एक देशभक्त के पत्र के उत्तर में इस विषय पर स्पष्ट मत व्यक्त किया है ——

"मेरी समझ से जो मनुष्य केवल ईश्वर भजन करता है या करने की कोशिश करता है और सत्य के आधार पर जीविका का उपार्जन करता हुआ अपने गृहस्थ का पालन करता है, वह कम देश-सेवा नहीं करता । देश सेवा का अर्थ बैज लगाकर घूमना या व्याख्यान देना नहीं है । मनुष्य के समुदाय का नाम समाज है और समाज की समष्टि ही राष्ट्र या देश है । यदि एक भी मनुष्य भजन परायण और सत्यारूढ़ है तो उसका यह अर्थ है कि देश का एक अंग सुधर गया है ।"[2]

इसी अवधि में एक और महत्वपूर्ण घटना घटित हुई । श्री अरविन्द सक्रिय राजनीति में थे तथा उनसे देश सेवा के संदर्भ में बड़ी आशायें थीं । वह जेल से छूटने के बाद अन्तर्धान हो गए और योग साधनाओं में लग गये । इस प्रकार तीन श्रेणियों में व्यक्ति बंट गये ।

(1) मात्र देश सेवी–श्री जवाहरलाल नेहरू एवं अन्य नेता

(2) मात्र साधक – श्री पोद्दार जी, श्री अरविन्द

(3) देशसेवा और साधना दोनों का समन्वित रूप– महात्मा गांधी

---

(1) भाई जी – पृ०सं० पृ० – 440.

(2) लोक-परलोक का सुधार भाग-3-श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार, पृ०सं०71.

5.3

(किन्तु महात्मा गांधी के लिए भी साधना प्रमुख ही नहीं प्रत्युत देश-सेवा के क्रियात्मक पक्ष की नियंत्रक एवं नियामक थी।)

श्री पोद्दार जी ने ईश्वर भक्ति से भजन में लगे व्यक्ति को देश सेवक ही समझा है। ईश्वर भजन से व्यक्ति का सुधार होगा तथा इस प्रकार व्यक्ति से समष्टि का सुधार होगा और सुधार हुआ देश दास नहीं रह सकता।

श्री पोद्दार जी तथा श्री अरविन्द जी ध्यान की स्थिति में देश कल्याण की जो कामना करते थे, वह निश्चित रूप से उनके व्यक्तिगत देश-सेवा के प्रयास से कई गुनी शक्तिशाली और प्रभावशाली थी। उसका लाभ उन देशसेवी की महानुभावों कोमिलता था जो देश-सेवा में लगे थे तथा जिन्होंने देश सेवा को ही परम लक्ष्य मानकर आत्मोत्सर्ग की कामना कर रखी थी। इन लोगों को सुदृढ़ एवं सबल मनोबल साधकों की ईश्वर सेवा सेप्राप्त होता था, इसमें संशय नहीं है। अन्यथा प्रत्यक्ष रूप में ईश्वर भजन में लीन व्यक्तियों द्वारा क्रियात्मक साधना के अन्तर्गत मानव सेवा का आदर्श देश-सेवा ही है का संपादन था। साथ ही उनके लेखन एवं साहित्य रचना के धर्म, समाज-सुधार एवं राजनीति प्रमुख उपजातीय तो थे ही। श्री पोद्दार जी की साधन एवं साधना एक सुगम पृष्ठ था। साधन और साधनाशब्दों से रहस्य का संकेत भी वाममार्गी साधना के अन्तर्गत हुआ है किन्तु श्री पोद्दार जी की साधना में रहस्य जैसी कोई बात ही नहीं थी। उनकी साधना का विश्लेषण इस प्रकार कर सकते हैं।

5-1 <u>पाठ</u> – स्तोत्रों का पाठ।

<u>जप</u> – षोडशाक्षर मंत्र "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे...." का जाप।

एकादशी के दिन एकभुक्त व्रत करना।

5-2 <u>ध्यान</u> – श्री विष्णु भगवान के चित्र का ध्यान । चित्र को साक्षात् इष्ट देव समझना चाहिये ।

– इस चित्र की पूजा, फूल चुनकर लाना, माला बनाना तथा माला बनाकर पहनाना ।

– प्रत्येक वस्तु भगवान् को भोग लगाकर ग्रहण करना ।

– जल भी पीना तो पहले भगवान् को निवेदित करके ।

– (हम जिसका ध्यान करें, उसकी आकार की वृत्ति बन जाना ही ध्यान है । मैं आजकल भगवान विष्णु के उस चित्र का ध्यान नहीं करता, पर इस समय उसका स्मरण आते ही वह मूर्ति ज्यों की त्यों मेरे सामने आ जाती है ।)[1]

5-3 <u>संवेदन</u>-ध्यान अनुकूल या धनात्मक संवेदन का ध्यान – एक महिला को परामर्श[2] आप ऐसा विश्वास कीजिये कि –"भगवान् मेरी सुन रहे हैं, मेरा मनोरथ अवश्य सफल होगा मेरे पति देव निश्चय ही अच्छे होंगे और वे अच्छे होते जा रहे हैं । भगवान् की मुझ पर बड़ी कृपा है....."

एक भाई को परामर्श – "मन में बार-बार ऐसा निश्चय कीजिए कि मैं निरोग हूँ, मुझमें अमुक रोग बिल्कुल नहीं है। मैं स्वस्थ हूँ । कोई भी बुरे विचार और बुरी आदत मुझमें नहीं रह सकती क्योंकि सर्वशक्तिमान, नित्य निरामय भगवान ने मुझको अपना लिया है मैं उनका हो गया हूँ । उनके संरक्षण में हूँ । [3](अ) मानवमात्र को संवेदन-ध्यान का परामर्श इन शब्दों में दिया "तुम विश्वास करो, निश्चय करो कि तुम्हारे अन्दर अनन्त शक्ति है । मन इन्द्रियाँ–

---

(1) भाई जी पृ० सं० पृ० 441 तथा उसकी याद टिप्पणी पृ०

(2) लोक-परलोक सुधार भाग 3 श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृ०1085.

(3) (अ) लोक पर लोक का सुधार भाग-3-श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृ084.

सब तुम्हारे सेवक हैं, तुम्हारी अनुमति के बिना उनमें जरा भी हिलने डुलने की सामर्थ्य नहीं है । तुम्हारी ही दी हुई जीवनी-शक्ति से जीवित हैं और तुम्हारे ही बल पर सारी चेष्टायें करते हैं। तुमने भूल से अपने को उनका गुलाम मान लिया, तुम अपने स्वरूप को भूल गये, इसी से तुम्हारी यह दुर्दशा है । आत्मा के स्वरूप को संभालो, फिर तुम अपने को अपार शक्ति सम्पन्न पाओगे ।"[1][क]

<u>निरन्तर ध्यान</u> -

भगवान को प्राप्त करने की उत्कट लालसा होनी चाहिये निरन्तर ध्यान होना चाहिये । तभी भगवान की प्राप्ति हो सकती है । उनके लिये तो हृदय में ऐसा तीव्र ताप होना चाहिये कि जिसके कारण क्षणभर के लिये भी चैन न पड़े । ......दिन-रात उन्हीं का चिन्तन हो, उन्हीं का स्मरण हो और पल-पल में उनके उद्देश्य से सर्वस्व त्याग के लिए बड़े से बड़े बलिदान के लिये चित्त में मचलती उमंगें उठती रहें ।[2]

निरन्तर ध्यान के लिये तो निरन्तर ध्यान की ही जरूरत है । जहाँ ज्ञान और ध्यान दोनों हैं, वहाँ तो दोनों ही रहें ।[3]

5-4 <u>साधना हेतु गुरु की प्राप्ति</u> -

गुरु प्राप्ति के सम्बन्ध में उन्होंने परामर्श दिया है -
"प्यारे राम को ही गुरु बनाइये । यदि उनकी इच्छा होगी तो वे आपको किसी लौकिक या अलौकिक गुरु के रूप में प्रकट होंगे ।...आप स्वयं उनसे प्रेम के सिवा कोई दूसरा पथ-प्रदर्शक क्यों मानते हैं । गुरु के रूप में तो स्वयं भगवान्

---

[1][क] भाई पावन स्मरण - पृ0 650.
[2] लोक परलोक का सुधार भाग 3, श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार पृ055.
[3] वही पृ0 - 64.

5.6

ही आया करते हैं और उचित अवसर आने पर वे स्वयं ही साधक को प्राप्त हो जाते हैं ।[1]

श्री पोद्दार जी को भी दयालु साधु तथा सेठ श्री जयदयाल जी गोयन्दका,कुछ इसी प्रकार प्राप्त हुए थे । इन दोनों महानुभावों को वह गुरु मानते थे । दीक्षा गुरु तो निम्बार्की संप्रदाय के थे ही किन्तु साधन और साधना के गुरु ये दोनों महानुभाव ही थे । इन दोनों गुरुदेवों के प्रति अपनी अपार श्रद्धा निवेदन करते हुए उन्होंने अपने प्रसिद्ध पद की रचना की[2] - जय देव जय देव जय दयालु देवा ।

परम गुरु परम पुरुष परम देव देवा।।

5-5 <u>साधन-साधना-सूत्र</u> -

अपनी साधना को संक्षेप में प्रस्तुत करते हुए उन्हीं पोद्दार जी ने अपनी डायरी में, 3 सूत्र प्रस्तुत किये है ।*

(1) सबमें भगवान् को देखना ।

(2) भगवत्कृपा पर अटूट विश्वास ।

(3) भगवन्नाम का अनन्य आश्रय ।

यही (3 सूत्र) "मेरी अतुल संपत्ति है"..... आप जो कोई मेरे सच्चे उत्तराधिकारी बनना चाहें, सबमें भगवान देखकर सबका हित-सुख-संपादन तथा सम्मान करें निरन्तर बरसने वाली भगवत्कृपा की अहैतुकी अनन्त सुधा धारा में सराबोर रहें और अनन्य निष्ठा-विश्वास के साथ भगवन्नाम-जप-कीर्तन करते रहें । ये तीनों करेंगे तो अवश्य ही पारमार्थिक लाभ होगा ।[3]

---

(1) भा०प०रा०मा० पृ० 59.

(2) भाई जी पु०स्मृ० पृ० - 524.

---

(3) वही पृ0 – 560.

(4) पोद्दार जी ने साधना की विकास स्थिति की दृष्टि से साधकों के 11 भेद किये हैं —

:1: भगवान की प्राप्ति तो चाहता है परन्तु विषय-भोगों में आसक्ति बहुत ज्यादा है । विषय भोगों की प्राप्ति में बाधा हो तो वह भगवान की चाह छोड़ देगा । असल में वह कभी भगवान का भजन करता है तो विषय-भोगों की प्राप्ति के लिए ही करता है ।

:2: विषय भोगों की प्राप्ति भी चाहता है और भगवान को भी । दोनों में बराबर सा भाव है ।

:3: भगवान की प्राप्ति तो चाहता है पर न तो त्याग है तथा न साधन तत्परता ही । किसी की कृपा से बिना ही कुछ किये हो जाये तो ठीक है ।

:4: भगवान के लिए प्रयत्न तथा साधना करता है, परन्तु जल्दी ही ऊब जाता है ।

:5: भगवान के लिए साधना करता है, परन्तु प्राप्ति में सन्देह है।

:6: भगवान के लिए पूरी तौर से साधना करता है और विश्वास भी है, परन्तु त्याग के लिए पूरी तैयारी नहीं है ।

:7: भगवान के लिए विश्वास पूर्वक सब कुछ त्याग कर साधना करता है, परन्तु मान बड़ाई का मोह कुछ शेष है ।

:8: भगवान के लिए विश्वासपूर्वक सब कुछ त्याग कर साधना करता है, परन्तु बार-बार मार्ग बदला करता है ।

:9: भगवान के लिए विश्वास पूर्वक सब कुछ त्याग कर और एकाग्र होकर साधना में संलग्न है ।

:10: भगवान की अप्राप्ति असह्य है । क्षण भर भी चैन नहीं पड़ती सब कुछ करने को तैयार है । उसी में लगा है ।

:11: भगवान् अकारण अत्यन्त प्रेम और निष्काम भाव से भजता है । भजन के लिए ही भजन करता है । भगवान सब ओर से उसी के आनन्द का अनुभव करता है ।

(लोक परलोक का सुधार श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, भाग-4, द्वितीयसंस्क० पृ0-155-156.

5-6 साधन की क्रियाशीलता :—

श्री पोद्दार जी ने, साधन किस प्रकार साधक पर प्रभाव डालता है तथा साधन की क्रियाशीलता क्या है, पर भी विचार किया है। यह प्रश्न प्रायः उठाया नहीं जाता तथा अंधविश्वास के अन्तर्गत ही साधन किये जाते हैं। इस प्रश्न एवं जिज्ञासा को उठाकर श्री पोद्दार जी ने इनका साधक को सजग एवं सचेत रहने की आवश्यकता बतलाई है। साधन की किस क्रिया का जो प्रभाव एवं परिणाम उन्होंने प्रतिपादित किया है, उसको साधक को अपने साधन में देखना चाहिये तथा यदि प्रतिपादित प्रभाव नहीं दीख पड़ता तो समझना चाहिये कि साधन ठीक नहीं बन पा रहा है। इसलिये साधनगत अपनी त्रुटि को पकड़कर सुधार करें और प्रगति के लिये सजग रहें। साधन की मूल समस्या है मन का न लगना, प्रभु प्रेम का जाग्रत न होना। इस समस्या का निराकरण ही साधन से होता है। एक बार प्रभुप्रेम जाग्रत हो जाय, मन लग जाय, फिर और करना ही क्या है, अपने आप गति होने लगती है।

श्री पोद्दार जी स्तोत्र पाठ एवं नाम जप को साधन का प्रथम चरण मानते हैं। पाठ एवं जप नाम स्मरण का साधन हैं। मन लगे या न लगे, प्रभु प्रेम हो या न हो, पाठ एवं जप हठपूर्वक भी किये जा सकते हैं। इसलिये यह प्रथम चरण में रखे गए हैं। गोस्वामी जी ने इस आशय को स्पष्ट करते हुए लिखा है,

भाय कुभाय अनख आलसहू।
नाम जपत मंगल दिसि दसहू।।

यों नाम स्मरण अंतिम चरण भी है। भगवन्नाम के अनन्य आश्रय के रूप में साधना शुद्ध नाम स्मरण ही है। नाम स्मरण के प्रभाव का वर्णन श्री पोद्दार जी इस प्रकार करते हैं — "भगवान् के मंगलमय नाम से

5.9

ऐसा कौन-सा काम है, जो सिद्ध नहीं हो सकता, ऐसा कौन सा महापाप है, जिसका नाश नहीं हो सकता; ऐसी कौन-सी परम गति या मुक्ति है, जो नाम से नहीं मिलती?"[1] एक साधक को नाम जप के संबंध में पोद्दार जी ने लिखा —

"आपने अन्तःकरण शुद्ध होने का सुगम उपाय पूछा है इसके लिए सबसे सुगम उपाय है – भगवान् के नामों का निरन्तर जप । अन्तःकरण अशुद्ध होता है – पाप-वासनाओं से, आसक्ति, ममता, अहंता आदि दोषों से – ये सब अन्तःकरण के मैल हैं । भगवन्नाम के पावन जप से ही यह मैल धुल पाता है ।"[1][3] इस प्रकार साधन की प्रथम चरणीय क्रियाशीलता में पाठ, पाठ से नाम और नाम से आत्मशुद्धि संभव हो जाती है । इस आत्मशुद्धि की प्रक्रिया का श्री पोद्दार जी ने संकेत किया है । नाम जप से हृदय के दोष, कलुष, मलिनताएँ आदि साधक के सामने आने लगती है तथा परिताप एवं पश्चाताप के अन्तर्गत दैन्य भाव उदय हो जाता है जिससे हृदय शुद्ध होने लगता है । यह स्थिति अन्यथा साधक के लिये बड़ी असमंजस की होती है । प्रायः साधक शिकायत करते है कि इससे तो हमारी पहले ही बहुत अच्छी हालत थी । साधन करना जब से प्रारंभ किया है तब से गंदे विचार और कलुषित भावनाएँ [illegible] अन्तःकरण को घेरे रहती हैं । वस्तुस्थिति यह है कि अंतःकरण का मैल आदर्शों से ढंका पड़ा था जब साधन प्रारंभ किया तो मैल से परदा हटा और अन्तःकरण की वास्तविकता दिखलाई देने लगी । श्री पोद्दार जी इस स्थिति में बड़ी सावधानी से आत्मग्लानि एवं परिताप का प्रयोग होने देने के लिये प्रेरित करते हैं । जिससे दैन्यभाव जाग्रत हो । इसी प्रक्रिया से अंतःकरण की सफाई हो सकती है –

"......जीवन में कितनी अपार दुर्बलताएँ हैं, कितनी मलिनताएँ है, और कितने दोष – कलुष भरे है यह सब देखकर हृदय भर आता, सहज दैन्य भाव उदय होता.....आँखों में आँसू छलक आते..........."[2]

---

[1] भाई जी पु०सं० पृ० – 602.
[2][3] लोक परलोक का सुधार भाग-3श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार द्वारासं०30६.
[2] पद-रत्नाकर श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार पु०सं०2035निवेदन पृ०3८.

भगवन्नाम का पावन जप यह हमारे अश्रु ही हैं। नाम से यह अश्रु रूपी भगवन्नाम का पावन जप सुलभ होने लगे तो समझना चाहिये कि साधन ठीक चल रहा है। श्री पोद्दार जी एक साधक को लिखते हैं :-

"जो हमारे आत्मा के भी आत्मा हैं, प्राणों के भी प्राण हैं, जिनसे बढ़कर कोई प्रियतम नहीं है, वे हमसे दूर नहीं हैं, हम उन्हें प्राण में भी निहार न सकें, अपने प्रेमाश्रुओं से उनके चरणों को पखार न सकें—यह कितने दुःख की बात है। उन्होंने गोपियों को भी विरह दिया था, इसलिए कि इनमें निरन्तर प्रेम बढ़ता रहे। हमें भी यह विरह इसलिए मिला है कि हम प्रभु से मिलने के लिये रोयें, तड़पें, अश्रुओं के मौक्तिक हार से उनकी सादर अर्चना करें"।[1][अ]

इससे आगे ध्यान और स्मरण की स्थिति तो अपने आप बन जाती है। नाम स्मरण यदि भाव विभोर एवं साश्रु है तो फिर ध्यान एवं स्मरण में इसकी सहज परिणति होती ही है। इस प्रकार नाम स्मरण की प्रमुख भूमिका रहती है।* श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कवितावली में साधन क्रियाशीलता का विवरण कुछ इसी प्रकार प्रस्तुत किया है —

सुनि राम कथा ———————— पाठ ↓
—मुख राम को नामु ———————— जाप ↓
—— हियें पुनि रामहिको थलु है ———— ध्यान स्मरण ↓
— मति रामहिसों, ~~[illegible]~~ गति रामहिसों, रति रामहिसों | तद्गति
रामहिं को बलु है |

भगवान् ने भी श्री पोद्दार जी को दर्शन देकर नाम महिमा का ही उपदेश किया एवं नाम प्रचार का आदेश दिया :—

[1][अ] लोक परलोक का सुधार भाग-3 श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार पृ०सं० पृ०-35-36.

" जगत का कुछ भला करना हो तो भेद छोड़कर नाम का प्रचार कर लोगों से कह दे कि इस काल में नाम से ही सब कुछ हो जायेगा । मेरे अवतार में भी नाम ही हेतु होगा ।"[3]।

साधक की भाव विभोर, तड़पने सहित अपूर्ण साधना बहुत शीघ्र रंग लाती है तथा भगवान् के दर्शन संभव हो जाते हैं । श्री पोद्दार जी ने अपनी इस स्थिति का सौभाग्य एवं सुफल निम्नलिखित शब्दों में प्रस्तुत किया है :-

"....श्री श्यामसुन्दर आते, हँसकर सिर पर वरदहस्त रखकर कहते —"तू क्यों रो रहा है?.....चल मेरे साथ व्रज में देख वहाँ मेरी दिव्य लीला और परमानन्द सागर में निमग्न हो जा.....मन ने भांत-भांत विविध विचित्र लीलायें एवं श्री राधाकृष्ण की अनूप रूप-माधुरी देखी, समझी और किसी-किसी लीला में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त किया....." ।[2] इस स्थिति में ही सबमें भगवान का देखना संभव होता है । उस समय अपनी अस्मिता, अपना अहम् विगलित हो जाता है तथा समष्टि के अहम् में विलीन होने की आकुलता हो उठती है । सम्पूर्ण साधना का रहस्य ही यह है कि अहं "शून्य" स्थिति आ जाय । अपना अहम् सर्वनियन्ता के व्यापक अहम् में विलीन हो जाये ।

श्री पोद्दार जी ने अहंकार को ही मुख्य साधन-बाधा माना है । इसलिए अहंकार से मुक्ति ही वास्तविक मुक्ति है । एक साधक को उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा है —

---

[1] :अ: भाई पावन स्मरण पृ० : ४९५.

[2] पद रत्नाकर - श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार वि० सं० 2035. निवेदन पृ० 3-5.

"आपके ही नहीं सभी के दुःख के कारण अहंकार, ममता, कामना और आसक्ति है । इनमें सब की जड़ अहंकार है ।"[1]

श्री पोद्दार जी की साधना को संक्षिप्त में अहंकार मुक्ति ही बताया गया है :-

"अहं को इदं में विलीन करना ही उनके साधक जीवन का मूलमंत्र था ।"[2]

5.7 <u>साधन-बाधा</u> -

अहं को इदं में विलीन होने में बाधा के रूप में श्री पोद्दार जी मान-सम्मान को मानते थे तथा सदा इससे बचते रहे । कभी भी अभिनन्दन पत्र और ग्रंथों की योजनाओं को साकार नहीं होने दिया। इसे साधन की प्रमुख बाधा के संबंध में उन्होंने लिखा है —

"......मनुष्य के अन्दर एक छिपी कामना होती है - मान,और बड़ाई पाने की । बहुत बड़े-बड़े त्यागी महात्मा, जो जगत के समस्त पदार्थों का त्याग कर चुके हैं, उनमें भी न कहने पर, न चाहने पर, अपितु मना करने पर भी मान-बड़ाई की अभिलाषा छिपे रूप में रहती है । श्री प्रबोधानन्द सरस्वती के शब्द हैं - "सम्मानं कलयाति घोर गरलं नीचापमानं सुधाम् ।".....आप सब आशीर्वाद दें— यह मान चाहने का बड़ाई चाहने का मनोरथ आप सब के आशीर्वाद से दूर हो जाय तथा जैसे फूलों की माला पहनने में सुख-प्रसन्नता होती है, वैसे ही जूतों की माला पहनने में भी सुख-प्रसन्नता की अनुभूति हो"[3] साधक के लिये श्री पोद्दार जी ने इस घातक बाधा का भी स्पष्ट संकेत किया है तथा सावधान किया है कि साधक इस प्रसंग में विशेष रूप से सावधान

---

[1] लोक परलोक का सुधार भाग 3 श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृ०सं० पृ० 102

[2] भाई जी पृ०सं० पृ० : 416.

[3] भाई जी पृ०सं० पृ० : 554.

एवं सजग रहे तथा साधन की प्रगति के प्रति उत्कृष्ट एवं दृढ़ संकल्प बना रहने के लिए इससे दूर दशा में बचता रहे। मानव व्यक्तित्व की नींव ही अहम् पर आधारित रहती है। मान-सम्मान की लिप्सा अहंकार के दुष्प्रभाव में मानव व्यक्तित्व को प्रभावित एवं अनुप्राणित किये रहती है। पुण्य प्रभाव से पूजा पाठ, नामजप एवं भजन की ओर ध्यान जाता है तो भक्त व्यक्तित्व का प्रादुर्भाव होता है। ध्यान [illegible] स्मरण की भाव विभोर स्थिति में प्रभु निमज्जित अहं द्वंद में विलीन होकर संत व्यक्तित्व का उदय होता है। मानापमान में समस्थिति संत की प्रमुख विशेषता होती है। श्री पोद्दार जी ऐसे ही प्रतिष्ठ संत एवं संतत्व की साक्षात् मूर्ति थे।

साधक का अंत भी पता नहीं होता। वह अपनी साधना और अपनी आध्यात्मिक उन्नति से ही संतुष्ट नहीं होता प्रत्युत अपने साथ अनेकानेक जीवों के उद्धार एवं कल्याण की कामना करता है। साधक का यह दायित्व पूर्ति ही उसको साधक व्यक्तित्व की गरिमा से मण्डित करती है। श्री पोद्दारजी इस दृष्टि से भी एक आदर्श एवं अनुकरणीय साधक व्यक्तित्व के धनी थे। भगवान् ने भी उनको इस दायित्व पूर्ति केलिये कहा था। वह स्वयं भी इसी को अपना जीवन संकल्प एवं जीवन का परम लक्ष्य बनाये हुए थे। कहना न होगा कि उन्होंने इस दिशा में कितना अप्रतिम एवं अद्भुत कार्य किया तथा साधक व्यक्तित्व का एक आदर्श मानक प्रस्तुत किया जिसको प्राप्त कर लेना। अनुगामी साधकों के लिये साधारण कार्य नहीं रहा। निश्चय ही श्री पोद्दार जी का साधक व्यक्तित्व वंदनीय एवं पूजनीय है तथा उनके प्रेमी जनों के यहाँ उनके चित्र की पूजा भगवान् के साथ होती है, तो कोई आश्चर्य नहीं है।

प्रकरण-6

भक्त एवं सन्त उपविभाग

6.1 सन्त का स्वरूप

6.2 भगवन्नाम प्रचार

6.3 आचरण परक तीर्थ यात्रा एवं विशाल मन्दिरों का निर्माण एवं जीर्णोद्धार

6.4 कर्मगत स्थिति

6.5 स्वभावगत स्थिति

6.6 प्रभाव गत स्थिति

6.7 निष्कर्ष

6-1 श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी ने कल्याण के वर्ष 1955 के विशेषांक (संतवाणी-अंक) के सम्पादकीय के अन्तर्गत पृष्ठ 793 पर "संत कौन है?, सन्त क्या करते है? उच्चकोटि के सन्त" जैसी जिज्ञासाओं का समाधान प्रस्तुत करते हुए अपने विचार प्रकट किये हैं। इन विचारों को अभिमत तथा उनके द्वारा प्रस्तुत शास्त्रीय विवेचन के रूप में लेना उचित होगा।

<u>संत कौन है?</u>

"संतों की यथार्थ पहचान बाह्य लक्षणों से नहीं हो सकती। इतना समझ लेना चाहिए कि संत वे हैं, जो नित्य सिद्ध सत्यतत्त्व का साक्षात्कार करके, उसकी अपरोक्ष उपलब्धि करके उस सच्चिदानन्द स्वरूप में प्रतिष्ठित हो चुके है। वह सत् ही चेतन है, वह चेतन ही आनन्द है। अर्थात् वह सत् चेतन और आनन्द स्वरूप है वह चेतन सत् और आनन्द स्वरूप है और वह आनन्द सत् और चेतन स्वरूप है। इस आदि मध्यान्तहीन सच्चिदानन्द में जो सहज प्रतिष्ठित हैं वे ही संत है। अथवा वे संत हैं जो मोक्ष का निरादर करके प्रेम-स्वरूपिणी भगवान् के दिव्य प्रेम को प्राप्त कर चुके हैं।"

<u>संत क्या करते हैं?</u>

"परमात्मा को प्राप्त ऐसे संत केवल स्वयं ही कृतार्थ नहीं होते, वे संसार सागर में डूबते-उतराते हुए असंख्य प्राणियों का उद्धार करके उन्हें परमात्मा के परमधाम में पहुँचाने के लिए सुदृढ़ जहाज बन जाते हैं।"

<u>उच्चकोटि के संत :-</u>

"परमात्मा जीवों के प्रति दया परवश होकर कभी-कभी

उच्चकोटि के संतों को अपने खास पार्षदों को अधिकारिक पुरुषों को भी संसार के दुःखी जीवों का उद्धार करने के लिये भेज दिया करते हैं। वे महापुरुष नित्यपावन से जो हुए जीवों को समता झुकाकर उनके सामने परम विशुद्ध आदर्श रखकर और उनकी यथायोग्य सेवा करके उनके हृदयों में परमात्मस्वरूप को जानने की जिज्ञासा और परमात्मा को प्राप्त करने की शुभाकांक्षा उत्पन्न कर देते हैं और फिर उनको भगवत्साक्षात्कार के योग्य बनाकर कृतार्थ कर देते हैं।"[1]

पोद्दार जी ने "ढाईहजार अनमोल बोल [संतवाणी] पुस्तक का सम्पादन करके गीताप्रेस गोरखपुर से 1939 ई० में छपाया था सम्पादक के निवेदन में उन्होंने भाद्रकृष्ण 1, सम्वत् 1996 वि० को लिखा था – "संत विश्वकल्याण के परम आधार है, उनकी प्रत्येक चेष्टा स्वाभाविक ही विश्व के कल्याण के लिये होती है। उनकी वाणी से अमर ज्ञानामृत झरता है, उनके नेत्रों से प्रेम की शीतल सुखद ज्योतिधारा बहती रहती है, उनके मस्तिष्क से अखिल जगत् का कल्याण प्रसूत होता है, उनके हृदय से आनन्द का प्रवाह बहता है। जो कोई भी उनके सम्पर्क में आता है वही पाप-ताप से मुक्त होकर महात्मा बन जाता है। वे जिस स्थान में रहते हैं वही स्थान पुण्यतीर्थ बन जाता है। वे जो उपदेश करते है वही पावन सत्शास्त्र बन जाता है, वे जिन कर्मों को करते है वे ही कर्म आदर्श समझे जाते है। संत सभी देशों सभी धर्मों और सम्प्रदायों में होते हैं। हिन्दू मुसलमान, ईसाई यहूदी, पारसी आदि सभी मतों में सच्चे संत हुए है किसी देश या काल विशेष से संतो का संबंध नहीं किया जा सकता। सभी देशों में सभी समय कोई न कोई संत रहते हैं और वे छिपे या जाहिरा तौर पर जगत का कल्याण करते रहते हैं।[2] कल्याण में "शिव" के उपनाम से पोद्दार जी द्वारा बड़े मार्मिक शब्दों में याद रखने योग्य बातें लिखी जाती है वे "कल्याण"कुंज" पुस्तकों में

---

[1] कल्याण "संत-वाणी-अंक" वर्ष 1955 पृष्ठ सं० 793 से 797 तक.

[2] ढाईहजार अनमोल बोल "संतवाणी" सम्पादक हनुमानप्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं०

संकलित करके पुनः प्रकाशित की गई है । "कल्याण कुंज" भाग 5 में "सच्चे संत" शीर्षक में उनकी शब्दावली मननीय है :- "याद रक्खो ! सच्चे संत भगवत्स्वरूप ही होते हैं । भगवान की भाँति संत भी स्वभाव से सब हैं, सब उन्हीं में हैं, वे सबमें हैं, सबके हैं और सबसे पृथक भी हैं । यह सब इसीलिए कि वे भगवान को प्राप्त हैं"[1] वे आगे लिखते हैं - "याद रक्खो ! संत भगवान् के ही भाँति दया के समुद्र होते हैं वे स्वभाव से ही सबके सुहृद सुहृद होते हैं ।"

'याद रक्खो' —"मान-अपमान, स्तुति-निन्दा और लाभ-हानि सभी द्वन्द्वों में संत सम रहते हैं । वे मान-स्तुति तथा लाभ में हर्ष से फूलते नहीं और अपमान, निन्दा तथा हानि में विषाद से अपने स्वरूप को भूलते नहीं, पर यथायोग्य व्यवहार करने में सकुचाते भी नहीं ; न तो वे मान-स्तुति और लाभ को स्वीकार करने में डरते हैं और न अपमान निन्दा और हानि का प्रतिकार करने में स्वरूप की हानि समझते हैं । ऐसा करते हुए भी वे इनसे सदा परे, निर्लिप्त तथा निर्विकार रहते हैं"[2] पोद्दार जी ने भिन्न-भिन्न समयों में साधकों के प्रति, साधन, साध्य, भक्त, महिमा, भक्त के लक्षण सन्तमहिमा संतों के लक्षण विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं । पोद्दार जी ने कल्याण के तीसरे वर्ष का विशेषांक "भक्तांक" निकाला था बारहवें वर्ष का विशेषांक "संतांक", पन्द्रहवें वर्ष का विशेषांक "साधनांक"; छब्बीसवें वर्ष का विशेषांक "भक्त चरितांक", उन्तीसवें वर्ष का विशेषांक "संत-वाणी-अंक" बत्तीसवें वर्ष का विशेषांक "भक्ति अंक" तैंतीसवें वर्ष का विशेषांक "मानवता-अंक" तथा बयालीसवें वर्ष का अंक "उपासना अंक" के नाम से निकाले थे । इन सभी में सभी साधन, साध्य, साधक, भगवद् भक्त और सन्तों के गुणों / लक्षणों का वर्णन पोद्दार जी द्वारा तथा अन्यान्य अधिकृत महापुरुषों के द्वारा किया गया है । पोद्दार जी

---

[1] कल्याण कुंज भाग 5 पृ० सं० 153.

[2] कल्याण कुंज भाग 5 पृ० सं० 154-155.

ने प्रचुरतर गद्य के अतिरिक्त पद्य रचकर भक्तों एवं संतों के लक्षण लिखे है ये पद"पदरत्नाकर" में क्रम सं0 1297 से 1302 तक में छपे हैं उनका पूरा विवरण अध्याय 13। "संत एवं भागवत व्यक्तित्व" के अन्तर्गत दिया जा चुका है । तथा इन पदों में वर्णित 40 लक्षणों को भी यहाँ लिखा गया है । उक्त भाग 13। में श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवत, रामचरित मानस, विनय पत्रिका, वैराग्य संदीपिनी और श्री पोद्दार जी के पदरत्नाकर में गिनाये गये लक्षणों का शास्त्रीय विवेचन करने के पश्चात् जिन 40 लक्षणों को मानक के रूप में स्थापित किया गया है उनमें से 30 लक्षण का वर्णन पोद्दार जी के पदों में है ।

विवेचन के अन्तर्गत सामान्यतया इतर-शास्त्रीय प्रमाण एवं विश्लेषणों गृहीत किये जाया करते है यह संयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पोद्दार जी द्वारा प्रस्तुत एवं अनुमोदित मानक एवं प्रमाणों पर उन्हीं के व्यक्तित्व को परखा जा रहा है । भक्त एवं सन्तों के मानक लक्षणों पर विवेचन के पूर्व यह भी ध्यान में रखने योग्य है कि भिन्न अर्थों के युग्मों यथा सुख-दुःख, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान, गर्मी- सर्दी दैवी-आसुरी सम्पद् को उत्तरोत्तर-विकास-क्रम को निश्चित स्थान पर विभाजित कर पाना कठिन होता है और उस विभाजन के बारे में सभी का एकमत हो पाना और भी कठिन होता है । पुनः विशेष के मानव, साधक-भक्त एवं भागवत अथवा सन्त की स्थितियों को किसी मापक से नाप पाना अति दुष्कर कार्य है । भक्त एवं सन्त के लक्षण एक से ही हैं । वे भगवान से अलग नहीं होते । इसलिए भक्त उनकी भक्ति उनके साध्य भगवन्त तथा मार्गदर्शक गुरु चारों का शरीर एक ही शरीर कहा गया है । केवल नाम भिन्न-भिन्न है ।

> भक्ति, भक्त, भगवन्त, गुरु, चतुर्नाम वपु एक ।
> इनके पद वन्दन किये, नाशै विघ्न अनेक ।।

पोद्दार जी ने इस अभिन्नता को स्वीकार ही नहीं किया, उसी को व्यक्त किया है । "संत महिमा" नामक लेख में उनका निम्नांकित कथन

उल्लेखनीय है —

"श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान् ने अपने प्रिय भक्तों के निम्न लिखित 40 लक्षण बतलाये हैं ये लक्षण जिन पुरुषों में हों, वे ही सन्त हैं, इन्हीं का कुछ न्यूनाधिक रूप में "गुणातीत" और "स्थित-प्रज्ञ" आदि नामों से गीता में वर्णन है ।xxxxxx ये सब गुण सिद्ध सन्त में स्वाभाविक होते हैं और साधक इनको प्राप्त करने के प्रयत्न में लगा रहता है ।"

उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि उक्त लक्षण सिद्ध-अवस्था के हैं । साधक भक्त इनको अपने जीवन में लाने का अनवरत प्रयास करता रहता है । भौतिक वस्तु की उपलब्धि की तरह इनकी प्राप्ति किसी निश्चित अवधि या क्षण में नहीं कही जा सकती । ये मन, बुद्धि तथा हृदय के लिये साध्य रूप में हैं- अहंकार रहित हो जाना, द्वेष रहित हो जाना, आकांक्षा रहित, क्रोध रहित, ममता रहित, जितेन्द्रिय, सर्वत्र भगवद् दर्शन, सुख-दुख में सम होना, सत्यनिष्ठ हो जाना एक दो माह की साधना से संभव नहीं है । ये जीवन पर्यन्त की साधना है पूर्व जन्मकृत साधना, तपस्या गुरु एवं भगवद्कृपा से किन्हीं असाधारण महापुरुषों को कुछ वर्षों की अवधि में इनकी प्राप्ति हो सकती है । इस कठिनाइ का अनुभव करने के पश्चात् ही भक्त सुग्रीव ने श्रीरामचन्द्र जी से कहा था —

"यह गुन साधन ते नहिं होई । तुम्हारी कृपा पाव कोइ कोई ।।

—श्रीरामचरितमानस 4/20/6

1 लक्ष्य की प्राप्ति हेतु साधना करने वाला साधक श्रेणी में कहा जाता है । भगवान की प्राप्ति हेतु भक्ति मार्ग से चलने वाला व्यक्ति भक्त कहलाता है तथा विशुद्ध एवं निष्काम भाव से मात्र भगवान को हृदय में धारण करने वाला, भगवान् का प्रिय भक्त कहा गया है । इस अवस्था की प्राप्ति ही सन्त व्यक्तित्व अथवा भागवत् व्यक्तित्व की उपलब्धि है । यहाँ सन्त और भगवन्त एक ही होते हैं ।

पोद्दार जी का जीवन क्रम मानव-साधक-भक्त श्रेणियों को क्रमशः पार करते हुये सन्तत्व तथा भगवत्त प्राप्ति तक पहुँचा है। वर्ष 1916 में अलीपुर जेल तथा शिमलापाल की नजरबन्दी अवधि में उन्होंने नाम-जप तथा ध्यान की जो साधना प्रारंभ की थी। वह भगवान राम, भगवान विष्णु के दर्शन एवं उनकी आज्ञानुसार भगवन्नाम प्रचार तथा उसकी निष्काम भाव से सेवा में बढ़ते-बढ़ते उनका प्रवेश भगवान श्री कृष्ण की मधुर लीला राज्य में हो गया था। यहाँ उनको अनुभव हुआ कि श्री कृष्ण ही श्रीराधा है और श्रीराधा श्री कृष्ण है। इनमें सर्वथा अभेद है। दो होकर भी श्रीराधा कृष्ण स्वरूपतः एक ही है तथा सच्चिदानन्दघन हैं।

6-2 पोद्दार जी को गोरखपुर में क्वार सुदी 12 संवत् 1984 (8-10-1927ई0) को भगवान के दर्शन हुए वे जिसमें भगवन्नाम प्रचार का आदेश निम्नांकित प्रकार से सुना गया था "जगत का कुछ भला करना हो तो भेद छोड़कर नाम का प्रचार कर। लोगों से कह दे कि इस काल में नाम से ही सब कुछ हो जायेगा। मेरे अवतार में भी नाम ही हेतु होगा।" इसके 15वें दिन पुनः दर्शनलाभ हुआ, साथ ही दिव्य वाणी भी सुनाई पड़ी —

(1) जिन सात विषयों के प्रचार की बात तुम लोगों ने ते की है उनका प्रचार जितने अधिक देशों और अधिक लोगों में हो सके चेष्टा करो। लोगों को समझा दो कि उनके मानने से ही कल्याण हो सकता है।

(2) एक बार जिसने मेरानाम ले लिया उसका भला होने में कोई शंका नहीं करनी चाहिए।

(3) अन्य धर्मावलम्बियों के किसी भी ग्रंथ का नाम न लेकर गीतोक्त भक्तियुक्त निष्काम कर्म का भाव ग्रहण करने के लिये कहो। दो दिन पश्चात् पुनः भगवद्वाणी सुनाई दी —

(1) पूर्व के कहे अनुसार जितना अधिक लोगों में प्रचार कर सको उतना करो । स्थान-स्थान पर कीर्तन होना बहुत अच्छा है । सन्यास की अभी आवश्यकता नहीं, आगे चलकर विशेष लाभ हो सकता है ।

(2) नाम प्रचार के लिये कोई खास नाम नहीं है । मेरे भाव से कोई सा भी नाम मनुष्य ले सकता है ।

इस प्रकार स्वयं भगवान द्वारा नाम का प्रचार करने के निर्देश तीन बार दिये गये । इसके पश्चात् प्रतिदिन सत्संग तथा रात्रि में संकीर्तन प्रारंभ हो गया ।

दीपावली सं0 1984 (1927) को लक्ष्मीपूजन के पश्चात् भाई जी ने एक घन्टे संकीर्तन कराया उसके पश्चात् संकीर्तन महिमा पर एक सारगर्भित भाषण दिया था । इसके पश्चात् पोद्दार जी ने अपने सहयोगियों से विचार-विमर्श करके भगवदाज्ञा को कार्यान्वित करने के लिए भगवन्नाम प्रचार यात्रा की योजना बनाई और इसके लिए सर्वप्रथम बंगाल तथा आसाम को चुना गया। मार्गशीर्ष कृष्ण 10, सं0 1984 को गोरखपुर से 16 व्यक्तियों का दल कलकत्ता रवाना हुआ । कलकत्ते से गौहाटी - शिलांग, तिनसुकिया, डिब्रुगढ़, [illegible], शिवसागर, नौगांव गये । सभी स्थानों पर संकीर्तन हुये । नियमित रूप से नाम जप करने का नियम दिलाया गया तथा संकीर्तन मण्डल स्थापित किये गये । सात दिन कलकत्ता में गीतापाठ प्रवचन, तथा संकीर्तन करने के पश्चात् गोरखपुर लौट आये । आसाम, बंगाल की यह नाम प्रचार यात्रा 24 दिन की थी ।

गोरखपुर में 20 दिन तक गीताप्रेस एवं कल्याण का कार्य देखने के पश्चात् पोद्दार जी पौष शुक्ल 8, सं0 1984 को नाम प्रचार हेतु 11 व्यक्तियों को लेकर बम्बई के लिये रवाना हुये । बम्बई से अहमदाबाद मारवाड़ (जोधपुर), बीकानेर, रतनगढ़, सुजानगढ़, डीडवाना, चूरू, भिवानी,

रोहतक तथा दिल्ली होते हुए चुर्ज पहुँचे । संकीर्तन प्रेमी श्री हरिभाबा बहुत दूर पैदल चलकर पोद्दार जी से मिलने आये। चुर्ज से फीरोजाबाद, कानपुर, लखनऊ में भगवन्नाम संकीर्तन की गंगा बहाते हुये गोरखपुर वापस पहुँचे । इस बार की सवा महीने की नाम प्रचार यात्रा में भी स्थान-स्थान पर संकीर्तन मण्डल स्थापित किये गये तथा नाम-जप के लिए कार्य कराये गये । अहमदाबाद में साबरमती आश्रम में गांधी जी से मिलने गये । गांधी जी ने नियम पालन तथा भगवन्नाम प्रचार की आवश्यकता पर अपनी सहमति व्यक्त करते हुए इस कार्यहेतु उनको अपना आशीर्वाद दिया था ।

पोद्दार जी ने कल्याण के सम्पादकीय विभाग के अन्तर्गत नाम जप विभाग की स्थापना की तथा प्रतिवर्ष कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा से चैत्र पूर्णिमा तक 5 महीने में षोडशाक्षर महामंत्र "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे, हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।" के 20करोड़ जप करने के लिए कल्याण में अपील निकाली गयी थी । उसका अच्छा परिणाम रहा था । तब से प्रतिवर्ष नाम-जप हेतु प्रार्थना कल्याण में प्रकाशित की जाती रही है । पोद्दार जी की नाम में अपार निष्ठा थी । कल्याण का प्रथम विशेषांक "भगवन्नामांक" उन्होंने बम्बई से प्रकाशित किया था । जिसके पश्चात् संवत् 2021 [29वर्ष] में "भगवन्नाम महिमा और प्रार्थना अंक" के नाम से कल्याण का विशेषांक निकाला था। भगवान का नाम स्मरण तथा प्रार्थना सभी धर्मों में एक मुख्य अंग माना गया है । भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत वेद, शास्त्र तथा पुराणों में भगवान के नामों की महिमा का वर्णन है । 700पृष्ठों के इस विशेषांक में नाम, साधना, नामोपासना, नाम की महिमा, प्रार्थना के महत्व पर सन्त महात्माओं, देश के अन्यान्य महापुरुषों के कथनों एवं लेखों का समावेश करके आज के दिग्भ्रमित समाज को भगवान् की ओर उन्मुख करने का प्रयास किया गया है । संवत् 1986 में प्रयाग में गीता-ज्ञान-यज्ञ का विशाल आयोजन किया गया जिसका शुभारम्भ महात्मा पं० मदनमोहन मालवीय जी ने किया था

इसका लक्ष्य था कि गीतोक्त ज्ञान का कथा-कीर्तन प्रवचनों के माध्यम से प्रचार । कथा-कीर्तन के लिये प्रसिद्ध संगीतज्ञ एवं भक्त पं० विष्णु-दिगम्बर जी बम्बई से प्रयाग पधारे थे ।

"श्री कृष्णांक" के लिए सामग्री एकत्र करने के उद्देश्य से परिवार तथा अन्य बारह व्यक्तियों के साथ ब्रज यात्रा पर गये । वैशाख कृष्ण 9, संवत् 1980 को xxxxxमें अलीगढ़ में विशाल संकीर्तन का आयोजन था उसमें सम्मिलित हुए । फाल्गुन शुक्ल । से पूर्णिमा (संवत् 1990वि0) तक हरिबाबा जी ने बांध महोत्सव का आयोजन किया था, पोद्दार जी परिकरों सहित सम्मिलित हुये । पोद्दार जी ने संकीर्तन प्रेमी श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी से पत्र व्यवहार करके झूसी में 5 दिन का (भाद्र कृष्ण 14 से भाद्र शुक्ल 4, संवत् 1992) भगवन्नाम संकीर्तन का आयोजन किया इसके पश्चात् संवत् 1993 में (1946ई0) में गोरखपुर में एक वर्ष का संकीर्तन समारोह आयोजित किया जिसके मुख्य संचालक थे श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी । 1968 में गीतावाटिका में अखण्ड भगवन्नाम संकीर्तन प्रारंभ किया गया जो आज भी चल रहा है । पोद्दार जी ने भगवन्नाम महिमा पर अनेक पद भी रचे हैं । उनमें से कुछ की प्रथम पंक्तियाँ निम्न प्रकार से है —

1. साधन नाम सम नहिं आन.।
   जपत शिव सनकादि, शारद-नारदादि सुजान ।। पद सं0 971.

2. भली है राम नाम की ओट ।
   जिन्ह लीन्हीं तिनके मस्तक तें घटी पाप की पोट ।। पद सं0 972.

3. राम राम राम भजो राम भजो भाई ।
   राम-भजन-हीन जनम सदा दुखदाई ।। पद सं0 978.

4. और सब भूल भले ही, श्रीहरि नाम न भूल ।
   श्री हरिनाम सुधामय सबके हित, सबके अनुकूल ।।पद सं0 971.

5. चाहता जो परम सुख तू जाप कर हरि नाम का ।

परम पावन, परम सुन्दर, परम मंगलधाम का ॥ पद सं0 972.

6. मेरे एक राम-नाम आधार ।

टूटे डगरो पर मिल्यो न दूजो, भीर परे को पार ॥पद सं0

6-3 तीर्थ यात्रा :-

पोद्दार जी ने कल्याण के विशेषांकों के लिए सामग्री एकत्र करने का ढंग यह रखा कि विषय से सम्बन्धित स्थानों पर जाकर संत महात्माओं तथा उस विषय के अधिकारी महापुरुषों से सम्पर्क स्थापित किया जाये । "रामायणांक" की सामग्री जुटाने हेतु पोद्दार जी परिकरों सहित माघ कृष्ण 12, संवत् 1987 वि0 में अयोध्या की यात्रा की थी तथा वहाँ के प्रसिद्ध सन्तों पं0 राम वल्लभाशरण जी, बाबा रामबालक दास जी, श्री अंजनी नन्दन शरण जी आदि से भेंट की थी । "श्री कृष्णांक" की तैयारी के समय वृन्दावन की यात्रा की थी । इसी तरह "तीर्थांक" निकालने के पूर्व तत्सम्बन्धी सामग्री संकलन हेतु तीर्थाटन करने का निश्चय किया गया ।

एक विशेष रेलगाड़ी की व्यवस्था की गई यह ट्रेन पौष शुक्ल 6, संवत् 2012 को काशी से रवाना हुई थी पोद्दार जी के साथ लगभग 600 व्यक्तियों ने देश के सभी प्रमुख तीर्थों के दर्शन किये तथा उनके तत्कालीन आचार्यों, संत-महात्माओं के सत्संग का लाभ उठाया । भजन, कीर्तन के साथ 100 दिन में तीर्थयात्रा पूर्ण करके यात्रीदल वैशाख कृष्ण 8, संवत् 2013 को गोरखपुर वापस आ गया था । तीर्थांक के द्वारा भारतीय जनता को देश के लगभग 1800 तीर्थों की स्थिति तथा परिचय दिया गया था । तीर्थों के दर्शन के साथ वहाँ तक जाने का मार्ग तथा ठहरने के लिये स्थानों का विवरण दिया गया है । तीर्थों की महिमा, तीर्थ

यात्रा की विधि तथा तीर्थ दर्शन के फल पर लेख दिये गये हैं । तीर्थ भारतीय संस्कृति के पावन स्रोत तथा रक्षक है । पोद्दार जी ने इस तीर्थ यात्रा के द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों में पहुंच कर भगवन्नाम का प्रचार ही नहीं किया बल्कि जनता की प्रसुप्त आत्मा को जगाने का तथा भगवान के प्रति सुप्त प्राय: आस्था को उद्दीप्त किया । ये सारे कार्य भगवान द्वारा निर्देशित गीतोक्त, भक्तियुक्त, निष्काम भाव से कर्म करने की प्रेरणा आदि पोद्दार जी ने भगवान् की आज्ञा पालन करने के निमित्त किये थे । तीर्थयात्रा से उन्हें महत्वपूर्ण तीर्थों के महत्व के साथ उनका इतिहास भी ज्ञात हुआ । जीर्ण स्थिति भी देखने को मिली साथ ही उनके जीर्णोद्धार की भी प्रेरणा भी हुई । विदेशी शासन, पाश्चात्य सभ्यता तथा अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित शिक्षित वर्ग की भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था डगमगाने लगी थी । स्वतन्त्रता प्राप्ति हो जाने पर इसमें सुधार की कल्पना भी निर्मूल सिद्ध हुई । धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति तो हुई नहीं, बहुसंख्यक होने के दंडस्वरूप हिन्दुओं की श्रुति, स्मृति अनुमोदित जीवन पद्धति में सीधा हस्तक्षेप किया जाने लगा था । हिन्दू कोड बिल का प्रस्तुत होना, गो हत्या बन्द न होना, धर्म एवं संस्कृति की रक्षा हेतु स्थापित संस्थाओं के द्वारा संचालित आन्दोलनों को साम्प्रदायिक कहकर कुचलने के कुचक्र तथा अल्पसंख्यक नाम से मुसलमानों एवं ईसाइयों द्वारा चलाये जा रहे धर्म प्रचार एवं धर्मपरिवर्तन अभियानों की ओर से दृष्टि हटा लेने की प्रवृत्ति ने श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार के मन को आन्दोलित कर दिया । उन्होंने इसके उपाय के रूप में सामान्य हिन्दू जनता में धर्म के प्रति आस्था एवं निष्ठा बढ़ाने की दृष्टि से भगवन्नाम संकीर्तन, तथा प्राचीन देवालयों के जीर्णोद्धार और पुनर्निर्माण का मार्ग चुना । इसी भावना के अनुसार उन्होंने सालासर के हनुमान मंदिर की सेवा व्यवस्था को सुगठित तथा सुव्यवस्थित किया तथा पूजा-पाठों का प्रबंध किया । अयोध्या के भगवान राम की जन्मभूमि पर 64 कुंडी

से युक्त एक विशाल मंदिर राजा विक्रमादित्य ने बनवाया था। सन् 1528 में मुगल शासक बाबरने अयोध्या पर आक्रमण करके इस मंदिर के ऊपरी भाग को तोड़वाकर उसी के ऊपर एक मस्जिद बनवायी। अब भी उन प्राचीन खंभों में देवमूर्तियाँ बनी हुई है प्राचीन मंदिर की संलग्न भूमि-पर हिन्दुओं ने एक छोटा सा राममंदिर बनवा दिया था तथा उस पर पूजा होती थी। 25 दिसम्बर 1948 के दिन प्राचीन मंदिर(बाबरी मस्जिद)के भीतर भगवान राम प्राकट्य हो गया। जिला न्यायाधीश ने अंतिम निर्णय तक मूर्ति को सुरक्षित रखने तथा विधिवत पूजा अर्चना का आदेश दिया प्रान्तीय सरकार ने शान्तिभंग के भय से पुलिस का पहरा बैठा दिया। पोद्दार जी भगवान राम के दर्शन करने अयोध्या गये। भगवान की पूजा अर्चना तथा अखण्ड कीर्तन के लिए अर्थभार की व्यवस्था पोद्दार जी ने कराई। हिन्दू-मुस्लिम के बीच वैमनस्य न हो इसके लिए पोद्दार जीनेप्रयास किया था। इसी प्रकार श्रीकृष्ण जन्मस्थान की दुर्दशा देखकर एवं सुनकरके दस हजार रुपये भिजवायें उसके बाद 2018 वि0 में उस स्थान पर केशवमंदिर का निर्माण कराया सं0 2019 वि0 को विशाल श्री कृष्ण चबूतरा निर्माण कराया तथा कुछ समय बाद उस स्थान पर एक विशाल भागवत भवन की योजना बनाई गई। भागवत भवन का शिलान्यास 11 फरवरी 1965 को पोद्दार जी के हाथों सम्पन्न हुआ थी। इस पुनीत कार्य के उपलक्ष में उस स्थान पर श्रीमद्भागवत का सप्ताह परायण किया गया। उसके अतिरिक्त भागवत की कथा तथा भगवान की रास विशिष्ट लीला का भी आयोजन हुआ था। भागवत भवन के निर्माण हेतु पोद्दार जी ने देश के प्रसिद्ध समाजसेवी संस्थाओं तथा बड़े धनी व्यक्तियों से भी योगदान कराया।

उत्तर प्रदेशके तत्कालीन राज्यपाल श्री विश्वनाथ दास वैदिक साहित्य के भक्त तथा प्रशंसक थे उनकी इच्छा थी कि वैदिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से वेदों के अध्ययन एवं अध्यापन, ग्रन्थ प्रकाशन और

वैदिक साहित्य पर शोध कार्य की व्यवस्था हेतु पुरी [उड़ीसा] में एक वेद भवन स्थापित करने का निश्चय किया । गोरखपुर में श्री विश्वनाथ दास जी ने पोद्दार जी से चर्चा की थी, उन्होंने इस कार्य का केवल अनुमोदन ही नहीं किया बल्कि गोरखनाथ जी के मन्दिर के महंत दिग्विजय नाथ जी ने इस कार्य की उपयोगिता समझकर उसमें विशेष योगदान दिया था । देश के उद्योग पतियों तथा समाजसेवकों ने दान [सहयोग] दिया था तथा अनुरूप वेद भवन का निर्माण बद्रीनाथ, जगन्नाथ पुरी, रामेश्वरम्, कालड़ी [केरल] गोकर्ण [मैसूर], श्रीरंगम्, द्वारिका तथा प्रयाग में कराये गये । वेद विद्यार्थियों में वेदों के अध्ययन की व्यवस्था है । इस प्रकार पोद्दार जी ने हिन्दूधर्म एवं संस्कृति की रक्षा करने तथा उसके उन्नयन में सहायक हुये ।

गीताप्रेस की स्थापना एवं उसके सम्वर्धन में पोद्दार जी का प्रमुख हाथ था । श्री जयदयाल जी गोयन्दका तथा पोद्दार जी की आकांक्षा थी कि कल्याण के आदर्श के अनुसार ही गीताप्रेस का मुख्य द्वार का निर्माण कराया जाना चाहिए । मुख्य द्वार का रेखाचित्र भी इन दोनों महानुभाव ने तैयार किया । जिसके प्रत्येक अंश को प्राचीन कला पूर्ण मंदिर के आधार पर निर्मित किया जाना था । इस प्रवेश द्वार के निर्माण में उत्तर भारत के केदार नाथ के शिवमंदिर, अमृतसर के स्वर्णमंदिर, पश्चिम के आबू के जैन मन्दिर एवं द्वारिका के द्वारिकाधीश के मंदिर, दक्षिण के मदुरा के मीनाक्षी मंदिर, पूर्व के जगन्नाथ मंदिर [पुरी], भुवनेश्वर के लिंगराज मंदिर, कोणार्क के सूर्य मंदिर, दक्षिणेश्वर [कलकत्ता] के काली मंदिर, ब्रह्म देश के पैगोडा, मध्य भारत के सांचीस्तूप, खजुराहो के महादेव मंदिर, उज्जैन के महाकालेश्वर मंदिर, काशी के विश्वनाथ मंदिर, बोधगया के बुद्ध मंदिर, मथुरा के द्वारिकाधीश का मंदिर में प्रयुक्त कलाओं का समावेश किया गया है । इसमें हिन्दूधर्म के अंकुरित वैष्णव सम्प्रदाय, शैव सम्प्रदाय, सिख, बौद्ध, जैन

सभी के शासकों के प्रतिनिधित्व तीर्थ स्थानों के स्थापत्य को समावेश किया गया है । इसके साथ ही नीचे लिखे सात प्रकार के प्रतीकों को भी सम्मिलित किया गया है ।

1. पुष्प प्रतीक – पद्म (कमल)

2. वस्तु प्रतीक – शंख, कलश, बंसी, डमरू, शृंग.

3. आयुध प्रतीक – वज्र, गदा, त्रिशूल, धनुष-बाण,

4. उपकरण प्रतीक – माला, पुस्तक, दीप, आरती, धूपपात्र मृदंग आदि

5. चिन्ह प्रतीक – स्वास्तिक

6. वाहन प्रतीक – सिंह, वृषभ

7. शब्द प्रतीक – ॐ, उपनिषद् तथा गीता के श्लोकांश

भारतीय संस्कृति के इन समन्वित प्रतीक गीताद्वार के उद्घाटन के अवसर पर भारत वर्ष के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था कि "आपने भारत वर्ष के विभिन्न मंदिरों, स्तूपों, और देवालयों के अंगों को इकट्ठा लेकर एक भव्य द्वार का निर्माण किया है । जिन मंदिरों, स्तूपों आदि के अंग आपने लिये हैं वे भारत के सुदूर भिन्न-भिन्न प्रदेशों में स्थित है और ना मालूम कितने सौ वर्ष हुये जब उनका निर्माण हुआ था । इस तरह हजारों वर्षों और हजारों वर्गमील में निर्मित स्थापत्य के नमूनों से चुन-चुन कर आपने एक द्वार बनवाया, जिसका दर्शन करके कोई भी यात्री उन सभी इमारतों के अंग देख सकता है ।"

गीता द्वार देश के विभिन्न प्रान्तों में स्थित भारतीय संस्कृति के विभिन्न प्रतीकों का एक साथ दर्शन कराने के साथ ही साथ भारत की सांस्कृतिक एकता का प्रतीक भी है । इसके अतिरिक्त गीताद्वार की एक अन्य विशेषता है; गीता द्वार के मध्य खण्ड में स्थापित श्वेत संगमरमर

से निर्मित चार श्वेत अश्वों सहित सुन्दर रथ और उसमें स्थित भगवान कृष्ण और महारथी अर्जुन की प्रतिमायें । भगवान श्री कृष्ण श्वेत अश्वों की रश्मि हाथ में पकड़े हुये अर्जुन को कौरव पक्ष के योद्धाओं को देखने हेतु कह रहे हैं । यह दृश्य गीता के विशाल निर्मित द्वार की पूर्व भूमिका का है । इस प्रकार श्रीमद्भगवद् गीता के कथन के समय की स्थिति और परिस्थिति दोनों को व्यक्त करने वाला यह गीता द्वार है । जो गीता के अनन्य भक्त तथा प्रचारक श्री सेठ जयदयाल जी गोयन्दका एवं श्रीकृष्ण भक्त, संत श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार जी के भक्तहृदयों में निहित भगवद् गीता के प्रीति का प्रतिबिम्ब है । श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार के भक्त व व्यक्तित्व के कर्म स्थिति के कार्यों में भगवन्नाम प्रचार, साधक समिति की स्थापना, गीताज्ञान यज्ञ, अखण्ड संकीर्तन, सामाजिक तीर्थ यात्रा, हिन्दू-संस्कृति के संरक्षक के रूप में, मंदिरों का जीर्णोद्धार तथा गीताद्वार के निर्माण का वर्णन किया गया है उनकी आध्यात्मिक साधना एवं उनकी उच्च एवं उत्तम स्थिति के दिग्दर्शन से पूर्व श्रीमद्भगवद् गीता, श्रीमद्भागवत, रामचरितमानस आदि में वर्णित स्थितप्रज्ञ एवं संत लक्षण के मानक लक्षणों के आधार पर भी उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन कर लेना समीचीन होगा। मानक 40 लक्षणों को वर्णन की सुविधा की दृष्टि से कर्मगत, स्वभावगत एवं प्रभावगत स्थितियाँ जैसी तीन श्रेणियों के अन्तर्गत रखा गया है । इस वर्गीकरण में यह प्रत्यक्ष कठिनाई है कि भगवद्भक्त अथवा संत के लक्षण स्वभावगत ही होते हैं । संत द्वारा जो कर्म किये जाते है वे भी उनके सहज स्वभाव का क्रियात्मक रूप है । परोपकार की प्रवृत्ति स्वभावगत है परोपकार करना कर्मगत है।

6-4 कर्मगत स्थिति में नाम जप, भजन, कीर्तन, यज्ञ, हवन, व तर्पण, दान के में लगना के अतिरिक्त [1] भगवानकी लीलाओं का कथन - श्रवण [2] भगवद् भावना रखते हुये सदा दूसरों के हितकारी कार्यों में लगे रहना [3] पवित्र रहना [4] तपस्या करना [5] दूसरों को मान देना [6] जितेन्द्रिय होना [7] षड् विकारों पर विजय प्राप्त करना । [8] सत्य, प्रिय और हितकारी मधुर वाणी बोलना ।

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी के द्वारा भगवन्नाम जप जीवन के अन्तिम क्षण तक चलता रहा था । गम्भीर रूप से रुग्ण होने की दशा में भी वे नाम जप करते रहे थे । जीवन के अन्तिम 36 घण्टे पूर्व अर्थात् 20 मार्च 1971 की रात्रि की बात है पोद्दार जी के होंठ हिल रहे थे मानों उनमें कम्पन हो रहा हो । डा० चतुर्वेदी के मन समझ में आया कि मुँह में दाँत न होने के कारण होंठ काँप रहा है । यदि इस प्रकार बराबर होंठ में कम्पन होता रहा तो दुर्बलता बढ़ती जायेगी । वे पोद्दार जी के समीप बैठकर बोले— "भाई जी ! आपका होंठ काँप रहा है, दाँत लगा दिये जाय जिससे काँपना बन्द हो जाय, कम्पन दुर्बलता बढ़ायेगा । डा० साहब की श्रद्धापूर्ण सलाह से पोद्दार जी का हृदय भर आया और उन्होंने अपनी वास्तविक बात उन्हें बतलायी। बोले, "जप कर रहा हूँ ।" यह उस समय की बात है जब उनके शरीर का प्रत्येक कोष पानी की एक एक बूँद के लिए तरस रहा था, मुँह में "थ्रश" (एक रोग विशेष जिसमें जीभ, मसूढ़ों एवं गले में घाव हो जाते हैं, उन पर सफेद पपड़ी आ जाती है) के कारण ड्रापर से बूँद-बूँद करके पानी जीभ पर डाला जा रहा था । 6 दिन पूर्व से ही नस द्वारा ग्लूकोज चढ़ाने की क्रिया भी बन्द थी ।"[1]

भगवन्नाम कीर्तन के प्रेमी वे ऐसे थे कि 1968 से अपने निवास के पास अखण्ड संकीर्तन प्रारम्भ करा दिया था जो आज भी चल रहा है । भगवान् की कथा बड़े प्रेम से सुनते थे तथा प्रवचनों में भगवान की मधुर लीला का वर्णन करते थे जो पुस्तकों की पढ़ी हुई नहीं, स्वयं की अनुभूत भी होती थी । उन्होंने अपना सारा जीवन परोपकार में लगा दिया था इसलिये उन्हें परम श्रेष्ठ जन कहा है जो अपनी हानि सहकर परोपकार करते हैं ।[2]

(1) कल्याण पथ; निर्माता और राही पृ० सं० 201.
(2) परमश्रेष्ठ जन सहइ हानि निज अपनी करते पर उपकार ।
श्रेष्ठ मनुज जो निज हित की रक्षा कर, करते पर उपकार ।।
मध्यम जन, जो निज हित करते परहित का करते नहीं विचार ।
अधम मनुज जो स्व हित समझ कर पर हित का करते संहार ।।
नीच मनुज जो स्वहित बिना भी करते सतत पर अपकार ।
महा नीच जन अहित स्वयं का करते पर अपकार ।। पद रत्नाकर पद सं० 1377 6.16

शरीर के अस्वस्थ होने की दशा में राजस्थान में अकाल सेवा की व्यवस्था का संचालन दादरी से किया था । गोरखपुर में बाढ़ पीड़ितों की सेवा में वे अपनी बीमारी को भुलाकर, जुट पड़े थे । बाह्य एवं आंतरिक पवित्रता उनके जीवन का अंग थी । उन्होंने त्याग-तपस्या का जीवन उन्होंने व्यतीत किया । वे संसार को त्यागकर सन्यास लेना चाहते थे किन्तु भगवद् वचन वाणी यह सुनकर कि "सन्यास लेनेकी आवश्यकता नहीं है ।" तभी से रुके थे । वे (ब्राह्मण थे) ब्राह्मणों को, विद्वानों को पूरा सम्मान देते ही थे, जो भी उनके पास पहुँचा उसको भगवान का स्वरूप मानकर उन्हें मान व सम्मान देते थे । तुलसी दास जी ने मानस में भगवान राम द्वारा व्यक्त संत लक्षणों में —

"सबहिं मान प्रद आपु अमानी । भरत प्रान सम मम ते प्रानी ।।"

रामचरितमानस 7/37/4.

"सावधान मानद मदहीना ।" रामचरितमानस 3/45-9.

पोद्दार जी (का) पूरी तरह उतरता था । पोद्दार जी को पहले से कोई प्रणाम नहीं कर पाता था । दूसरे से प्रणाम किये जाने के पूर्व ही पोद्दार जी पहले प्रणाम निवेदन कर लेते थे । उन्होंने अपने रचित पदों में ऐसी शिक्षा दी थी जो भी उनके पास आया उनके व्यवहार से प्रसन्न होकर वापस लौटा ।

"जीव चराचर में बसे एक मात्र भगवान ।
उन्हें देख, नित कीजिये, सबका हित-सम्मान ।।"

— पद रत्नाकर पद सं0 1368.

"सबका नित आदर करो सबको दो शुचि प्यार ।
सबके लिये सदा रखो, खुला हृदय का द्वार ।।
सबसे सत्य वचन कहो, करो शुद्ध व्यवहार ।
सबकी शुभ सेवा करो, बनकर परम उदार ।।

6.17

सब में निज प्रभु को लखो सबको दो सम्मान ।
सब के हित में रत रहो, त्याग सभी अभिमान ।।

-पद रत्नाकर पद सं0 1373.

"देखो, दुखी-दीन-आर्त रोगी में, छिपे सदा भगवान ।
सादर सेवा करो यथोचित, तन मन धन से दो सम्मान ।।
दुखी जनों पर हँसो नहीं, मत करो उपेक्षा रख अभिमान ।
कभी दिखाओ मत वैभव मद, जाति शक्ति की झूठी शान ।।
प्यार करो, सुख दो सब ही को, यथोचित् आ मा सम-मान।
दुख में दुखी बनो दुखियों के, करो न कभी तनिक अपमान।।

-पद रत्नाकर पद सं0 1378.

जितेन्द्रिय तथा सद् विचार शील :-

पोद्दार जी इन्द्रिय जित थे कभी किसी इन्द्रिय को भगवान् प्राप्ति लक्ष्य से इधर-उधर जाने नहीं दिया । साधक-समिति बाद में साधक संघ के लिए निर्धारित नियमों में इन्द्रिय-निग्रह सम्बन्धी नियम थे । यथा आहार में नमक के सिवा अन्य सब मसालों का त्याग, भोजन अधिक से अधिक पाँच वस्तुओं के द्वारा ही बना होना चाहिए, क्रोध का सर्वथा त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन, पर स्त्री को बुरी दृष्टि न डाले, सत्यभाषण व्रत का पालन करे । बाद में इनको थोड़ा संशोधन करके नियमों में रखा गया कि सत्य बोलना, क्रोध न करना, पर स्त्री को नहीं देखना, यदि दीख जाय तो उसी समय सूर्य की ओर देख लेना, भोजन में तीन चीजों से अधिक नहीं खाना, दंभ न करना, किसी से घृणा न करना, दिल्लगी नहीं करना, अधिक नहीं बोलना, सब में भगवद् बुद्धि । यदि किसी नियम में भूल हो तो लिखकर गोयन्दका जी या पोद्दार जी को दिखाने का भी नियम था । इससे प्रकट है कि ये दोनों महापुरुष

सभी नियमों के पालन में निष्णात थे । बाद में साधक संघ की ओर से "साधक दैनन्दिनी" भेजी जाने लगी उसमें 12 नियम ग्रहण के, तथा 16 नियम, त्याग के रखे गये । त्याग में कराये हिंसा का त्याग, असत्य का त्याग, पर स्वापहरण का त्याग, परस्त्री और परपुरुष का स्पर्श त्याग, क्रोध का त्याग, परापवाद का त्याग, मिथ्याभाषण का त्याग, अश्लील विनोद का त्याग, मादक वस्तुओं का त्याग, उत्तेजन का त्याग, वेश्या नृत्य का त्याग, सदाचार नाशक चित्रपटों का त्याग, जुआ त्याग, अशुद्ध भक्ष्य - पान का त्याग तथा हिंसायुक्त वस्तुओं का त्याग रखे गये थे ।

पोद्दार जी इतने त्यागी, सर्वप्रेमी, सबके विश्वासी, और इतने उचित कि उनके पास आकर अपने घर गृहस्थी की गूढ़तम बातों को सुनाकर समस्या का समाधान पाते थे । साधक, त्यागी, साधु-सन्तों का भी मार्ग दर्शन एवं परामर्श किया करते थे ।

सत्य प्रिय वाणी :-

पोद्दार जी का जीवन साधनामय था ही-सम्पर्क में आने वाले कार्यकर्ताओं को भी साधनामय जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देने के उद्देश्य से पोद्दार जी ने एक साधन समिति की स्थापना वैशाख शुक्ल 4, संवत् 1986 (1929सन्) में की थी इसके कुछ नियम व उपनियम निर्धारित किये गये थे इनमें 9 वाँ नियम था 'सत्य भाषण के व्रत का पालन करें/करना के निरीक्षण के बाद जब पोद्दार जी ने देखा कि साधक लोग नियमों के पालन में शिथिल है तो उन्होंने साधन समिति को भंग कर दिया था किन्तु सदस्यों के अनुरोध पर माघ शुक्ल 8, संवत् 1990 को पुनः साधन समिति की स्थापना की । इसमें लिए गए 16 नियमों में 6वाँ नियम सत्य बोलने का तथा सोलहवाँ नियम था "नियमों

6.19

की भूल निकाल कर गोयन्दका जी या हनुमान प्रसाद जी को दिखाने का है। इसके 9 उपनियम भी बनाये गये थे उनमें पाँचवा उपनियम था “निन्दा न करना छठवाँ उपनियम था “अधिक नहीं बोलना “इस प्रकार वाणी संयम पर अत्यधिक जोर दिया गया था। पोद्दार जी साधन समिति के संस्थापक, एवं संचालक थे। साधक समिति के सदस्य अपनी दैनन्दिनी पोद्दार जी के समक्ष रखते थे वे सदस्य की त्रुटियों को सुधारने की प्रेरणा प्रिय एवं मधुर शब्दावली में देते थे।

कल्याण में “शिव” के उपनाम से उन्होंने लिखा है - “निश्चय करो-मीठी और हित भरी वाणी दूसरों को आनन्द, शान्ति और प्रेम का दान करती है और स्वयं आनन्द शान्ति और प्रेम को खींचकर बुलाती है।”

“मीठी और हितभरी वाणी से भगवान का आशीर्वाद उतरता है और उससे अपना-पराया सबका कल्याण होता है। मीठी और हितभरी वाणी में ही सत्य की रक्षा होती है और उसी में सत्य की शोभा है।”

“दूसरा कोई कड़ुवा बोले, गाली दे तो उसे ग्रहण मत करो- तुम पर उसका कोई असर नहीं होगा, तुम पर तो तभी असर होता है जब तुम उसे ग्रहण करते हो। तुम जिसकी भाषा नहीं समझते, चाहे वह कितनी ही गाली दे, तुम्हें कोई दुःख नहीं होता या तुम शब्द का अर्थ समझने पर भी जब तक यह समझ रहे हो कि वह किसी दूसरे को कोसी गाली बक रहा है, तब तक दुख भी नहीं होगा। दुःख तब होगा जब तुम समझोगे कि गाली मुझको दे रहा है, उसका मतलब यह है कि तुम गाली को ग्रहण कर रहे हो।” xxx कड़ुवी और अहितकारिणी वाणी सत्य को नहीं बचा सकती और उसमें रहने वाले आंशिक सत्य का स्वरूप भी बड़ा कुत्सित और भयानक हो जाता है।”[1]

(1) कल्याण कुंज भाग 3 पृ0 सं0 51 से 53.

सम्पादक मण्डल के सदस्यों की जीवनचर्या के कुछ अपने नियम थे । उनके अनुसार दोनों समय - संध्या, गीता का स्वाध्याय और पाठ, रामचरित मानस का पाठ, अधिक हरिनाम स्मरण, सर्वत्र भगवद्दर्शन, अक्रोध, सत्य भाषण, अल्प भाषण, मौन रहना, तथा कुछ शारीरिक व्यायाम करना । इन नियमों में दो बड़े ही महत्व के थे - 'एक तो सर्वत्र भगवद् भाव' और दूसरा प्रति आधे घण्टे पर भगवान का स्मरण तथा स्मरण आने पर उसे देर तक स्थिर रखने का प्रयास । सांयकालीन सामूहिक प्रार्थना के बाद पोद्दार जी की उपस्थिति में सब लोग उक्त नियमों के सम्बन्ध में परस्पर विचार-विमर्श करते और यह देखते कि त्रुटि कहाँ हुई है तथा उसे कैसे सुधारा जा सकता है ।'[1]

इस प्रकार से अक्रोध, सत्यभाषण, अल्पभाषण एवं मौन, वाणी संयम से सम्बन्धित थे । पोद्दार जी इस सम्बन्ध में शिक्षा-बोध भी देने की कृपा करते थे । पोद्दार जी द्वारा रचित 3 पद इस सम्बन्ध में दृष्टव्य है ।

"दया करो तुम जीव मात्र पर, सबको करो स्नेह का दान ।
बोलो सत्य मधुर हित कर नित, जपो नाम हरिका निर्वान ।।"

पद रत्नाकर पद सं0 1500

"दुख अहित उद्वेग कर कटु मिथ्या निस्सार ।
तिरस्कार मय हो सहज जिनसे वैर प्रसार ।।
ऐसे वचन न बोलिये कभी कहीं भी भूल ।
जिनके सुनते ही चुभे कठिन हृदय में शूल ।।
सत्य मधुर हितकर वचन वाणी का शृंगार ।
सुनते ही हो हृदय में जिनसे सुख संचार ।।
मंगल वचन उचारिये विनय भरे सत्कार ।
जिनसे हित सुख प्रेम का हो सबमें विस्तार ।। पद रत्नाकर पद सं0 1501.

[1] कल्याण पथ: निर्माता और राही पृष्ठ 259.

संत महा गुन खानी ।

मधुर सदा हितकर प्रिय लागै वचन उचारत बानी ।

पद रत्नाकर पद सं0 1288.

पोद्दार जी कभी कटुवी भाषा का प्रयोग नहीं करते थे । सबके प्रति हितकारी मीठी हितभरी मीठी भाषा ही बोलते थे । कितना ही दीनहीन, कष्ट में घिरा अथवा अपराधकर्ता व्यक्ति आते थे उनको अपनी प्रेमयुक्त मधुर वाणी से उनका हित सम्पादन करते थे, नयी जीवन दिशा प्रदान करते थे ।

गोविन्दभवन

पोद्दार जी कलकत्ते में गोविन्दभवन से सत्संग कराकर लौट रहे थे एक बालक ने हाथ फैलाकर अपने को भूखा बताते हुए कुछ पैसों की याचना की । पोद्दार जी ने उसे दीन जानकर कुछ पैसे दिये। वह वास्तव में गिरहकट था । कुछ दूर पीछे आकर उसने पोद्दार जी के जेब में हाथ डालकर रुपये निकालने चाहे । पोद्दार जी ने उसका हाथ पकड़ लिया । और सड़क के किनारे ले जाकर उससे कहा, भइया ! तुम रुपये के लिए ही हाथ डाल रहे थे न? यह लो रुपये ।" पोद्दार जी ने अपनी जेब से निकाल कर सब रुपये उसे दे दिये । फिर कहा कम से कम इतना करो कि रुपयों का पता लगाने के लिए "मैं भूखा भूखा हूँ" ऐसा कहकर भीख मत माँगो । ऐसा करने का फल यह होगा कि यदि कोई वास्तव भूखा आदमी भीख माँगेगा तो उसको भी भीख नहीं मिलेगी । दूसरे दिन युवक ने पोद्दार जी के निवास का पता लगाकर भेंट की तथा एकान्त में मिलने का समय माँगा । एकान्त में दीनवाणी में कहा - मेरी एक बूढ़ी माँ है. माँ के तथा अपने भरण-पोषण के लिये मेरे पास और कोई साधन नहीं है । जो लोग यह जानते है कि मैं गिरहकट हूँ । वे न तो पास खड़ा होने देते है, न काम मिलने देते हैं । कृपाकर मुझे कहीं पर काम दिला दीजिये । पोद्दार जी ने उसे अपने पास ही काम पर लगा लिया किसी को उसके बारे में नहीं बताया और वह युवक सम्मानपूर्वक कार्य करता रहा।

एक बार पुनः रुपयों की चोरी करने पर जब तलाशी ली जाने लगी तो पोद्दार जी ने उसकी प्रतिष्ठा बचाने हेतु गीताप्रेस आवश्यक पत्र देकर भेज दिया । रात्रि के समयोपरान्त में वह पोद्दार जी के चरणों में लिपट कर फूटकर रोते हुए क्षमा याचना करने लगा मैंने ही चोरी की थी, आपने मेरी लाज रखी है अन्यथा आज न जाने क्या होता? पोद्दार जी ने उस युवक के सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए सान्त्वना दी" भैया ! ये रुपये तो तुम अपने पास ही रखो । तुम्हारी कोई आवश्यकता थी, तभी तो तुमने रुपये चुराये । ये रुपये भी अपने ही है । अब अपने पास ही रखो । पर भैया ! तुमने चोरी क्यों की? तुम्हारे कोई अभाव था तो मुझसे कहो । यदि मैं तुम्हारे कहने पर नहीं देता, फिर तुम चोरी करते । अच्छा कोई बात नहीं । अब तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा ।" पोद्दार जी के इस दैवी व्यवहार से उस युवक को नवीन प्रकाश मिला ।

रामचरित मानस में भगवान राम ने अपने प्रिय भाई भरत से सन्त-लक्षण-वर्णन में कहा है —

"सम-दम-नियम नीति नहिं डोलहिं,
परुष वचन कबहूँ नहिं बोलहिं ।। रामचरितमानस 7/37/8.

पोद्दार जी ने इसे अपने जीवन में इसे चरितार्थ किया था ।

6-5 स्वभावगत स्थिति :-

इस श्रेणी के लक्षणों का वर्णन की सुविधा रहित-भावना वाले (नकारात्मक) तथा सकारात्मक भावना वाले दो वर्गों में विभाजित करके विचार किया जा रहा है ।

रहित भावना वाले लक्षण :-

1. अहंकार रहित 2. आकांक्षा रहित 3. ममता रहित 4. द्वेषरहित

5. भयरहित 6. क्रोध रहित 7. उद्वेग रहित 8. शोक रहित
9. हर्ष रहित 10. मानसिक दुखों का अभाव.

पोद्दार जी उक्त सभी गुणों से सम्पन्न थे । कल्याण में अंहकार में अभिमान के सम्बन्ध में "उन्होंने "शिव" उपनाम से लिखा है —

"याद रक्खो - जो भला बनना नहीं चाहता, पर भला कहा जाना चाहता है, वह तो स्वयं अपने को धोखा देता ही है, परन्तु किसी अंश में भला बनकर उसका अभिमान करता है, वह भी हानि ही उठाता है । याद रक्खो - मनुष्य को हर क्षेत्र में भला बनने की निरन्तर चेष्टा करनी चाहिये, परन्तु भलाई का अभिमान कभी नहीं करना चाहिये।"

"याद रक्खो - जो मनुष्य अभिमान से यह कहता है कि मुझसे कभी भूल होती ही नहीं, वह बहुत बड़ी बड़ी भूलें किया करता है । जो कहता है । जो कहता है कि मुझे कभी क्रोध होता ही नहीं, वह बहुत जल्दी क्रुद्ध हो जाया करता है । अपनी कमजोरियों के लिये भगवान् से बल माँगते हुए प्रयत्नशील रहना चाहिए, जिससे मन क्रुद्ध न हो ।"

"याद रक्खो - अभिमान भगवान् से दूर करता है और दैन्य भगवान् के चरणों में पहुँचा देता है ।"

भाई जी निरभिमानता एवं दैन्य की मूर्ति ही थे । 21 फरवरी 1965 को वृन्दावन नगरपालिका की ओर से भाई जी अभिनन्दन किया गया था । भाई जी ने उत्तर के भाषण के बाद जो शब्दकहे वे उक्त कथन को सत्य सिद्ध करेंगे । " यहाँ उपस्थित आप सब व्रजवासी महानुभाव जिनकी चरण-रज का लाभ लेने का मैं अधिकारी नहीं, नीचे बैठे है, और मैं यहाँ स्टेज पर बैठ गया हूँ — वर्तमान प्रथा ही ऐसी है । मैं यहाँ व्रज में किसी भाव को लेकर आता हूँ । मेरे लिये वृन्दावन का

प्रत्येक परमाणु आदरणीय-वन्दनीय है । मैंने अभिनन्दन पत्र प्रदान करने तथा स्वीकार करने का विरोध किया है । सम्भव है, मेरे भीतर अधिक मान पाने का प्रयास हो । मनुष्य के अन्दर एक छिपी कामना रहती है – मान और बड़ाई पाने की । बहुत बड़े-बड़े त्यागी महात्मा, जो जगत के समस्त पदार्थों का त्याग कर चुके हैं, उनमें भी न कहने पर, न चाहने पर, अपितु मना करने पर भी मान बड़ाई की अभिलाषा छिपे रूप में रहती है । श्री प्रबोधानन्द सरस्वती के शब्द हैं —— "सर्वमानं कृपयाति घोर नरकं नीचापमानं सदा ।" मैंने अभिनन्दन पत्र के लिये विरोध किया था, इसके बदले में मान के और शब्द सुनने को मिले । इनमें चित्त में प्रसन्नता नहीं हुई होगी, यह अन्त-र्यामी प्रभु ही जानता है । आप सब आशीर्वाद दें – यह मान चाहने का, बड़ाई चाहने का मनोरथ आप सबके आशीर्वाद से दूर हो जाय तथा जैसे फूलों की माला पहनने में सुख-प्रसन्नता होती है, वैसे -ही जूतों की माला पहनने से भी सम प्रसन्नता की अनुभूति हो ।[1]

'लोग मुझे संत, भक्त या महात्मा मानते हैं । ओह, कितना बड़ा धोखा है । जीवन में कितनी अपार दुर्बलताएँ हैं, कितनी मलिनताएँ हैं और कितने दोष-कलुष भरे हैं । यह सब देखकर हृदय भर आता, सहज दैन्य भाव उदय होता । आँखों में आँसू छलक आते, मन-दयासागर अकारण कृपालु, सहज सुहृद पतितपावन के पवित्र पद पद्मों में लोट जाता एवं बार-बार करुणापूर्ण भाव से अपने दोष बता बताकर अपनी अत्यन्त दीन दशा की ओर दीनबन्धु की दया दृष्टि को आकर्षित करता ।' [2]

"हे राधे ! हे श्याम प्रियतमे ! हूँ मैं अतिशय पामर दीन,
भोग-रागमय-काम-कलुषमय मन प्रपंचरत नित्य मलीन ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 19

---

[1] भाई जी पावन स्मरण पृ० 554 "श्री भाई जी दैन्य"
[2] पद रत्नाकर पृष्ठ 3-4 भूमिका.

"दीन हीन अति, अगति-गति, विषयनि को नित दास ।
करौं विनय मोहि सुख, अजस मैं, धर मन उल्लास ॥"

— पद रत्नाकर पद सं03।

"कैसे विनय सुनावौं स्वामी ।
कनककामिनी-रस-बस निसि-दिन सहज कुमारग गामी ।
भूल्यो परम अनुग्रह प्रभु को ऐसो नोन हरामी ॥
हौं अति कुटिल, कुकर्मी, कामी, नरक-कीट आ-धार।
निज दिसि देखि, विरद लखि, मोहि उबारहु परम उदार।।"

— पद रत्नाकर पद सं07।

"दयामय मोहिं दासता दीजै ।
सहज कृपायत दीन बन्धु ! अपनौ सेवक करि लीजै ।।
सगुन खान, अघ मल सौं मल, हौं अति मूढ़ गँवार।
सेवा की नहिं नेक जोग्यता, नहिं सेवा अधिकार ।।"

— पद रत्नाकर पद सं075

"प्रभु ! तुम अपनो विरद सँभारो ।
हौं अति पतित, कुकर्मनिरत, सुख मधु मन को बहु कारो ।।
तृष्ना-विकल, कुमन, अतिपीड़ित काम-ताप सौं जारो ।
तदपि न छूटत विषय सुख-आसा, करि प्रयत्न हौं हारो ।।"

— पद रत्नाकर पद सं080

आकांक्षारहित – इच्छा रहित :-

पोद्दार जी ने वसीयत नामा के प्रारम्भ में लिखा है —

"मेरी कोई स्वतन्त्र इच्छा नहीं है । भगवान् के मंगल विधानके अनुसार जो कुछ हुआ है, हो रहा है और होगा – वही ठीक है और वही मेरी इच्छा है ।"[1]

(1) भाई जी पावन स्मरण पृ0 सं0 556.

पोद्दार जी द्वारा रचित अभिलाषा सम्बन्धी पदों से स्पष्ट होता है कि उन्हें किसी वस्तु की इच्छा या चाह नहीं थी-

~~*नहींxचाह~~

*नहीं चाहता राज्य चक्रवर्ती मैं नहीं चाहता स्वर्ग ।
नहीं चाहता विधि-सुरपति-पद, नहीं चाहता मैं अपवर्ग ।।
नहीं चाहता योग-सिद्धि मैं, नहीं चाहता पद पाताल ।
नहीं मुक्ति चतुर्विध, दुर्लभ लोकाद्यादि विशाल ।।

-पद रत्नाकर पद सं01022.

नहीं मान-धन, कीर्ति भोग की, नहीं मोक्ष की किंचित चाह ।
नहीं प्रशंसा-अपमान, दुःख की, तनिक नरक की भी परवाह ।।
सदा-सर्वदा एक मात्र तुम करो हृदय में ही अधिवास ।
रहो दीखते बाहर भी सर्वत्र सदा करते मृदु हास ।।

-पद रत्नाकर पद सं0 1044.

पोद्दार जी केवल भगवान् की मर्जी पर चलना चाहते थे । सभी कर्मों एवं घटनाओं के पीछे वे भगवान् के मंगल विधान को देखते व मानते थे। ऐसी ही उन्होंने प्रार्थना भी की है —

पूरी हो सर्वत्र सर्वदा, स्वामी ! सदा तुम्हारी चाह ।
मेरे मन में उठे न कोई, इसके सिवा दूसरी चाह ।।
उठे कदाचित् तो मालिक !, तुम मत पूरी करना वह चाह ।
अपने मन की ही करना, मत मेरी करना कुछ परवाह ।।

- पद रत्नाकर पद सं0 1042.

*सारी ममता सदा को हटी जगत से पूर्ण।
लगी चाव "प्रभु पद-कमल-रज" पावन के चूर्ण ।।
एक मात्र प्रभुपद-कमल-रज ही मेरी वस्तु ।
ममता क्या, सत्ता मिटी हुआ समस्त अवस्तु ।।

मैं मेरे प्रियतम परम केवल रहे ललाम ।
मोह मिटा, माया मरी, रह प्रेम अभिराम ।।

– पद रत्नाकर पद सं० 1161.

"सफल एक आश्रय प्रभु-पद मैं मन प्रभु की स्मृति मैं ही लीन ।
प्रभु की इच्छा मैं सब निज इच्छा अर्पित, मन इच्छा हीन ।।"

– पद रत्नाकर पद सं० 1172.

जीवन बना रहे यही इच्छा सबसे बलवती हुआ करती है शरीर बना रहे, प्राण संग न छोड़े ऐसी प्रबल मोह पूरित आंकाक्षा सामान्य जन मैं रहती है । पोद्दार जी कितने निःसंग थे उसको जानने के लिए नीचे लिखे उनके शब्दों को उद्धृत करना उचित होगा — "मेरा दृढ विश्वास है कि जो होना है, वह होगा ही, पहले से ही उसके लिये रोने क्यों बैठे? मृत्यु जब आनी होती है तभी आती है, उसकी चिन्ता और भय से बार-बार क्यों मृत्यु को प्राप्त हो ?"[1]

"मेरे मन मैं न जीने की इच्छा होती है, न मरने की । जैसा भगवान् ने रच रखा है, वही होना चाहिए । हम 'शरीर तो है नहीं, हम हैं "आत्मा" । शरीर के जाने से आत्मा का कुछ बनता बिगड़ता नहीं । पीड़ा शरीर मैं होती है । कभी अनुभव होती है, कभी नही भी होती । आप लोग निश्चिन्त हो जाँय और निश्चय कर ले तो कल से दवा बन्द कर दें । फिर जैसा होना होगा, हो जायेगा। उसके लिए भगवान् के विचार बदलने की हम लोग चेष्टा ही क्यों करें? भगवान् से प्रार्थना हो तो उनके विधान के अनुकूल हो । यदि कहीं भगवान् के विधान के विरुद्ध हमारी इच्छा हो, तो उसे वे पूरी न करें- यह प्रार्थना करनी चाहिए ।"[2]

---

[1] कल्याण पथ; निर्माता और राही पृ० सं० 189.
[2] ,, ,, ,, पृ० सं० 193.

26 फरवरी 1971 को पोद्दार जी ने डा० चक्रवर्ती को अपने पास बुलाकर कहा, "शरीर में मेरी आस्था नहीं है। शरीर जब जाना होगा, जायेगा ही। कर्तव्य है कि जब तक शरीर है, तब तक इसकी संभाल करनी चाहिए। हमारा जब शरीर के साथ सम्बन्ध रहता है तब वेदना का अनुभव होता है, पर जब शरीर से अपने को पृथक् अनुभव करता हूँ। तब कष्ट के अनुभव का प्रश्न ही नहीं रहता।"

दिवंगत होने के 12 दिन पूर्व दिनांक 10 मार्च की रात्रि में पोद्दार जी के मुख में घबराहट के से चिन्ह लक्षित हुए पास में बैठी दौहित्री राधा ने कहा, "नाना जी! आपका जी घबरा रहा है? पोद्दार जी ने कहा, "हाँ, जी घबराता है पर, मेरा क्या लेता है? दौहित्री ने आगे कहा "नाना जी! आपकी व्याकुलता देखकर हम लोगों का भी जी घबराता है।" पोद्दार जी पुनः बोले, "न जीने का अर्थ है, न मरने का अर्थ है, सब व्यर्थ है। जो जी को अपना मानता है, उसका जी घबराता है। मैं जी को अपना नहीं मानता तो मेरा जी क्यों घबरायेगा?"।

भीषण रोगों से आक्रान्त, व्यक्ति के मुख से निकली उक्त शब्दावली उनके उच्च भगवत् व्यक्तित्व को स्पष्ट एवं सिद्ध करती है। जहाँ किसी प्रकार की आकांक्षा एवं ममता का स्थान नहीं रह गया था।

द्वेष रहित, भय रहित, क्रोध रहित, उद्वेग रहित, शोक रहित, हर्ष रहित, मानसिक दुःखों का अभाव:-

पोद्दार जी ने अपने द्वारा लिखित वसीयतनामा में अपनी स्थिति को निम्नांकित शब्दों में व्यक्त किया है —"जब से मैंने होश संभाला है— जहाँ तक मुझे याद है, मैंने राग-द्वेष वश जानबूझ कर ऐसा को

---

[1] कल्याण पत्र; निर्मलता और राही पृ० सं० 194.

कोई काम प्रायः नहीं किया है, जिससे किसी को दुःख पहुँचे या किसी के भी हित का नाश हो ।"

सबसे बड़ा भय मृत्यु का होता है । पोद्दार जी ने स्वयं को क्रांतिकारी गतिविधियों में सम्मिलित किया था और बड़ी योग्यता तथा साहस भावना से समितियों का संचालन किया था । प्रत्येक क्रांतिकारी आत्म बलिदान करके भारत माता को स्वतन्त्र कराने के लिए दृढ़ संकल्पित होता था । फाँसी के फंदे को हँसते-हँसते चूमता था ऐसे व्यक्तियों को शरीर का मोह या भय नहीं रह जाता । पोद्दार जी के अपने दिन प्रतिदिन के आचार-व्यवहार से परिलक्षित होता था कि वे मानते है कि सब कुछ भगवान् का है और हर घटना के पीछे उनका मंगल विधान कार्य कर रहा है ।

होता जो होना है, उसके ही करने से ।
नहीं हमें कोई मतलब जीने-मरने से ॥
नहीं रहा अब किसी द्वन्द्व से कुछ परिचय है।
हुआ करे कुछ भी, यह तो अब नित निर्भय है॥
लिखता लिखवाता वही, करता-करवाता वही।
पता नहीं क्या मता है, पता नहीं क्या है सही॥

—पद रत्नाकर पद सं0 1110.

पाकर तुमसे अमित शक्ति सुख, मैं भी बना शक्ति सुख धाम ।
निर्भयता, भय पाप-ताप का, हुआ सर्वथा काम तमाम ॥
निर्भय मैं, निश्चिन्त हो गया, उदित तुम्हारा मुझमें ज्ञान ।
देख रहा मैं अखिल विश्व में, एक तुम्हीं को हे भगवान ॥

—पद रत्नाकर पद सं0 1117.

पोद्दार जी में क्रोध, उद्वेग तो था ही नहीं, वह हर्ष-शोक से रहित थे । अपने प्रति हुए किसी अनुचित कार्य से वे शोकाकुल नहीं हुए । किसी प्रकार की सुख-सुविधा की वह अपेक्षा ही नहीं करते थे दूसरों के दुःख

6.30

वे दुखी को दूर करने में अपने को धन्य समझते थे दूसरे के गुण, दूसरे की समृद्धि दूसरों को सुखी देखकर प्रसन्न (हर्षित) होते थे । रामचरितमानस में कहा है,—

जे हरषहि पर संपति देखी । दुखित होंहि पर विपति विसेषी।।
निज गुन श्रवण सुनत सकुचाहि। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं ।

—श्रीरामचरित मानस (2)129/7,(3)45/1

पोद्दार जी की स्थिति का वर्णन उन्हीं के शब्दों में अवलोकनीय है,

"क्रोध , कपट, मद, चपलता, दुख असीम अशांति ।
दूर हुआ, अखिल सकल, मिटी निराशा, भ्रांति।।
शांति सरलता अभयता स्थिरता सुख विश्राम ।
जीवन के साथी हुए आठों याम अविराम ।।
उमड़ा मेरे हृदय में आनन्द-सुधा-समुद्र ।
नष्ट हो गये सर्वथा शोक - विषाद अक्षुद्र ।।
निकल रहा मुझसे सदा स्वर अति मधुर उदार।
दुख-कष्ट की मिट गई सारी आर्त - पुकार ।।
मेरे जीवन में भरा अतुल अमित आनन्द ।
रहे नित मुझमें भरे पूर्ण सच्चिदानन्द ।।

—पद रत्नाकर पद संख्या ।।85

"बीत" रहा है मेरा पल-पल, उनकी सेवा में दिन रात ।
लगे हुए मन-मति-इन्द्रिय, आती अब अन्य न मन में बात।।
छूट गये सब जप-तप, सेवा-पूजा आदि भले सब काम ।
तब फिर कर पाते कुछ कैसे मोहामर्ष-लोभ-मद-काम ।।

—पद रत्नाकर पद संख्या ।।86

<u>सकारात्मक भावना</u> :-

<u>कृपालु, मृदु स्वभाव, सरलता मैत्री भाव धैर्यवान् क्षमाशील विनय अकिंचन भाव विरति सत्यनिष्ठा:-</u>

पोद्दार जी ने मानवजगत की सर्वाधिक सेवा की है किन्तु उनके हृदय में अन्य जीवों के पोषण एवं त्राण की भावना समानान्तर गति से विराजती थी । रतनगढ़ के मकान का पीछे का भाग खुला हुआ था उसमें प्रतिदिन प्रातः मोर, कबूतर एवं अन्य पक्षियों के लिए अन्न डाला जाता था प्रतिदिन सैकड़ों पक्षी दाना चुगते थे । संवत् 2008 के वैशाख में पोद्दार जी रतनगढ़ में थे साधनाकक्ष में थे साधागत थे अचानक उनकी दृष्टि थे कमरे के कोने में गयी वहाँ चिड़िया के दो बच्चे मरणासन्न स्थिति में पड़े थे पोद्दार जी साधना बंद करके शीघ्र वहाँ गये तथा मरणासन्न पक्षी शावकों के मुख पर पानी डाला तथा सेवा करते रहे । कुछ दिनों में दोनों बच्चे स्वस्थ हो गये पोद्दार जी का योग क्षेम का भार स्वयं भगवान ने ले रखा था भगवान् पोद्दारजी के साथ नित्य रहते थे । वह सब में भगवान् को देखते तथा अनुभव करते थे । पोद्दार जीनेस्वयं व्यक्त किया है—

रहूँ कहीं कैसे भी, रहते नित्य साथ मेरे भगवान् ।
जाऊँ कहीं, वहीं दिखती, मुझको उनकी मधुमूर्ति महान् ।।
बसे सदा मेरे अन्दर, वे बाहर भी नित रहते पास।
ममता-मोह मिटा सारे सब का है, प्रभु में हुआ पूर्ण विश्वास ।।
पाप-ताप, भय-शोक, मिटे सब, नष्ट हो गया मोह समूल।
मिटे मोह के कार्य भयानक, सभी जाति के सारे शूल ।।
मधुर भयानक जग का कुछ कैसा भी परिवर्तन आज ।
दिखता मुझे मधुर लीलामय, प्रभु का ही सब लीला साज ।।

-पद रत्नाकर पद सं0 ~~1168~~.1169.

किसमें पाप दोष देखूँ मैं, किसमें अब देखूँ शैतान ।
कैसे किसे पराया समझूँ, जब कि बने सबमें भगवान ।।

-पद रत्नाकर पद सं0 1169.

कभी विलग होते न पलभर, वे मेरे प्यारे भगवान ।
रखते सदा पास मुझको, वे रहते स्वयं पास मतिमान ।।

सदा देखते रहते मेरी सारी छोटी मोटी बात ।
रखते सदा सँभाल, निभाते योग क्षेम बिना व्यवधान।।

—पद संख्या पद सं० 1176.

7 मार्च 1971 ई० को भीषण बीमारी के समय परिवारीजनों के समक्ष उनको समझाते हुए कहा था "जब से मैंने होश सँभाला है किसी का बुरा नहीं किया है, न चाहा है. सबमें भगवान् को देखने का प्रयत्न किया है. इसमें कहीं कहीं सफल हुआ हूं, कहीं असफल भी । शत्रु तो मेरा कोई है ही नहीं.....शरीर में कष्ट होने से मुझे उसकी अनुभूति होती है.....पर मैं भीतर से बहुत प्रसन्न हूं ।"[1]

वे वास्तव में अजातशत्रु थे सभी उन्हें स सुहृद मानते है । वे सही अर्थों में सब सबके भाई जी थे ।

उनके मृदुस्वभाव, सरलता, क्षमाशीलता, धैर्य सभी गुण को प्रदर्शित करने वाली श्री कृष्णगोपाल जी माथुर द्वारा लिखित घटना को उद्धृत करना उचित होगा । तीर्थ यात्रा ट्रेन द्वारा भाई जी जब उज्जैन पहुँचे थे — क्षिप्रा स्नान तथा देवदर्शन के लिए किराये की कारों का प्रबन्ध किया गया था ।"सब कारों का किराया चुका दिया गया, किन्तु थोड़ी देर बाद एक सज्जन ने आकर दुबारा किराया माँगा— भूल से नहीं, जानबूझकर और भाई जी के कहने से उन्हें दूसरी बार किराया दे दिया गया । यह बात कुछ यात्री जान गये, वे आपस में काना-फूसी करने लगे । उज्जैन के लोगों ने बताया कि वे महाशय तो इसी प्रकार के कर्म किया करते हैं । यह बात (अप्रिय किन्तु) भाई जी के कानों तक पहुंची । उन्होंने तत्काल सबको चुप कर दिया और सबको समझाया। कि इस विषय की चर्चा भी न की जाय । भाई जी की अनुमति से यह बात वहीं ठंडी पड़ गयी, भुला दी गयी । जानकार जान गये कि भाई जी कितने उदार हैं. अपनी हानि सहकर — दूसरे की बेईमानी देखकर भी उसकी इज्जत आबरू पर जरा भी आँच नहीं आने देना चाहते । श्री भाई जी की ऐसी शालीनता देखकर जन-समुदाय दंग रह गया और

[1] भा०च०क०मा० - 510

भाई जी के इस व्यवहार की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगा ।"[1]
अभावों एवं कष्टों को भी पोद्दार जी ने भगवान का मंगल प्रसाद माना है - इस भावना को उन्होंने नीचे लिखे पद में व्यक्त किया है ——

"भला किया प्रभु ! तुमने मुझको देकर कटु औषधि का दान ।
भला किया तन चीर निकाला अन्दर का मवाद बलवान ।।
भला किया जो छीना तुमने मीठा जहर भोग का ढेर ।
भला किया जो दिया अभावों का पूरा समूह सब ओर ।।
भला किया जो छीन मान-विष दिया सुधा सुन्दर अपमान।
भला किया जो छुड़ा दिया दुर्लभ भोगियों का अभि-मान ।।

पद रत्नाकर पद सं0 1196

विरति एवं अकिंचन भाव को दर्शित करने वाले पदों को भी देखा जाना समाचीन होगा ।

"प्राणी-पदार्थ किसी पर भी अब मेरा रहा न कुछ अधिकार।
मुझ पर भी अब रहा किसी का किंचित् भी न कहीं अधिकार।।
कर्म अकर्म विकर्म सभी मिट गये, रहा न कहीं कुछ शेष ।
भोक्ता के अभाव में अब कुछ रहा न फल-गति का निर्देश ।।
मिटे सभी संकल्प, हो गया सबका तुममें ही अवसान ।
कौन, कहाँ, कैसे क्या करता-रहा न इसका भी कुछ भान ।।

-पद रत्नाकर पद सं0 1202.

"नहीं अब कहीं रह गया, जग से मेरा कुछ सम्बन्ध ।
प्रकृति-राज्य के मिटे टूट सब चिरकालीन अविद्या बंध।।
रहे शरीर, जाय या अब ही आये धन या जाय तमाम ।
मिले मान या कीर्ति, भले अपमान-अकीर्ति मिले बेदाम ।।
नहीं स्पर्श कर सकते मुझको चिन्ता-भय-विषाद मद-मान।

1। भा0प0पो0ग्र0 - पृ0 : 284.

निज-स्वरूप से सदा एक रस, बाहर-भीतर है भगवान् ।।

— पद रत्नाकर पद सं0 1209.

पोद्दार जी की सत्य निष्ठा अविचल रही है । सभी उन्हें ऐसा पूर्ण सत्यनिष्ठ मानते रहे हैं । पोद्दार जी सत्यस्वरूप भगवान् के रूप में स्थित रहते थे । भगवान् उनके हृदय में उनके अंग-अंग में विराजते एवं भासते थे । श्री शिवनाथ दुबे जी ने सत्यनिष्ठा के बारे में एक घटना निम्नांकित शब्दों में लिखी हैः--

"श्रद्धेय पोद्दार जी की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी । मध्यप्रदेश से एक सज्जन उनसे मिलने आये । उन्हें आपने पत्र में श्रद्धेय पोद्दार जी ने दो सौ रुपये सहायता देने की बात लिखी थी । मैंने श्रद्धेय पोद्दार जी के समीप जाकर उनके आने का कारण बताया और उनसे यह भी कह दिया कि मुझे स्मरण है कि आपने उन्हें दो सौ रुपये देने की बात लिखी थी । श्रद्धेय श्री भाई जी ने तुरन्त कहा - 'मुझे तो स्मरण नहीं कि मैंने उन्हें दो सौ रुपये देने की बात कभी लिखी थी, पर आप कह रहे हैं तो मैंने अवश्य लिखा होगा । आप दुलीचंद से कहकर रुपया दिलवा दें । रुपये उन्हें दे दिए गये — उस समय जबकि उनकी आर्थिक दशा अत्यन्त दयनीय थी, केवल सत्य की रक्षा के लिए उन्होंने तत्काल रुपये दे दिये ।'[1]"

अर्पित मनबुद्धि वाला, विशुद्ध भक्ति सम्पन्न एवं सर्वभूतात्मभूतात्मा

भक्त/संत के लक्षणों में प्रथम दो को एक ही वस्तु के दो पहलू अथवा दो नाम कहा जा सकता है । भक्त अपना सर्वस्व भगवान् को सौंप देता है तृतीय लक्षण सम्पन्न भक्त सभी प्राणियों में भगवान को देखते हुए उनसे एकीभाव का अनुभव करता है । पोद्दार जी के नीचे लिखे पदों में अपना सर्वस्व भगवान् के अर्पित करना है, यहाँ का पूर्ण अधिकार है भक्त का यहाँ कुछ भी नहीं रह गया है । वे सभी प्राणी कहते हैं भगवान

[1] भा0प0रा0स्म0 - पृ0 : 278.

...ों देखते थे ।

मेरा कुछ भी है नहीं, कोई प्राणि-पदार्थ ।
मैं भी जब कुछ नहीं, तब कैसा मेरा स्वार्थ ।।
एक तुम्हीं हो सभी में, सभी जगह, सब काज ।
लीलामय कर रहे नित, लीला विविध रसाल ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 1114.

"हुआ जब से मैं तुम्हारा, छूटकर सम्बन्ध सारे ।
तभी से आने लगे क्रमशः, सभी सद्गुण तुम्हारे ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 1111.

तन-मन-धन-जीवन सब प्यारे, हुआ तुम्हारे अर्पण ।
तुम्हीं देखो नित्य कुछ इनमें, बना तुम्हारा दर्पण ।।
मेरी चीज न रही कहीं कुछ, बनी तुम्हारी छाया ।
वैसे ही जहाँ तुम्हारी चली सु-कलित काया ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 1096.

किससे कैसे कब हो सकता है मेरा समुचित कल्याण ।
नहीं जानता उसे अब मैं, पूर्ण जानते हैं भगवान ।।
सर्वशक्ति गुण सब के ज्ञाता, सब लोकों के ईश महान ।
सहज सुहृद मेरे वे जो कुछ करते मेरे लिए विधान ।।
निश्चय ही वह है मंगलमय, सब कल्याणों का आधार ।

— पद रत्नाकर पद सं० 1126

प्रभु की परम कृपा से मैं अब देख पा रहा हूँ सर्वत्र ।
प्राणी-पदार्थ-परिस्थिति-सब हैं रूप उन्हीं के अत्र-परत्र ।।
सृष्टि-प्रलय, अव्यक्त-व्यक्त-सब देश काल उनके ही रूप ।
खेल रहे अपने में अपने, अपने से ही खेल अनूप ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 1157.

श्री पोद्दार जी ने नीचे लिखे पद में सभी प्राणी पदार्थ भगवान् के रूप में है और इसीलिए सभी में स्वयं अपने को भी उनके ओत-प्रोत देखते तथा अनुभव करते है. इस भाव को व्यक्त किया है-

"सब में मैं ही रम रहा, सब ही मेरे अंग ।
सब ही "मैं", फिर कौन था करे अंग मैं भंग॥
किसी अंग पर लगेगी चोट-बड़ी या अल्प।
निश्चय ही वह लगेगी मुझको बिना विकल्प ।।
तब फिर कैसे करूँ मैं किस पर का प्रहार ।
कैसे किसको दुःख दूं, कैसे करूँ प्रहार ।।

- पद रत्नाकर पद सं0 1127.

6-6 प्रभावगत लक्षण :-

1. समत्व :- (शत्रु-मित्र में सम, निन्दा-स्तुति, में सम सर्दी-गर्मी में सम)
2. शांत - मं
3. संतुष्ट
4. स्थिरमति
5. प्रसन्नचित्त

ये लक्षण उत्तम भागवत/भक्त शिरोमणि सिद्ध संत के है । साधक पूर्वोक्त लक्षणों को साधना द्वारा अपने में लाने का प्रयत्न करता है जब लक्षण स्वभाव में उतर आते है तब उनकी सिद्धि मानी जाती है । इसके बाद की स्थिति ही प्रभावगत स्थिति होती है । जहाँ स्वभावगत लक्षण आत्मसात हो जाते हैं और उसके अन्तर्बाह्य दोनों रूपों में समता मुदिता एवं शान्ति प्रतिष्ठापित हो जाती है तथा स्वतः उनका विकरण होता रहता है । सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति स्वतः प्रभावित होते हैं.वह कीर्ति-अपकीर्ति, मान-अपमान, प्रिय-अप्रिय, सुख-दुख,लाभ-हानि, निन्दा-स्तुति में भगवान के मंगल विधान को देखता है । वह इन द्वन्द्वों को

स्थिति की प्रत्येक भूमि में भगवान् की कृपा का अनुभव करता है अतः वह शांत रहता है । स्थिति एवं अवस्था को प्राप्त ऐसा पुरुष सदैव भगवान् को देखता हुआ उसकी लीला में भाग लेता हुआ प्रसन्नचित रहता एवं सहजभाव से व्यवहार करता है ।

श्रीमद्भागवत के 11वें स्कंध के द्वितीय अध्याय में उत्तम भागवत के लक्षण इस प्रकार कहे गये है "जो सर्व भूतों में भगवान को देखता है और अपने को भी देखता है । सब भूतों को भगवान में, और अपने में भी देखता है[1] जो इन्द्रियों से विषयों का ग्रहण करते हुए भी चित्त में हर्ष और द्वेष पैदा नहीं होने देता अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थिति के पीछे विष्णु की माया को देखता है वह उत्तम भक्त है ।[2] जिसमें अपना और पराया का भेद-भाव नहीं होता जो धनकी प्राप्ति में तथा शांत रहता है वह उत्तम भागवत भक्त है ।[3]

पोद्दार जी में उक्त लक्षण थे उनके द्वारा पदों में व्यक्त की गई अनुभूति से उक्त कथन की पुष्टि होती है । यथा —

"अग्नि, अनिल, जल, अनल, नभ, आकाश भरे, तुम पूर्णानन्द।
जिधर दृष्टि जाती, दिखते सर्वत्र हँस रहे तुम स्वच्छन्द ॥

---

(1) सर्व भूतेषु यः पश्येद् भगवद् भावमात्मनः ।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥

-श्रीमद्भागवत 11/2/45.

(2) गृहीत्वाऽपीन्द्रियैरर्थान् यो न द्वेष्टि न हृष्यति ।
विष्णोर्मायामिदं पश्यन् स वै भागवतोत्तमः ॥

-श्रीमद्भागवत 11/2/48.

(3) न यस्य स्वः पर इति वित्तेष्वात्मनि वा भिदा ।
सर्व भूतसमः शान्तः स वै भागवतोत्तमः ॥

-श्रीमद्भागवत 11/2/52.

दुर्यों के चलते-चलते से बन रहे तुम आनन्द स्रोत ।
रूप-सुगंध बने रहते तुम कुसुम-कुसुम में ओत-प्रोत ।।

— पद रत्नाकर पद सं० 1119.

"मेरे द्वारा होता जो कुछ करते वह सारा भगवान ।
मैं न रहा "मेरा" न रहा कुछ, कर्ता कौन करे" अभिमान ।।
ढाँचा एक बना रक्खा है, अपने से ही अपने काम ।
नियमित सब चलते कल पुर्जे, होती दिखती क्रिया तमाम ।।
भोग-त्याग, ममता-निर्ममता, अकुशल-कुशल सभी व्यापार।
लीलामय कर रहे स्वयं ही लीला निज-इच्छा अनुसार ।।
नहीं कहा रहा करने वाला, करना, करने योग्य पदार्थ ।
मिटा स्व पर, हो गये एक आवश्यक स्वार्थ, सारे परमार्थ।।"

— पद रत्नाकर पद सं० 1140.

मेरे मन में नित पवित्र रह, ईश्वर का मन करता काम ।
ईश्वर के मन से ही होते उदय दिव्य संकल्प ललाम ।।
रहा न मेरे मन में कुछ भी, ईश्वर के मन के अतिरिक्त ।
रहता सदा इसी से वह मधुरमय, भगवद् रस से अभिषिक्त।।

—पदरत्नाकर पद सं० 1141.

मैं रहता हूँ प्रभु में ही नित, प्रभु का मुझ में नित्य निवास ।
प्रभु के सिवा अन्य कोई भी, सकता नहीं, नहीं अवकाश ।।
जब जोभी मिलता, उसमें ही दिखता प्रभु का मोहन रूप ।
भले बना हो वह अति सुन्दर, अथवा हो वीभत्स कुरूप ।।

—पद रत्नाकर पद सं० 1147.

करुणामय ने कर लिया मुझे सहज स्वीकार ।
पाप-ताप सब मिट गये, मिटे समस्त विकार ।।
रहा न रंचक मोह, भय, भ्रम, प्रमाद, अवसाद ।
हुआ कृत्य जीवन सफल प्रभु के कृपा प्रसाद ।। पदरत्नाकर पद सं० 1152.

जग में सुख-दुःख, लाभ-हानि चिरजीवन-मृत्यु मान-अपमान ।
सभी तुम्हारे खेल, सभी में भरे तुम्हीं मेरे भगवान् ।।
इससे मिलता मुझे सर्वदा सबमें सुखद तुम्हारा स्पर्श अब ।
अतः नहीं हो पाते मन में, कभी शोक उद्वेग अमर्ष ।।

—पद रत्नाकर पद सं0 1208.

होता नहीं कभी चंचल मैं, होता नहीं निराश उदास ।
होता नहीं दुखी रहता मेरा तुम में निश्चल विश्वास ।।
सदा प्रसन्न,सदा ही आशापूर्ण सदा सुस्मित शुचि विकास।
सदा तुम्हारे चरणों में ही करता मैं आनन्द निवास ।।

—पद रत्नाकर पद सं0 1207.

श्री पोद्दार जी भाव समाधि में रहते थे । वे भगवान को सर्वत्र देखते हुए जीवन के कार्य-व्यवहार करते थे महात्मा कबीरदास जी ने सहज समाधि की स्थिति का वर्णन किया है-

साधो सहज समाधि भली ।
गुरु प्रताप जा दिन से जागी दिन दिन अधिक चली ।।
जँह जँह डोलौं सो परिक्रमा, जो कुछ करौं सो सेवा ।।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा ।।
कहौं सो नाम, सुनौं सो सुमिरन, खाँव पियौं सो पूजा ।।
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं भाव मिटाऊँ दूजा ।।
आँख न मूँदौं कान न रूँधौं तनिक कष्ट नहिं धारौं ।।
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि सुन्दर रूप निहारौं ।।
सबद निरन्तर से मन लागा, मलिन वासना त्यागी ।।
उठत-बैठत कबहु न छूटै, ऐसी तारी लागी ।।
कह कबीर यह उन्मुनि रहनी सो परगट करि गाई ।।
दुःख सुख से कोइ परे परमपद तेहि पद रहा समाई ।।

—पद कबीरदास

यह सहज समाधि की दशा, तथा उन मुनि रहनी भी पोद्दार जी की थी —

अपनी अलौकिक अनुभूति का वर्णन पोद्दार जी ने निम्न पदों में किया है ।

"मेरे अंदर भरी नित्य है प्रभु की सत्ता-शक्ति-विभूति ।
होती सदा उन्हीं की मुझको है सर्वत्र सत्य अनुभूति ।।
बजता मेरे जीवन में अति मधुर नित्य प्रभु का संगीत ।
कर सकती न कभी से मुझको कोई भी स्थिति कुछ भयभीत ।।
जीये मरे बने बिगड़े ये मैं-मेरे, के सभी पदार्थ ।
मेरा नहीं, बिगड़ता- बनता रहा न कुछ भी इनमें स्वार्थ ।।
xxx xxx xxx xxx
बाहर-भीतर उन्हें देखता, उनमें ही करता नित वास ।
वे ही हैं सर्वत्र-सर्वथा-सदा-दूर अति, अतिशय पास ।।
शोक-मोह-भय मिटे, रह गया केवल उनका ही अस्तित्व ।
उनका ही गुण गौरव सारा, उनका ही सर्वत्र महत्व ।।

— पद रत्नाकर पद संख्या ।।36.

"सफल जीवन हो गया, वैराग्य का आनन्द आया ।
मिटा सबमें राग अब, वैराग्य में सब राग आया ।।
भय हटा, सब शोक भागे, हो गया निश्चिन्त जीवन ।
आये या जायें जगत के दुःख-सुख सम्मान का धन ।।

— पद रत्नाकर पद सं0 ।।623

पोद्दार जी ऐसे उच्चकोटि के संत थे जिन्हें भगवान् की प्राप्ति हो चुकी थी । महात्मा तुलसीदास जी के जीवन की 3 घटनायें भगवान् राम लक्ष्मण के दर्शन की कही गयी है । जब उन्होंने हनुमान जी की कृपा से भगवान् राम लक्ष्मण की दूर से झलक पाई थी उसके बाद चित्रकूट के घाट पर "तिलक देत रघुबीर" की बात हनुमान जी ने होते

के रूप में कहीं थी। इसके अतिरिक्त तुलसीदास जी की कुटी की रक्षा करते धनुर्धारी एक श्यामवर्ण, एक गौरवर्ण के दो वीरों के देखने की घटना चोरों ने सुनायी थी।

पोद्दार जी को भगवान् राम के दर्शन बम्बई प्रवास के समय संवत् 1979 में श्री सागरमल गनेड़ीवाला के रामनाम की महिमा के कुछ संदेह व्यक्त किये जाने पर हुई थी उस समय पोद्दार जी की आयु 30 वर्ष की थी।

संवत् 1984 में आश्विन् कृष्णा 6 शुक्रवार को पोद्दार जी को जसीडीह में भगवान् विष्णु का दर्शन हुआ। जसीडीह से गोरखपुर लौटने पर आश्विन् शुक्ल 6, रविवार संवत् 1984{2.10.1929} को भगवान् के दर्शन 5-6 मिनट तक होते रहे। 6 दिन बाद पुनः भगवान् के दर्शन हुए तथा बातचीत भी हुई। पोद्दार जी को कुछ दिन बाद श्री कृष्ण दर्शन की इच्छा हुई। पहले दिन रात्रि में स्वप्न में दर्शन हुए दूसरे दिन भगवान् विष्णु के स्थान पर श्री कृष्ण का ध्यान अपने आप होने लगा। मधुर लीलाओं के दर्शन की तीव्र व्याकुलता से उन्हें मधुर लीला राज्य में प्रवेश मिला। इसके पश्चात् उन्हें राधामाधव [illegible] एकात्म्य का अनुभव हुआ।

उन्होंने कहा है- स्वयं श्रीकृष्ण समस्त अवतारों के मूल अवतारी समस्त भगवत्स्वरूपों के अंशी साक्षात् परब्रह्म सर्वेश्वर, सर्व लोक महेश्वर, निर्गुण-स्वरूप, सगुणमय, निराकार, भौतिक आकार रहित, परमेश्वर, अचिन्त्यानन्द, सद्गुण समुद्र अप्रमेय, अखण्ड अद्वय अखिल प्रेमामृत सिन्धु दिव्य सच्चिदानन्द, प्रेमानन्दमूर्ति, पूर्ण पुरुषोत्तम स्वयं भगवान हैं।xxx ब्रह्मा, विष्णु, महेश अथवा राम कृष्ण रूप में अवतरित श्री विष्णु....नरनारायण, मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, आदि इन सभी में स्वयं भगवान् श्री कृष्ण अंशरूप में अवतरित होते हैं।

6.42

संवत् 1990 में जब शिवांक का सम्पादन हो रहा था तब इनके मन में प्रश्न उठा था कि शिवतत्व, ब्रह्मतत्व और विष्णु-तत्व से पृथक् है या अभिन्न? उसी दिन इन्हें स्वप्न में भगवान् शंकर दिखाई दिए और देखते ही देखते वे विष्णु रूप में परिणत हो गये और विष्णु से फिर शिव हो गये तथा दोनों ही रूपों में हँसते रहे। ऐसी अनुभूति होने से इनको यह निश्चय हो गया कि शिव, विष्णु तथा ब्रह्मा एक ही है। इसी को उन्होंने "शिवांक" में प्रतिपादित किया था। इसी प्रकार अगले वर्ष सं0 1991 में "शक्ति-अंक" की तैयारी हो रही थी तो शक्ति की कृपा तथा प्रत्यक्ष दर्शन लाभ हुआ था।

सन् 1936 में गीतावाटिका में एक वर्ष का अखण्डकीर्तन चल रहा था उस समय इन्हें स्वप्न में देवर्षि नारद तथा महर्षि अंगिरा के दर्शन हुए थे तथा दूसरे दिन में दिन में 3 बजे प्रत्यक्ष कैम्प में आये और कुछ देर तक मंच पर बैठकर बातें की थी। नारद जी वीणा लिये हुए थे और मनुष्य जैसी वाणी में बोल रहे थे। उन्होंने पोद्दार जी से कहा था कि "जब कभी याद करोगे तब हम आ जायेंगे।" महात्मा रामकृष्ण परमहंस जी को सब धर्मों के सत्य की एकता का अनुभव हुआ था वे कहा करते थे "जो राम थे, कृष्ण थे वह मैं हूँ।"

महात्मा सूरदास जी ने जन्मान्ध होते हुए जैसा वर्णन भगवान् कृष्ण की बाल लीलाओं का किया है उसी तरह महात्मा पोद्दार जी ने भी राधामाधव की दिव्य लीलाओं का वर्णन किया है यह वर्णन उनके द्वारा नित्य लीला में एक परिकर की तरह सम्मिलित होने का अवसर मिलने के बाद किया गया है।

इस प्रकार पोद्दार जी महात्मा तुलसीदास, महात्मा सूरदासजी, परमहंस रामकृष्ण जी जैसी स्थिति को प्राप्त कर चुके थे। श्री पोद्दार जी ने "संत महिमा" नामक लेख में "गुप्तसंत और उनके कार्य" उपशीर्षक के नीचे विवरण देकर सिद्ध संत मण्डल का वर्णन किया है —

"संतों के सर्वोपरि संचालक परम सद्गुरु भगवान् शंकर हैं जो स्वरूप से जगत का संहार और सुन्दर शिवरूप में सदा कल्याण करते रहते हैं। उनकी अधीनता में अनेक सिद्ध-महात्मा, सन्त पुरुष निरन्तर भगवल्लीला में सहायक होकर भगवदाज्ञानुसार कार्य कर रहे हैं। इन सन्तों को कुछ भी लेना ही नहीं, पूजा करवानी नहीं, ख्याति और प्रशंसा से कोई सरोकार नहीं और लोगों के प्रशंसा पत्र न होने से इनका कोई नुकसान होता नहीं फिर वे क्यों किसी परिस्थिति में जगत् के लोगों के सामने प्रकट होकर अपना परिचय दें। हाँ, अधिकारी पुरुष को इनमें से किन्हीं-किन्हीं के दर्शन आज भी होते हैं, हो सकते हैं। कहा जाता है कि देवर्षि नारद, सनकादि, भगवान् दत्तात्रेय, शुकदेव, वैशेष आदि प्राचीन और शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा गोरखनाथ, भर्तृहरि, गोपीचंद, कबीर, नानक, तुलसीदास, ज्ञानदेव, समर्थ रामदास, आदि से लेकर रामकृष्ण परमहंस, विजयकृष्ण गोस्वामी, प्रभृति अर्वाचीन अनेक संतों के दर्शन आज भी उनके अंतरंग भक्तों को होते हैं। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। यह तो सिद्ध संत मण्डल की बात हुई।

इन संतों के सिवा छिपे हुये ऐसे अनेक सन्त हैं जो विविध स्थानों में कार्य करते हुये हम लोगों में रह रहे हैं, जो अज्ञात रूप से इस मण्डल की दृष्टि और शासन सूत्र में बंधे रहने पर भी विभिन्न स्थानों में अप्रकट रूप में साधन कर रहे हैं। अतएव, यह नहीं समझना चाहिये। कि जितने और जो हम लोगों की जानकारी में हैं, वे और उतने ही संत हैं। संतों के लिए यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि वे संसार में प्रसिद्ध ही हों।"[1]

श्री पोद्दार जी का सिद्ध संत मण्डल के प्रमुखों में स्थान

श्री पोद्दार जी का सिद्ध सन्त मण्डल में एक विशिष्ट स्थान था। शोध कर्ता के निर्देशक महोदय, डा० ब्रजवासीलाल जी ने, जो प्रमुख लीन परम संत श्री स्वामी शंकर जी के शिष्य हैं, अपने गुरुदेव के दिव्य

---

[1] भगवच्चर्चा भाग 4 पृष्ठ संख्या : 17 से 19 तक.

संत मण्डल के कार्यों की दो घटनाओं का वर्णन किया है ।-

"उसई में ख्वाजा साहब हज को जा रहे थे वे एक संत मण्डल के कार्यकर्ता थे, हज जाने के समय वे अपना चार्ज संत श्री भवानी शंकर जी को दे गये थे । यह घटना सन् 1937 ई0 के करीब की है । दूसरे मुस्लिम संत श्री मुन्ने खाँ के थे सन 1960 के करीब अपने मण्डल का कार्य सौंप गये थे और कह गये थे कि वे मक्का में ही शरीर छोड़ देंगे । ये तीनों संत बहुत गुप्त रूप से कार्य करते रहे अवैध थे । शोधकर्ता के निदेशक महोदय के गुरुदेव महात्मा भवानी शंकर जी का नाम पोद्दार जी ने "वसीयत नामा" में जगद्गुरुओं के बाद ही उनका नाम प्रथम स्थान पर [जगद्गुरुओं को सम्मिलित करके आठवें स्थान पर] अंकित किया है । बाबा निम्नांकित प्रकार से है —

"ऐसे बहुत लोग है जिनका न्यूनाधिक रूप से भगवान् के विशेष कार्य से सम्बन्ध है । यह आवश्यक नहीं है कि उस विशेष कार्य का सबको पता हो । कुछ नाम ये है — "द्वारिका शारदापीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य, पुरी गोवर्धनपीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य, शृंगेरीमठ के जगद्गुरु शंकराचार्य, बदरीनाथ मठ [ज्योतिर्मठ] के जगद्गुरु शंकराचार्य, श्री रामानुज सम्प्रदाय के जगद्गुरु श्री अनन्ताचार्य जी महाराज, श्री राघवाचार्य जी महाराज, वल्लभ-सम्प्रदाय के आचार्य श्री गोकुलनाथ जी महाराज, महात्मा श्री भवानीशंकर जी, श्री रघुनन्दन प्रसाद सिंह जी, स्वामी भोलेनाथ जी, स्वामी प्रणवपाद, स्वामी माधवानन्द जी।"[1] निदेशक महोदय ने बड़ी श्रद्धाभाव से बताया था कि महात्मा श्री भवानी शंकर जी श्री हनुमानप्रसाद जी के आध्यात्मिक पत्र "कल्याण" की ... उनके भगवद् भक्ति प्रचार, उनके सेवाकार्यों की प्रशंसा किया करते थे । सन् 1938 में अपने प्रेमी को लिखे एक पत्र में, जिसकी प्रति निर्देशक महोदय के पास सुरक्षित है, श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी की तारीफ संत-अंक निकाल कर सेवा करने की भी थी । तथा ५/-तीन आना

[1] भा0भा0क0 पृ0 - 561.

देखकर संत अंक व वर्ष के अन्य अंक मँगाकर ध्यान से पढ़ने की सलाह दी थी । जैसा कि स्वयं पोद्दार जी ने "वसीयतनामा" में लिखा है वे भगवान् के "विशेषकार्य" के लिए आये थे यद्यपि उन्होंने विशेष कार्य का स्पष्ट नहीं किया है किन्तु जैसा कि "संक्षिप्त" वसीयतनामा" से ध्वनित होता है उनका आगमन भगवान् के लोक से जनसामान्य को भगवद् भक्ति की ओर प्रेरित कर कल्याण मार्ग पर लाने का तथा साधकों को भगवत्प्रेम की प्राप्ति कराना था वे दिव्य लोक के भगवान् के अंगीभूत थे और भगवान् की योजना को पूरा करने हेतु इस लोक में आये थे ।

"वास्तव में इस पांच भौतिक शरीर से अपने कर्म के अतिरिक्त, मेरे द्वारा कुछ विशेष कार्य, करवाने की योजना थी । जिनकी जैसी जितनी योजना थी, उनकी कृपा तथा शक्ति से उनका काम बहुत अंश में पूरा हो गया, यद्यपि मैंने जितना चाहा था जैसा चाहा था वैसा नहीं हो पाया । यों तो जितने लोग मेरे सम्पर्क में आये है, उनका कुछ न कुछ कल्याण तो अवश्य ही हुआ है और होगा, पर जिन लोगों ने मेरे द्वारा स्वार्थवश अनुचित कार्य कराने की इच्छा तथा चेष्टा की, वे प्रायः वंचित ही रहे गये । उनकी प्रगति तो रुक ही गयी, कई अंश में क्षतिग्रस्त भी हो गये । भगवान् उनका कल्याण करें ।" यद्यपि जगत के मंगल के लिए जो कुछ हुआ है, वह बहुत दूर-दूर तक हुआ है तथा उसका प्रभाव व्यापक और दीर्घकाल तक रहेगा ।[1]

6-7 भागवत व्यक्तित्व एवं संतों के जो मानक लक्षण माने गये है वे सभी लक्षण पोद्दार जी में विद्यमान थे जैसा कि इस अध्याय[प्रकरण] में विवेचित किया गया है । संयोग ही है कि शोधार्थी को भी पोद्दार

---

[1] [illegible] पृ0 : 563.

के शब्दों में अंकित, "संत को धर्माचार"[1] "सच्चे संत"[2] "श्रेष्ठ-प्रभुरत-सेवक"[3], "परम भगवत जीवन"[4] के लक्षणों के मानक पर भी उनके गुणों का मनन करने का अवसर मिला और उसने पाया कि वे अपने कथनी और करनी में एक थे। उन्होंने संतों के जिन लक्षणों का वर्णन किया है उनको अपने जीवन में चरितार्थ किया है। वे मानव-साधक, से भक्त-संत एवं भगवन्त तक पहुँचे। जीवन के अंतिम दिनों में पोद्दार जी के अन्तर्मानस में दिव्य भगवल्लीलाएँ चलने लगी थी और वे भाव राज्य में सतत् स्थित रहने लगे थे। यह स्थिति इन मैर्गों से

---

[1] "निज हित पर से ऊँचे चाहे करें सबनि सौं सो व्यवहार।
देखे सदा सबनि में हरि को, यह "संत को धर्माचार" ।।"
पद रत्नाकरपद सं0 1303.

[2] "अथवा सबमें देख निजात्मा, आत्मा में सब भूत निहार।
आत्मौपम्य सुख-दुख सभी के, जान सदा करते व्यवहार ।।"
ऐसे जो आदर्श परम भगवन्त हैं, वे ही "सच्चे संत" ।
उनका सफल संग सहज कर देता, भव बन्धन का अन्त ।।"
पद रत्नाकर पद सं0 1302.

[3] "प्राणि पदार्थ परिस्थिति में सम, नित्य निरन्तर द्वन्द्वातीत।
निकल रहा जिसके अणु-अणु से, नित्य मधुर प्रभु का संगीत ।।
इस प्रकार जो दिव्य गुणों-भावों से युक्त नित्य रमणीय ।
वही श्रेष्ठ प्रभुरत सेवक है, वंदनीय अति आदरणीय ।।"
पद रत्नाकर पद सं0 1297.

[4] "एकमात्र प्रभु में होती, जिसकी अनन्य ममता एकान्त।
हो जाता दुर्लभ फिर उसका परम भागवत जीवन शान्त।।"
पद रत्नाकर पद सं0 : 1299.

सर्वथा अतीत तथा मन, बुद्धि, चित्त से परे भी है । अतएव प्राकृत मन, बुद्धि द्वारा प्राकृत शब्दों के माध्यम से उसका वास्तविक वर्णन नहीं हो सकता । पं० गोपीनाथ कविराज जी को जिस दिसम्बर 1970 में पोद्दार जी ने एक पत्र बंगलाभाषा में लिखा था, उसकी कुछ पंक्तियों से पोद्दार जी की स्थिति समझी जा सकती है।

"मैं सदा-सर्वदा इस प्रकार का अनुभव करता हूँ, कि भगवान् की दिव्य कृपा सुधा का वर्षण मेरे ऊपर नित्य हो रहा है — वर्तमान समय में बहुत दिनों से मेरा शरीर अस्वस्थ है पर भगवत्कृपा से शरीर की इस अस्वस्थ अवस्था में भी मैं चिदानन्द लाभ कर रहा हूँ । प्रायः एकान्त में रहता हूँ और उस समय एक ऐसी स्थिति रहती है जो सर्वथा अनिर्वचनीय तथा अचिन्त्य है ।[1] दिनांक 19 मार्च 1971 को (जीवन लीला संवरण करने के अंतिम पूर्वरात्रि में कहा था "जिन जिनको मैंने भगवद्प्राप्ति का आश्वासन दिया है, उन्हें निश्चित रूप से उसकी प्राप्ति हो जायेगी, उन्हें विश्वास रखना चाहिए ।"[2]

उनकी स्थिति कोई उन्हीं जैसा संत ही ठीक से बतासकने में समर्थ होगा । सन्तों के गुण के अतिरिक्त उनमें भगवान् के गुणों का प्रवेश था ।[3]

---

(1) कल्याण पथ - निर्माता और राही पृ० सं० 455.

(2) कल्याण पथ - निर्माता और राही पृ० सं० 200.

(3) "हुआ जब से मैं तुम्हारा, छुटकर सम्बन्ध सारे ।
तभी से आने लगे क्रमशः सभी सद्गुण तुम्हारे ।।
—पद रत्नाकर पद सं० 1111.

भगवान् उनके साथ सदैव रहते थे ।[1] उनके जीवन की सभी अरमान पूरे हो गये थे ।[2] वे अपने को प्रभु को अंशी और अपने को उनका सनातन अंश मानते थे[3] तथा निश्चित रूप से कहा है कि प्रभु उनसे कभी पृथक नहीं रहते ।[4]

यह भागवती स्थिति विरले-विरले की ही होती है उन्होंने भगवान् की पूजा भगवान् बनकर ही की ।-

"देवो भूत्वा यजेद्देवम्"

---------------0---------------

{1}:अ: "रहते मेरे साथ निरन्तर प्रभु क्षण दूर नहीं होते ।
अनुभव सदा कराते, अपना हर स्थिति में जगते सोते ।।
रहूँ कहीं भी, कैसे भी, वे रहते नित्य पास मेरे ।
रहते नित्य भीतर बाहर से चारों ओर मुझे घेरे ।।

पद रत्नाकर पद सं० ।132.

:आ: "हर स्थिति में हर जगह, हमेशा रहते प्रभु मेरे पास ।
रहता मस्तक पर मेरे, नित उन मेरे प्रभु का हाथ ।।

पद रत्नाकर पद सं० ।138.

{2} "मिले मधुर मुझको मेरे ही, मेरे वे "प्रियतम भगवान" ।
पूरी हुई साध जीवन की, पूरे हुए सभी अरमान ।।"

पद रत्नाकर पद सं० ।178.

{3} "रहूँ भले यात्रा में चाहे कहीं कहीं भी घर-वनवास ।
नहीं अकेला मैं हूँ रहता, प्रभु नित्यरहते मेरे पास।।
प्रभु मेरे अंशी हैं, मैं हूँ अंश सनातन उनका नित्य ।
पृथक न रह सकते मुझसे प्रभु कभी-कहीं भी निश्चित सत्य।।"

पद रत्नाकर पद सं० ।187.

जीवन का सामान्य चक्र

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1949	आश्विन कृष्ण 12	17सि01892	-	-शनिवार को पिलानी में जन्म.
	मार्गशीर्ष कृष्ण			-सेठताराचन्द जी का निधन.
1951	श्रावण कृष्ण 1	1884	1व09 माह	-माता रिखीबाई का निधन.
1953		1896	4	-भूकम्प से रक्षा.
1956	मार्गशीर्ष शुक्ल 1	1899	7	-श्री कनीराम जी का निधन.
1957		1900	8	-निम्बार्क पीठ बाबा मेहरदास के प्रतिनिधि श्री ब्रजदास से दीक्षा.
				-पं0छोटे लाल जी से यज्ञोपवीत दीक्षा.
1958		1901	9	-श्री भीमराज का पिलानी से सपरिवार कलकत्ता आगमन.
1961	ज्येष्ठ कृष्ण 4	1904	12	-श्रीगुरमुख ढेढारिया की पुत्री महादेवी बाई से विवाह.
1966	ज्येष्ठ शुक्ल 6	1909	17	-प्रथम पत्नी महादेवी बाई का निधन.
	श्रावण कृष्ण 14	1909	17	-पुत्र की मृत्यु.
1968	वैशाख शुक्ल 3	1911	19	-श्री मंगलराम जी सारावगी की पुत्री सुवटीबाई से द्वितीय विवाह.
1969	श्रावण कृष्ण 5	1912	20	-श्री भीमराज जी की मृत्यु(रतनगढ़ में)
1973	माघ कृष्ण 12	1916	24	-पुत्र का जन्म.
	माघ कृष्ण 14			-पुत्र की मृत्यु.
	माघ शुक्ल 5			-पत्नी सुवटी बाई की मृत्यु.
	वैशाख शुक्ल 3	1917	25	-श्री सीताराम सांवलेरिया की पुत्री रामदेई बाई से तृतीय विवाह.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1975		1918		–बम्बई में व्यापारिक जीवन में प्रवेश.
1976		1919		–माटुंगा रेल्वे स्टेशन पर अज्ञात व्यक्ति द्वारा प्राण रक्षा.
	आषाढ़ शुक्ल 4	1919		–छोटी बहिन अन्नपूर्णा का विवाह
1977		1920		–पुत्र का जन्म.
		1920		–देशबन्धु चित्तरंजनदास जी से भेंट.
1978		1921	29	–पुत्र की मृत्यु.
	ज्येष्ठ शुक्ल 6	–		–दूसरी छोटी बहिन चन्द्राबाई का रतनगढ़ में विवाह.
	वैशाख शुक्ल 13			–दादी रामकौर देवी का निधन.
				–बीकानेर प्रवास के समय श्री गंभीरचन्द्र जी दुजारी से प्रथम भेंट.
	भाद्र कृष्ण 12	लगभग		–कल्याण कार्यालय का बम्बई से गोरखपुर स्थानान्तरण एवं भाई जी की बम्बई से गोरखपुर यात्रा प्रस्थान.
1986	मार्गशीर्ष कृष्ण 6	1929	37	–प्रातः सात बजे कन्या का जन्म.
1993		1936	44	–तत्कालीन कलेक्टर द्वारा "राय बहादुर" उपाधि का भाई जी को दिया जाना एवं भाई जी का विनम्रता पूर्वक उपाधि लेना अस्वीकार करना.
	माघ कृष्ण 1,2	–		–पं० मदनमोहन मालवीय का गोरखपुर आगमन एवं गीतावाटिका में निवास.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-बाबा ठक्कर का गोरखपुर आगमन.
1994	श्रावण शुक्ल 9	1937	45	-संपादकीय विभाग के सदस्यों के साथ रतनगढ़ के लिए प्रस्थान.
				-कल्याण के भावी विशेषांक संत-अंक के संबंध में वार्ता करने हेतु सेठ गोयन्दका जी का रतनगढ़ आगमन.
1997		1940	48	-एकान्त साधना के लिए रतनगढ़ प्रवास.
1998		1941	49	-दादा श्री राम सनेही जी का गोरखपुर आगमन.
	मार्गशीर्ष शुक्ल 10			-पुत्री सुश्री सावित्रीबाई का विवाह.
2016	माघ कृष्ण 9	1960	68	-कलकत्ता में 'गोविन्द भवन' का शिलान्यास.
	माघ शुक्ल			-सेठ जयदयाल जी गोयन्दका के ऑपरेशन होने की बात मालूम होते ही बाँकुड़ा प्रस्थान.
2025		अगस्त	76	-एक मूर्च्छित बालिका (करीब उम्र लगभग 16-17 वर्ष) की देखभाल.
2027	चैत्र कृष्ण 10 सोमवार	22 मार्च 1971	77	-गीतावाटिका, गोरखपुर में प्रातः 7 बजे कर 55 मिनट पर महाप्रयाण.

स्वास्थ्य-व्यतिक्रम सम्बंधी विवरण

2000	श्रावण	1943	51	-रतनगढ़ में भाई जी की बीमारी एवं चिकित्सा के लिए दिल्ली प्रस्थान.
	कार्तिक			-भाई जी पुनः अस्वस्थ.
	मार्गशीर्ष शुक्ल 10			-रतनगढ़ से अजमेर की यात्रा की तथा डा० अंबालाल के चिकित्सालय में [illegible]

.3

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-के कोहे का ऑपरेशन हुआ.
2013	वैशाख कृष्ण 1	1956	65	-लगभग 4 महीनों के भ्रमण के पश्चात् स्पेशलतीर्थ यात्रादल की गोरखपुर वापसी.
	आषाढ़ कृष्ण 13			-स्वास्थ्य लाभ हेतु स्वर्गाश्रम चले गए.
2027		नवम्बर	77	-पेट में शूल (वायुगोले) का भीषण दर्द हुआ.
2027		16 फरवरी 1971	77	-सन् 1928 से लेकर अब तक श्रीपोद्दार जी का लेखन एवं संपादन कार्य चलता रहा.

__क्लेशों की विभिन्न परिस्थितियाँ__

1966	ज्येष्ठ शुक्ल 6	1909	19	-प्रथम पत्नी महादेवी बाई का निधन.
	श्रावण कृष्ण 14	1909	19	-पुत्र की मृत्यु.
1969	श्रावण कृष्ण 5	1912	20	-श्री भीमराज जी की मृत्यु. (रतनगढ़ में)
1973	माघ कृष्ण 14	1916	24	-पुत्र की मृत्यु.
	माघ शुक्ल 4			-पत्नी सुभद्री बाई की मृत्यु.
1977		1920		-पुत्र का जन्म.
1980	वैशाख शुक्ल 13	1923	31	-दादी रामकौर देवी का निधन.
2002	श्रावण	1945	53	-गीताप्रेस के कर्मचारियों की हड़ताल.

राजनीतिक गतिविधि

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1962		1905	13	-लार्ड कर्जन द्वारा बंग-विच्छेद की घोषणा. -खादी का प्रयोग प्रारंभ.
1964		1907	15	-कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में तथा वे एक सदस्य के रूप में सम्मिलित हुए.
	पौष	1911	19	-"मर्यादा" मासिक पत्रिका में प्रथम लेख "मातृभूमि की पूजा" प्रकाशित.
1969		1912	20	-मारवाड़ी युवकों द्वारा मारवाड़ी समिति की स्थापना.
1971		1914	22	-पं०मदनमोहन मालवीय का कलकत्ता आगमन एवं प्रथम भेंट एवं पोद्दार जी द्वारा योगदान.
1972		1915	23	महात्मा गांधी का कलकत्ता आगमन एवं भेंट.
1973	श्रावण कृष्ण 5	16जुलाई 1916		-राजद्रोह के अपराध में कलकत्ता के डुरान्डा हाउस जेल में भेजे गए।
	श्रावण शुक्ल 5	31जुलाई16		-अलीपुर जेल स्थानान्तरित किये गए।
	भाद्र कृष्ण 30	24अगस्त16		-शिमलापाल में नजरबन्दी की शुरुआत.
1975	वैशाख शुक्ल 4	4मई1918		-नजरबंदी समाप्त.
1976		1919		-बालगंगाधर तिलक के अनुयायी के रूप में अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
		1921		-अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की प्रान्तीय शाखा बम्बई के मंत्री चुने गए ।
1978	[illegible]	1921	29	-हकीम अजमल खाँ के सभापतित्व में अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन, अहमदाबाद में सम्मिलित.
		1921		-अ० भा० का० अधिवेशन अहमदाबाद में कांग्रेस कार्यों में धार्मिक मतभेद होने के कारण अधिवेशनों में सम्मिलित होना बंद कर दिया ।
1982		1925	33	-सेठ जमनालाल बजाज के साथ खादी प्रचार के लिए बीकानेर यात्रा.
1983	चैत्र शुक्ल 1,2,3	13,14, 15,अप्रैल 1926	34	-मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का दिल्ली में वार्षिक अधिवेशन.
1984	चैत्र शुक्ल	1927	35	-मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का अधिवेशन कलकत्ता में सम्मिलित हुए.
1985	चैत्र शुक्ल	1928		-अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के दशम अधिवेशन बम्बई में सम्मिलित एवं भाषण.
1993	आषाढ़	1936	44	-पं० नेहरू का बाढ़ निरीक्षण संबंध में गोरखपुर आगमन भाई जी ने उन्हें अपनी गाड़ी [पर बाढ़ तक] जाने के लिए दी.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
2001	पौष शुक्ल 15	1944	52	-"हिन्दू कोड बिल" के विरोध में एक अभियान चलाया ।

धार्मिक प्रचार-प्रसार

1979	पौष कृष्ण 13	1922	30	-सामूहिक जप व ध्यान का श्री गणेश
1980	फाल्गुन शुक्ल 15	1922	31	-बम्बई में वृहद् नाम जप यज्ञ का आयोजन.
1983	चैत्र शुक्ल 9 (रामनवमी)	1926	34	-सेठ जी, भाई जी, सेठ [illegible]राम जी मुरोदिया आदि के साथ रेलयात्रा में भिवानी और रेवाड़ी के मध्य में "कल्याण" मासिक पत्रिका निकालने का निर्णय.
	श्रावण कृष्ण 11	अगस्त 26		-"कल्याण" के प्रथम अंक का वेंकटेश्वर प्रेस, सत्संग भवन, बम्बई से प्रकाशन.
1984	श्रावण शुक्ल 7	1927	35	-कल्याण का प्रथम विशेषांक "भगवन्नामांक" बम्बई से प्रकाशित हुआ.
	भाद्र	अगस्त		-गीताप्रेस से "कल्याण" का प्रकाशन प्रारंभ
	कार्तिक कृष्ण 30			-गोरखपुर में संकीर्तन का प्रारम्भ.
	मार्गशीर्ष कृष्ण 10			-भगवन्नाम प्रचारार्थ 16 व्यक्तियों सहित तीर्थयात्रा का प्रारम्भ.
	मार्गशीर्ष शुक्ल 11			-पोद्दार जी की अध्यक्षता में गीता जयन्ती का मनाया जाना.

.7

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1986	पौष कृष्ण 9	1929	37	–प्रयाग के कुंभ में गीता ज्ञान यज्ञ का त्रिवेणी तट पर आयोजन में सम्मलित. –पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर की नियमित कथा में सम्मलित हुए.
1989	आश्विन कृष्ण 2	1932	40	–गीता एवं रामायण की परीक्षा समिति की स्थापना.
1990	कार्तिक कृष्ण 7	1933	41	–नियम पालन में असावधानी बरतने के कारण साधक समिति भंग की गई.
	माघ शुक्ल 8	1934	42	–सदस्यों (साधक समिति) के अनुरोध पर साधक समिति की पुर्नस्थापना. –श्री चिम्मनलाल गोस्वामी का "कल्याण कल्पतरु" के संपादन कार्य हेतु गोरखपुर आगमन.
	फाल्गुन कृष्ण 12	1934	42	–हरिबाबा के अनुरोध पर परिकरों के साथ भाई जी बाँध उत्सव देखने गए.
1992	भाद्र कृष्ण 14	1935	43	–प्रभुदत्त ब्रह्मचारी द्वारा अखण्डनाम कीर्तन (झूँसी) में परिकरों सहित सम्मिलित हुए.
1993	आषाढ़ शुक्ल 11	1936	44	–संकीर्तन सप्ताह का गोरखपुर में प्रारंभ.
	माघ कृष्ण 1,2			–पं0 मदनमोहन मालवीय का गोरखपुर आगमन एवं गीतावाटिका में निवास.
1999	चैत्र कृष्ण 3	1943	51	–रतनगढ़ में वृहत संकीर्तन एवं विष्णुयज्ञ का आयोजन.
2003	श्रावण	1946	54	–गीताप्रेस के कर्मचारियों द्वारा प्रबंधकों को हड़ताल का नोटिस एवं पोद्दार जी द्वारा तुरंत हड़ताल रोकने का

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				असफल प्रयास.
2003	मार्गशीर्ष	1946	54	-नोआखालीकाण्ड अंक के रूप में पं0 मालवीय श्रद्धांक, मानवता, हिन्दुओं रक्षार्थ अनेक सुझाव एवं योजनाओं के प्रस्तुतीकरण सहित, प्रकाशन.
2006	मार्गशीर्ष	1949	56	-हिन्दू धर्म रक्षा अभियान का सूत्रपात
	पौष शुक्ल	1950	58	-रामजन्मभूमि, अयोध्या में मूर्तिप्रकट होने के अनन्तर अखण्ड कीर्तन की व्यवस्था.
2010	वैशाख कृष्ण 6	1955	61	-गो सेवक परिषद, दिल्ली के अध्यक्ष पद से भाषण.
				-प्रयाग कुंभ पर्व पर सत्संग एवं प्रवचन.
2012	चैत्र, वैशाख	1955	63	-गीताप्रेस के नए द्वार का निर्माण कार्य पूर्ण हुआ.
	वैशाख शुक्ल 8			-राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी द्वारा गीताप्रेस के नये प्रवेश द्वार एवं गीता चित्र मन्दिर का उद्घाटन.
2013	वैशाख कृष्ण 1	1926	65	-लगभग 4 महीनों के भ्रमण के पश्चात् स्पेशल तीर्थ यात्रा दल की गोरखपुर वापसी.
2015	भाद्र कृष्ण 8	1958	66	-श्री कृष्ण जन्मभूमि मथुरा के मंदिर के उद्घाटन उत्सव में सम्मिलित.
				-केशव मंदिर का निर्माण कार्य करवाया
2016	माघ शुक्ल	1960	68	-भक्तों के अनुरोध पर बाँकुड़ा से हिमालय की दूसरी बार यात्रा अपने परिकरों के साथ की ।

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
2019		1962	70	-विशाल श्री कृष्ण ठकुरे का निर्माण करवाया.
2021	माघ कृष्ण 10	27जनवरी 1965	72	-"भारतीय चर्तुधर्म वेद-भवन-न्यास" के लिए श्री गोरखनाथ मंदिर में विचार गोष्ठी के आयोजन में सम्मिलित.
				-"भारतीय चर्तुधर्म वेद-भवन-न्यास की स्थापना में सहयोग.
	माघ शुक्ल 10	11फरवरी65		-श्री कृष्ण जन्म भूमि मथुरा में "विशाल "भागवत भवन"की योजना एवं शिला-न्यास.
	ज्येष्ठ शुक्ल	20जून1965		-श्री सालासर जी(राजस्थान)के हनुमान जी मंदिर के पूजा कार्यों आदि की व्यवस्था.
2023		25मई1966		-गोहत्या पर प्रतिबन्ध एवं साधुओं से सद्व्यवहार के लिए श्री पोद्दार जी ने पत्र द्वारा सरकार से अपील की।
		30अगस्त		-बेतियाहाता, गोरखपुर में श्री हनुमान मंदिर का शिलान्यास.
		नवम्बर, दिसम्बर		-सर्वदलीय-गोरक्षा आन्दोलन समिति का गठन किया.

साधनागत उपलब्धियाँ

1967		1910	18	-सेठ जयदयाल गोयन्दका का कलकत्ता आगमन एवं भेंट.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1969		1912	20	-माँ आनन्दमयी से प्रथम भेंट (ढाका में).
1973	भाद्र कृष्ण 30	24अगस्त 1916	24	-भगवन्नाम जप का श्री गणेश, साधना जीवन की शुरूआत. -"नारदभक्ति-सूत्र की टीका लिखी जो "प्रेमदर्शन" के नाम से गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित हुई ।
1979	पौष कृष्ण 13	1922	30	-सेठ जयदयाल जी का सत्संग मण्डली सहित बम्बई आगमन. -श्री शिवनारायण नेमाणी की बाड़ी में सेठ जी का प्रवचन. -सेठ जी के आदेशानुसार "नेमाणी की बाड़ी" में पोद्दार जी द्वारा संकल -का आरम्भ तथा गीता व रामायण पर नियमित प्रवचन. -भगवान श्री राम के दर्शन. -सामूहिक जप व ध्यान का श्री गणेश.
1982		1925	33	-पारसी प्रेस से साक्षात्कार बम्बई में हुआ एवं उसके लिए भाड़ की व्यवस्थ की व्यवस्था की गई.
1984	भाद्र कृष्ण 12	अगस्त		-कल्याण कार्यालय का बम्बई से गोरखपुर स्थानान्तरण एवं भाई जी की बम्बई से गोरखपुर यात्रा प्रस्थान.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
	आश्विन कृष्ण 6	अगस्त		-जसीडीह में 10-12 व्यक्तियों के समक्ष भगवान विष्णु के दर्शन.
	आश्विन शुक्ल 6	23 अक्टूबर, 1927		-शांति बाबू के बगीचे के कमरे में भगवान विष्णु के दर्शन.
	कार्तिक कृष्ण 12			-भगवान विष्णु के दर्शन.
1985	वैशाख शुक्ल 8			-गोरखपुर में साधन कमेटी की स्थापना.
	वैशाख शुक्ल 7			-श्री चिम्मन लाल गोस्वामी जी का गोरखपुर आगमन एवं भाई जी से भेंट वार्ता.
1986	वैशाख शुक्ल 4	1929		-गोरखपुर में "साधन समिति"की स्थापना
1986	वैशाख शुक्ल, 9	1929		-बाबा राघव दास जी के प्रयत्न से सोहनाग, (गोरखपुर में "[illegible]"के आयो[illegible] में पोद्दार जी अपने परिवार सहित सम्मिलित हुए । वहीं पर स्वामी अखण्[illegible] नंद जी के प्रस्ताव से रु0 5000/-की धनराशि "गीता ज्ञान यज्ञ" के लिए वचन दिये जिसे बाद में अदा किया।
1988	चैत्र कृष्ण	नवम्बर 1931	39	-परमहंस विशुद्धानन्द जी का काशी में दर्शन.
1990	फाल्गुन कृष्ण 7	1934	42	-हरिबाबा (स्वतः प्रकाश) का गोरखपुर आगमन.
				-लखनऊ में शिवशक्ति का साक्षात्कार.
		8जू01935		-श्रीराधाकृष्ण प्रेम भिखारी (श्रीरोचानन्द निवास) को हृषीकेश के दर्शन.
1992	वैशाख कृष्ण 8	1935	43	-श्री कैलाश पाण्डेय (नागपुर निवासी)

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				को "साधन पथ" नामक पुस्तक स्वप्न में मिली.
		2 मई 1935		-सतना जिले की एक महिला को पोद्दार जी से उपदेश ग्रहण करने के लिए अज्ञातशक्ति ने आदेश दिया.
1993	श्रावण			-गीता,वाटिका,गोरखपुर में..... देवर्षि नारद एवं महर्षि अंगिरा से भाई जी को दर्शन एवं साक्षात्कार.
				-बम्बई के एक मित्र को स्वप्न में दर्शन एवं उपदेश.
1996	आषाढ़ कृष्ण	1939	47	-सेठ जी से अनुमति लेकर 3 महीने को एकान्त साधना के लिए दादरी [हरियाणा] प्रवास.
1997		1940	48	-एकान्त साधना के लिए रतनगढ़ प्रवास.
2012	चैत्र,वैशाख	1955	63	-गीताप्रेस के नव द्वार का निर्माण कार्य पूर्ण हुआ.
				-भाई जी द्वारा सुदर्शन चक्र की रक्षा संबंधी घटना.
2013				-बैजनाथ के पास एक महिला द्वारा समर्पिता की अभीष्ट सिद्धि का साक्षात्कार दर्शन.
2023		अगस्त		-एक अज्ञात बालिका [करीब उम्र लगभग 16-17 वर्ष] की देखभाल.
2024		1967	75	-गोहत्या विरोधी आन्दोलन जोरों पर था दिन भर की दौड़धूप के बाद

.13

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/आयु	
				–थी वे रात में लगभग 10बजे बाद समाधि से लीन हो जाते थे ।
		3जून68		–इन सहकार्यों से "कल्याण" के सम्पादन में विघ्न पड़ता है यह देखना शून्य रहती है ऐसा विचार एवं संपादन विभाग के वरिष्ठ सदस्य की भेजे गये पत्र से मालूम होता है ।

विविध सेवा कार्य

1986	फाल्गुन शुक्ल 1	1929	37	–साहबगंज गोरखपुर में प्लेग फैला-रोगियों प्राणपण सेवा-शुश्रूषा.
1987	आषाढ़ शुक्ल 1	1930	38	–गोरखपुर में बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
1989		1932	40	–गोरखपुर जेल में देवदास गांधी और कृष्णकान्त मालवीय से भेंट एवं उनकी देखभाल.
	आषाढ़ शुक्ल 7			–देवदास गांधी को काशी पहुंचाने भाईजी गये ।
1991	श्रावणबाढ़	1934	42	–गोरखपुर जिले में बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
	माघ शुक्ल	1934	42	–बिहार के प्रलयंकारी भूकम्प में पीड़ितों की सहायता.
1993	आषाढ़	1936	44	–संकीर्तन अभियान का गोरखपुर में । –गोरखपुर में बाढ़ का प्रकोप.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
	आषाढ़			-पं० नेहरू का बाढ़ निरीक्षण संबंध में गोरखपुर आगमन भाई जी ने उन्हें अपनी गाड़ी बरहज तक जाने के लिए दी.
	श्रावण			-बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
1995	कार्तिक कृष्ण	1938	46	-राजस्थान में भयंकर अकाल पड़ा.
	कार्तिक शुक्ल 8			-राजस्थान के अकाल पीड़ितों की सहायता.
	चैत्र कृष्ण 2	25मार्च,40	48	-बाढ़-पीड़ितों की सहायता.
1997		1940	48	-बंगाल के अकाल पीड़ितों की सहायता.
	पौषशुक्ल 4	1942	50	-द्वितीय विश्व युद्ध से कलकत्ते से भागे हुएयात्रियों की रतनगढ़ रेल्वे स्टेशन पर सेवा व्यवस्था.
	पौष			-रतनगढ़ में पशु दान यज्ञ का आयोजन.
1999	भाद्र कृष्ण 10	1942	50	-बीकानेर में अतिवृष्टि से पीड़ित जनता की सेवा.
2003	मार्गशीर्ष	अगस्त 46	54	-नोआखली काण्ड,पं०मदन मोहन मालवीय का निधन.
				-नोआखली काण्ड से पीड़ित हिन्दुओं की सहायता के लिए गीताप्रेस गोरखपुर सेवामण्डल द्वारा उनकी व्यवस्था.
2008	तिलकजयंती	1951	59	-तिलक जयंती के पुण्य पर्व पर गोरखपुर में कुष्ठ सेवाश्रम की स्थापना.
		1952		-राजस्थान में भयंकर अकाल पड़ा.श्री
		[illegible]	[illegible]	पोद्दार जी द्वारा अकाल पीड़ितों

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				की व्यापक सहायता.
2010	ज्येष्ठ शुक्ल 2			–"कुष्ठ सेवाश्रम" का पंजीकरण कराकर के उसका स्थायीकरण किया गया.
2011		1954	62	–उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल के बाढ़ पीड़ितों के प्रति सहायता कार्य.
2012		1955	63	–पूर्वांचल में बाढ़ का प्रकोप, पोद्दार जी द्वारा पीड़ितों की सहायता.
				–तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री संपूर्णानंद की द्वारा श्रीपोद्दार जी का बाढ़ पीड़ितों के सहायतार्थ 2000/-रुपये भिजवाए.
	भाद्र शुक्ल 3	20अगस्त1955		–केन्द्रीय सरकार के गृहमंत्री श्री गोविन्द बल्लभ पंत का गोरखपुर आगमन एवं सरकार की ओर से 5000/-रुपये बाढ़ पीड़ितों के लिए गए.
				–गोरखपुर में किराये के भवन में "मूक बधिर विद्यालय" की स्थापना.
				–"मूक बधिर विद्यालय" के लिए पृथक भवन का निर्माण करवाया.
2023			74	–बिहार में अकाल पीड़ितों की सेवा सहायता.
		अगस्त		–एक भ्रान्त बालिका (करीब उम्र 16–17 वर्ष) की देखभाल.
2024		1967	75	–सिराहू काण्ड के पीड़ितों की सहायता

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
2025		1967-68	76	-राजस्थान में भयंकर सूखा पड़ा. पशुओं के लिए चारे एवं चिकित्सा-पोल की व्यवस्था की एवं दुःखी लोगों की व्यवस्था भी की ।
2025-26		1969		-राजस्थान में भीषण अकाल पड़ा । अकाल पीड़ितों एवं गोवंश की प्राण-रक्षार्थ वृहद् सेवा योजना । बीकानेर में गायों की सेवा का कार्य प्रारम्भ। अपनी धर्मपत्नी से 5000/-लेकर यह कार्य प्रारंभ किया । बाद में लगभग 15लाख रुपये व्यय हुए ।
2026		1969		-आसाम में तूफानग्रस्त क्षेत्रों का दौरा एवं पीड़ितों की सेवा एवं यथाशक्ति सहायता.
				-पूर्वी पाकिस्तान के तूफान पीड़ितों की सहायता.

हनुमानप्रसादः कृतित्व

॥ श्रीहरिः ॥

श्रीभाईजीकी अतुल सम्पति—

1. सबमें भगवानको देखना
2. भगवत्कृपापर अटूट विश्वास
3. भगवन्नामका अनन्य आश्रय

हनुमानप्रसाद पोद्दार

प्रकरण-7

श्री पोद्दार जी : कृतित्व गत विधा विकास

7.1 - पद्य साहित्य

7.2 - गद्य साहित्य

7.3 - कृतियों का नाम एवं संक्षिप्त परिचय

7.4 - भाव एवं चिन्तन

श्री पोद्दार जी का कृतित्वगत विधा विकास

7.1 काव्य :-

पोद्दार जी की काव्य प्रतिभा मध्ययुगीन भक्त संतों की परंपरा में पद साहित्य की प्रचुर सामग्री प्रस्तुत करती है जो अपनी प्रौढ़ एवं प्रांजल अभिव्यक्ति में उन भक्त कवियों के समान भाव एवं भावनाओं का समावेश किये हुए है जो मध्ययुग काव्य की विशेषता रही है । युग प्रवर्तक भक्त कवियों की भाँति पोद्दार जी ने कविता नहीं लिखी प्रत्युत आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त कर अनुभूत उपलब्धियों के संदर्भ में विनय, दैन्य, विरह, आत्मतोष, हर्ष-विषाद के मर्मस्पर्शी संवेगों का संस्पर्श किया है जो भक्त काव्य की भाँति प्रभावोत्पादक एवं लोकमंगलकारी बनकर लोककल्याण के साधक बने हैं ।

7.2 गद्य :-

पोद्दार जी ने काव्य के साथ गद्य विधा को अपनी अभिव्यक्ति के लिये अपनाया है । अभिव्यक्ति की संक्षिप्ति पर बल रहा है, ऐसा अनुमान लगाना कदाचित् असंगत न होगा ।

उनकी प्रारंभिक अभिव्यक्ति के अन्तर्गत जीवनी एवं चरित्रांकन विधा में सरल भाषा में ही रचनायें प्रस्तुत हुई है जो विवरणात्मक और जीवनीपरक जैसे साहित्य के लिए समीचीन थीं ।

जिज्ञासा प्रधान साहित्य में तर्क और समीक्षा की अपेक्षा रहती है जो गद्य विधा की विवरणात्मक स्थिति का अनुगामी सोपान बन जाना चाहिए ।

अनुगामी गद्य की अभिव्यक्ति प्रौढ़ता प्राप्त करती है और आलोचनात्मक लेखों की रचना होती है । आलोचनात्मक लेख पक्ष-विपक्ष, ऊँच-नीच, वाद-विवाद सभी पक्षों पर प्रकाश डालते हैं । इसलिए गद्य की इस विधा में रचनाकार की लेखनी सशक्त होती है ।

पोद्दार जी का प्रचुर पत्र-साहित्य प्राप्त होता है जो अन्यान्य रचनाओं के सानिध्य में संभव हुआ है साहित्य गत गद्य विधा में प्रवाह रूप में लेखन प्रस्तुत हुआ है । शंकाओं का समाधान, सांत्वना, और सहानुभूति तथा अनुकूल, आध्यात्मिक उपलब्धियों के संदर्भ पत्र साहित्य की मानक उपलब्धि बन गई है । ग्रान्थीयता और निकटता का संस्पर्श होते हुए भी संयत भाषा का प्रयोग है तथा कहीं भी आक्रोश अथवा मोहपरक प्रसंग नहीं है ।

गद्य विधा के अंतिम चरण में विवेचनात्मक दृष्टि प्रमुख रही है जिसके अन्तर्गत सिद्धान्तों का विवेचन, तर्क-वितर्क का समाधान संदिग्ध संदर्भों की खोज और उनकी सप्रमाण प्रस्तुति हुई है । राधा-माधव चिंतन में विवेचनात्मक पहलू का आदर्श प्रस्तुत हुआ है । इसके साथ-साथ संपादन कार्य में विवेचनात्मक ही नहीं प्रस्तुत प्राप्त सामग्री के संशोधन परिवर्धन का भी दायित्व आता है । गद्य, विधा की यह वह स्थिति है जहाँ गद्य का साहित्यकार आचार्य का दायित्व प्राप्त करता है और उसका सफलता पूर्वक निर्वाह करता है ।

7-3 कृतियों का संक्षिप्त परिचय

कृतियों का संक्षिप्त परिचय गीतावाटिका के प्रकाशन 'साहित्य-सुधा' [डा० भगवती प्रसाद सिंह] में दिया गया है । अतएव, शोध प्रबंध की अपेक्षा की दृष्टि से कृतियों के संक्षिप्त परिचय की पुनरावृत्ति न करके नामोल्लेख, प्रथम प्रकाशन तिथि देना ही अलम् होगा ।

(1) काव्य

क्रम संख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	पत्र पुष्प (भाग-5)	1980
2.	मारवाड़ी धार्मिक गीत	1992
3.	पद	2014
4.	श्रीराधामाधव रससुधा (षोडश गीत)	2018
5.	व्रजरस माधुरी	2025
6.	प्रार्थना पीयूष	2025
7.	व्रजरस की लहरें	2027
8.	हरि प्रेरित हृदय की वाणी	2027
9.	आरती माला	2034
10.	पद रत्नाकर	2035

(2) गद्य

(1) साधना परक नियम, उपाय:-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	मन को वश में करने के कुछ उपाय	1980
2.	प्रार्थना	2007
3.	दैनिक कल्याण सूत्र	2010
4.	जीवन में उतारने की सोलह बातें	2014
5.	कल्याणकारी आचरण	2026

(2) विवरणात्मक लेख:-

1.	ब्रह्मचर्य	1982
2.	मानवधर्म	1986

3.	साधन पथ	1986
4.	गोपी प्रेम	1991
5.	उपनिषदों के चौदह रत्न	1992
6.	श्री भगवन्नाम	1999
7.	भवरोग की रामबाण दवा	2001
8.	नारी शिक्षा	2009
9.	दीन-दुखियों के प्रति कर्तव्य	2010
10.	राधामाधव का मधुर रूप गुण तत्त्व	2027
11.	दाम्पत्य जीवन का आदर्श	2032

(3) जीवनी परक साहित्य:-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	भक्त बालक	1987
2.	भक्त नारी	1987
3.	भक्त पंचरत्न	1988
4.	आदर्श भक्त	1980
5.	प्रेमी भक्त	1990
6.	प्राचीन भक्त	1996

(4) जिज्ञासा प्रधान:-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	भगवच्चर्चा भाग-1 [तुलसीदल]	1988
2.	भगवच्चर्चा भाग-2 [नैवेद्य]	1989
3.	भगवच्चर्चा भाग-3	2009
4.	भगवच्चर्चा भाग-4	2010

5.	भगवच्चर्चा भाग-5	2010
6.	भगवच्चर्चा भाग-6 (पूर्णसमर्पण)	2010
7.	श्रीराधा नाम और राधा उपासना सनातन है	2014
8.	रासलीला रहस्य	2030
9.	गीता में विश्वरूप दर्शन	2021
10.	रस और भाव	2022
11.	पूर्ण परात्पर भगवान श्री कृष्ण का अविर्भाव	2023
12.	मानव जीवन का लक्ष्य	2037

<u>(5) आलोचनात्मक एवं समाज की तत्कालीन स्थिति सम्बन्धी</u> :-

क्रमांक या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	समाज सुधार	1985
2.	वर्तमान शिक्षा	1993
3.	हिन्दू क्या करें	2002
4.	हिन्दू-संस्कृति का स्वरूप	2008
5.	सिनेमा मनोरंजन या विनाश का साधन	2009
6.	विवाह में दहेज	2010
7.	बलपूर्वक देवमन्दिर प्रवेश और अविवेक	2010
8.	समाज किस ओर जा रहा है	2036

<u>(6) पत्र साहित्य :-(744पत्र)</u>

क्रमांक	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	लोक-परलोक का सुधार (कामके पत्र) भाग-1	2001
2.	,, ,, ,, भाग-2	2002

3.	लोक-परलोक का सुधार (काम के पत्र) भाग-3	2008
4.	.. .. .. भाग-4	2009
5.	.. .. .. भाग-5	2009
6.	व्यवहार और परमार्थ	2030
7.	सुख-शान्ति का मार्ग	2030
8.	शान्ति की सरिता	2036
9.	सुखी बनो	2036

(7) विवेचना साहित्य :-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	राधामाधव चिन्तन	2018
2.	राधामाधव चिन्तन परिशिष्ट	2026

(8) स्तोत्र विधा में गुण वर्णन :-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	श्री राधा जन्माष्टमी व्रत महोत्सव की प्राचीनता महिमा और पूजाविधि	2025
2.	श्री कृष्ण महिमा का स्मरण	2027

(9) उद्बोधक साहित्य:-(सम्पादकीय लेख-355)

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	कल्याण कुंज भाग-1	1992
2.	.. .. भाग-2	2008

3.	कल्याण कुंज भाग-3	2009
4.	मानव कल्याण के साधन (भाग-4)	2024
5.	दिव्य सुख की सरिता (भाग-5)	2024
6.	सफलता के शिखर की सीढ़ियाँ (भाग-6)	2024
7.	परमार्थ की मंदाकिनी (भाग-7)	2033

(10) प्रकीर्ण :-

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	स्त्री धर्म प्रश्नोत्तरी	1982
2.	आनन्द की लहरें	1988
3.	सत्संग के बिखरे मोती	2007
4.	सत्संग वाटिका के बिखरे सुमन	2034
5.	परमार्थ की पगडंडियाँ	2034
6.	अमृत कण	2039
7.	सुखी बनने के उपाय	2041

(3) सम्पादित पुस्तकें

क्रमसंख्या	पुस्तक का नाम	प्रथम प्रकाशन का संवत्
1.	भक्त चन्द्रिका	1990
2.	भक्त सप्तरत्न	1990
3.	भक्त कुसुम	1990
4.	यूरोप की भक्त स्त्रियाँ	1990
5.	भक्त राज हनुमान	1995
6.	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र	1996

7.	प्रेमी भक्त उद्धव	1996
8.	महात्मा विदुर	1996
9.	भक्त राज ध्रुव	1996
10.	भक्त सौरभ	1996
11.	भक्त सरोज	1996
12.	भक्त सुमन	1996
13.	ढाई हजार अनमोल बोल (संतवाणी)	1996
14.	भक्त सुधाकर	2008
15.	भक्त महिलारत्न	2008
16.	भक्त दिवाकर	2008
17.	भक्त रत्नाकर	2008
18.	ईश्वर की सत्ता और महत्ता	2009
19.	आरती संग्रह	2010

7-4 भाव एवं तत्व चिन्तन

श्री पोद्दार जी के काव्य का गहन अध्ययन अपेक्षा श्रीमती डॉ० कृष्णा करतिया ने किया है । यहाँ उनके निष्कर्ष तुलना सन्दर्भ हेतु दिये जा रहे हैं ।

पोद्दार जी ने भक्ति के मूलभाव को ग्रहण करने के लिए विभिन्न भाव एवं तत्वों का विवेचन किया है । यह उनकी मौलिक उद्भावना रही है तथा इस माध्यम से विषय को व्यापक रूप से बोधगम्य कराने का प्रयत्न किया गया है । जिसके अन्तर्गत दार्शनिक गूढ़ तत्व दृष्टव्य होते हैं तथा इन सन्दर्भों के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास जागृत होता है, हिन्दू धर्म शास्त्रों, पुराणों एवं देवी-देवताओं तथा भगवान के साकार अवतारों के प्रति आग्रह एवं आस्था दृढ़ एवं बलवती होती है । कतिपय सन्दर्भ उल्लेखनीय है — राधा तत्व, कृष्ण तत्व, पुरुषोत्तम तत्व, प्रेम तत्व, श्री कृष्ण का स्वरूप तत्व, श्री राधामाधव का मधुर रूप गुण तत्व, श्रीराधा का प्रेम स्वरूप गुण तत्व तथा राधा भाव[1], गोपीभाव[2], परकीया भाव आदि श्री राधामाधव चिन्तन[3] के ये उपर्युक्त सन्दर्भ पोद्दार जी के मौलिक चिन्तन हैं तथा आध्यात्मिक साधना के लिए अनुपम देन है । इन तत्वों

---

[1] "भोग और त्याग, दोनों का त्याग ही "राधा भाव" का स्वरूप है।
[राधामाधव चिन्तन] पृ०146.

[2] "गोपीभाव"- सर्वसमर्पण का भाव है ।
[राधामाधव चिन्तन] पृ0938.

[3] "श्री राधामाधव चिन्तन" 1016 पृष्ठ की पोद्दार जी की प्रसिद्ध कृति है जो तत्व चिन्तन की अनुपम एवं अद्वितीय उपलब्धि है तथा प्रत्येक भगवत प्रेमी के लिये पाठ एवं परायण उपयोगी होकर संग्रहणीय है।

एवं भावों का मूल विवेचन समर्पण एवं अनन्य प्रेम है जिसके अतिरिक्त और कोई साधन नहीं है ।

भक्ति के क्षेत्र में पोद्दार जी की देन :-

"नाम महिमा की पुनर्स्थापना" तथा "देवी-देवताओं में समन्वय" पोद्दार जी की उल्लेखनीय देन है । वह प्रेमाभक्ति के साक्षात् अवतार थे तथा उन्होंने प्रेमाभक्ति के सूक्ष्म से सूक्ष्म, उज्ज्वल से उज्ज्वल, आदर्श से आदर्श स्वरूप का निरूपण किया है ।[1]

भगवत्साधना :-

पोद्दार जी ने अपने साधना में जीवन के अलौकिक अनुभवों के संदर्भ में भगवत्साधना के सरलतम साधन प्रस्तुत किये है —

[1] सबमें भगवान को देखना ।

[2] भगवत्कृपा पर अटूट विश्वास ।

[3] भगवन्नाम का अनन्य आश्रय ।

भक्ति साधना की समीक्षा :-

पोद्दार जी के भक्ति साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन उनकी धेवती डॉ० [श्रीमती] कृपा भरतिया ने अपने पी०एच-डी० शोध प्रबन्ध के लिए किया है । अतः यह शोध प्रबन्ध अप्रकाशित है। इसलिए डा० भरतिया के निष्कर्षों को यहाँ प्रस्तुत किया जाना संदर्भ हित में होगा जिससे इस प्रकरण की अपेक्षा पूरी हो सके ।

"भारतीय संस्कृति सनातन धर्म और उसमें निहित पवित्र विचारों के परिसर में उन्होंने अपनी रचना की प्रतिष्ठा की है ।

---

[1] पोद्दार जी के भक्ति साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन-डा० कृपा भरतिया [अप्रकाशित] पृ० : 444

पृ.10

उनके लिए आत्मानन्द, ईश्वरानुभूति, भक्ति भावना, सनातन-धर्म-निष्ठा से पृथक नहीं है। वे धर्म और साहित्य की मूल चेतना को एक साथ समीकृत करते हैं और इसी आधार पर अपने रचना वैभव से प्रभावित करते हैं।"[1]

"मम्मट के शिवेतरक्षतये"— पोद्दार जी के भक्ति साहित्य के उद्देश्य परक मूल्यांकन का आधार हो सकता है। "रसो वै सः"....इसीलिए को अपने काव्य संसार का परम प्रतिपाद्य बनाकर पोद्दार जी ने मूल्यांकन की उज्ज्वल प्रतिमान विधायक पात्रता का संकेत कर दिया है।"[2]

"भक्ति रसामृत सिन्धु से प्रभावित वस्तुतः भक्ति भावना का शास्त्र किसी भी सच्चे साधक की मानसिक यात्रा को अपनी सीमाओं में नहीं बांध सकता। शास्त्रपूर्णता सर्व मुक्त और निरवधि रहित नहीं हो सकता। इसलिए एक साधक की शुद्ध संकल्पात्मक अनुभूति किसी भी पूर्व निर्धारित शास्त्र के विधि निषेधों की सीमा में नहीं बंध सकती। राग चेतना और परम चैतन्य के प्रति उसके नित्य प्रवाह और एकान्त चिन्तन रूप भावाद्वैतता का कोई शास्त्र नहीं बन सकता। यही कारण है कि पोद्दार जी की भक्ति सभी शास्त्रों से समर्थित होते हुये भी अपना निजी अस्तित्व रखती है। उनकी व्याख्याओं में प्रेमराज्य के अद्भुत तत्त्व, लीला तरंग और दिव्य सोपान वीथियों की चर्चा प्राप्त होती है। प्रेमोदय, प्रेम प्रसाद, प्रेमी पार्षद, लीला रहस्य आनन्द और रस दर्शन की अनेक मुखरित स्थितियों का संकेत उनके लेखन और पद पुंज में पदे-पदे परिलक्षित किया जा सकता है।"[3]

---

[1] डा० कृष्णा बरलिया का शोध ग्रन्थ [अप्रकाशित] [पृ०:316.

[2] डा० कृष्णा बरलिया का शोध ग्रन्थ [अप्रकाशित] पृ० : 317, 318.

[3] ,, ,, ,, ,, पृ० : 314.

प्र "वस्तुतः काव्यात्मा की खोज या आश्रित भारतीय काव्य शास्त्र जिन कसौटियों की चर्चा करते हैं वे किसी न किसी रूप में मनुष्य की सुरुचि, आनन्दान्वेषी, [redacted], कल्याणदायी, श्रेयस संधानी, न्याय और उदात्त मूल्यपरता को ही प्रकारान्तर से प्रतिष्ठित करते हैं। इस दृष्टि से विचार करने पर भी पोद्दार की आध्यात्मिक काव्य चेतना महत्तम धरातल पर मनुष्य के अभ्युदय, निःश्रेयस और उसके परमानन्द की व्यवस्था करती है और इस प्रकार उनके काव्य जगत या साहित्य जगत को वृहत्तर धरातल पर साहित्य के मूलभूत सरोकारों के सन्दर्भ में प्रस्तुत करती है।"[1]

"पोद्दार जी का भक्त व्यक्तित्व मानव व्यक्तित्व की [redacted] उन्नत सोपान अथवा मानव व्यक्तित्व की परिणति कही जाय, वस्तुतः ऐसा पृथक्करण कोई महत्व नहीं रखता। पोद्दार जी प्रच्छन्न संत के उस दिव्य व्यक्तित्व के धनी अवश्य ही रहे हैं किन्तु सामान्य की भाँति वह भी साधक एवं भक्त की लीला करते हैं तथा अन्ततोगत्वा संत के दिव्य व्यक्तित्व में प्रकट होते हैं यद्यपि उस दिव्यता की अभिव्यक्ति को अप्रकट एवं गोपनीय रखने के लिए सभी प्रयत्न करते हैं किन्तु एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब वह अपनी उस दिव्य स्थिति से विवश हो जाते हैं और अपनी भौतिक लीला में आस्थित रहने की सक्षमता ही नहीं रख पाते हैं। अध्ययन एवं अनुशीलन की दृष्टि से ही नहीं प्रत्युत मानव साधना की प्रगति का अवलोकन करने के लिए भी पोद्दार जी के भक्त व्यक्तित्व का अपना महत्व है। इस व्यक्तित्व में स्थान-स्थान पर संत के दिव्य व्यक्तित्व की झाँकी दृष्टिगत होती है और इस प्रकार भक्त व्यक्तित्व की मूल भाव भूमि के रूप में दिव्यता की प्रतिष्ठा होती है भक्त की शास्त्रीय एवं कर्मकाण्डीय रूप प्रतिपादित होते हुये भी अपेक्षित प्रेम पर भाव की अनिवार्यता को ही संकेतित किया जाता है।

[1] डा० कृष्ण भारतिया का शोध प्रबन्ध [अप्रकाशित] पृ०सं० 315.

कृतित्व: विविध प्रकाशित साहित्य

8.1 सम्पादन

88.2 सम्पादन के आदर्श एवं मान

8.3 टीका

8.4 संशोधन

8.5 साहित्य साधना की उपलब्धि

86.5.1 प्राचीन धर्म ग्रन्थों का प्रकाशन

8.5.2 भारतीय संस्कृत का पुनरुद्धार

8.5.3 राष्ट्रभाषा की समृद्धि

8.5.4 कम मूल्य पर प्रकाशन

श्री पोद्दार जी : कृतित्व

कृतित्व के अन्तर्गत "सम्पादकत्व" पर पी०एच-डी० के लिए शोध उपाधि कार्य हो जाने को दृष्टिगत रखते हुये सीमित तथा कृतित्व के इतर विशद बिन्दुओं का अनुशीलन किया गया है।

पोद्दार जी का कृतित्व किंवा प्रकाशित व्यक्तित्व

व्यक्तित्व को चिरस्थायी बनाने के कल्याणकारी उपक्रम को प्रकाशनों के संदर्भ में देखा जा सकता है । अन्य उपक्रम यथा भवन निर्माण, कूप निर्माण, धर्मशाला निर्माण आदि की अपनी सीमायें है तथा उसका स्थायित्व अल्पकालिक ही होता है । ठीक ही कहा है-

"किसी ने बनवाया थी ताज, किसी की रखने को यदि याद ।
न हो जायेगा कि वह जीर्ण, न हो जायेगा बरबाद ।।
ताज का एक-एक पाषाण, कहा करता दिन-रात पुकार ।
मुझे का जायेगी दिन एक, इसी अज्ञुन्य की भूखी धार ।।"

सत्साहित्य प्रकाशन इसके विपरीत चिरस्थायी होता है तथा चिरकाल तक जन जागृति का कार्य करता रहता है ।

प्रकाशन वस्तुतः कृतिकार के व्यक्तित्व का प्रकाशित व्यक्तित्व ही होता है । उसको कृतिकार की सुरुचि, श्रेष्ठ चिंतन-मनन, आशा-अपेक्षा, एवं अभीप्सा तथा लोकमंगल की भावना का मूर्तमान स्वरूप ही कहा जायेगा । चिंतन की सीमा से ऊपर उठ कर अनुभूति के स्तर में कृतिकार स्वयं बोलता हुआ प्रतिभाषित होता है । इस प्रकार कृतिकार की अमर आत्मा पाठक मार्गदर्शन करती है तथा भौतिक शरीर की सीमाओं को लांघ कर शाश्वत एवं चिंतन दिव्य ज्योति के रूप में मानव-मंगल साधिका सिद्ध होती है । श्री पोद्दार जी का प्रकाशित व्यक्तित्व इस दिव्य रूप में वन्दनीय एवं अभिनन्दनीय है ।

8-1 प्रकाशन एक व्यवसाय है यदि यह सत्प्रवृत्ति से प्रेरित होकर पाठकों के हित को ध्यान में रखते हुए उनके और समाज के उत्थान के लिए कोई प्रकाशक सत्साहित्य का प्रकाशन करता है तो वह निःसन्देह अभिनन्दनीय है किन्तु आजकल दो चार प्रकाशकों को छोड़कर ऐसे प्रकाशक मिलना बहुत कठिन प्रतीत होता है । फिर किसी पत्र तथा पत्रिका को निकालने का दायित्व तो और बड़ी भारी बात होती है क्योंकि जब तक कोई पूर्व निर्धारित योजना नहीं बना ली जाती आर्थिक आधार सुदृढ़ नहीं कर लिया जाता तब तक कोई पत्र-पत्रिका निकालने का दुःसाहस नहीं कर सकता ।

श्री पोद्दार जी द्वारा सम्पादित आध्यात्मिक मासिक "कल्याण" इसका अपवाद स्वरूप है । सन् 1977 में गोरखपुर विश्व-विद्यालय से डा० सदानन्द गुप्त जी ने "कल्याण सम्पादक" श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार" पर कार्य कर चुके है । अतएव शोध प्रबन्ध की अपेक्षा की दृष्टि से कल्याण का संक्षिप्त परिचय, कल्याण के विशेषांकों के नामोल्लेख एवं सम्पादन के आदर्श सिद्धान्त ही देना उचित होगा ।

"कल्याण" का प्रथम अंक श्रावण कृष्णा 11 सं० 1983 को व्यंकटेश्वरप्रेस सत्संग भवन बम्बई से प्रकाशित हुआ । इस प्रथम अंक के प्रथम पृष्ठ पर "बंदो चरन सरोज तुम्हारे" सूरदास जी का पद था । दूसरे पृष्ठ पर सम्पादकीय निवेदन । इस अंक में श्री जयदयाल गोयन्दका जी के दो लेख और एक पत्र तथा महात्मा गांधी जी का एक लेख तथा अन्य पृष्ठों पर संतो की वाणी तथा भाई जी की रचनायें भी शामिल थी । कल्याण की सफलता के लिए पोद्दार जी गांधी जी का आशीर्वाद प्राप्त करने गये । गांधी जी ने कहा - "कल्याण में दो नियमों का पालन करना-प्रथम बाहरी कोई विज्ञापन नहीं देना तथा दूसरे पुस्तकों की समालोचना मत छापना ।" पोद्दार जी ने इस बात को अन्त तक निभाया । 13महीने

तक कल्याण बम्बई से निकला । पीछे पोद्दार जी का मन एकान्त वास के लिए छटपटाने लगा एवं कल्याण के प्रकाशन से विरत होने की भावना जाग्रत हुई किन्तु श्रीजयदयाल गोयन्दका जी के प्रबन्धकाल में पोद्दार जी ने अपनी पूरी निष्ठा व्यक्त की । और कल्याण के आगामी अंको का प्रकाशन गीताप्रेस ' गोरखपुर से होने लगा । प्रारम्भ में इसकी ग्राहक संख्या मात्र तेरह सौ थी किन्तु श्री पोद्दार जी के कुशल सम्पादन, गंभीर चिंतन और अगाध पांडित्य तथा आत्म विश्वास के द्वारा ग्राहक संख्या एक वर्ष पश्चात् ही पाँच सहस्त्र हो गयी । श्री पोद्दार जी ने इस कार्य को ईश्वरीय सेवा मानते हुए अपने को पूर्णरूपेण समर्पित कर दिया ।

उनकी सफलता का सर्वाधिक प्रतिफल है कल्याण की लोकप्रियता आज देश की यह सबसे पहली ऐसी धार्मिक एवं आध्यात्मिक पत्रिका है जिसकी ग्राहक संख्या 1,65000(सं0 2026 तक) है । "कल्याण" कुछ विशिष्ट स्तम्भ(शिव उपनाम से लिखे गये लघु लेख पदों सबको और करो, 'परम हंस विवेक माला, विवेक वाटिका, भक्त गाथा, 'परमार्थ पत्रावली, 'परमार्थ की पगडंडियाँ साधकों के प्रति, सत्संग वाटिका के बिखरे सुमन-नाम के पत्र) भी थे जिन्हें स्थायी स्तम्भ माना जाता था। इनमें ज्ञान, विज्ञान, सदाचार, नैतिकता करूणा, दया, सहिष्णुता इत्यादि विषयों से सम्बन्धित सामग्री हुआ करती थी । देशकाल और परिस्थिति के अनुसार कल्याण में समसामयिक, तत्कालीन परिस्थितियों से सम्बन्धित अग्रलेख भी प्रकाशित होते रहे जिनमें पोद्दार जी का बहुमुखी व्यक्तित्व और अधिक मुखरित हुआ है ।

पोद्दार जी के कुशल सम्पादन में 44 विशेषांक निकलेहै जिनका विवरण निम्नलिखित है :-

क्र०सं०	विशेषांक का नाम	प्रकाशित होने का मास एवं सम्वत्	पृष्ठ संख्या	प्रकाशित प्रतियाँ
1.	(प्रथम वर्ष विशेषांक नहीं निकला)			
2.	भगवन्नामाङ्क	श्रावण 1984	110	11,000
3.	भक्तांक	,, 1985	246	15,000
4.	श्रीमद्भगवद्गीतांक	,, 1986	505	16,000
5.	श्रीरामायणांक	,, 1987	592	20,250
6.	श्रीकृष्णांक	,, 1988	512	17,500
7.	ईश्वरांक	,, 1989	618	21,000
8.	शिवांक	,, 1990	666	22,500
9.	शक्ति अंक	,, 1991	804	25,600
10.	योगांक	,, 1992	884	34,100
11.	वेदान्तांक	,, 1993	744	36,500
12.	संत-अंक	,, 1994	874	35,000
13.	मानसांक	,, 1995	928	93,600
14.	गीतातत्वांक	,, 1996	1072	50,600
15.	साधनांक	,, 1997	792	55,600
16.	श्रीमद्भागवतांक	,, 1998	1072	65,100
17.	संक्षिप्त महाभारतांक	,, 1999	937	70,600
18.	संक्षिप्त वाल्मीकि रामायणांक	आश्विन 2000	536	58,600
19.	संक्षिप्त पद्मपुराणांक	श्रावण 2001	360	90,100
20.	गो-अंक	आश्विन 2002	744	1,01,300
21.	संक्षिप्त मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणांक	माघ 2003	725	1,01,400

22.	नारी-अंक	माघ	2004	800	1,15,900
23.	उपनिषद् अंक	..	2005	776	1,07,000
24.	हिन्दू संस्कृति अंक	..	2006	904	1,25,000
25.	संक्षिप्त स्कन्द पुराणांक	..	2007	882	1,10,000
26.	भक्त चरितांक	..	2008	808	1,20,400
27.	बालकांक	..	2009	800	1,15,900
28.	संक्षिप्त नारद विष्णु पुराणांक	..	2010	800	1,19,900
29.	संत-वाणी-अंक	..	2011	800	1,23,700
30.	सत्कथांक	..	2012	704	1,21,100
31.	तीर्थांक	..	2013	704	1,20,000
32.	भक्ति-अंक	..	2014	708	1,15,000
33.	मानवतांक	..	2015	704	1,15,000
34.	संक्षिप्त देवी भागवतांक	..	2016	704	1,25,000
35.	संक्षिप्त योगवशिष्ठ अंक	..	2017	700	1,31,000
36.	संक्षिप्त शिव पुराणांक	..	2018	704	1,51,000
37.	संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्त पुराणांक	..	2019	682	1,41,000
38.	श्रीकृष्णवचनामृतांक	..	2020	692	1,35,000
39.	श्रीभगवन्नाम-महिमा और प्रार्थनांक	..	2021	700	1,42,000
40.	धर्मांक	..	2022	700	1,50,000
41.	श्रीरामवचनामृतांक	..	2023	704	1,50,000
42.	उपासनांक	..	2024	700	1,50,000
43.	परलोक और पुनर्जन्मांक	..	2025	696	1,60,000
44.	अग्निपुराण, गर्ग संहितांक	..	2026	700	1,65,000

ये सभी विशेषांक अपने में पूर्ण माने जाते है । इन विशेषांकों की विद्वानों ने मुक्त कंठों से प्रशंसा की है कुछ पत्र एवं कथन दिये जा रहे है :-

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी :-

दौलतपुर (रायबरेली)

7.9.32

कल से कल्याण के "ईश्वरांक" पाठ से आनन्द प्राप्त कर रहा हूँ । आज 612 पृ0 पर आपका लेख पढ़ा । 614 के पहले कालम को पहले पांच सतरे पढ़कर यह कार्ड लिख रहा हूँ । मेरी आँखों से जो आँसू निकले हैं और अब तक निकल रहे हैं उनका कुछ अंश कार्ड के ऊपर लग गया है । आप धन्य है, आपकी योजना धन्य है – भगवद्भक्ताय ते नमः । कृतार्थ,

म0प्र0 द्विवेदी

पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल :-

काशी विश्वविद्यालय,

20.1.36

मुझमें यह कमी है कि मैं सब पत्र-पत्रिकाओं को आद्यन्त नहीं पढ़ पाता । परन्तु वेदान्त अंक ने मुझे छोड़ा नहीं वह मुझे सागर जान पड़ा जिसमें अवगाहन करने से शीतलता और शान्ति मिली है उसमें कई रत्न भी हाथ लगे । कल्याण का सामयिक साहित्य में विशेष और आदरणीय स्थान है और उसके विशेषांक तो सामयिक ही नहीं स्थायी धार्मिक साहित्य की भी पुष्टि करते हैं । ऐसी कल्याणकारी सामग्री को सर्व साधारण के लिए सुगम बनाने के उपलक्ष्य में मैं आपको बधाई और धन्यवाद देता हूँ ।

आपका बड़थ्वाल,
पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल.

8.5

डा० बल्देव उपाध्याय :-

'कल्याण के विशेषांक एक से एक बड़े तथा महत्वपूर्ण है किन्तु तीर्थांक तो भारतीय तीर्थों का विश्वकोष ही है। इतनी प्रामाणिक उपादेय सामग्री हिन्दी में तो क्या किसी भी भाषा के ग्रन्थ में नहीं हैं। इसे आप अर्थवाद न समझें, यह तथ्यवाद है। ऐसे विशेषांक निकालने के लिए धार्मिक जगत आप लोगों का चिर-ऋणि रहेगा।'

डा० भगवानदास :-

'आपके सदुपयोगी कार्य की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। तीर्थांक देश-भारत के सब तीर्थों की पूरी डायरेक्ट्री ही है और सैकड़ों अति सुन्दर चित्र भरे पड़े हैं। आपका समस्त हिन्दी भाषी भारत ऋणी है।'

8-2 सम्पादन के आदर्श एवं मान

पोद्दार जी ने कल्याण का 44 वर्षों तक कुशल सम्पादन किया था। इस लम्बी अवधि में उन्होंनें सम्पादन के आदर्श सामने रखे। उन्हीं आदर्शों का पालन उन्होंनें ने किया है। कल्याण सम्पादन के आदर्श निम्नलिखित है :-

{1} प्रति वर्ष 11 साधारण अंक एवं एक विशेषांक प्रकाशित करना।

{2} बाहरी विज्ञापन न लेना एवं पुस्तक समालोचना न छापना।

{3} धार्मिक ग्रन्थों जैसे वेद, स्मृतिपुराण, उपनिषद, रामायण, "श्रीरामचरित मानस" आदि शास्त्रों में आस्था रखते हुए सनातन धर्म का प्रचार एवं प्रसार करना।

{4} सभी धर्मों के सिद्धान्तों का आदर-करते हुए किसी धर्म या सम्प्रदाय का खण्डन-मण्डन न करना। एवं वो दूसरे धर्मों की अच्छी बातों को ग्रहण करके प्रकाश में लाना।

8.6

{5} श्री राधा कृष्ण तथा गोपियों के चरित्र को उज्ज्वल चरित्र के रूप में प्रस्तुत करना ।

{6} मानव में मानवीय गुणों का विकास करते हुए सदाचार को मुख्य स्थान देना ।

{7} सभी प्राणियों में भगवान का निवास है अतः मनुष्य को चाहिए कि वही सभी प्राणियों की रक्षा तथा भरण पोषण करें।

{8} पाप-पुण्य की नयी परिभाषा दी गई । पाप वह है जिससे दूसरों को दुख होता है तथा पुण्य वह है जिससे दूसरों को सुख हो रहा है ।

{9} मनुष्य का मुख्य उद्देश्य भगवत्प्राप्ति है । भगवान को सभी वर्ग के, सभी वर्ण के, मनुष्य प्राप्त कर सकते है । केवल मनुष्य में भगवान को प्राप्त करने की उत्कंठा होनी चाहिए ।

{10} अर्थोपार्जन के स्थान पर अर्थहानि सहते हुए भी सदाचार का प्रचार-प्रसार करना ।

अवतार वाद को मानते हुए "परलोक एवं पुर्नजन्म" का समर्थन एवं प्रचार करना ।

{11} जीवित महापुरुषों के चित्र न छापना तथा न उनका जीवन-वृत प्रकाशित करना ।

{12} लोगों में भारतीय संस्कृति के गौरव के प्रति आस्था उत्पन्न हों इस बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय संस्कृति के विरुद्ध कुछ भी प्रकाश में न लाना ।

{13} त्रुटि रहित मुद्रण ।

{14} पत्र को राजनीति से पृथक रखना ।

{15} आचार्यों एवं सन्यासियों के लेखों को प्रधानता देना ।

{16} मर्यादा का पालन करना ।

8.7

कल्याण कल्पतरू :-

"कल्याण" पत्रिका से केवल हिन्दी भाषा भाषी जनता ही ल लाभान्वित हो सकती थी किन्तु अंग्रेजी भाषा जानने वाले अनेक पाठक देश विदेश के इस लाभ से वंचित रहते थे। अतएव कल्याण की भाँति ही जो धार्मिक एवं आध्यात्मिक विषयों का प्रतिपादन कर सके एक ऐसे पत्र की आवश्यकता समझी गयी। परिणाम स्वरूप "कल्याण कल्पतरू" का अंग्रेजी भाषा में संवत् 1991 तदनुसार जनवरी सन् 1934 में श्री चिम्मनलाल गोस्वामी के सम्पादकत्व में प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। किन्तु इसके कन्ट्रोलिंग एडीटर श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी ही रहे। उनकी ही देख रेख में तथा परामर्श द्वारा "कल्याण कल्पतरू" पत्रिका का कार्य सम्पादित होता रहा।

'कल्याण कल्पतरू' के सन् 1934 से लेकर सन् 1970 तक 32 विशेषांक प्रकाशित हुए। जिनका विवरण निम्न लिखित हैं :-

Special Numbers of 'Kalayana-Kalpataru'

Sl. No.		Year
1.	The God-Number	1934
2.	The Gita-Number	1935
3.	The Vedanta Number	1936
4.	The Sri Krishna-Number	1937
5.	The Divine Name Nimber	1938
6.	The Dharma-Tattva Number	1939

7. The Yoga Number	1940
8. The Bhakta Number	1941
9. The Sri krishna-Leela Number, Part I	1942
10. The Sri Krishna-Leela Number, Part II	1944
11. The Cow Number	1945
12. The Gita-Tattva Number, Part I	1946
13. The Gita-Tattva Number, Part II	1947
14. The Gita-Tattva Number, Part III	1948
15. The Manasa Number, Part I	1949
16. The Manasa Number, Part II	1950
17. The Manasa Number, Part III	1951
18. The Bhagavata Number, Part I	1952
19. The Bhagavata Number, Part II	1954
20. The Bhagavata Number, Part III	1955
21. The Bhagavata Number, Part IV	1956
22. The Bhagavata Number, Part V	1957
23. The Bhagavata Number, Part VI	1959
24. The Valmiki-Ramayana Number, Part I	1960
25. The Valmiki-Ramayana Number, Part II	1961
26. The Valmiki-Ramayana Number, Part III	1962
27. The Valmiki-Ramayana Number, Part IV	1963
28. The Valmiki-Ramayana Number, Part V	1965
29. The Valmiki-Ramayana Number, Part VI	1966

30.	The Valmiki-Ramayana Number, Part VII	1967
31.	The Valmiki-Ramayana Number, Part VIII	1969
32.	The Valmiki-Ramayana Number, Part IX	1970

"कल्याण कल्पतरु" की विदेशों में अत्यधिक माँग थी । इस पत्रिका ने विदेशों में रह रहे युवकों-युवतियों को जहाँ भक्ति मार्ग पर चलना सिखाया, साधकों को अध्यात्म मार्ग में चलने में सहायता प्रदान की वहाँ भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार में सहयोग दिया एवं श्री वाल्मीकि रामायण का आंग्लभाषा में अनुवाद उपलब्ध कराया। विदेशियों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की ।

"संसार में जहाँ कहीं भी जाता हूँ मैं भारतवर्ष की दो शक्तिशाली भुजाओं-सनातन धर्म की दो भुजाओं कल्याण (हिन्दी) और कल्याण कल्पतरु (अंग्रेजी) को उन लोगों के घरों में वर्तमान पाता हूँ । भारत से बाहर जहाँ भी हिन्दू रहते हैं उन्हें कल्याण से ही सच्ची प्रेरणा प्राप्त होती है । हिन्दू धर्म के विदेशी प्रशंसकगण अंग्रेजी कल्याण कल्पतरु के माध्यम से हिन्दू अध्यात्म ज्ञान की दीक्षा लेते हैं । ये दोनों पत्रिकायें ही श्री हनुमानप्रसाद जी की प्रिय सन्ततियाँ है । जिसने स्नेह एवं जितनी निष्ठा से इन्होंने इनका संवर्धन किया है । ये दोनों प्रेम के स्थायी स्मारक स्वरूप वर्तमान रहेंगी ।

x x x x कल्याण कल्पतरु में प्रकाशित श्री मद्भागवत एवं श्री वाल्मीकि रामायण के अनुवादों ने भारत से दूर वैसी अक्षय आध्यात्मिक सामग्री उपलब्ध करायी है । जिसने हमारी प्रभुभक्ति का पोषण किया है ।'

(1) भाई जी पावन स्मरण पृष्ठ 632

— श्री स्वामी वेंकटेशानन्द, रोज हिल, मारीशिस

"एक समय था जब विभिन्न विश्वासों विचारों और मत मतान्तरों का पारस्परिक संघर्ष चारों ओर व्याप्त था तथा मानव जीवन के सभी पहलुओं और मानवीय गति विधियों के सभी क्षेत्रों से उठते हुए मत वैषम्य के बादलों की काली छाया से मनुष्य संत्रस्त था। ऐसे काल में श्री पोद्दार जी कल्याण और कल्याण कल्पतरु के प्रकाशन के माध्यम से परम प्रकाश के उदय के अग्रदूत बनकर आये इन दोनों प्रकाशनों के माध्यम से उन्होंने महाभारत रामायण श्रीमद्भगवद्गीता और उपनिषदों के तत्व ज्ञान को चतुर्दिक प्रसारित किया।"[1]

—श्री जनार्दन चौबे नकछेदी, मारीशस

इसके अतिरिक्त श्री पोद्दार जी ने "महाभारत" नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन सन् 1955 से प्रारम्भ किया था। इसके सम्पादक भी यही थे। इसमें ग्रन्थ के मूल श्लोक तथा उनका हिन्दी अर्थ दिया जाता था। यह नवम्बर सन् 1955 से 1962 तक प्रकाशित होता रहा प्रतिमास लगभग 7500 प्रतियों का इसका प्रकाशन होता था। प्राचीन विलुप्त सामग्री का अन्वेषण सम्पादन प्रकाशन और प्रसार का श्रेय पोद्दार जी को है।

---

[1] भाई जी पावन स्मरण पृ0 सं0 632

8.11

8-3 -: टीका :-

निम्नलिखित पुस्तकों की श्री पोद्दार जी ने टीका की है इन टीकाओं में सरल एवं सुबोध भाषा का प्रयोग किया गया है। जिससे यह टीकाएँ विशेष रूप से लोकप्रिय हुई है।

§1§ श्री रामचरित मानस	गोस्वामी तुलसीदास
§2§ विनय पत्रिका	
§3§ दोहावली	
§4§ वैराग्य संदीपनी	
§5§ पार्वती मंगल	
§6§ जानकी मंगल	
§7§ श्री कृष्णगीतावली	
§8§ प्रेम दर्शन	
§9§ रास पंचाध्यायी	

8-4 -: संशोधन :-

निम्नलिखित पुस्तकों का श्री पोद्दार जी ने पाठ शोधन किया है। तथा संशोधित रूप में प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध कराये हैं।

§1§ श्री रामचरित मानस - गोस्वामी तुलसीदास
§2§ त्याग से भगवत् प्राप्ति - श्री जयदयाल जी गोयन्दका
§3§ प्रेम भक्ति प्रकाश - श्री जयदयाल जी गोयन्दका

§4§

8-5 -: साहित्य साधना की उपलब्धि :-

श्री पोद्दार जी की साहित्य साधना की तीन विशेष उपलब्धियाँ उल्लेखनीय हैं —

(1) प्राचीन धर्म ग्रन्थों का प्रकाशन

(2) भारतीय संस्कृति का पुनरुद्धार

(3) राष्ट्रभाषा की समृद्धि

(4) कम मूल्य पर प्रकाशन

8-5-1 प्राचीन धर्म ग्रन्थों का प्रकाशन

प्राचीन धर्म ग्रन्थों का प्रकाशन विपुल संख्या में उनके सतत् सद्प्रयासों के फलस्वरूप हुआ तथा उनका मूल्य अपेक्षातया बहुत कम रखा गया। फलस्वरूप इन प्रकाशनों का प्रचुर प्रचार हुआ। धर्मग्रन्थों के प्रकाशन का साहस ही प्रकाशक नहीं कर पाते थे। किन्तु श्री पोद्दार जी ने इस दिशा में अद्भुत साहस और विश्वास का परिचय दिया। उनके प्रकाशन लोकप्रिय हुये तथा घर-घर में धर्म ग्रन्थों की उपलब्धि संभव हुई। एक सूची यहाँ दी जा रही है -

(अ) उपनिषद:

1. कठोपनिषद्
2. केनोपनिषद्
3. मुण्डकोपनिषद्
4. प्रश्नोपनिषद्
5. माण्डूक्योपनिषद्
6. तैत्तिरीयोपनिषद्
7. ऐतरेयोपनिषद्
8. छान्दोग्योपनिषद्
9. श्वेताश्वतरोपनिषद्
10. ईशावास्योपनिषद्
11. ईशादि नौ उपनिषद्

(ब) दर्शन :

1. पातंजलयोग दर्शन
2. श्रीमद्भगवद गीता (मूल)
3. श्रीमद्भगवद गीता (सटीक)

(स) पुराण :

1. श्रीमद्भागवत (मूल)
2. श्रीमद्भागवत (टीका)
3. श्रीविष्णु पुराण

(द) रामायण और महाभारत :

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (मूल)
2. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (सटीक)
3. संक्षिप्त महाभारत
4. मनुस्मृति
5. रामचरितमानस (मूल) एवं (सटीक)
6. विनय पत्रिका
7. गीतावली
8. कवितावली
9. दोहावली
10. श्रीकृष्ण गीतावली
11. जानकी मंगल
12. वैराग्य संदीपिनी
13. पार्वती मंगल
14. बरवै रामायण
15. अध्यात्म रामायण

8.14

(घ) अन्य ग्रन्थ:

1. दुर्गासप्तशती
2. श्रीरामगीता
3. पंचरत्नगीता
4. संध्योपासना
5. श्री गोविन्द दामोदर स्तोत्र
6. शिवमहिम्न स्तोत्र
7. गजेन्द्र मोक्ष
8. श्रीराम रक्षा स्तोत्र

8-5-2 **(2) भारतीय संस्कृति का पुनरुद्धार**

श्री पोद्दार जी ने विपुल संख्या में धार्मिक ग्रन्थों का, प्रकाशन एवं प्रचार करके पवित्र प्राचीन भारतीय संस्कृति के मान-मानकों को जन-जन के लिये सुलभ कराया तथा भगवान की कृपा फलस्वरूप लाखों की संख्या में पाठकों की रुचि इन ग्रन्थों की पठन-पाठन की ओर हुई।

श्री पोद्दार जी ने भारतीय सांस्कृतिक समारोहों का आयोजन भक्तिभाव पूर्ण परिवेश में प्रारम्भ किया तथा इन समारोहों के आयोजन की विधिविधा के सन्दर्भ में जन सामान्य का मार्ग दर्शन किया। राधा अष्टमी, कृष्ण जन्मोत्सव, रामनवमी जैसे राष्ट्रीय महत्व के आयोजनों के साथ अन्य धार्मिक नैमित्तिक एवं नैत्यक अनुष्ठानों का भी आयोजन किया तथा जन-जन को इनको स-उल्लास मनाने के लिये प्रोत्साहित किया। भोजन और रामनाम जाप के लिए विभाग खोला तथा कल्याण के पाठकों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया।

साधकों की समस्याओं के निराकरण के लिये प्रचुर पत्राचार का भार उठाया तथा साधक मण्डल स्थापित किये। गीता रामायण की परीक्षायें प्रारम्भ कराकर छात्रों को धार्मिक संस्कारों के प्रति रुचि जागृति

की । वस्तुतः उनकी सम्पूर्ण जीवन एवं दैनिक कार्यकलाप ही भारतीय संस्कृति के पुनरुद्धार के लिये था जिसमें उनको अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई।।

8-5-3. (3) राष्ट्रभाषा की समृद्धि

गीताप्रेस के विपुल प्रकाशन राष्ट्र भाषा अर्थात् हिन्दी की समृद्धि के लिये वरदान सिद्ध हुये । यह प्रकाशन प्रामाणिक तथा भाषा, भाव एवं शैली की दृष्टि से उत्कृष्ट कोटि के थे । फलस्वरूप हिन्दी भाषा को प्रचुर समृद्ध साहित्य उपलब्ध हुआ तथा अनुगामी लेखकों एवं साहित्यकारों के लिए तथ्यात्मक दिशा में निर्देश मिला जिससे धार्मिक, सांस्कृतिक एवं समाज सुधारक साहित्य के लेखन, प्रकाशन की प्रवृत्ति जागृति हुई । प्रकाशकों को प्रकाशन का साहस हुआ । इस संदर्भ में कतिपय सम्मतियाँ यहाँ प्रस्तुत की जा रही है -

"मैंने भारतीय प्रकाशनों के तुलनात्मक आँकड़ों को देखा और पाया कि यदि गीताप्रेस प्रकाशनों को कम कर दिया जाय तो हिन्दी भाषा का स्थान भारत की अन्य कई भाषाओं के नीचे आ जायेगा ।"[1] (डा० जगदीश गुप्त)

"श्री भाई जी हनुमानप्रसाद जी पोद्दार की समर्थ लेखनी से जो ग्रन्थरत्न निःसृत हैं, उनसे न केवल हिन्दी का साहित्य भण्डार समृद्ध हुआ है, किन्तु मधुर रस के उपासकों को मनोवांछित प्रसाद बड़ी स्पृहणीय मात्रा में मिल गया है ।"[2] (डा० बल्देव प्रसाद मिश्र)

---

(1) भाई जी हनुमान प्रसाद पोद्दार : संक्षिप्त जीवन परिचय- श्री गम्भीर चन्द्र जी दुजारी पृष्ठ संख्या : 189.

(2) भाई जी हनुमानप्रसाद पोद्दार : संक्षिप्त जीवन परिचय- श्री गम्भीर चन्द्र जी दुजारी पृष्ठ संख्या : 185-186.

8.5.4. कममूल्य पर प्रकाशन :-

श्री पोद्दार जी की प्रकाशन विशेषता यह थी कि वे कम से कम मूल्य पर उपलब्ध थे। इसी कारण उनके देश के घर-घर में पहुँचने में सुविधा हुई। तथा धार्मिक, सांस्कृतिक, समाज सुधारक एवं प्रेरणाप्रद साहित्य का प्रचुर प्रसार-प्रचार संभव हुआ।

कम मूल्य प्रकाशन विशेषता का विवरण तुलनात्मक अध्ययन से ही संभव हो सकता है। अतएव [अ] प्रकाशन वर्ष पृष्ठ संख्या तथा मूल्य के शीर्षों में अन्यान्य सस्ते प्रकाशनों का, गीताप्रेस के प्रकाशनों से तुलनात्मक अध्ययन तालिका प्रस्तुत की गई। [आ] एक ही शीर्षक की पुस्तक के विभिन्न प्रकाशकों के मूल्यों की तुलनात्मक तालिका प्रस्तुत की गई। इनके निरीक्षण - परीक्षण से स्पष्ट होता है कि गीताप्रेस गोरखपुर के प्रकाशन सबसे कम मूल्य के है तथा यह विशेषता प्रकाशन की अभूतपूर्व उपलब्धि है। जो अन्यत्र की अप्रतिम है।

[अ] प्रयुक्त कागज श्रेष्ठ कोटि का है।

[आ] विज्ञापन न छापने के संकल्प के कारण प्रकाशन व्यय में कोई सुविधा नहीं मिली है।

[इ] रंगीन, चमकीले एवं स्थायी चित्रों से सुसज्जित हैं।

[ई] शुद्ध एवं प्रामाणिक संस्करण है।

[उ] सरल, सुबोध एवं साहित्यिक टीकायें, व्याख्यायें हैं।

[ऊ] छपाई की अशुद्धियाँ नहीं है। तथा छपाई के अन्य कोई दोष भी नहीं है। जो अन्य प्रकाशनों में प्रायः पाये जाते है। अवलोकनीय है ये तालिकायें ——

ग्रंथों के पृष्ठों के आधार पर गीताप्रेस एवं विभिन्न प्रकाशनों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

प्रकाशन सन् 1986, आकार 18x12 सें०मी०

ग्रंथ का नाम	प्रकाशन वर्ष	पृष्ठ	मूल्य	गीताप्रेस ग्रंथ का नाम गीताप्रेस गोरखपुर (सन् 1986)	पृष्ठ	मूल्य
युग निर्माण योजना प्रकाशन, मथुरा						
1) राष्ट्रीय प्रगति के कुछ अनिवार्य मापदण्ड.	1983	60	2.00	श्रीराधिका सहस्रनाम स्तोत्र.	64	0.35
2) नया संसार बसायेंगे नया इंसान बनायेंगे.	1983	62	2.00	श्रीराम गीता	64	0.25
3) सरस, सफल, जीवन का केन्द्र बिन्दु उत्कृष्ट चिंतन.	1983	64	2.00	प्रेमी भक्त उद्धव	64	0.50
4) युगनिर्माण की सुनिश्चित संभावना	1981	72	2.00	सच्चे ईमानदार बालक	72	1.00
5) सुनसान के सहचर	1983	104	3.25	संस्कृति माला (भाग-4)	104	1.25
6) आंतरिक काया कल्प का सरल किन्तु सुनिश्चित विधान.	1984	188	7.00	दोहावली	192	2.00
7) गायत्री मन्त्र बौद्धिक संस्कार (भाग-1)	1982	198	5.00	प्रेम-सत्संग-सुधा-माला	208	1.50
8) गायत्री मन्त्र बौद्धिक संस्कार (भाग-2)	1984	286	8.00	एक महात्मा का प्रसाद	296	2.00
सस्ता साहित्य मण्डल, प्रकाशन, नई दिल्ली						
1) गांधी शिक्षा (द्वितीय)	1981	48	0.80	स्त्री धर्म प्रश्नोत्तरी	48	0.60
2) गीता की महिमा	1984	56	2.50	संस्कृतिमाला (भाग-2)	56	0.80
3) उपनिषद्	1982	63	2.50	नवधा भक्ति	64	0.30
4) ईसा जीवन और दर्शन	1982	80	6.00	संस्कृति माला (..-3)	84	1.00
5) कृष्णलीला (राजगोपालाचार्य)	1982	99	3.00	उपयोगी कहानियाँ	100	1.00

8-18

:1:	32:	:3:	:4:	:5:	:6:	:7:
] वैज्ञानिक मार्क्सि	1981	159	6.50	श्रीभीष्मपितामह	160	1.50
] गीता प्रवेशिका	1981	187	10.00	श्री पंचरत्न गीता	200	1.50

न हितकारी पुस्तक माला, प्रकाशन, इलाहाबाद

] सफलता की कुंजी	1984	60	2.00	सीताराम भजन	64	0.35
] मन की अपार शक्ति	1984	64	3.00	भक्त नारी	64	0.50
] मनुष्य जीवन की उपयोगिता	1984	150	8.00	भक्त-सौरभ	150	1.50
4] ब्रह्मचर्य ही जीवन है	1984	158	9.00	नारी शिक्षा	160	1.50
5] जेम्स ऐलेन की डायरी	1984	185	10.00	पातंजलयोग दर्शन	184	1.80

ाधन प्रकाशन, मथुरा

1] हमारा कर्तव्य	1980	14	0.40	विवाह में दहेज	16	0.15
2] अभ्यासियों के कर्तव्य	1981	30	0.75	सत्संग की सार बातें	32	.020
3] हमारा जीवन	1980	32	0.80	पार्वती-मंगल	32	0.30
4] संत श्री मीराबाई	1980	152	4.00	बालकों की बातें	152	1.50

ंस्कृति संस्थान प्रकाशन, बरेली

]1] ब्रह्मचर्य की प्रचण्ड शक्ति	1985	100	5.00	भक्त सुधाकर	100	1.00
]2] सौ वर्ष तक स्वस्थ रहें	1985	110	5.00	बड़ों के जीवन से शिक्षा	112	1.00
]3] चिन्ता कैसे दूर हो	1985	176	7.00	स्त्रियों के लिए कर्तव्य शिक्षा	176	1.25

]4]
सत्य प्रकाशन, वृंदावन मार्ग, मथुरा

]1] संतति निर्माण कला	1985	74	1.80	श्रीकृष्णगीतावली	84	0.60
]2] सती की सीख	1981	90	2.15	मानव धर्म	17	1.00

:1:	:2:	:3:	:4:	:5:	:6:	:7:
अखण्ड ज्योति प्रकाशन, मथुरा						
(1) विवाद से परे ईश्वर का अस्तित्व	1980	114	3.00	दिव्य सुख की गीता	117	1.00
(2) गायत्री का मंत्रार्थ	1984	120	4.00	आदर्श धर्म	136	1.25
नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद						
(1) सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा	1983	432	8.00	भक्तियोग का तत्व	456	2.50
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी						
(1) ईशावास्योपनिषद	1981	138	6.00	पढ़ो, समझो और करो	144	1.50
रामाश्रम सत्संग प्रकाशन, सिकन्दराबाद						
(1) अमृत रस	1983	190	7.00	जीवन का कर्तव्य	204	1.50
नागरी प्रचारणी सभा, प्रकाशन, वाराणसी						
(1) कर्तव्य	1980	250	6.00	आत्मोद्धार के सरल उपाय	266	1.50
गोविन्दराम हासानंद प्रकाशन, नई दिल्ली						
(1) घर का वैद्य – तुलसी	1985	50	3.50	भक्त राज ध्रुव	52	0.50
(2) घर का वैद्य – बरगद	1985	52	3.50	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र	52	0.75

ग्रंथों के आधार पर गीताप्रेस एवं विभिन्न प्रकाशनों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

ग्रंथ का नाम	चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी, मूल्य	गीताप्रेस, गोरखपुर मूल्य	ज्ञानमण्डल प्रकाशन वाराणसी, मूल्य
ईशावास्योपनिषद्	5.00	0-60	
केनोपनिषद्	8.00	2-00	
कठोपनिषद्	9.00	2-50	
माण्डूक्योपनिषद्	25.00	5-50	
तैत्तिरीयोपनिषद्	10.00	3-00	
विनय पत्रिका (टीका सहित)		6-00	10-00
श्रीमद्भागवत (टीका)		50-00	250-00
श्रीमद्भागवत महापुराण (मूल)		20-00	50-00
रामचरित मानस (मूल)		7-50	15-00
रामचरित मानस (टीका) (मझला)			
दुर्गा सप्तशती		3-00	40-00

प्रकरण-9

रचना प्रक्रिया

9.1	बाह्य साक्ष्य
9.2	बाह्य प्रेरणा उपादान
9.3.1	रचना प्रक्रिया
9.3.2	रचना हेतु एवं प्रयोजन
9.3.3	श्री पोद्दार जी का काव्यादर्श
9.4	रचना प्रवृत्ति
9.5	लिपि का अध्ययन

9.0 **विषय – प्राक्कथन**

"एकोऽहम् बहुस्याम्" की कामना सृष्टि के सृजन का मूल उपादान है तथा इसी कारण सृष्टि के प्रत्येक तत्व की कामना भी "बहुस्याम्" बन गई है । बूंद, सिंधु बनने को मचल रही है, चिनगारी दावाग्नि बनने को आतुर है, वायु का झोंका बवंडर बनने को आकुल है ।

मानव का अंतस्, भाव एवं विचार का केन्द्र है । भाव की स्थिति अपनी व्यापकता के लिए विकल होती है । हर्ष में संसार में उल्लास की व्यापकता दिखलाई देती है, विषाद में विश्व विधुरता दृष्टि गोचर होता है ।

विचार भाव की संरचि का दूसरा सोपान है । भाव विचार में व्यक्त होना चाहता है, चिन्तन-मनन के संदर्भ में व्यापक एवं विस्तृत परिवेश का संस्पर्श चाहता है ।

इन्हीं संदर्भों में "स्फोट" सिद्धान्त की कल्पना हुई । "स्फुरति इति व्याख्या से अणु विस्फुटित होना चाहता है । अणु का यह विस्फोट उसकी व्यापक होने की, फैलने की कामना ही होती है ।

शब्द "ब्रह्म" की स्थिति भी ब्रह्म की स्थिति के अनुकूल "बहुस्याम् भावी" होकर उभरता ही नहीं प्रत्युत वाचकता, कारण तक की स्थितियों में परिणति चाहता है एवं अभिव्यक्ति के लिए "स्फोटन" विकलता रहती है ।

भाव एवं विचार की मूल स्थिति वस्तुतः स्फोट की ही होती है । एक भाव, एक विचार कौंध जाता है, फूटता है, उठता है

9.1

और यह काँपना, फूलना, उठना उस भाव किंवा विचार की व्यापकता की विस्तार की, विकास की कामना है।

साहित्यकार की रचना प्रक्रिया को पकड़ने के लिए उसके अंतस् में झाँकने की आवश्यकता होती है। किस प्रकार भाव या विचार उसके मन-मानस में स्फुरित होता है और अभिव्यक्ति के लिए विकल होता है —

"वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान।
उमड़ कर आँखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान।।"

आदिकवि वाल्मीकि की शोकानुभूति काव्य के रूप में स्फुरित होगयी और अनायास ही यह सब कुछ हुआ। आदि कवि न कविता करना चाहते थे, न भाव को अभिव्यक्त करने के लिए उत्सुक थे, किन्तु भाव का इतना तीव्र आवेग था, इतना प्रबल स्फोट था कि काव्य की रचना हो गई। अंतस् का स्फोट काव्य की रचना प्रक्रिया का प्रारम्भ बन गया।

गोस्वामी तुलसीदास जी का अभिमत भी यही है कि मुक्त/काव्य की रचना अंतस् में होती है। उसकी अभिव्यक्ति होना ही काव्य सृजन है। श्री रामचरित मानस की रचना प्रक्रिया का यही रहस्य है —

रचि महेस निज मानस राखा।
पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।।

गोस्वामी जी की मानस रचना प्रक्रिया के विशेष बाह्य आधार संदर्भ भी है —

उत्स :- "जस कछु बुधि बिबेक बल मेरे ।
तस कहिहउँ हिय हरि के प्रेरे।।"

ध्यान :- "सादर सिवहिं नाइ अब माथा ।
बरनउँ बिसद राम गुन गाथा ।।"

आचार :- "सिर धरि गुर पद पंकज धूरी ।
पुनि सबही बिनवउँ कर जोरी।।"

स्थान :- "कहिहउँ नाइ राम पद माथा ।
अवधपुरी यह चरित प्रकासा ।।"

लेखन सामग्री:- "लिखित पुरान मंजुमसि सोई । [काली स्याही]
सत्य कहउँ लिखि कागद कोरे।।" [कागज]

समय :- नौमी भौमवार मधुमास संवत 1631

गोस्वामी जी की रचना प्रक्रिया का अध्ययन एवं अनुशीलन का प्रयास अभिनव है तथा अपना बड़ा दुरूह है । वह जीवित होते तो उनसे प्रार्थना की जा सकती थी और वह स्वयं अपने अंतस् में डूबकर अपनी रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डाल सकते थे किन्तु अब उनके निधन के पश्चात् इस कार्य के लिये अनेकशः ऊहापोह अपेक्षित हो गई है ।

2
9.1 बाह्य साक्ष्य

बाह्य साक्ष्य के आधार पर संदर्भ गत सूचना उनके अंशवासी श्री कृष्ण चन्द्र अग्रवाल, श्री हरिकृष्ण जी दुबारी तथा श्री राधेश्याम संका जी से व्यक्तिगत रूप से भेंट करके प्राप्त की है ।

9.3

{1} <u>उनकी लेखन सामग्री</u> :-

दो तरह के पैडों पर ही लिखते थे । एक तरह के पैड दोनों तरफ सादे रहते थे तथा दूसरी प्रकार के पैड एक पीठ के जिनमें केवल एक तरफ ही लिखा जा सकता था । फाउन्टेनपेन से ही लिखते थे । फाउन्टेनपेन विभिन्न कम्पनियों के थे जैसे उषा, पारकर आदि ।

{2} <u>लेखन के समय उनका आसन</u> :-

लेखन के समय उनका आसन कोई निश्चित नहीं था । अधिकतर डैस्क पर ही लिखते थे । कभी गोद में रखकर लिखते थे । बीमारी की अवस्था में वे लेटे-लेटे ही लिखा करते थे ।

{3} <u>लेखन का स्थान तथा समय</u> :-

कमरे में ही लिखा करते थे । समय कोई निश्चित न था ।

<u>लेखन आचार</u>

{अ} मूर्ति, चित्र आदि का सान्निध्य - श्री राधा कृष्ण का चित्र सामने रहता था ।

{आ} मूर्ति, चित्र आदि का पूजन, अभिवादन {इ} लेखन सामग्री का पूजन अभिवादन {ई} ध्यान {उ} वन्दना, अर्चना	लिखते समय कक्ष के द्वार को बन्द रखते थे । इस कारण ज्ञात नहीं हो सका किन्तु विश्वास है कुछ करते थे ।

{ऊ} लेखन का आरम्भ - "श्री हरि" लिखकर करते थे ।

{ए} लेखनी का विग्रह - स्वत्व से स्पर्श करना ।

{ऐ} लेखन समाप्ति पर विशेष व्यवहार-

(ग) पहले पृष्ठ संख्या डाल लेना/बाद में — बाद में डालते थे।

(घ) पृष्ठ संख्या ऊपर डालना/नीचे डालना/—
किसी पार्श्व में डालना....

लेखन रूपरेखा

(अ) लेखन का रूपरेखा निश्चित कर लेना।	: गीता उनको कंठस्थ थी
(ब) संदर्भ ग्रन्थ रखना अथवा मौलिक प्रयोग करना तथा उनकी शुद्धता की जाँचकरना।	: बाकी संदर्भों का मिलान करते थे।
(स) संदर्भों की डायरी रखना	: ऐसा नहीं करते थे।
(द) लिखते समय मौन शांत वातावरण की अपेक्षा या दूसरों से बात करते जाना और लिखते जाना।	: कमरे में [illegible] लिखते थे उस समय कमरे में अधिकतर कोई जाता नहीं था विशेष कार्यवश ही जाते थे।
(य) स्वान्तः सुखाय लिखना अथवा किसी व्यक्तिगत परिस्थिति के आग्रह/अपेक्षा के संदर्भ में लिखना।	: भगवान की प्रेरणा से अथवा स्वान्तःसुखाय लिखते थे। पत्र के उत्तर प्रश्नकर्ताओं के हिताय एवं मंगलकामना हेतु लिखा करते थे।
(र) लेखन के संबंध में निष्ठा/सत्यता/ईमानदारी स्वीकारोक्ति।	: जो बात दूसरों के लिए लिखते थे स्वयं उस पर अमल करते थे तथा स्वयं अनुभव करने के पश्चात् ही लिखते थे।
(ल) एक क्रम में नहीं लिखते चले जाना या लिखकर या लिखते समय काट-छाँट करना	: पद्य पद्य में एक क्रम में लिखते चले जाते थे लेकिन

तथा सही करना । : कहीं-कहीं संशोधन भी करते है ।

[ग] लिखा हुआ किसी को दिखाना : नहीं ऐसानहीं करते है ।
सुनाना और दूसरों का अभिमत :
जानना । :

[घ] किसी के अभिमत के अनुसार : नहीं ऐसा अवसर नहीं आता
अपने लेख को संशोधित करना। : था ।

[ङ] प्रकाशन के लिए चिन्तित होना : प्रकाशन के संबंध में अनमनस्कही
अथवा अन्यमनस्क रहना । : रहते है ।

9.2 बाह्य प्रेरणा उपादान

कवि या रचनाकार के बाह्य प्रेरणा उपादान तत्कालीन कोई हृदयस्पर्शी घटना, कोई दृश्य, मूर्ति, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख-भाषण संतमहात्माओं के प्रवचन से कोई एक या एक से अधिक तत्व हो सकते है जो पूर्व की स्मृतियाँ, संस्कारों को जागृत कर कविता या लेख अथवा ग्रंथ के रूप में जनता के सामने लाने को प्रेरित करते हैं ।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के प्रारंभिक कृतित्व के प्रेरणा उपादान द तत्कालीन राष्ट्रभक्तों के भाषण, समाचार पत्रों में प्रकाशित सरकार की कूटनीतिक कार्यवाहियों का विवरण, जो "भारत मित्र" "युगान्तर" "उचित वक्ता" वंदेमातरम् "संध्या" कलकत्ता समाचार" "मर्यादा" आदि में दिए जाते है । सन् 1908 में अरविन्द घोष ने "देशभक्ति क्या है?" शीर्षक से लेख लिखकर जिसका "देशात्मबोध का नाम देश भक्ति है" प्रतिपादित किया था इससे पोद्दार जी बहुत प्रभावित हुए थे इस पर आगे उन्होंने स्वयं भी लेख लिखा जो "मर्यादा" मासिक पत्र के जनवरी 1911 के अंक में "मातृभूमि की पूजा" शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसमें मातृभूमि को भगवान के रूप में तथा भगवान को मातृभूमि

में देखते हुये आत्मसमर्पण करने का आह्वान किया था । "आज शुभकाल समागत हुआ है, चित्त से अपने देह और मन को पवित्र करके आओ भ्रातृगण । हम सब मिलकर जननी जन्मभूमि की पूजा करने में प्रवृत्त होवें । भक्तगण अपनी इच्छानुसार अपने इष्ट देवता की मूर्ति कल्पना कर उसका ध्यान करते हैं । आओ, आज हम भी अपने इष्टदेवता का जननी जन्मभूमि के रूप में ध्यान करें ।xxx प्रिय भ्रातृगण । आप साकारवादी हों, या निराकारवादी, यदि आपने कभी अपने इष्ट देवता का माता, पिता या गुरु के रूप में ध्यान किया है तो एक बार जननी जन्मभूमि के रूप में भी ध्यान कीजिये ।"[1]

वर्ष 1911 में ही दूसरा लेख "निवृत्ति का सच्चा स्वरूप" सम्मानित पत्रिका में प्रकाशित हुआ था । इसमें सन्यासी स्वामी महात्माओं से, संसार से विरक्त होने की इच्छा रखने वालों को, जननी जन्मभूमि की परतन्त्रता पर विचार करने की तथा उसकी सेवा में अपने को लगा देने को ही सही अर्थ में निवृत्त होने का प्रतिपादन किया था । स्वामी शंकरानन्द एक बंगाली हठयोगी महात्मा थे जो राजनीति में उग्रवादी विचारधारा के समर्थक थे के विचारों का इस लेख में विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है ।

शिमलापाल के नजरबन्दी काल में इन्होंने उपनिषद्, भागवत तथा नारदीय भक्तिसूत्रों का गहन अध्ययन किया । इनके अध्ययन चिन्तन से नये नये भाव प्रस्फुटित होने लगे जिनको ये लिखते गये । यह विस्तृत व्याख्या के रूप में तैयार हो गयी जो बाद में "प्रेम दर्शन" नाम से पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुई थी । इस कृति का प्रेरणा उपादान । उनका भक्ति साहित्य का गहरा अध्ययन तथा भगवन्नाम जप था ।

सन् 1918 में बंगाल निष्कासन के आदेश के पालन में पोद्दार जी अपने पूर्वजों के स्थान रतनगढ़ गये । आर्थिक स्थिति कमजोर हो चुकी

---

[1] सत्संग सुधा वर्ष 13, अंक 3 नवम्बर 1969 पृ० सं० 9-13

था केवल भगवान् की कृपा ही सहारा था । नाम जप व ध्यान पूर्व की भाँति चल रहा था । शरणागत वत्सल भगवान् ने सेठ जमनालाल जी को प्रेरित किया और उन्होंने पोद्दार जी को पत्र लिखकर बम्बई व्यापार हेतु बुलाया । श्री हनुमान प्रसाद जी आषाढ़ मास सम्वत् 1975 में (अगस्त 1918 में) बम्बई पहुँचे यहाँ श्री जमनालाल जी ने बहुत ही आत्मीयता एवं स्नेह पूर्ण व्यवहार तथा सहायता प्रदान की । इन्हें उसी ~~वर्ष~~ माह में रुई की दलाली के काम में लगाया । तीन चार माह के बाद यह काम बंद हो जाने से शेयरों की दलाली का कार्य किया ~~पर~~ एक वर्ष इस कार्य में लगे इसमें भी सफलता नहीं मिली । पुनः तीसरी फर्म ताराचन्द घनश्यामदास के स्वामी श्री निवासदास बालकृष्ण लाल पोद्दार के साझे में कार्य प्रारंभ किया उसमें भी हानि हुई इससे इन्हें गहरी चिन्ता हुई और बीमार पड़ गये । एक माह स्वास्थ्य सुधार के लिये नासिक में रहे वहाँ एक हठ-योगी से नेतिधोती प्राणायाम सीखे जिससे शारीरिक स्वास्थ्य सुधरा । सेठ जमनालाल बजाज जी को जब पोद्दार जी को घाटा आने की जानकारी हुई तो उन्होंने अपने यहाँ बुलाकर अपने साझे में श्री चिरंजीलाल बाजोरिया के साथ रुई की दलाली का काम प्रारंभ करा दिया । जो संवत् 1984 तक (1984 तक) चलता रहा बम्बई निवास की अवधि में संवत् 1976 (1919-20) में माटुंगा रेल्वे स्टेशन पर रेल्वे लाइन पार करते समय रात्रि में भगवत्कृपा से जीवन रक्षा होने से इनकी श्रद्धा भगवत्कृपा पर और भी बढ़ गयी । बहन अन्नपूर्णा का विवाह को भी इन्होंने भगवत्कृपा माना । इसी विवाह के सम्बन्ध में जब ये बाँकुड़ा गये थे सेठ श्री जयदयाल गोयन्दका जी के सत्संग का लाभ मिला उससे आध्यात्मिक कार्य में प्रगति हुई । कलकत्ता में मारवाड़ी सहायक समिति में भी पोद्दार जी सक्रिय भाग लेते थे । बम्बई में अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल समिति की स्थापना करने में इन्होंने प्रमुख भूमिका

निकाय तथा उनके कार्यों में सक्रिय भाग लेना प्रारम्भ कर दिया । कलकत्ता में रहने के समय जिस तरह इन्होंने बंगला साहित्य के स्वाध्याय में मन लगाते थे बम्बई में इन्होंने मराठी तथा गुजराती भाषाओं के ग्रंथों का अध्ययन प्रारम्भ किया भक्ति साहित्य जो भी उपलब्ध हुआ पढ़ते गये । और उपयोगी सामग्री नोट करते गये ।

बम्बई में आध्यात्मिक विषयों पर लेख लिखना प्रारम्भ किया जो वेंकटेश्वर समाचार तथा अन्य स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित होते थे ।

अध्यात्म इनका प्रमुख विषय था ही इन्होंने सौ से अधिक पदों की रचना इसी प्रसंग में की है । पद्य-पुष्प का नाम से एक लघु पुस्तिका जिसमें इनके द्वारा रचित 114 पद संगृहीत है सम्वत् 1980 (1923 ई0) में प्रकाशित हुई थी उस समय इनकी आयु मात्र 31 वर्ष की थी । इन पदों में से 35 पदों में प्रार्थना 19 पदों में भगवान की लीला का वर्णन है, 16 पद नाम महिमा पर है, 14 पद भक्ति सम्बंधी 11 पद चेतावनी के 5 भजन महिमा पर 5 पदों में जीवन की शिक्षा दी गई है 5 पद वंदना व आरती के 2 पद प्रेम तथा एक एक मंगलाचरण, गंगा महिमा, संत कथा, तथा महापुरुष चरण वंदन के हैं । इन पदों की भाषा सरल है इसमें राजस्थानी मारवाड़ी शब्दों का भी प्रयोग है । कुछ गीत मारवाड़ी बोली में है । यथा —

नाथ मैं थारो जी थारो ।

xxxx

बुरो बुरी मैं बोतो बुरो हूँ आखर टाबर थारो ।
बुरो कुहाकर मैं रह ज्यासूँ, नाँव बिगड़सी थारो ।।
थारो हूँ थारो ही बाजूँ, रहस्यूँ थारो । थारो ।।

[पद्यपुष्प -पद सं0-16]

नाथ ! थारे शरण पड़ी दासी

भवसागर से त्यार आनन्दघन जनम मरण फाँसी ।

[घन आनन्द पद सं० 17]

प्रार्थना – चेतावनी के पद शिक्षा के पद नानक–दादू दरिया साहब के पदों की भाँति प्रभावोत्पादक हैं ।

यथा <u>चेतावनी के पद</u>

1. जगत में स्वारथ के सब मीत ।
2. तजो रे मन! झूठे सुख की आशा ।
3. मन! कछु वा दिन की सुधि राख ।
4. अरे मन तू कछु सोच विचार ।
5. मूढ़ ! केहि बल पर तू इतरात ।
6. जगत में कोई नाहिं तेरा रे ।

   नाहक झूठा अभिमान त्याग दे मेरा मेरा रे ।।

<u>शिक्षा में</u> :

[1] जगत में कीजै यों व्यवहार

अखिल जगत हरिमय विचारि मन कीजै सबसों प्यार

माता–पिता गुरुजन पद सेविय अतिहित उदार

[2] सन्त सत्संगति नित कीजै

संत–मिलन समता–रसायन, संत चरणचित दीजै ।

<u>प्रार्थना</u> :

[1] प्रभु ! मेरो मन ऐसो है जावे ।

विषयन को विष समझे उबरै पुनि नहिं कबहूँ धावे ।।

[2] चाहूँ बस एक यही श्रीराम ।

अविरल अचल अमल अनपायन प्रेम भगति निष्काम ।।

(3) बड़ा अपराधी प्रभु के द्वार ।
न्याय चाहता क्षमा नहीं दो दण्ड दोष अनुसार ।।

(4) अब हरि एक भरोसो तेरो ।
नहि कछु साधन ग्यान भगति को नाहिं विराग उर हेरो।।

<u>अद्वैत</u> :

(1) सकल जग हरि को रूप निहार ।
हरि बिनु बिस्व कतहुँ कोउ नाही, मिथ्या भ्रम संसार ।।
नहि आधार नाहि कोउ हरिमह, केवल हरि-विस्तार ।

2) अनोखा अभिनय यह संसार ।
रंगमंच पर होता, नित नटवर-इच्छित व्यापार ।।

(3) वेश दुःख का धरे मैं नहीं डरूँगा तुमसे, नाथ ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें मैं पकड़ूँगा जोरों के साथ ।।

इन पदों की रचना की प्रेरणा [उपादान] तत्कालीन परिस्थितियाँ उनका वैष्णव ग्रंथों का स्वाध्याय तथा कुछ मार्मिक घटनाएँ रही है।

बम्बई में उनके एक मित्र थे बड़े ही शौकीन थे तथा शरीर को सवारने-सजाने में अत्यधिक समय लगाते तथा बड़ा ध्यान रखते थे दैवयोग से अचानक बीमार पड़े और प्राण पखेरू उड़ गये । रोते बिलखते परिवारजनों ने अर्थी की तैयारी की और श्मशान घाट लेकर पहुँचे । श्री पोद्दार जी भी अपने मित्र की शवयात्रा में सम्मिलित हुये । चिता में शरीर रखा गया । अग्नि ने कुछ क्षणों में वह सुन्दर शरीर और केश जिन्हें सजाने में वह मित्र अपना दिन का काफी समय लगाता था, भस्मीभूत हो गये । श्री पोद्दार जी का हृदय शरीर की नश्वरता पर विचार करने लगा भाव तरंगों ने पंक्तियों के एक लम्बे पद के रूप अभिव्यक्ति पायी ।

"पलभर पहले जो कहता था यह धन मेरा यह घर मेरा ।
जिस महल मलक औ कंचन पर तू है इतना भूला फिरता।।
जिस धन-गौरव के रौब में दिनरात ऐंठ के है गिरता ।।
जिस तड़क भड़क और मौज-मस्ती में फुरसत नहीं तुझे मिलती-
जिस मान-शान औ मद्य मदन में सदा जीभ तेरी हिलती
इन सभी ठाठ-बाटों से छूट जायगा रिश्ता तेरा ।
प्राणों के तन से जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा ।।

× × × × × ×

(पद कुसुम पद सं0 64)

गांधी जी के रघुपति राघव राजाराम पतित पावन सीताराम से प्रभावित होकर इसी प्रकार का पद संकीर्तन हेतु रचा था "बन्धुवरों !

"बन्धुवरों ! मिलकहो प्रेम से रघुपति राघव राजाराम ।
दुःखित चित्त से बोध करो पुनि पतित पावन सीताराम।।
जिह्वा जीवन सफल करो अब, जय रघुनन्दन जय सियाराम।
हृदय खोल बोलो मन मुदो, वाञ्छितफलप्रद सीताराम ।।

× × × ×

(पद कुसुम पद सं0 43)

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रथम व द्वितीय पत्नी एक एक पुत्र को जन्म देकर 12दिन के भीतर ही स्वर्ग सिधार गई थी । प्रथम पत्नी का पुत्र 2 माह की उम्र में तथा द्वितीय पत्नि से उत्पन्न शिशु 4दिन बाद इस नश्वर जगत को छोड़ गये थे । तीसरा विवाह संवत् 1973वि0 में हुआ था । संवत् 1977(1920ई0)में पत्नी रामदेई ने एक पुत्र को जन्म दिया । 1½ वर्ष की अल्प आयु में पुत्र के दिवंगत हो जाने से पत्नी रामदेई व दादी रामकौर देवी बहुत दुःखी व चिन्तित हुई । श्री पोद्दार जी पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा किन्तु

इन्होंने उसे भगवत्कृपा मानकर संतोष किया ।

उस समय भगवत्कृपा को सम्बोधित करते हुए नीचे लिखे पद की रचना की ।

पुत्र शोक संतप्त कभी कर दारुण दुःख है देती ।
कभी अमित अपमान दानकर मान सभी हर लेती ।।

× × × ×

भगवत्कृपा ! "अंकित तेरे ज्यों-ज्यों दर्शन पाता
त्यों ही त्यों आनन्दसिंधु में गहरा डूबा जाता
(पत्र पुष्प पद सं0 62)

श्रीमद् भागवत कथाप्रसंगों के अध्ययन तथा उनके भक्तों के संगति के आधार पर भगवान कृष्ण अवतार उनकी लीला के पद तथा गोपी उद्धव सम्वाद संबंधी पदों की रचना पोद्दार जी ने की है । यथा —

(1) हरि अवतरे कारागार । पद संख्या 85
(2) कबहिं बन श्याम चरावत गैया । पद संख्या 82
(3) नंदलाल चुपके माखन खात । पद संख्या 86
(4) श्याम ने मुरली मधुर बजाई । पद संख्या 87
(5) ऊधो ! तुम तो बड़े विरागी । पद संख्या 87

श्री पोद्दार जी रामचरित मानस के अयोध्याकाण्ड के गंगा पार कराने के पूर्व राम-केवट सम्वाद के आधार पर दो सुन्दर पदों की रचना की थी ।

(1) प्रभु ! मैं नहिं नाव चलावौं ।
तव पद-रज नर करने जुरि प्रभु, महिमा अमित कहाँ लौं गावौं
पावन छुवत नारि भइ पावनि, काठ पुरातन की यह नावौं ।
परसत रज मुनि नारी भई यह, मैं मुनि अति नौका कहँ पावौं
(पत्र पुष्प पद संख्या 93)

[2] गुरु बोले सुखदाई ।

जाते तोरि नाव नहि जावे, सोइ ज्ञान अस्थाई ।

पाँच पचास, बहु गंगा जल, अबतक लिये स्थाई।।

तुम्हरा वचन तोरि हिय तो टोरयो, मन महँ अति हरखाई।

× × × ×

[पद कुंज पद संख्या 95]

सेठ श्री जयदयाल जी गोयन्दका गाँव कुरन 13 नवंबर 1979 को ~~बम्बई~~ प्रेमी भाइयों तथा श्री पोद्दार जी के आग्रह से कुछ दिन तक सत्संग कराने हेतु बम्बई पहुँचे । सत्संग कार्यक्रम के पश्चात् एक दिन सेठ जी ने कहा "मेरे जाने के बाद आप लोग प्रतिदिन नियम से सत्संग करें । आगे प्रसंग चलने पर उन्होंने पोद्दार जी को ~~अब~~ आदेश दिया कि वे प्रतिदिन कुछ देर सत्संग कराया करें । इस आदेश के पालन में पोद्दार जी ने स्वाध्याय करके प्रवचन देना प्रारम्भ कर दिया कुछ ही दिनों के अभ्यास से पोद्दार जी का गीता पर धारा प्रवाह प्रवचन चलने लगा । गीता के अठारहवें अध्याय के 66 वे श्लोक "~~सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज~~ ।

"सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

पर पूरे एक माह तक पोद्दार जी ने प्रवचन किया था । रामचरित मानस पर भी पोद्दार जी प्रवचन किया करते थे । सत्संग की ओर प्रेरणा देने की दृष्टि से उन्होंने दो पदों की रचना की थी एवं छपवाया भी था ।

मन संतसंगति नित कीजै ।

सुनि सुनि जस्महि धारन कीजै, मन तासों रंगि लीजै ।।

[पद कुंज पद संख्या 78]

9.15

दुर्जन संग कबहुँ नहिं कीजै ।

दुर्जन मिलत सदा दुखदाई, तिनसौं पृथक रहीजै ।।

× × × ×

जिनतें सकल सांति-सुख मन के, तिन पुन्य-पुंज कर मीजै ।

मन अरु दुर्जन दुरनिधि परिहरि सतसंगति रति कीजै ।।

[पद कुसुम पद संख्या 75]

सत्संग के अवसर पर नाम-जप में भजन-ध्यान में मन न लगने, की शिकायत करके मनको वश में किस तरह किया जाय, ये प्रश्न बार-बार पूछे जाते थे । पोद्दार जी प्रश्न का उत्तर देते थे उपाय बताते थे । प्रश्न कुछ दिन के बाद पुनः नये व्यक्तियों द्वारा पूछे जाते थे अतः पोद्दार जी ने इस विषय पर "मन को वश में करने के कुछ उपाय" नामक पुस्तिका तैयार की । इसको संवत् 1980 में बम्बई से प्रकाशित किया गया । इसमें उन्होंने मन को वश में करने हेतु श्रीमद्भगवद्गीता मनुस्मृति तथा योगदर्शन के आधार पर 17 उपायों को विस्तार से समझाया है ।

इसके बाद ब्रह्मचर्य की महत्ता एवं उसके पालन के सम्बन्ध में महापुरुषों के अनुभव एवं कथन के आधार पर करणीय उपाय लिखते हुये "ब्रह्मचर्य" नाम से पुस्तिका लिखकर तैयार की थी जो संवत् 1982 (1925ई0) में बम्बई से प्रकाशित कराई गई थी ।

कलकत्ते के मारवाड़ी सहायता के अनुभव के आधार पर बम्बई में अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का गठन हुआ, पोद्दार जी ने उसमें सक्रिय भाग लिया । दूसरे ही वर्ष में (संवत् 1977में) महासभा के बम्बई प्रान्तीय शाखा के मंत्री चुने गये इसी वर्ष महासभा का द्वितीय अधिवेशन बम्बई में ही हुआ इसको सफल बनाने में इनका विशेष सहयोग रहा था ।

अग्रवाल महासभा की समाज सेवा का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत था उसके अन्तर्गत बालविवाह, वृद्ध विवाह, जैसी सामाजिक कुरीतियों का विरोध, सामाजिक उत्सवों एवं धार्मिक पर्वों का सुसंस्कृत ढंग से आयोजन कराने की पहल, शिक्षा के प्रसार, राष्ट्रीय भावना का प्रसार तथा दीनदुखियों की सेवा आते है ।

इन्होंने विवाह के समय गाये जाने वाले गंदे गीतों के स्थान पर गाये जाने हेतु कई गीतों की रचना की जिनका उपयोग इनकी बहन चन्दाबाई के विवाह [ज्येष्ठ शुक्ल 6 संवत् 1979 में] के अवसर विशेष पर किया गया । ये गीत लोगों को बहुत पसन्द आये । इस समय प्रचलित अश्लील विवाह गीतों को बंद करके उनके स्थान पर सदाचार एवं भक्तिमय गीतों के प्रचलन हेतु प्रेरणा मिली । इसी प्रकार धार्मिक पर्वों पर गाये जाने योग्य गीतों की रचना करके इनका संग्रह "मारवाड़ी धार्मिक गीतें संवत् 1993 में [1935ई0] में गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित किया गया था । [इस पुस्तक के 3 पद पद रत्नाकर के द्वितीय संस्करण में पद संख्या 1554-1555 व 1556 में रूप में सम्मिलित कर दिये गये है ।

बम्बई में उन दिनों होली के अवसर पर अत्यधिक हुल्लड़ होता था । मकान के भीतर से जबरदस्ती लोगों को बाहर निकाल लिया जाता था तथा कीचड़, राख आदि अपवित्र वस्तुएँ उनके ऊपर डाला जाता था और अपशब्दों के प्रयोग के साथ विभिन्न वीभत्स चेष्टाएँ की जाती थी । एक बार पोद्दार जी को भी इस प्रकार की हुल्लड़बाजी का शिकार होना पड़ा था । उन्होंने उस समय हुई दुर्दशा के फलस्वरूप यह संकल्प लिया कि होली के वीभत्स रूप को बदल दिया जायगा समाज के प्रतिष्ठित लोगों तथा साथी नवयुवकों को इस हुल्लड़बाजी से होने वाली बरबादी एवं हानियों की ओर समझाने एवं उसके स्थान पर नगर कीर्तन की योजना बनायी । लोगों पर इसका प्रभाव पड़ा। जो पहले विरोधी थे वे भी नगर कीर्तन में शामिल होने लगे । कुछ ही वर्षों के प्रयास से

कुप्रथाएँ बहुत कुछ बन्द हो गयी उनके स्थान पर गुलाल व रंग का उपयोग होने लगा । पोद्दार जी ने 'कल्याण' में होली मनाने के सम्बन्ध में लेख प्रकाशित किये है। गोरखपुर आने के बाद कल्याण के दूसरे वर्ष के साधारण अंक के पृष्ठ 381 पर फाल्गुन शुक्ल एकादशी से चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तक में किये जाने योग्य 8 बातें लिखी थी । होली के दिन हवन करने का तथा श्रीमद्भागवत अथवा विष्णु पुराण से भक्त प्रह्लाद की कथा कहने का भी सुझाव दिया था। चैतन्य महाप्रभु का जन्म होली के दिन हुआ था अतः उनके जन्मतिथि के उपलक्ष में झूमते-झूमते झूम-झूम कर नाम संकीर्तन करने का सुझाव दिया गया था । धुरेडी चैत्र कृष्ण प्रतिपदा के दिन नगरकीर्तन का आयोजन करने का निर्णय सभी वर्णों एवं सभी जातियों के लोग प्रेम भाव के साथ उसमें भाग लेवे ।

इसी क्रम में पोद्दार जी ने "समाज सुधार" नाम की एक पुस्तक लिखकर समाज में व्याप्त कुरीतियों का संदर्भ देते हुए उन कुरीतियों के स्थान पर वांछनीय सुझाव प्रस्तुत किये गये है । इनके पीछे कलकत्ते में मारवाड़ी सहायता समिति तथा बम्बई में अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के माध्यम से पोद्दार जी द्वारा अपने साथियों की सहायता से किये गये सेवा एवं सुधार कार्यों का अनुभव था अतः पुस्तिका का अच्छा स्वागत हुआ । परम्परागत विचारधारा वाले व्यक्ति पहले तो हर अच्छी बात का भी विरोध करते है किन्तु निष्काम भाव से निश्छल व्यक्ति के द्वारा किये गये कार्यों के प्रति शंकायें कम होती जाया करती है । अतः वे भी धीरे-धीरे इनके सुझावों के अनुसार कार्य करने लगे थे । पोद्दार जी की नजरबन्दी पर बांकुड़ा की शिमलापाल में नजरबन्दी के रूप के प्रभाव से सुधार समाप्त हुआ था तथा दादीराम- और की बीमारी के अवसर पर तथा पुत्र श्री ज्वालादत्त की बीमारी पर देखने जाने हेतु पेरोल पर जाने की अनुमति मिली थी । बम्बई

जीवन में योग क्षेम का अनुभव हुआ जब भगवानने श्री जमुनालाल बजाज के द्वारा बुलाकर व्यापार कार्य में लगाने की व्यवस्था करा दी । इसके अतिरिक्त नाम जप व प्रार्थना से गुजराती सज्जन के लिए सत्ताईस हजार रुपये की अचानक व्यवस्था हो गई थी तथा साथी हरिराम शर्मा के भगवान के सामने रोने का प्रत्यक्ष चमत्कार देखने का अवसर मिला था । पोद्दार जी ने कल्याण का प्रथम विशेषांक नाम की अमोघ शक्ति के समर्थन में निकाला था ।

भक्तों, साधु, संतों के सान्निध्य का पोद्दार जी को लाभ मिला था उन्होंने शिमला पाल में बंगला भक्त साहित्य का अध्ययन किया था बम्बई में मराठी एवं गुजराती भाषा में प्रकाशित भक्त साहित्य का विवेचना पर अध्ययन किया था । भगवन्नामांक में संतमहात्माओं के अनुभव पुराण साहित्य से भगवन्नाम महिमा के प्रसंग छाँटकर दिये गये थे उन प्रसंग में भक्तों के जीवन चरित्र पढ़ने पड़े । उनके इस अध्ययन से प्रेरणा प्राप्त करके उन्होंने कल्याण के तीसरे वर्ष का विशेषांक "भक्तांक" निकाला था । उन्होंने गुजराती भाषा में पढ़े मुस्लिम भक्तों के चरित्र पढ़े थे उनके चयनों से प्रभावित हुए थे भक्तांक में इनका तथा अन्य धर्मों, सम्प्रदायों के भक्तों के जीवन वृत्त तथा उनके सिद्धान्तों का विवरण किया गया था । भगवन्नामांक तथा भक्तांक के प्रकाशन के पश्चात् तथा अन्य अंकों में भगवद्दर्शन एवं अध्यात्म सम्बन्धी लेखों से प्रभावित होने पर साधकों के पत्र उनको मार्गदर्शन देने हेतु आने लगे । इनसे प्रेरित होकर पोद्दार जी ने "साधन पथ" नामक पुस्तक लिखी और संवत् 1986 में प्रकाशित की । इस पुस्तक में "जीवन का परम ध्येय," वैराग्य का धन के विघ्न, साधन के सहायक भगवान के सामने दीनता एवं आत्मसमर्पण शीर्षकों के अन्तर्गत साधकों के लिए अत्याधिक उपयोगी सामग्री दी गई है ।

इसमें गीता के श्लोकों के अतिरिक्त, कबीरदास, नानक, सूर, तुलसीदास जी के पद दिये है । स्वयं के रचित पद भी इसमें लिए है

इस पुस्तक की भूमिका में उन्होंने लिखा था -

"इस छोटी सी पुस्तिका में जो कुछ लिखा गया है वह बड़े अच्छे-अच्छे लोगों के अनुभव की बातें है, अतएव यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि इस छोटी सी पुस्तिका के अनुसार अपना जीवन बनाने वाले सज्जन साधन पथ पर निःसन्देह अग्रसर हो सकेंगे । मेरी विनीत प्रार्थना है कि सच्चे सुख के अभिलाषी सज्जन कुछ दिन प्रयत्न करके देखें ।" यह पुस्तक परमार्थ प्रेमी सज्जनों के लिए उपादेय हुई है । इस पुस्तक की अभी तक एक लाख अस्सी हजार प्रतियाँ प्रकाशित हो चुकी है । तृतीय वर्ष के विशेषांक 'भक्तांक' में विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों देशों के भक्तों के चरित्र तथा उनके सिद्धान्त तथा उनकी वाणी दी गई थी । इससे कल्याण की समन्वयवादी विचारधारा की जानकारी धर्मप्राण जनता को हुई साथ ही धर्म के विस्तृत अर्थ का भी भान उन्हें हुआ । इस पर कई लोगों ने कल्याण की नीति के अनुसार धर्म को परिभाषित करने का अनुरोध किया फलतः पोद्दार जी ने 'मानव धर्म' नामक पुस्तक लिखकर गीताप्रेस गोरखपुर से वर्ष संवत 1986 में प्रकाशित की ।

इसके पश्चात् प्रेमी सज्जनों ने भक्तों के जीवन छोटी-छोटी पुस्तकों के रूप में प्रकाशित करने की माँग की सेठ जी ने पोद्दार जी से इस कार्यहेतु कहा परिणाम स्वरूप "भक्त बालक" "भक्त नारी" पुस्तिकाएँ संवत 1987 में लिखी व प्रकाशित की गई इसके बाद भक्त पंचरत्न वर्ष 1988-90 में 'आदर्श भक्त', भक्त चन्द्रिका' 'भक्त सप्तरत्न', 'भक्त कुसुम', 'यूरोप की भक्त स्त्रियाँ', 'प्रेमी भक्त' नामक पुस्तकें लिखी व सम्पादित की गई । इस समय तक कल्याण के सम्पादन विभाग में कई विद्वान लेखक और आ गये थे उनकी मदद से भक्तांक में पूर्व प्रकाशित जीवन चरित्रों की मदद से उक्त भक्त माला के भक्तों के जीवन चरित्र लिखे गये थे ।

धर्म के संकुचित अर्थ करने से उसके भीतर ही अपनी मान्यता तथा आचरण को सीमाबद्ध करने से तमाम विवाद उत्पन्न होते हैं । इस संकुचित मान्यता के कारण संसार में बहुत ही लड़ाईयां हुई हैं । तथा मनोमालिन्य का वातावरण बराबर बना रहता है। वास्तविक किसी मत, सम्प्रदाय से सिद्धान्तों से बहुत आगे की वस्तु है । मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं उनको संसार का हर धर्म मत-मतान्तर मान्यता देता है इन्हीं को पोद्दार जी ने मानव धर्म के नाम से अभिहित किया है । वे लक्षण हैं :-

"धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ।।

[मनुस्मृति 6/92]

[1] धृति[धैर्य] [2] क्षमा [3] दम [4] अस्तेय[चोरी न करना] [5] शौच [6] इन्द्रियनिग्रह [7] बुद्धि [8] विद्या [9] सत्य और [10] अक्रोध ।

इन लक्षणों को मानवधर्म के लक्षण मानते हुये पोद्दार जी ने "[illegible]" 'मानव-धर्म" नाम की एक पुस्तक लिखी थी जो सन् 1986 वि0 [1931ई0] में [यानी बम्बई से गोरखपुर आने के 2 वर्ष बाद] गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित हुई थी । "कल्याण पत्रिका को निकलते 10 वर्ष व्यतीत हो गये थे, कल्याण के 'रामायणांक,' 'श्री कृष्णांक,' 'ईश्वरांक,' 'शिवांक,' 'शक्ति-अंक' एवं 'योगांक' निकल चुके थे तथा धर्मप्राण जनता को उनसे बड़ा लाभ पहुँचा था । सद्विचारी एवं सदाचारी पुरुषों को तथाकथित शिक्षित वर्ग के आचरण देखकर हार्दिक कष्ट होता है । इन्हें मात्र कल्याण तथा कल्याण के संपादक श्री भाई जी इससे त्राण पाते दिखे और कितने ही सज्जनों ने अपने शिक्षित पुत्र-पुत्रियों का जीवन विलासी, [illegible] अकर्मण्य और धर्मशून्य देखकर व्याकुल हो पत्र

लिखकर भाई जी से इस सम्बन्ध में क्या करना चाहिये? इस तरह की जिज्ञासा प्रकट की । पोद्दार जी ने "वर्तमान शिक्षा" नामक पुस्तिका वर्ष 1993 वि0[1936ई0] में लिखी इसमें शिक्षा का यथार्थ उद्देश्य, वर्तमान शिक्षा से उत्पन्न दोष स्त्री शिक्षा, समानशिक्षा, और सह शिक्षा, सिनेमा एवं शिक्षा कैसी हो? विषयों पर अपना मत लिखने के पश्चात् नम्रनिवेदन के रूप में 21 करणीय बातें लिखी इस प्रकार वर्तमान शिक्षा के दोष एवं उससे मर्माहत सज्जनों के पत्र पुस्तिका के प्रणयन को बाह्य प्रेरणा उपादान के रूप में भाई जी के समक्ष आये । इसी प्रकार वर्ष 1952 ई0 में सिनेमा से होने वाले भीषण परिणामों के सम्बन्ध में भाई जी के पास कई पत्र आये थे एक विद्यार्थी का 13/1-2 पृष्ठ का एक लम्बा पत्र आया जिसमें उस छात्र ने सिनेमा देखते देखते हुई अपनी भयावह दुर्दशा का वर्णन किया था और मार्ग पाने हेतु मार्ग दर्शन चाहा था । श्री पोद्दार जी ने लेख लिखा तथा "सिनेमा "मनोरंजन या विनाश का साधन" पुस्तिका गीता प्रेस से प्रकाशित करायी यह इतनी उपादेय सिद्ध हुई है कि इसकी अब तक अठारह संस्करणों में 3 लाख 25हजार प्रतियां छप चुकी है ।

समाज में फैल रहे दहेज प्रथा के रिवाज ने उसे बुरी तरह से ग्रस्त कर रखा है । भाई जी के सामने कई उदाहरण आये थे जिनमें धनाभाव एवं दहेज की माँग पूरी न कर सकने के कारण सुशिक्षित कन्याओं का विवाह न हो पाने, मुँह माँगा दहेज न दे पाने के कारण पिता के अफीम खाकर आत्महत्या कर लेने, कन्या के विवाह के लिये ऋण के अदा न हो पाने पर ऋण दाता द्वारा कन्या के पिता को वारण्ट से गिरफ्तार करा देने पर कन्या द्वारा मिट्टी का तेल डालकर आत्म-हत्या कर लेने की घटनाओं ने उनके संत हृदय को दहला दिया था अतः इन घटनाओं से प्रेरित होकर उन्होंने कण्याणमें लेख लिखे तथा

"विवाह में दहेज" [वर्तमान समय का एक बड़ा पाप] नामक पुस्तिका प्रकाशित की । इस पुस्तिका के माध्यम से उन्होंने मार्मिक अपील निम्नांकित शब्दों में की है :-

"मैं प्रत्येक हृदयवान सत्संगी भाई और बहनों से यह विनय करता हूँ जो घर में सम्पन्न है और जो परमार्थ के मार्ग के मार्ग पर आगे बढ़ना चाहते हैं, वे अपनी व्यक्तिगत और समाज गत आवश्यकताओं को तुरन्त कम कर दें और अपने लड़कों का विवाह ढूँढ-ढूँढ कर बिना दहेज लिये गरीब माता पिता की सुयोग्य कन्याओं से करने की प्रतिज्ञा करें । धर्म प्रेमी अविवाहित युवक भी दृढ़ता के साथ यह प्रण करें कि वे अपना विवाह बिना दहेज लिये ही करें । मेरा विश्वास है कि ऐसा करने से उन्हें परमार्थ मार्ग में बड़ा लाभ होगा । यह निरे न सामाजिक दृष्टि से नहीं, शुद्ध पारमार्थिक दृष्टि से भी है ।

मैं प्रत्येक हृदयवान् ~~अविवाहित~~ अविवाहित ~~नवयुवक~~ नवयुवक से और उनके धर्मप्रेमी माता-पिताओं से ईश्वर और धर्म के नाम पर अपील करता हूँ कि वे बिना दहेज लिये विवाह प्रण करने का प्रण करें और इस भयानक पाप की जड़ काटने में क्रियाशील, सहायक बनें ।"

संवत् 2002 वि0 [1945 ई0] में कल्याण का विशेषांक "गो अंक" निकाला गया था इसके पीछे भाई जी की बचपन से गो के प्रति भक्ति के बीज थे । तथा जमनालाल जी बजाज द्वारा की जा रही गो सेवा कार्य का प्रभाव था । श्री बजाज जी ने अपना बाद का जीवन पूरी तरह गो सेवा हेतु अर्पित कर दिया था/ उनके गोलोक वासी हो जाने के बाद उनकी धर्मपत्नी जानकीदेवी बजाज इसी कार्य में लग गयी थी । श्री जमनालाल बजाज वे व्यक्ति थे जिन्होंने जब बंगाल निष्कासन के बाद, पोद्दार जी रतनगढ़ में आजीविका के लिए चिन्तित थे, इन्हें बम्बई बुलाकर काम पर लगाया था तथा बम्बई जीवन

के अंतिम समय तक वे इनकी आजीविका के सम्बन्ध में संरक्षक के रूप में रहे थे । उनका प्रभाव पोद्दार जी पर रहा था । संवत् 2010 [सन् 1953 ई0] में "गौ वध भारत का कलंक एवं गाय का महात्म्य" नामक पुस्तिका निकालकर गोरक्षा के लिए क्या करें ? विषय पर तथ्य पूर्ण आंकड़े देते हुए हर भारतवासी से 15 कार्य करने हेतु सुझाव दिये थे । उन्होंने गाय का महात्म्य विषयक भाग में वेद, पुराण, महाभारत, बाइबिल, कुरान शरीफ के उदाहरण देते हुए भारत वर्ष के तथा अंग्रेजी एवं मुसलमान सज्जनों के कथनों को अंकित करते हुए गौ की रक्षा करना कर्तव्य सिद्ध किया था । पोद्दार जी ने गो-रक्षा तथा गो-संवर्धन विषय पर कल्याण के अंकों में 'पिंजरापोल और गोरक्षा', 'गोरक्षा के वास्तविक साधन', 'गो महिमा', 'गोअंक', 'जप से पाप नाश', 'गोबर में लक्ष्मी जी का निवास बारह निर्देशायें' तथा 'गोरक्षा पर स्फुट विचार' नामक लेख लिखकर धर्मप्राण जनता से इस कार्य में अपना सहयोग देने का आह्वान किया था । श्री भाई जी ने 1966-67 के गोरक्षा आन्दोलन में पूर्ण मनोयोग से भाग लिया और आन्दोलन का सम्पूर्ण आर्थिक दायित्व अपने ऊपर लिया तथा उसका सुन्दर रूप में निर्वाह किया था ।

भाई जी गो महिमा तथा गोरक्षा पर 5 पद भी रचे थे :- एक पद में लिखा है -

> गोहत्या होगी नहीं जब तक पूरी बन्द ।
> तब तक होगा देश में कहीं न सुख स्वच्छन्द ।।
>
> -पद रत्नाकर पद सं0 1489.

प्रेमी जनों के पुत्र-पुत्रियों के विवाह के अवसर पर आशीर्वाद के रूप में पद रचे थे ऐसे पदों की संख्या 6 है जो पद रत्नाकर में पद संख्या 1503 से 1508 तक में संग्रहीत है ।

सन् 1962 में चीन के द्वारा भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र पर अचानक आक्रमण किये जाने के समय देशवासियों को प्रबोध के लिए 26 पंक्तियों के एक पद की रचना की जो पद रत्नाकर में पद सं0 1499 है ।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि परिस्थितियों, घटनाओं आन्दोलन तथा पर्वों के द्वारा उनसे उद्बोधन की जिज्ञासाओं ने बाह्य प्रेरणा क उपादान का कार्य किया एवं मानवसमाज के उत्थान की दृष्टि से भाई जी की लेखनी से पद्यात्मक एवं बिन्धात्मक साहित्य सृजित सृजित हुआ है ।

9.3.1 रचना प्रक्रिया

अंत साक्ष्य के अन्तर्गत श्री पोद्दार जी की रचनाओं का निरीक्षण-परीक्षण करके संदर्भों को खोजना होगा जिसके द्वारा इस विषय का अध्ययन हो सके ।

रचना-प्रेरणा :-

रचना-प्रेरणा के अन्तर्गत तीन प्रकार के संदर्भ मिलते हैं:-

(अ) प्रभु प्रेरणा

(आ) स्वान्तः सुखाय एवं स्वान्तः प्रेरणा

(इ) भाव विस्फोट

(अ) **प्रभु प्रेरणा :-** प्रभु प्रेरणा के अन्तर्गत रचना प्रवृत्ति का उदय प्रभु कृपा से होता था, ऐसा श्री पोद्दार जी का अनुभव एवं अभिमत था । वह "प्रेम दर्शन" की रचना के संबंध में लिखते हैं :-

"यद्यपि भक्ति शास्त्र पर कुछ भी व्याख्या रूप से लिखने का मुझे अधिकार नहीं है । तथापि आशा है कि इस कार्य में मेरी जो प्रवृत्ति हुई उसको विज्ञ महानुभाव भगवत्प्रेरणा और भगवत्कृपा समझकर मुझपर प्रसन्न होंगे, क्योंकि भगवत्कृपा बिना मनुष्य की उत्तम कार्य में प्रवृत्ति नहीं होती । भक्तिशास्त्र की आलोचना उत्तम से उत्तम कार्य है ही ।"[1]

(आ) स्वान्तः सुखाय एवं स्वान्तः प्रेरणा :-

स्वान्तः सुखाय एवं स्वान्तः प्रेरणा के अन्तर उनकी आन्तरिक इच्छा अथवा आन्तरिक-सुख संतोष की कामना के संदर्भ में आते हैं । इनका उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है :-

---

1. प्रेम दर्शन पृ० - 5.

"..........सूत्रों पर विचार करते करते उनका भावार्थ लिखने की इच्छा हुई और कुछ समय बाद भावार्थ लिखा भी गया। छापने की न उस समय इच्छा थी और न सुव्यवस्था ही।"[1]

"......मोक्ष-सन्यास का यथार्थ अर्थ क्या है, मुझे पता नहीं, मुझे गीता का न अध्ययन है न ज्ञान। यह तो मैंने स्वान्तः सुखाय अपने मन का अर्थ कर लिया है।"[2]

[ड] भाव विस्फोट :-

भाव स्फोट के संदर्भ में नितान्त वैयक्तिक अनुभूतियाँ होती हैं तथा उनको व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं हुआ करती। अतएव ऐसे प्रसंगों को पकड़ पाना अनुसंधित्सु के लिए संभव नहीं होता। फिर भी इस प्रकार का एक प्रसंग परिस्थिति विशेष में संभव हुआ है। अंतिम समय में अंतिम शब्दों के रूप में एक भाव स्फुटित हुआ, एक पंक्ति उठी और उसको अंकित किया गया। रचना प्रक्रिया का यह सूत्र स्वतः ही उल्लेखनीय होता है तथा इसके संदर्भ में ही रचनाकार के अंतस् के दिव्य दर्शन संभव होते हैं।

"अंतराय कहि आवत नाहीं"

जन-सामान्य की साधारण स्थिति का द्योतक होता है तथा एक ऐसे व्यक्ति का चित्र प्रस्तुत करता है जिसकी वस्तुतः कोई साधना नहीं रही है। मन चंचल रहा है, चित्त अस्थिर रहा है, आत्म-अशान्त रही है। दूसरी ओर जहाँ अंत समय में राम नाम प्रस्तुत राम की अनन्यता तथा समीपता का स्पष्ट अनुभव हो उस महापुरुष की उच्च साधना तथा तत्संबंधी रचना प्रक्रिया का कैसा अनुपम आदर्श रहा होगा.

---

[1] प्रेम दर्शन पृष्ठ 5.

[2] श्री राधा माधवचिन्तन, पृष्ठ 802.

इसका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता । संदर्भगत प्रसंग अवलोकनीय है —

श्री पोद्दार जी चारपाई पर निश्चेष्ट पड़े थे.........
एकाएक उनकी आँखें खुलीं, करवट बदली, मुझे निकट आने का संकेत किया, फिर धीमे स्वर में बोले, "एक पंक्ति उठ रही है, लिख लीजिये"

"अन्याश्रय कर त्याग
उड़ी प्रपत्ति विहंगी ।
पहुँची प्रभु के पास
ले साथ अनन्य ।।[1]

पदरत्नाकर के अधिकांश पदों की भावस्फोट के अन्तर्गत रचना हुई है तथा यह प्रचुर साहित्य उनकी इस प्रक्रिया का आदर्श उपस्थित करता है ।

9.3.2 रचना हेतु एवं प्रयोजन

रचना प्रक्रिया का स्वरूप रचना के प्रयोजन से और स्पष्ट होता है । वस्तुतः प्रयोजन मूलक संदर्भ ही रचना के मूल उपादान होते हैं तथा रचना के स्वरूप का निर्धारण करते हैं । श्री पोद्दार जी ने अपनी रचनाओं के हेतु एवं प्रयोजन का यत्र-तत्र किसी विशेष प्रसंग में उल्लेख किया है । यह उपलब्ध सामग्री उनकी रचना एवं रचना स्वरूप की महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करती है ।

प्रयोजन एवं हेतु का अवलोकन करते हुए चार प्रकार के हेतु प्रकाशित होते हैं —

---

(1) कल्याण पथ-निर्माता और राही
(डा० भगवती प्रसाद सिंह पृ० 24 अंतिम अंश)

(1) आग्रह

(2) जन कल्याण की आशा

(3) स्व कल्याण की आशा

(4) प्रयोजन सिद्धि एवं प्रोत्साहन

(1) आग्रह :-

रचना के लिए आग्रह उनके प्रेमी भाइयों की ओर से हुआ है । उनके गुरुजन श्री गोयन्दका जी तथा श्री दयालु साधु (बंगाली महात्मा) की प्रेरणा तथा हेतु तो रहा ही है ।

(अ) "कल्याणकारी आचरण" रचना का हेतु प्रेमी भाइयों का ही आग्रह था तथा उन एवं उन जैसे अन्यान्य कल्याणकामी महानुभावों के लिए ही इस कृति की रचना हुई थी ।
"मेरे प्रति सद्भाव, स्नेह और प्रीति रखने वाले बहुत से पुरुष और देवियाँ बार-बार पूछा करते थे कि "मेरा आध्यात्मिक सिद्धान्त तथा किस विषय में क्या विचार है, मैं लोगों को कैसे विचार तथा आचरण वाले देखना चाहता हूँ । यह स्पष्टरूप से अलग अलग बताऊँ ।"
........यद्यपि सबके स्नेहाग्रह को देखकर मैं..........लिख रहा हूँ ।'[1]

साधना के अपने दोनों गुरुओं का स्मरण तथा उनके प्रति अपनी कृतज्ञता के निवेदन के उपक्रम में श्री पोद्दार जी ने "गुरु-वंदना" की रचना की ।

---

(1) कल्याणकारी आचरण श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार संवत् 2026

पृ - 2026

"जय देव जय देव दयालु देवा ।
परम गुरु परमपूज्य परम देव देवा।।
....
जयतु, जयतु जय दयालु, जय दयालु देवा।।[1]

[आ] प्राप्त पत्रों के उत्तर देना भी जनप्रथा का आग्रह हेतु था पोद्दार जी का प्रचुर पत्र-साहित्य प्रकाशित एवं अप्रकाशित है । उन्होंने तत्परनिष्ठा से प्रत्येक साधक की कठिनाई का निवारण किया । फलस्वरूप उनके पास साधना संबंधी पत्रों की बहुत बड़ी संख्या में प्राप्ति होने लगी जिनका वह बड़ी तत्परता से उत्तर दिया करते थे । उनकी तत्परनिष्ठा का जन-जन में तो प्रभाव प्रचारित था ही । साथ ही वह परमात्मा परमाराध्य भगवान श्री कृष्ण को भी इसका अनुभव हुआ और उन्होंने अपने भक्तों को प्रेरित करना भी प्रारंभ किया था कि वे श्री पोद्दार जी से मार्गदर्शन प्राप्त करें ।[2]

[2] जन कल्याण आज्ञा :-

श्री पोद्दार जी को भगवान् का आदेश प्राप्त हुआ था कि भगवन्नाम का प्रचार कर । इस संदर्भ में उन्होंने जहाँ कीर्तन तथा नाम जप के अनेकानेक आयोजन किये वहाँ धार्मिक ग्रन्थों के प्रणयन एवं प्रकाशन द्वारा भी इस दायित्व का निर्वाह किया है । भगवान को प्राप्त करने के साधन के रूप में धार्मिक ग्रन्थों के पठन-पाठन की महत्वपूर्ण भूमिका मानी गई है ।

---

[1] भाई जी पावन स्मरण प्रथम खण्ड पृष्ठ 524.

[2] बहिन कृष्णा कुमारी को स्वप्न में श्री वृन्दावन बिहारी का आदेश: भाई जी पावन स्मरण, पृ0 - 525.

नारद-विष्णु-पुराण-अंक के सम्पादकीय में श्री पोद्दार जी इसी भाव को व्यक्त करते हुए लिखते हैं ——

"पाठक-पाठिकागण इन पुण्य पुराणों के सार को पढ़कर लाभ उठावें और लोक-परलोक में में सुख-शान्ति और मानव-जीवन के परम और चरम लक्ष्य भगवान को प्राप्त करें। यही प्रार्थना है।"[1]

इसी प्रकार का निवेदन श्री पोद्दार जी ने एकादश स्कन्ध [श्रीमद् भागवत] तथा संत-वाणी अंक के संपादकीय में किया है तथा अन्य धार्मिक प्रकाशनों के संदर्भ में भी उनकी यही कामना तथा ग्रन्थ रचना हेतु रहा है।

"कल्याणकामी पाठक-पाठिकागण इसको पढ़ें, मनन करें और इसके दिव्य उपदेशों को जीवन में उतार कर यथार्थ लाभ उठावें, यह विनीत निवेदन है।"[2]

"संतवाणी-अंक" में संतों की पवित्र, जीवन निर्माण में सहायक, जीवन को उच्च स्तर तक पहुँचा देने वाली निर्मल वाणियों का अभूतपूर्व संकलन है। इसके प्रचार-प्रसार से मानव में आयी हुई दानवता दूर होकर उच्च मानवता की प्राप्ति हो सकती है।"[3]

[3] स्व-कल्याण की आशा :-

स्वकल्याण की आशा तीन रूपों में हेतु बनी है —

[1] अपनी कामना

[2] पाठकगणों से प्रार्थना करने का अवसर कि वह रचनाकार के कल्याण के लिए प्रार्थना करें।

[3] साधन साधिका

---

[1] नारद विष्णु पुराण अंक पृ० - 800.
[2] श्रीमद्भागवतांक....एकादश स्कंध: निवेदन पृ० - 4.
[3] "संत-वाणी-अंक" जनवरी 1955.

दोनों रूपों में स्वकल्याण कामना के संदर्भ प्रायः मिलते हैं । श्री पोद्दार जी इस कल्याण कामना की कितनी लगन तथा उत्कंठा थी, इसका अनुमान इन संदर्भों से लगता है । ये संदर्भ अन्यथा, औपचारिक रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं । साधारणतया अपने के स्थान में दूसरों के कल्याण अथवा उपदेश का हेतु रखना का होता है । श्री पोद्दार जी के लिए ये संदर्भ सर्वथा वास्तविक, अनौपचारिक तथा पूर्ण निष्ठापूर्ण होते थे । इसलिए इनमें व्यक्त भाव हृदय को छूने वाले तथा कल्याण कामना को जाग्रत करने वाले बन गये हैं ।

प्रेम दर्शन के निवेदन में श्री पोद्दार जी प्रकाशन के दो हेतुओं का निर्धारण करते हैं —[1]

[1] मान-बड़ाई की छिपी हुई कामना

[2] भक्तिशास्त्र की आलोचना से अपने कल्याण की आशा

अपनी भावना एवं हेतु के संबंध में वह आगे लिखते हैं —

"वस्तुतः भक्ति की जितनी चर्चा हो उतना ही मंगल है, क्योंकि भगवत्प्रेम-प्राप्ति के लिए भक्ति ही सर्वप्रधान साधन है; और साध्यरूप (साध्य) में वही भगवत्प्रेम है ।"

<u>अपने कल्याण के लिए पाठकों से प्रार्थना</u>

श्री पोद्दार जी प्रेम दर्शन के निवेदन में इस प्रार्थना एवं अनुरोध को प्रस्तुत करते हैं कि उन्हें भगवत्प्रेम के लिए उनका आशीर्वाद प्राप्त हो ।

"अन्त में मैं अत्यन्त विनम्रभाव से भगवान के प्रेमी समस्त भक्तों के चरणकमलों में यही प्रार्थना करता हूं कि आप सब मिलकर मुझको कृपा-

---

[1] प्रेम दर्शन टीकाकार श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार[सं02039]पृ0-5.

9.31

पूर्वक ऐसा आशीर्वाद दें जिससे मेरा मन-मधुकर सदा श्री भगवान् के चरणकमलों में ही विहरण करने वाला बन जाय ।"[1]

[5] प्रयोजन सिद्धि एवं प्रोत्साहन :-

श्री पोद्दार जी को अपने प्रयोजन में सफलता मिली है तथा उससे प्रोत्साहित होकर वह आगे रचनाओं के लिए उत्सुक हुए हैं । इस अनुभव एवं भाव का उन्होंने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है तथा इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने जन-जन को भी प्रेरित किया है कि वह इस सरल साधन का उपयोग करें ।
कतिपय संदर्भ अवलोकनीय हैं —

"इसमें......अन्ततः भगवान् के पवित्र नामों की ही चर्चा हुई है । इससे अवश्य ही मेरे नीरस और भक्ति शून्य हृदय में कुछ रस का और भक्ति का संचार हुआ होगा ।"[2]

"इस संतवाणी अंक" के संपादन में हमें बड़ा लाभ हुआ है । सैकड़ों सन्तों की दिव्यवाणियों के सुधा-सागर में बार-बार डुबकी लगाने का सुअवसर प्राप्त हुआ, यह हम पर भगवान् की बड़ी कृपा है।"[3]

"संपादन तथा मुद्रण के समय हमें.......प्रसंग पढ़ने और मनन करने को मिले हैं, इससे हमें बहुत लाभ पहुँचा है । इसको हम भगवान् की बड़ी कृपा मानते हैं ।"[4]

---

[1] वही पृ०-8.
[2] प्रेम दर्शन टीकाकार श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार निवेदन पृ०-5
[3] संत-वाणी-अंक [जनवरी, 1955] पृ० - 800.
[4] संक्षिप्त श्री स्कन्द महापुराण [जनवरी, 1953] : निवेदन और क्षमा प्रार्थना पृ० - 8.

साधन साधिका :—

साधन साधिका के रूप में धार्मिक रचनाओं के स्वाध्याय एवं रचना के महत्व का श्री पोद्दार जी ने व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया है तथा उसका स्पष्ट उल्लेख किया है । यह संदर्भ निश्चय ही साधकों के लिए प्रेरणाप्रद एवं अनुकरणीय है ।

"सन् 1916 ई0 में सबसे पहले मैंने देवर्षि नारद के सूत्रों की एक बँगला में छपी हुई पुस्तक देखी थी । उस समय मैं एकान्तवास में था । भगवान् श्री कृष्ण की कृपा से परमार्थ-साधन की ओर कुछ मन लगता था, उसमें देवर्षि के सूत्रों से बड़ी सहायता मिली ।"[1]

रचना प्रक्रिया एवं प्रकाशन कामना :-

रचना प्रक्रिया के संदर्भ में श्री पोद्दार जी ने एक हेतु "मान-बड़ाई की छिपी हुई कामना" का उल्लेख किया है । इस बिन्दु पर श्री पोद्दार जी की रचना प्रक्रिया के संदर्भ में विचार कर लेना आवश्यक है ।

वस्तुस्थिति यह है कि श्री पोद्दार जी स्वभावतः प्रकाशन के प्रति, अपनी मान-बड़ाई के प्रति उदासीन ही नहीं प्रत्युत ऐसे अवसरों को टालने के लिए पूर्ण सावधान एवं सतर्क रहे हैं । वह मूलतः एक निष्ठावान साधक थे तथा उन्होंने साधना के प्रमुख अन्तराय के रूप में मान-बड़ाई को माना है । इसलिए वह विशेषरूप से सावधान एवं सतर्क रहे हैं ।

प्रकाशन के संबंध में उन्होंने अपनी कृति के संबंध में "प्रेम दर्शन" के निवेदन में उनका यह संकोच प्रधानतः इस कारण था कि वह अपने

---

(1) प्रेम दर्शन-टीकाकार श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार (सं02039)पृ0-4.

आपको इस कार्य के लिए सक्षम नहीं समझते थे किन्तु कालान्तर में भगवद् आज्ञा के संदर्भ में लोक-कल्याण के दायित्व निर्वाह के भाव में यह संकोच दूर हुआ प्रकाशन के प्रति मनसा अरुचि रहते हुए भी उन्होंने इसके प्रति संतोष व्यक्त किया ।

"छपवाने का मन नहीं था । संकोच था कि अधिकारहीन पद में टीका लिखनेवाला कौन? परन्तु ज्यों ज्यों प्रतिष्ठि बढ़ने लगी, यह सात्विक संकोच हटने लगा और अन्त में छपाने की बात स्थिर हो गई ।"[1]

आत्मश्लाघा तथा अभिनन्दन आयोजनों का भी उन्होंने सदा विरोध किया तथा उनको अपने जीवन काल में कभी पूरा न होने दिया ।[2] यही स्थिति उपाधियों आदि के संबंध में थी । "भारतरत्न" की उपाधि के लिए उन्होंने अपनी असहमति व्यक्त की तथा स्वीकार नहीं किया ।[3]

9.3.3. श्री पोद्दार की काव्यादर्श

श्री पोद्दार जी साहित्य के सम्बन्ध में एक आदर्श लेकर चले थे तथा उसका उन्होंने यथा स्थान स्पष्ट प्रतिपादन किया है। साहित्य को वह दो कोटियों में रखते है —

(1) सत साहित्य

(2) असद् साहित्य

---

(1) प्रेम दर्शन-टीकाकार – श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार: निवेदन पृ0-4.
(2) भाई जी पृ0 –
(3) भाई जी पृ0 –

इसके साथ उन्होंने साहित्य का उद्देश्य भी निर्दिष्ट किया है तथा साहित्यकार के कर्तव्य भी ।

[1] सद् साहित्य :-

"जो साहित्य अध्यात्मप्रेरणार्थ प्रस्तुत होता है जो मनुष्य की अन्तर की सुप्त पवित्र सात्त्विक वासनाओं को जगाकर उसे अमृतदृष्टियों बना देता है वही सद्साहित्य है ।"[1] "सत्साहित्य ही वास्तविक साहित्य कहलाता है केवल भाषा को साहित्य नहीं कहा जाता । भाषा तो साहित्य का माध्यम मात्र है जो साहित्य विभिन्न क्षेत्रों में समान भाव से सभी को कल्याण मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा देता है, सभी का कल्याण करता है वही सत्साहित्य है । सत्साहित्य मानव को श्रेय की ओर ले जाने के लिए विभिन्न रूपों में आत्मप्रकाश करता है तथा मानव को सदा श्रेय के मार्ग पर ही आगे बढ़ाता है ।"[2]

[2] असद् साहित्य :-

जिस साहित्य से भोगवासना बढ़ती है जो अन्दर की असद्-प्रवृत्तियों को उभाड़ कर मानव को भगवान की ओर से हटा देता है और भोगों की अदम्य लालसा से व्याकुल कर देता है वह असद् साहित्य है ।[3]

---

[1] 'साहित्य का सदुपयोग,' भगवच्चर्चा भाग-6, पृ० 363.
[2] 'सत्साहित्य का स्वरूप एवं महत्व' गोरखपुर में निखिल भारतवर्षीय साहित्य सम्मेलन के 38वे अधिवेशन [25दिसम्बर,1962]पर स्वागत समिति के अध्यक्ष पद से श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के भाषण का अनुवाद कल्याण कृपा पृ०-3, अप्रैल 1980 पृ० सं० 36.
[3] भगवच्चर्चा भाग 6 पृ० 363.

9.35

साहित्यकार का मुख्य उद्देश्य सद् साहित्य का निर्माण करना है श्री पोद्दार जी भी इस सम्बन्ध में लिखते है - साहित्य में कला का स्थान निःसन्देह महत्वपूर्ण है परन्तु कला होनी चाहिए समाज को श्रेय साधन पर सुप्रतिष्ठित करने के लिए नहीं तो कोरी कला समाज के लिए काल बन जायेगी ।[1] साहित्यकारों का कर्तव्य बताते हुए कहते है -"भगवान के जिन सज्जनों को साहित्य निर्माण की शक्ति दी है उन पर एक बहुत बड़ा दायित्व है उन्हें अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर साहित्य को अनर्थोत्पादक कदापि नहीं बनाना चाहिए ।"[2]
आगे लिखते हैं -"साहित्य में भी भाव प्रेरणा के साथ साथ विवेकपूर्ण प्रेरणा भी परमावश्यक है, जिससे भाव की उछाल में कोई ऐसा काम न बन जाय जो न करने योग्य हो । एक प्रकार का संयम बना रहे तथा प्रयोजन के अनुसार भाव की सरिता भी सदा के लिए बहती रहे । काल विशेष की आवश्यकता का सामयिक उत्तेजनामय भाव स्वभावरूप में परिणत नहीं हो जाना चाहिये । स्वभाव बन जाने पर फिर बाह्य शत्रु के [अभाव में अपना घर ही समरक्षेत्र बन जाने पर फिर बाह्य शत्रु के] अभाव में अपना घर ही समरक्षेत्र बन जा सकता है । आशा है हमारे परम आदरणीय निपुण साहित्यिक महारथीवृन्द इस क्षेत्र में विशेष रूप से यशोलाभ करेंगे ।"[3]

---

[1] वही पृ० - 366.

[2] भगवच्चर्चा भाग 6 पृ० सं० 366.

[3] 'सत्साहित्य का वैशिष्ट्य एवं महत्व' सत्संग सुधा, [अप्रैल 1980] पृ० 39.

9.4

रचना प्रवृत्ति

श्री पोद्दार जी की रचना प्रक्रिया की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता रचनागत उनकी विशेष प्रवृत्तियाँ है जो उनकी रचना की पृथक पहिचान कराती हैं । रचना प्रवृत्तिगत उल्लेखनीय अवलोकित एवं अवधारित प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित है :-

(1) विषय विवेचन सम्बन्धी

(2) छन्द प्रयोग का विचार

(3) शीर्षक सम्बन्धी

(4) पाद टिप्पणी एवं संदर्भ सम्बन्धी

(5) लेखन सम्बन्धी

(6) पत्र सम्बन्धी

(1) विषय विवेचन सम्बन्धी :-

:1: विषय को सीधा प्रारम्भ करते हैं । उसके पूर्व कोई विषय प्रवेश या भूमिका नहीं बांधते हैं । यथा-

"वास्तविक पूर्ण समर्पण करना नहीं पड़ता, अपने आप हो जाता है । जब तक समर्पण करने वाला धर्मी बना रहता है तब तक अहंकार शेष है और तब तक पूर्ण समर्पण में कमी है ।"[1]

:2: विषय से सम्बन्धित सभी पक्षों को लेते है तथा व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग करते है । उनकी दृष्टि यह रहती है कि विवेचन बोधगम्य बने और समझ में आ जाय । यथा-

भगवन्नाम लेख में — भगवन्नाम की महिमा, सब लोग नाम

---

(1) 'पूर्ण समर्पण' लेख, कल्याणकुंज भाग 6 (नवीन संस्करण-पूर्ण समर्पण) पृ0-5.

परायण व्यर्थ नहीं होती, नाम महिमा केवल रोचक वाक्य नहीं, इस पर दृष्टान्त, नाम का फल अवश्य होता है. साधक का सहाय नाम, नाम के दस अपराध, भगवन्नाम के मुख्यार्थ पर दृष्टान्त, परमात्मा की प्राप्ति का परम साधन श्री भगवन्नाम है, नाम भजन के कई प्रकार, जप की विधि, स्मरण, कीर्तन आदि है ।[1]

:3: साधारणतया विषय की अपेक्षा की सीमाओं में ही उनका विवेचन आबद्ध रहता है किन्तु वन्दना एवं नमन को अवसर अनपेक्षित रूप में भी निकाल लेते है तथा पावन चरण कमलों में "बारंबार नमस्कार" कर लेना आवश्यक समझते है । यथा-गोपीप्रेम प्रसंग के अन्त में "बोलो गोपी और गोपी नाथ के पदपद्मपराग की जय ।"[2] "रास रासेश्वरी, नित्य निकुंजेश्वरी वृषभानुकुमारी श्री राधारानी की जय जय जय ।[3]" बोलो आनन्दकन्द भगवान श्री कृष्ण चन्द्र की जय ।[4]

:4: यथास्थान कोई संबंधित दृष्टान्त देकर विषय को और अधिक बोधगम्य बनाने से विवेचन आकर्षक बन जाता है । यथा-"भगवान के आश्वासन पर विश्वास करो" लेख में "सच्चे हृदय से भगवान को पुकारने पर भगवान स्वयं प्रकट होते हैं इस पर [illegible] नामक भील[5] का दृष्टान्त दिया है । यह भील जंगल

---

[1] भगवन्नाम, लेख-भगवच्चर्चा भाग 1 पृ० 30 से 77 तक

[2] गोपीप्रेम पृ० - 52.

[3] श्री राधा-तत्त्व एवं राधास्वरूप की नितान्त दुर्लभता राधामाधव चिन्तन पृ० - 158

[4] श्रीकृष्ण जन्म महोत्सव राधामाधवचिन्तन पृ० 466.

[5] भगवच्चर्चा भाग -6 पृ० 174.

में स्थित भगवान की मूर्ति को बिना भोग लगाये कुछ खाता-पीता न था । एक बार उसने भूलवश पपीता का फल बिना भोग लगाये खा लिया । इसी बीच उसे अपनी भूल मालूम हुई । उसने फल को निकालने के लिए काफी प्रयत्न किया लेकिन फल नहीं निकल सका । अन्त में उसने कुल्हाड़ी से गला काटकर फल निकालने की सोची । उसने जैसे ही कुल्हाड़ी उठाकर गले में मारने के लिए तैयार हुआ उसी क्षण भगवान ने प्रकट होकर उसको रोक दिया एवं उसको अपने स्वरूप का दर्शन कराया।

:5: कहीं-कहीं श्लोक या पद लिखकर लेख का प्रारम्भ करते है यथा-'धर्ममय भगवान् श्रीकृष्ण लेख' में के प्रारम्भ में ब्रह्मणो

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च ।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥[1]

[श्रीमद्भगवद्गीता - 14/27]

'गोपी प्रेम' के लेख का प्रारंभ सूरदास के पद से प्रारम्भ हुआ है ।[2]

:6: महत्वपूर्ण अंशों को रेखांकित करते हैं । उद्धृत सामग्री में भी ये अंश रेखांकित रखे गये है । यही नहीं वाक्य में यह प्रवृत्ति दिखलाई देती है । यथा -

परन्तु सार्वजनिक रूप से सभी गोरक्षा तभी संभव है, जब गौ का दूध पर्याप्त मात्रा में बढ़ जायेगा और गौ में बहुतमजबूत और बलवान बछड़ा पैदा करने की शक्ति आ जायेगी ।[3]

---

[1] सुखी बनने के उपाय पृ० - 30

[2] कल्याणवर्ष भाग-1 पृ0

[3] कल्याणवर्ष भाग- 3पृ0 353.

[पिंजरा पोल और गोशाला]

'हमारी समझसे इसका एक ही उपाय है और वह उपाय है अध्यात्म प्रधान हिंदू-संस्कृति की पुनः प्रतिष्ठा । जब तक मनुष्य जीवन का लक्ष्य भगवान् नहीं होंगे जब तक पुनर्जन्म और कर्मफल में सुदृढ़ विश्वास नहीं होगा, जब तक शास्त्रों के अनुसार पवित्र जीवन बनाना हमारे जीवन की अनिवार्य साधना नहीं होगी और ऐसा बनकर जब तक किसी भी लोभ, भय या स्वार्थ से धर्मच्युत न होने की दृढ़ प्रतिज्ञा नहीं होगी, तब तक किसी भी आन्दोलन से, प्रचार से और कानून से भ्रष्टाचार अनाचार और कुकर्म नहीं रुकेंगे । और जब तक यह पाप का प्रवाह नहीं रुकेगा, इसका उन्मूलन नहीं होगा, तब तक दुःख का प्रवाह भी नहीं रुक सकेगा । यह ध्रुव सत्य है ।'[1]

(ख)

[आज का भ्रष्टाचार और उससे बचने का उपाय]

'अतएव जहाँ तक सम्भव हो प्राण पण से परदुःख का निवारण करना चाहिये । यह मानवता का प्रथम कर्तव्य है । पर दुःख निवारण महान पुण्य है और परपीड़न महापाप है ।'[2]

'धर्मी व चरित्रवान् भारतीयों के निर्माण के लिए स्कूलों में प्रत्येक लड़के और लड़की को धार्मिक शिक्षा देना अनिवार्य होना चाहिये ।'[3]

'हिन्दू संस्कृति का प्रधान और मूल स्वरूप यही है । यह संस्कृति जीव को विषय-वासना के नीचे स्तर से उठाकर अध्यात्म के उच्चस्तर पर ले जाती है । इसका प्रत्येक साधन, विचार और कर्म आत्मा को परमात्मा तक पहुँचाने में सहायक होता है ।'[4]

---

(1) भगवच्चर्चा भाग – 6 पृ० 388.

(2) दीन दुखियों के प्रति कर्तव्य पृ० 21.

(3) वर्तमान शिक्षा पृ० – 40.

(4) भगवच्चर्चा भाग 3 पृष्ठ 330.

9.40

[हिन्दू-संस्कृति का स्वरूप]

<u>पद साहित्य में</u> -

'हर लेते तुम उसके मन को, होती वह यदि शुचि निर्दोष ।
पर देते न प्रेम तुम उसको, जब तक उसे न आता होश ।।
रह जाती वंचित वह , पाकर कृपा तुम्हारी का संयोग ।
भजनशील होकर भी मूढ़ा, प्रेम नहीं पाती सत् योग ' ।।

—पद रत्नाकर 668 पंक्ति 13से16तक

'वही प्रभु साकार प्रकट हो अद्भुत दर्शन है देता ।
तत्पर अगणित जन्मों की अघराशि पूर्ण है हर लेता'।

— पद रत्नाकर पद पृ0 1536 पंक्ति25-26.

[7] प्रतिपादन अपेक्षा प्रकरणों में सभी सदंर्भों का समायोजन करते है तथा अपने विषय को अथवा अभिमत कोसदंर्भ प्रकट करके पूर्ण एवं असंदिग्ध बना देते है "इससे सिद्ध होगया" जैसे निष्कर्ष वाक्य यथास्थान मिलते है । यथा-महारानी कैकयी के गुणों का वर्णन करने के पश्चात् अन्त में लिखते है "उपर्युक्त स्पष्ट वर्णन से यह भली भाँति सिद्ध हो जाता है कि कैकयी ने जान बूझकर स्वार्थ बुद्धि से कोई अनर्थ नहीं किया था ।"[1]

[8] लेखों में इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि किसी धर्म या सम्प्रदाय की किसी बात का खण्डन न हो ।

[9] विषय की गूढ़ता तथा महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए अपने प्रतिपादन को विनम्रता पूर्वक प्रस्तुत करने का आग्रह रखा है ।

---

[1] भगवच्चर्चा भाग 2 पृ0 - 225.

गीता में भक्तियोग का प्रतिपादन करते हुए अन्त में निवेदन करते है "वास्तव में भगवान का क्या स्वरूप है और उनकी दिव्यवाणी श्री गीता के श्लोकों का क्या मर्म है, इस बात को यथार्थत भगवानही जानते हैं.....मुझ सरीखा विषय-रत प्राणी इन विषयों में क्या जाने? ....मैं तो सब सन्तों का दासानुदास और उनकी चरण रज का भिखारी हूँ ।"[1]

[10] कतिपय प्रवचनों के अंतर्गत शीर्षक की अपेक्षा के अनुकूल विषय प्रतिपादन न होकर किसी विशेष समस्या का समाधान किया गया है ।

"श्री राधाजन्माष्टमी महोत्सव प्रवचन [3 सितम्बर 1965] में श्री राधा के संबंध में शोधकर्ताओं, समालोचकों, साहित्यकों एवं कवियों के संदेह पूर्ण संशयात्मक एवं सन्दिग्ध धारणाओं का निराकरण करने का प्रयत्न किया गया है । "महोत्सव" कैसे मनाया जाय, "क्या हो" जैसे विषय संबद्ध पर विचार नहीं किया गया है । लेखों में इस प्रकार की विवेचना नहीं पाई जाती ।

[2] बल प्रयोग का विचार :- बल प्रयोग विशेष ध्यानाकर्षण हेतु होता है, दो रूपों में देखा जा सकता है - [1] पदक्रम में व्यतिक्रम [2]- सावधान एवं सचेतक संबोधन.

[1] कैसा सुन्दर आदर्श है धर्मपत्नी का ।[1]

[2] याद रखो[2अ] विश्वास करो[2ब] निश्चय करो[2स] भूल जाओ ।[2द]

[3] शीर्षक सम्बन्धी :-

महत्वपूर्ण उद्धरणों को लेख का शीर्षक बनाने के प्रति रुचि रही है यथा-"अपि चेत्सुदुराचारो"[3] "मृत्यु सर्वहरश्चाहम्"[4]

---

[1] राधामाधव चिन्तन पृ0 266.
[2] अ,2ब,2स,2द, - कल्याण कुंज, एवं कल्याण में लिए स्तम्भ से
[3] गीताचिन्तन में प्रकाशित संख्या 22वाँ लेख.
[4] भगवच्चर्चा भाग-6 क्रम सं0 10वाँ लेख.

"सर्वधर्मान् परित्यज्य"[1] "भंवर सोरि सागर फेरि गयो"[2]

[5] पाद टिप्पणी एवं संदर्भ सम्बन्धी :-

संस्कृत या अंग्रेजी के उद्धरणों के साथ उनकी हिन्दी व्याख्या देते है जिससे बोधगम्यता में बाधा न उपस्थित हो । यथा -

'नाम्नो बलाद् यस्य हि पापबुद्धिर्न विद्यते तस्य यमैर्हि शुद्धिः ।' [पद्मपुराण]

"जो नाम का सहारा लेकर पापों में प्रवृत्त होता है वह अनेक प्रकार की यम-यातना भोग करने पर भी शुद्ध नहीं होता है ।"[3]

तथा —

'ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसार सागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशित चेतसाम्' ॥

[गीता 12/6-7]

" जो साधक मुझ भगवान के परायण होकर सारे कर्म मुझमें अर्पण करके अनन्ययोग से केवल मेरा ही ध्यान-भजन करते है, हे अर्जुन ! उन मुझमें अन्तःकरण चित्त लगाने वाले भक्तों का मैं इस मृत्यु रूप संसार सागर से शीघ्र ही उद्धार कर देता हूँ ।"[4]

---

[1] गीता चिन्तन में क्रमांक संख्या 7वाँ लेख.
[2] श्री राधा माधव चिन्तन पुस्तक शीर्षक में क्रम सं० 5 का लेख.
[3] भगवच्चर्चा भाग 1 पृ० 36.
[4] गीतोक्त साधन का अंक एवं गाय का माहात्म्य-पृ० 14.

'India supplied hides worth £ 11,74,003 yds to Britain alone which was about three times the quantity supplied to the previous year.'

• "भारत वर्ष ने केवल अकेले ब्रिटेन को 11,74,000 पौण्ड की खालें भेजी गयी थीं जो गतवर्ष की भेजी गयी संख्या से तिगुनी है ।[1] [उत्तर प्रदेश गोसंवर्धन समिति के प्रधान डा0 हर सीताराम जी के भाषण का अंश]

उद्धृत अंशों का मूल संदर्भ कोष्ठक में अंक के साथ नीचे अंकित करते हैं । पाद-टिप्पणी में इस प्रकार के संदर्भ नहीं देते । यथा —

'यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते '॥[2]

[गीता 6/22]

'धृतिः क्षमाऽदमो स्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः ।
धी विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् '॥[3]

[मनु0 6/92]

'कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्त संगः परं व्रजेत् '॥[4]

[श्रीमद्भा0 12/3/51]

यत्र-तत्र सन्दर्भ श्लोक के ऊपर ही दे दिये हैं, यथा — श्री मद्भागवत [7/14/8] में कहा है -

'यावद् भ्रियेत जठरं तावद् स्वत्वं हि देहिनाम् ।
अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति '॥[5]

---

[1] गोवंश भारत का अंकुर एवं गाय का माहात्म्य पृ0 14.
[2] [illegible] - भाग 1-127.
[3] .. भाग 3-331.
[4] .. .. 6-63.
[5] .. .. 6-213.

9.44

पाद टिप्पणी में ऐसे उद्धरण संदर्भ सहित देते है जिनका मूल पाठ के अन्तर्गत किया जाना आवश्यक नहीं समझते । यह उद्धरण ऐसे होते है जिनका सामान्य पाठक के लिए अधिक महत्त्व नहीं होता प्रत्युत विद्वज्जन अथवा शोधार्थियों के लिए आवश्यक होते है यथा- "उच्च कोटि के साधक महात्मा की सेवा करने से भी लाभ हो सकता है सेवा का अर्थ उनके समीप रहना उनके शरीर की सेवा करना ही नहीं है समीप रहने से भी लाभ है । यहाँ पर पाद टिप्पणी का संकेत दिया गया है । पाद टिप्पणी में इसका सन्दर्भ सहित उल्लेख किया गया है—"कुछ भी न करके उनके पास रहने से भी लाभ होता है ।"

'निराहारा अप्यपि वयं पुण्यशीलेषु साधुषु ।
पुण्यमेवाप्नुयामेह पापं पापोपसेवनात् '॥

[महा0 वन0 1/27]

"स्वयं कुछ भी कार्य न करने पर भी हम लोग पुण्यशील साधुओं के पास रहने से पुण्य और पापियों के पास रहने से पाप को ही प्राप्त कर सकते हैं।"[1]

<u>[5] लेखन सम्बन्धी :-</u>

:1: लेख शास्त्रीय उद्धरणों से परिपूर्ण होते है - यथा - "श्री वृषभानु नन्दिनी से प्रार्थना" लेखों जो केवल 1 पृष्ठ का है। उसमें 4 शास्त्रीय उद्धरण है ।[2] इसी प्रकार 'भगवान सगुण है निर्गुण' लेख में 15 शास्त्रीय उद्धरण[3] दिये गये है ।

:2: श्री पोद्दार जी श्री राधामाधव के अनन्य भक्त थे । तथा जहाँ-कहीं वह अवसर पाते । उनकी रचना में इस भक्ति का

---

[1] भवरोग की रामबाण दवा - पृ0 106.
[2] राधामाधव चिन्तन पृ0 - 6-8.
[3] कल्याणकुंज भाग 5, पृ0 84 से 92 तक.

प्रदर्शन हो जाता है था । जो अन्यथा विषय प्रतिपादन की दृष्टि से अप्रासंगिक एवं दोष युक्त प्रतीत होता है । यथा -

"भक्तचरिताङ्क"[1] विशेषांक में भगवान्शंकर पर रचना प्रस्तुत करते हुए पद्मपुराण में भगवान शंकर द्वारा दी गयी राधा कृष्ण उपासना का विशद वर्णन प्रस्तुत किया है ।

:3: संस्कृत वर्तनी का आग्रह पूर्ण प्रयोग -

शंङ्कर [पंचम वर्ण प्रयोग]

:4: पदान्त मकार लिखते है - यथा

कुर्में प्रकृति से.

[6] पत्र सम्बन्धी :-

:1: पत्र के ऊपर "श्रीहरि:" लिखते है तथा दाहिनी ओर स्थान का नाम, तथा उसके नीचे मास का नाम, पक्ष, तिथि तथा संवत् लिखते हैं । यथा -

"श्रीहरि:"

गोरखपुर

पौष शुक्ल 6, 1996

:2: पत्र का प्रारम्भ प्रिय महोदय/प्रिय बहिन "सादर हरिस्मरण" से करते है तथा पत्र का अन्त "शेष भगवत्कृपा" लिखकर करते हैं ।

:3: पत्र के अन्त में "आपका हनुमान प्रसाद पोद्दार" लिखकर पत्र समाप्त कर देते है ।

---

[1] भक्त-चरिताङ्क - जनवरी 1952.

श्रीहरिःशरणम्

मनुष्यजीवनका चरम और परम एकमात्र उद्देश्य मोक्ष, भगवत्प्राप्ति या भगवत्प्रेमकी प्राप्ति है। जिस मनुष्यका जीवन इस महान् उद्देश्यकी पूर्तिके साधनमें लगा है, वही वास्तवमें मनुष्य है।

मानव-जीवनमें मिली हुई प्रत्येक सामग्रीको — प्रत्येक साधनको — बुद्धि, मन, इन्द्रिय, धन, जन, समय, क्रिया आदि सभीको केवल भगवत्प्राप्तिके कार्यमें ही लगाये रखनेमें उसकी सार्थकता है।

भगवान् एक हैं, उनके लीलाभेदसे विष्णु, नारायण, शिव, रुद्र, दुर्गा, काली, राम, कृष्ण, सूर्य-गणेश, ब्रह्म और ईश्वर नामरूप हैं। जो नाम-रूप अपना इष्ट हो, उसे पकड़े रहो और किसीके इष्ट नाम-रूपकी भी निन्दा-अवज्ञा करो मत। इसी प्रकार एक ही भगवान तक पहुँचनेके अनेक मार्ग हैं। सब वहीं जाते हैं। अपने मार्गको पकड़े चलो, दूसरेकी निन्दा-अवज्ञा करो मत। सब भावुकोंके अपने ही इष्टदेव भगवान् होते हैं, अतएव सबका सम्मान करो। सभी सत्साधन भगवान्‌की प्राप्तिके हैं, अतएव सबका आदर करो॥

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं नो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः॥

हनुमानप्रसाद पोद्दार

9.5

लिपि का अध्ययन

:1: उच्चारण शुद्धता की दृष्टि से निम्नलिखित शब्दों को उच्चारण के अनुकूल लिखते है :-

"रक्षा को रच्छा"

:2: अनुस्वार के स्थान में पंचम वर्ण का प्रयोग

संग को सङ्ग

:3: उच्चारण - अपेक्षी अर्द्ध अनुस्वार का प्रयोग -

कंधा को कँधा

नंद को नँद

:4: विसर्ग एवं हलन्त प्रयोग द्वारा तत्सम के मूलरूप की रक्षा-

महान को महान्, भगवान को भगवान्

दुख को दुःख

:5: विराम चिन्हों का सावधानी पूर्वक प्रयोग-

"संतों-भक्तों के चरित्र, उनके हितकर वचनों का जप, भजन-कीर्तन यथायोग्य करना ।

:6: परसर्ग सटाकर लिखते है -

ध्यानसे, वस्तुकी, बातसे, भगवान्‌की

:7: मात्राएँ मिलाकर लिखना

गुण, सुख

:8: निम्नलिखित वर्णों की विशेष रचना करते है -

वर्ण	वर्णकीरचना	वर्ण	वर्णकीरचना
अ	अ	क्र	ल
क	क	स	स
ण	ण	ह	र
ध	ध	प्र	प्र
झ	झ		
र	र		

प्रकरण-10

शब्दानुशीलन

(पद रत्नाकर के 100 पदों (रेन्डम सेम्पलिंग) पर आधारित)

10.1 - पद रत्नाकर के 100 पदों का विवरण

10.2 - आबद्ध रूपों का अर्थ परक विवेचन

10.2.1 - पूर्व व्युत्पादक आबद्ध रूप

10.2.2 - पर व्युत्पादक आबद्ध रूप

10.3 - क्रिया एवं क्रिया रूप

1 - निष्कर्ष

विषय प्राक्कथन

श्री पोद्दार जी के संबंध में कुल शोध कार्यों उनकी संपादन कला एवं भक्तिभावना परक अध्ययन के अन्तर्गत भाषा, भाव, शैली आदि का निरूपण हुआ है । अतएव विस्तार में न जाकर नमूने के सर्वेक्षण के रूप में शब्द-अनुशीलन किया गया है । सांख्यकीय विशेषज्ञों का ऐसा मत है कि नमूने के सर्वेक्षण (Random Sampling) तथा व्यापक सर्वेक्षण के परिणामों में दशमलव के अंकों की त्रुटियाँ रहती हैं अन्यथा स्थूल रूप में परिणाम समान ही माने जाते हैं । फिर भी शोधार्थी का यह प्रयास व्यापक सर्वेक्षण के परिणाम का दावा नहीं करता । कुतूहल पूर्ण परिणामों की निष्पत्ति, अध्ययन की इस अभिनव दिशा के लिए प्रेरक बन सकती है । यही नहीं इस अध्ययन से साहित्यकार की शब्द साधनागत मूल उद्भावना का परिचय भी प्राप्त होता है ।

10-1- "पद रत्नाकर" श्री "पोद्दार जी के भक्त कवि व्यक्तित्व की अनुपम उपलब्धि है । पद रत्नाकर के पदों से रैण्डम सेम्पलिंग टेबिल से 100 पदों x की संख्या लीगई तथा उस संख्या के पदों से शब्दों का संकलन किया गया है । इस प्रकार संकलित शब्दों की कुल संख्या 2876 है।

---

x 2,3,4,6,7,9,111,113,115,116,117,118,220,221,222,223, 224,225,228,229,330,331,332,333,334,336,340,341,440, 443,444,445,446,449,551,552,553,554,556,557,558,559, 633,662,663,664,665,667,669,772,773,774,775,778,779, 879,880,881,882,884,991,992,993,995,996,997,998,1000, 1001,1002,1003,1004,1006,1008,1009,1110,1111,1113, 1117,1118,1119,1220,1221,1222,2223,1224,1227,1229, 1330,1332,1333,1335,1337,1339,1438,1439,1440,1441, 1443,1444.

तत्सम	–	1266
तद्भव	–	1536
अंग्रेजी	–	2
फारसी	–	36
अरबी	–	36
योग	–	2876

इन 2876 शब्दों में प्रयोग आवृत्ति का विवरण इस प्रकार है । प्रयोग आवृत्ति के अन्तर्गत 20 या 20 से अधिक बार प्रयोक्त शब्दों को ही लिया गया है । एक से उन्नीस बार तक प्रयुक्त शब्द 2830 एक से अधिक बार प्रयुक्त {20 या 20 से अधिक बार} 46 है । एकाधिकार बार प्रयुक्त शब्दों की आवृत्ति इस प्रकार है —

क्रमांक	शब्द	संख्या	क्रमांक	शब्द	संख्या
1.	अति	48	15.	न	92
2.	एक	25	16.	नव	48
3.	कभी	48	17.	नहीं	114
4.	कर	57	18.	नहिं	25
5.	कुछ	36	19.	नाम	20
6.	क्या	25	20.	निज	30
7.	छोड़	23	21.	नित	62
8.	जग	67	22.	नित्य	72
9.	जीवन	35	23.	पर	42
10.	जो	41	24.	प्रभु	42
11.	तुम	59	25.	प्रियतम	31
12.	तू	36	26.	प्रेम	44
13.	दिव्य	20	27.	भोग	23
14.	दुःख	29	28.	मद	20

क्रमांक	शब्द	संख्या	क्रमांक	शब्द	संख्या
29.	मधुर	28	38.	यह	32
30.	मन	64	39.	सहज	21
31.	मेरे	33	40.	सदा	64
32.	रहता	38	41.	सभी	43
33.	रहा	24	42.	सुख	63
34.	रहे	50	43.	अपने	34
35.	रस	49	44.	हरी	23
36.	राधे	66	45.	हूँ	22
37.	राधा	86	46.	है	103

<u>अधिकाधिक आवृत्ति (50 से अधिक)</u>

क्रमांक	शब्द	संख्या	क्रमांक	शब्द	संख्या
1.	नहीं	114	8.	मन	64
2.	है	103	9.	सदा	64
3.	न	92	10.	सुख	63
4.	राधा	86	11.	नित	62
5.	नित्य	72	12.	तुम	59
6.	जय	67	13.	कर	57
7.	राधे	66	14.	रहे	50

इन 100 चयनित पदों की पंक्तियों की संख्या की गणना करने पर निम्न लिखित परिणाम निकलता है :—

10 या 10 पंक्तियों से कम — 60 पद

11 से 20 पंक्तियों तक — 25 पद

21 से 30 पंक्तियों तक	-	1 पद
31 से 40 पंक्तियों तक	-	2 पद
41 से 50 पंक्तियों तक	-	×
51 से 60 पंक्तियों तक	-	×
61 से 70 पंक्तियों तक	-	2 पद

कुल पंक्तियों की संख्या 1164

औसत अनुपात प्रतिपद[1] 11.6%

विभक्ति प्रयोग - सर्वनाम

प्रयुक्त सर्वनाम हैं -

मैं, हम, तुम, तू, आप, वह, यह, कोई, कुछ, जो, सो, कौन, क्या.।

मैं, हम

विभक्ति :-

प्रथमा	मैं[332]	मैंने[332]		मो[113]	मोकूँ[113]	मोय[7]
द्वितीया	मुझको[332]	×	×	×	×	×
तृतीया	×	×	×	×	×	×
चतुर्थी	×	×	×	×	×	×
पंचमी	×	×		×	×	×
षष्ठी	मेरा[335]	मेरे[332]	मेरी[332]	मेरौ[113]	मोरे	×
सप्तमी	×	×	×	मोपर[7]	मोपै[7]	×

1- व्यापक सर्वेक्षण के अन्तर्गत कुल 1557 पदों में 19670 पंक्तियाँ है । औसत प्रतिपद 12.6 पंक्तियाँ आती है । इस प्रकार नमूने के सर्वेक्षण तथा व्यापक में केवल 1% की ~~xxxx~~ त्रुटि है अन्यथा 99% आँकड़े सही है एवं सही है।

	हम	
प्रथमा	हम{333}	x
द्वितीया	x	x
तृतीया	x	x
चतुर्थी	x	x
पंचमी	x	x
षष्ठी	हमारे{1222}	हमरे{333}
सप्तमी	x	x

<u>विभक्ति प्रयोग</u> :-

कर्त्ता	तुम	तुमने	आप	तुअ	तोहि	तू	तूने	तै	तैने
	{111}	{115}	{116}	{443}	{1006}	{117}	{117}	{221}	{1003}
कर्म	तुमको	x	x	तुझे	तुम्हीं	तुम्हें	तिह	तिन	
	{111}	x	x	{1003}	{1117}	{115}	{2}	{331}	
करण	तुमसे	x	x	तुझसे					
	{115}	x	x	{1118}					
संप्रदान	x	x	x	x	x	x	x	x	x
अपादान	x	x	x	x	x	x	x	x	x
संबंध	तुम्हारे	तुम्हारी		तेरा	तेरी	तेरे		तिहारे	तेहि
	{116}	{115}	x	{117}	{117}	{117}		{333}	{2}
अधिकरण	तुममें								
	{551}								

10.5

	वह				ये [332]	यह [332]
प्रथमा	वह	उसने	वा	वे	इह	इन
	{118}	{225}	{1003}	{332}	{1332}	{440}
द्वितीया	×	उसको, उनको	उन्हें		इसे	इसको इन्हें
		{225} {445}	{332}		{118}	{336} {997}
तृतीया	×	उनसे				इससे
		{332}				{116}
चतुर्थी	×	×				×
पंचमी	×	×	×		×	×
छठी		उसकी उसके				इसका, इसकी, इनके
		{116} {1110}				{1002} {1110} {997}
सप्तमी		उसमें			यहाँ	इसमें, इनमें
		{551}			{1110}	{1110} {995}

	कौन	जो - सो
प्रथमा	कौन, कोउ कोऊ कोई	जिसने जिस
	{334} {113} {1006} {111}	{115} {1443}
द्वितीया	किसे किसको	जिनको जिसे जेहि
	{334} {1003}	{3} {991} {333}
तृतीया	× ×	जिससे
		{556}
चतुर्थी	× ×	× ×
पंचमी	{तुलना में} किससे	× ×
	{1110}	
छठी	किसका	जिनका जिनकी जिनके जि
	{332}	{3} {229} {4} {13
		जिसकी {1103}
सप्तमी	×	जिनमें जिसमें [1443]

	कोई	कुछ	क्या	कैसा
प्रथमा	कोई{111}	कुछ{111}	क्या{111}	कैसा{111}
द्वितीया	×	×	×	किसी ते{558}
तृतीया	×	×	×	कैसे{115}
चतुर्थी	×	×	×	×
पंचमी	×	×	×	×
षष्ठी	×	×	×	×
सप्तमी	×	×	×	×

	सब
प्रथमा	×
द्वितीया	सबको{1335},सबन्हि{1220},सबही{113},सबहि{229}
तृतीया	×
चतुर्थी	×
पंचमी	सबते {551} सबन्ह ते {100}
षष्ठी	सबकी {116},सबके{116} सबनि को{443}
सप्तमी	सबमें{1335}

<u>विभक्ति प्रत्यय</u>—

<u>ङ:—</u>

सम्बन्ध सूचक {का} कमलनि{7} तुलति{228}

वाली के अर्थ में बहुधि निकन्दिनि{879} अपहारिणि{ 879 }
कुम्भकर्षिणि{772} अतुल वर्षिणि{772} कुरादिनि{772}
विहारिणि{774} हारिणि {774} धारिणि{774}
कुकारिणि{774} कुम्भाचारिणि{774} विहारिणि{774}
विस्तारिणि{774} तारिणि{774} संहारिणि{774}
निवारिणि{774} भारिणि{774} त्यागिरिणि{774}

सुहागिनि(774) बड़भागिनि(774) चिरागिनि(774) रागिनि (774)

सिबागिनि(774) संयोगिनि(774) वियोगिनि(774) योगिनि(774)

कुयोगिनि(774) योगिनि(774) रोगिनि(774) सुहासिनि(774)

भाषिणि(774) सुलासिनि(774) विलासिनि(774) प्रकासिनि(774)

वासिनि(774).

संबोधन (हे) परमेश्वरि (772) रासेश्वरि(772) निकुंजेश्वरि(772)

हृदयेश्वरि(332) सखि(444).

<u>ई :-</u>(वाली के अर्थ में)-

रंगीली(774) गरबीली(774) मटकीली(774) चटकीली(774)

छबीली(774) सरसीली(774) हठीली(774) रसीली(774)

शर्मीली(774) चमकीली(774) मटकीली(774) [illegible] धमकीली(774)

हियगारिहासिनी(881).

<u>उ:-</u> द्वितीया विभक्ति(को) मलाउ(1009)

ऊ:- /ए सप्तमी (आज्ञार्थ) सपनेहूँ (1004) निरखौं(440) साधौं(1330)

रोऊँ(444) करौं(444) पाऊँ (444)गाऊँ(444)

सुनाऊँ(333)

हि :- द्वितीया विभक्ति(को) भगवानहि(1009)

तृतीया(से) केहि(1009)

हु :- द्वितीया विभक्ति(को से) काहुहीं(1009)

हिं :- (भविष्यतिकाल)(गे) होहिं(1009)

द्वितीया विभक्ति(को) भगवानहिं (1009)

वर्तमान काल (ती है) मानहिं (1006)

हैं :- भविष्यतिकाल (गे) बोलिहैं(1009)

ए (पर) मे (115)

10.8

ऐ :- हुए ( ) घरैं (222)

ओ/औ :- हुआ ( ) बिदरयो (331) मिल्यौ (1000)

त :- (वर्तमानकाल क्रिया द्योतक) अकुलात (2) लखात (2) इतरात (1009)
(ता है) इठलात (1009) उपजत (994) मजुरात (994)
करत (229) उचित (229) कहत (229)
प्रचलित (229) चिलमित (229) देवत (229)
दिखावत (229) कहत-सुनत-समुझत (229)
मेटत (220) समात (773)

त :- वर्तमानकाल क्रिया द्योतक लखात (2) लखात (2) प्रकटित (1337)
रोवत-चिल्लपत (1341) मथत (2) मिलत (100
(हुआ/हुए) सेवत (1004) पियत (2) पहरत (221)
बजावत (220) बहत (443) चिनवत (224)
चिल्लात (341) भटकत (1009) लखत (2)
परसत [221] उगरत [221]

ता :- वर्तमानकाल क्रिया द्योतक) इतराता (115) दुखाता (115) बनाता (11
छलता (115) कलता (115) करता (115)
डरता (115) बहाता (115) लखाता (552)
काँपता (552) फूलता (665) सजाता (116)
चिल्लाता (225) छिपाता (111) बैठाता
(116) बढ़ाता (116)

न :- (वाला के अर्थ में) तरन (1000)
(सम्प्रदान (लिये) देखन (443) सँवारन (1009) बाढन (2)

नि :- सप्तमी (पर) अधरनि (223)
छठी (का) कमलनि (7)
(वाली) पापिननि (334) हरनि (9) विषयनि (1000, 1004)
इन्द्रियन (113)

वै/वे :-(वर्तमानकाल) (ता है-है) चिढ़ावे, (1000) गँवावे (1000) तावे (1000) धावे
(1000) हरावे (775) चिनावे (1000) धोवे (001)

वै/बे :-(संबंध सूचक)   मिलवै(440) पटिवै (440) थमिबे (440)

बो/बौ :- भविष्यतिकाल(होंगे)   बिसराबौ(330)
कृदन्त रूप में(ना)   परसिबौ (2)

परसर्ग

ऐ,हों :- प्रथमा विभक्ति द्योतक   हिरदै(331)   हौं(330)

द्वितीया

छू :- तृतीया (से)   आँखिनि(341)

पा(तैई) इस कारण से   पा तैई (331)

चतुर्थी

पंचमी

कौ :- षष्ठी   संतपने कौ(113)

छू :- सप्तमी   कटि(220)   भोगनि(1000)

सर्वनाम - प्रयोग

सर्वनाम- मैं, हम, । तुम, तू, आप - व्यक्ति
यह, वह । जो, सो । सब - संकेत
कौन, कोई, कुछ, क्या, कैसा - प्रश्न

प्रयोग-विशेषता - साधारणतया संप्रदान और अपादान विभक्तियों का प्रयोग नहीं हुआ है ।
- हम, आप, कोई, कुछ, क्या, के एक-एक प्रयोग प्रथम विभक्ति के हैं ।
- कैसा के - प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, विभक्ति के एक-एक प्रयोग हैं ।
- मैं, तू, कौन, के खड़ी बोली रूपों के साथ ब्रजभाषा के रूप । किये गये हैं ।

10.2(1) आबद्ध रूपों का अर्थ परक विवेचन

10.2.1- पूर्व प्रत्यायक, आबद्ध रूप :-

पू० प्र०	अर्थ	उदाहरण
अ (33)	निषेधार्थक-	अकाम(336), अजान(1438), अगणित (111), अगाध(440) अचल(1331), अधर(1118), अचेतन(225), अतल(559) अतिथि(1229), अतुल(333), अतृप्त(558), अदीन(336), अधन(113), अनित्य(991), अपरिमेय(336), अपठित(1221 अपलक(332), अपार(115), अविरत(118), अमंगल(225), अमर(664), अमित(713), अविरल(1330), अशान्त(111), असत(225), असुर(1439), असीम(1220), अशुचि(336), अहित(667), अहिंसा(1332), अव्यक्त(334), अशरीरी (229), अहेतुकी(114).
(14)	रहितार्थक-	अनाथ(440), अभंग(1337), अभय(884), अभाव(1003) अभागिन(332), अभेद(1221), अमर्ष(1330), अमूल्य(1001), अशीलक(1008), अविकार(992), अविराम(111), अविरोध (446), असहाय(340), अज्ञान(1332).
अन् (4)	विपरीतार्थक-	अनन्य( ), अनाचार( ), अनन्त(444), अनर्थ(998)
(1)	रहितार्थक-	अनासक्त(1333)
अनु (9)	पश्चातार्थक- (पीछे/बाद)	अनुचर(1118), अनुदिन(440), अनुनय(336), अनुभव(715), अनुराग(995), अनुमति(1006), अनुगामी(1118), अनुरक्ति (446), अनुकम्पा(713).
आ (तक-इधर) (13)		आकर्षण(1003), आकार(1118), आकाश(1119), आघात (662), आचार(1332), आतुर (332), आशा(4), आधार (1225), आमोद (118), आवरण (118), आस्वादन (556), आसक्ति (998), आहुरी (995).

अति (बहुत) (1)   अतिशय (332)

अप (बुरा) (2)   अपमान (113)   अपराध (336)

अभि (सामने) (3)   अभिमान (667)   अभिराम (330)   अभिव्यक्ति (1118)

अव (नीचे) (4)   अवगाहन (3)   अवतार (115)   अवयव (1118) अवरोध (332)

उद् उत् (ऊपर)   उत्तम (551)   उत्ताप (334)   उत्थान (1444) उद्धार (225)
(9)   उद्देश्य (1444)   उन्मत्त (1008)   उन्माद (669)   उत्पन्न (1225
उत्पत्ति (1223)

उप (पास, सहायक) (2)   उपभोग (444)   उपकार (1339)

दुर् (बुरा, कठिन) (4)   दुर्गति (225)   दुर्लभ (4)   दुर्वचन (225)   दुर्बल (1448)

दुस् (बुरा) (2)   दुराचार (115)   दुष्कृत (115)

नि (   ) (2)   निरत (113)   निवास (1229)

निर् (बिना)   निर्भय (1110)   निर्बल (1117)   निर्झर (1333)
(5)   निर्मल (336)   निर्मूल (225)

निस् (बिना, बाहर) (3)   निष्काम (557)   निष्ठुर (331)   निःशेष (662)

परा (1)   पराभव (   )

परि (चारों ओर) (2)   परिचय (225)   परिहार (1339)

प्र (आगे) (21)   प्रलय (1440), प्रवाह (115), प्रवेश (225), प्रस्तुत (111), प्रसाद (2), प्रसार (115), प्रसिद्ध (879), प्रफुल्लित (332, प्रबुद्ध (552), प्रतीकार (443), प्रकट (332), प्रकृति (221, प्रकार (1332), प्रकाश (1339), प्रचार (116), प्रवाह (1440), प्रमाण (1118), प्रथा (229), प्रभु (1111), प्रमाद (998), प्रयत्न (1339).

प्रति (विपरीत) (5)	प्रति (1223), प्रतिहिंसा (1330), प्रत्यंग (551), प्रत्यक्ष (997), प्रतिपल (332).
वि (विशेष)- (20)	विकास (5551), विकाल (1113), विगत (225), विग्रह (1117), विचार (115), विचरण (664), विचित्र (221), विधान, (1227), विनम्र (1339), विनय (1329) विनाश (225), विपत्ति (116), विमुग्ध (332), विराम (664), विरोध (1440), विलास (1223), विवश (332), विविध (332), विशुद्ध (991), विषाद (6)
भिन्न (1)	वियोग (334)
सम (अच्छी तरह) (8)	संकल्प (440), संतत (336), संचार (7), संचित (1443)
सु (अच्छा) (15)	सुकाल (225), सुकुमार (551), सुगंध (116), सुवास (228), सुजन (664), सुदूर (1439), सुमन (221), सुरक्षित (558), सुरूप (332), सुलक्षण (1337), सुवास (1113), सुषमा (221), सुसज्जित (557), सुस्थिर (2250), सुशिक्षित (122

<u>उपसर्ग के रूप में प्रयुक्त कुछ शब्द</u>

अन्तः (भीतर) (1)	अन्तर्यामी (332)		
कु (बुरा) (1)	कुपुत्र (118)		
तत् (वही) (1)	तत्क्षण (1337)		
पर (दूसरा) (2)	परलोक (1332)	परदेश (332)	
पुनः (फिर) (1)	पुनर्जन्म (1332)		
स (साथ) (1)	सरल (1001)		
सह (साथ) (2)	सहचरी (446)	सहोदर (1009)	
स्व (अपना) (3)	स्वच्छन्द (1336)	स्वरूप (3)	स्वार्थ (1339)

तद्भव शब्दों के साथ प्रयुक्त उपसर्ग

अ {नहीं} {4}   अज्ञान {6}, अथाह {559}, अभागे {331}, अहीरी {229}

अन {नहीं} {1}   अनमोल {1002}.

बि {नहीं} {4}   बिछोह {331}, बिकल {333}, बिकार {715}, बिगाड़ {225}

बे {बिना} {3}   बेकाम {116}, बेकार {997}, बेसमझ {117}

सु {अच्छा} {4}   सुहासिनि {774}, सुलासिनि {774}, सुविहान {224}
सुनिकसत {223}.

10-2-2- पद व्युत्पादक - आवद्ध रूप

भाव वाचक संज्ञा बनाने वाले प्रत्यय   {तत्सम शब्द}

ता   देवता {1221}, प्रभुता {998}, ममता {~~मूर्खता~~ 1111}
{7}   मूर्खता {991}, महत्ता {1118}, सफलता {995}, निर्बलता {1116}.

त्व {3}   ममत्व {662}, महत्व {552}, अस्तित्व {229}.

य {11}   अनित्य {1119}, अमूल्य {1001}, तारुण्य {333}, धन्य {229}, पूज्य {1009}, मध्य {225}, भाग्य {332}, मद्य {992}, वैराग्य {4}, नैपुण्य {1283}, नगण्य {333}.

{तद्भव शब्द}

अ {3}   टेर {667}, टेक {115}, सोच {115}.

क {4}   चमक {996}, दमक {996}, भड़क {225}, तड़क {1003}.

अन {6}   पाहन {2}, पिसान {332}, मिलन {662}, लेन-देन {556}, सँवारन {1009}, दरसन {222}.

ई {1}   करनी {113}.

पन{1}	मैथुन {1336}

स्त्री प्रत्यय

आ{3}	अन्नपूर्णा {882}, पतिव्रता {1229} प्रियतमा{3}
ई/इ{7}	मधुकरी {449}, वात्सल्यमयी {118}, सरसीनी{774} नागरी {332}, प्राणेश्वरि {332}, रसमयि{2}, हृदयेश्वरि {332}.
नी{2}	अभागिनी {334}, मधुकनी {449}.
इनि, इनी {19}	विद्यादायिनी {879}, स्वामिनी {554}, विहारिनी{9} अनुरागिनि {882}, कामिनि {1004}, दुःखभागिनि{334} धारिणी {223}, कलुष निकन्दिनि {879}, विहारिनि {443}, मंगलदायिनी {882}, मधुमालिनी {882}, सुचित- दायिनी {879}, संयोगिनिनी {774}, सुखदायिनी{443}, सुलासिनि {774}, सुहावनि {1008}, सुहासिनि{774}, वासिनी {881}, हरि-हिय-धारिणि {774}.
वती{1}	गुणवती {3}

विशेषण बनाने वाले प्रत्यय

अनीय {2}	अतुलनीय { 1339}, अनिर्वचनीय, {772}
तव्य {1}	कर्तव्य {552}.
इक {7}	आध्यात्मिक {1444}, आत्यात्तिक {1337}, भौतिक{229 धार्मिक {552}, अहैतुक {336}, वाचनिक {1110} मायिक{2
इत {16}	वर्जित [1333] पुलकित [332] धूसरित [332] हरित [330] राजित [222] शोभित {880}, सुरभित {554}, सुविकसित {1221} आकर्षित {557}, निर्वाणित {223}, अपठित {1221}, क्रीड़ित{224} प्रकटित{1337}, सुकलित {881}, सुगन्धित{2} मण्डित [880].
तर{1}	अधिकतर {332}.

तम (6)	प्रियतम (4), प्रियतम (3), मधुरतम (336), विमलतम (551), शुचितम (4), ऐश्वर्यातम (665), ~~[illegible]~~
शील (1)	दयाशील (1333).
मय (11)	रसमय (3), भावमय (665), मधुमय (2), विद्यामय (1444), दयामय (115), पापमय (1440), प्रेममयी (4), मंगलमय (332), संसारमय (1440), सुषमामय (881), छलमय (1441)
य (8)	कैवल्य (557), अमूल्य (1001), पूज्य (1009) नैपुण्य, लावण्य (333), वैचित्र्य (448) सौभाग्य (332), सौन्दर्य (3)
वान् (2)	सुखवती (332), ज्ञानवान (664).
मान (1)	मतिमान् (332).

लघुतावाची संज्ञा - प्रत्यय

इया (1)	कटिया (225).

क्रिया विशेषण - प्रत्यय

शः (1)	क्रमशः ( )

उपसर्ग प्रयोग

उपसर्ग प्रयोग - भाषा दृष्टि - संस्कृत - 31
हिन्दी-5

उपसर्ग प्रयोग - आवृत्ति दृष्टि- 5 या 5 से अधिक बार प्रयुक्त

संस्कृत	अ	अनु	आ	उद (उप)	निर	प्र	प्रति	वि	सु
	47	9	13	9	5	21	5	21	15
हिंदी	x	x	2	x	x	x	x	x	x

प्रत्यय प्रयोग

भाषा दृष्टि - संस्कृत - 24
हिंदी - 2

10.16

आवृत्ति दृष्टि - 5 या 5 से अधिक बार प्रयुक्त

	ता	य (कृत)	अन	ई	इक	इत	तम	मय	य (तद्धित)
संस्कृत -	7	11	6	7	7	16	6	11	8
हिंदी -	x	x	x	x	x	x	x	x	x

10-3. क्रिया एवं क्रिया रूप

1. अकुलाता (1) — अकुलात (218)
2. अघात (1) — अघाते (115)
3. आना (11) — आ (225), आना (997), आने (1237), आते (1222), आई (331) आये (341), आइ (1006) आयो (341) आवत (222), आ॰ (993), आवेगे (443).
4. इठलाता (1 — इठलात (1009)
5. इतराना (1) — इतराता (115)
6. उखड़ना (1) — उखड़े (553)
7. उठना (8) — उठ (225), उठता (556), उठती (3), उठा (225), उठाते (115), उठायें (220), उठि (1006) उठे (225
8. उड़ना (1) — उड़ता (664).
9. उतरना (1) — उतारि (221)
10. उपजना (1) — उपजत (996)
11. उमगना (2) — उमगत (440) उमगायत (221)
12. करना (18) — करना (1110), करके (225), करत (440), करता (552), करती (332), करते (1209), करन (पावत) (330), करने (1118), करवाओ (7), करवावे (667), करवाता (1110), करि (225) करूँ (117), करे (445), करो (998), करौ (113), किया (225), कियो (225).

13. कहना (8) — कहकर (332), कहत (229), कहता (118) कहते (111)
कहा (225), कहाता (115), कहे (558), कहूँ (113).
14. छटकना (1) — छटकता (1003)
15. खींचना (2) — खींचत (220), खींचता (552).
16. छिलना (2) — छिल (1113), छिला (556).
17. खिंचना (1) — खिंच (552)
18. खुलना (2) — खुलकर (115) खुलैगे (443)
19. खोना (4) — खो (1448), खोकर (115), खोता (115), खोये (1001)
20. खेलना (1) — खेलके खेलने (332)
21. गवाँना (4) — गवाँ (1003), गवाँत (1009), गवाँवे (1001) गवाँये (10
22. गाना (1) — गावत (222)
23. गिरना (4) — गिरा (225) गिरि (221), गिरता (1003), गिरे (115)
24. घटना (1) — घटे (1006).
25. घुलना (3) — घुला (336), घुलि (667), घुली (445).
26. घूमना (2) — घूमत (996) घूमा (225).
27. घेरना (1) — घेरे (48)
28. चमकना (1) — चमकत (224)
29. चलना (1) — चला (224).
30. चलाना (5) — चलाकर (332), चलाते (115), चले (332), चलै (1006).
चली (1444)
31. चाहना (8) — चाहिये (993), चहीं (440), चाहे (444), चाहे (1006)
चाहत (2), चाहता (115), चाहती (444), चाहते (552)
32. चिलकन (1) — चिलकत (331)
33. चिपटना (1) — चिपटै (1227).
34. चिल्लाना (1) — चिल्लाता (225).
35. छाना (6) — छा (44), छाई (229), छाये (1441), छायो (775)
छाई (1118), छाते (664)

36. छिपाना (4) छिपा (115). छिपी (1220). छिपाता (112). छिपाने (2

37. छूटना (1) छूटेगा (1003)

38. छोड़ना (1) छाड़ों (998)

39. छाड़ना (2) छाँड़त (330). छाँड़ि (331)

40. छाना (3) छाई (1118). छायो (773). छाते (664)

41. जताना (1) जताते (1339)

42. जलना (3) जलते (334). जलाती (111). जला (1111).

43. जाना (10) जा (115). जाओ (334). जाकर (334). जाते (331)
जाता (115). जाती (1119). जाते (7). जाये (669).
जायेगी (991). जायेंगे (991).

44. जानना (10) जान (225). जानत (331). जानता (554). जानती (552)
जाना (1003). जानो (333). जानिये (662) जायेगा
(991). जाने (341). (आना – जाना (997).

45. जीना (1) जिओ (775)

46. टंगना (1) टंगी (225)

47. टूटना (6) टूटत (220). टूटना (1003). टूटी (225). टूटिहै
(1009). टूटे (662). टूटेगा (1003).

48. ठहरना (1) ठहर (292).

49. डरना (3) डर (440). डरता (115). डरो (440).

50. डूबना (1) डूबा (340)

51. डोलना (2) डोलत (1009). डोलै (1008)

52. ढकना (2) ढका (116). ढककर (116)

53. तजना (2) तजो (1004). तजिहै (1009)

54. ता (3) ता (9). तौता (115). तावै (1000)

55. तोड़ना (2) तोड़ (557). तोड़ता (664)

56. थकना (1) थकते (332)

57. थमना (1) थमिबे (440)

58. दिखना (4)	दिखा (332), दिखते (1109), दिखाता (1113) दिखायत (229)
59. दीखना (5)	दीख (332), दीखति (333), दीखते (334) दीखै (446), दीखेगें (443)
60. देखना (10)	देखतें (229), देखयो (341), देखता (1221) देखते (332), देखत (443), देखने (332), देखा (1221), देखी (225), देख (देखि (330), देखो (332), देखे (332), देख (115)
61. देना (14)	दिया (115), दी (117), देगा (225), दिलाता (340) दीजै (1220), दीजिये (113), दीन्हें (443), दे (225), देकर (332), देता (1337), देती (3), देते (332), देने (225) दे (229).
62. दौड़ना (2)	दौड़ता (446), दौड़ना (992)
63. धड़कना (1)	धड़कता (115).
64. धरना (3)	धरयो (113), धरि (225), धरैं (222).
65. धोना (2)	धोता (991), धोवे (1001).
66. नाचना (1)	नाचत (222)
67. निखरना (1)	निखरता (552)
68. निभाना (1)	निभाते (115)
69. निरखना (3)	निरख (332), निरखै (440) निरखि (1220)
70. पकड़ना (2)	पकड़ (115), पकरि (1006)
71. पछताना (2)	पछिताय (1006), पछिताये (1008)
72. पढ़ना (5)	पढ़ (991), पढ़े (1003) पढ़ा (111), पढ़ने (1339) परयों (7)
73. परखना (2)	परिरखो (2) परखे (440)
74. पहुँचना (6)	पहुँच (334) पहुँचा (225) पहुँचाने (1003) पहुँचि (330), पहुँचु (116), पहुँचे (330)

75. पाना (13) पा (115), पाइ (1000) पाकर (118) पाता (115)
पाती (332) पाते (118) पाना (997) पाने (1003)
पाये (669) पाय (224) पावत (330) पावै (995) पायौ (33

76. पीना (1) पियत (2)

77. पूछना (1) पूछा (1332)

78. पुचकारना (1) पुचकारता (115)

79. पूँछना (3) पूँछा (225), पूँछि (1000) पूँछिहै (1009)

80. फलना (1) फलता (665)

81. फँसना (4) फँस्यो (113) फँसा (995) फँसि (1000) फँसौ (996)

82. फहरना (1) [illegible] फहरत (221)

83. फिरना (3) फिरता (1003) फिराते (115) फिरि (331)

84. फूलना (1) फूल (225)

85. फूटना (1) फूटे (113)

86. फेंकना (1) फेंका (225)

87. फैलाना (3) फैलाता (116), फैलाते (1003) फैले (116)

88. बचना (2) बचा (116) बचे (633)

89. बजना (2) बजना (116) बजावत (200)

90. बढ़ना (7) बढ़ा (443) बढ़ता (3) बढ़ती (446) बढ़ते (336)
बढ़ा (332) बढ़ाकर (116) बढ़ाता (116)

91. बताना/बतलाना (2) बताता (115) बतलाने (225)

92. बनना (4) बने (669) बनै (1006) बनि (229) बनी (443)

93. बदलना (1) बदलता (553)

94. बन्दना (1) बंदौ (2)

95. बंधना (1) बंधा (115)

96. बनाना (10) बन (1225) बनत (1004) बनते (1337) बना (225)
बनाकर (332) बनाता (115) बनाते (1339) बनाने (557)
बनाया (554) बनी (440).

10·21

97. बसना {7} बसत {330} बसा {552} बसाये {1008} बसि {1220} बसी {557} बसे {662}. बसी {557}.

98. बहना {2} बहती {446} बहता {665}

99. बहाना {3} बहा {1119} बहाता {115} बहाते {556}

100. बाढ़ना {1} बाढ़े {440}

101. बिगड़ना {3} बिगड़ {225} बिगड़े {553} बिगड़ेगी {991}

102. बिगोना {1} बिगोवै {1001}

103. बिठलाना {1} बिठलाया {117}

104. बिताना {1} बितावै {1000}

105. बिदरना {1} बिदर्यो {331}

106. बिनवना {2} बिनवत {224} बिनवौं {7}

107. बिलपना {1} बिलपत {341}

108. बिसारना {3} बिसरावौं {330} बिसार {1002} बिसारत {115}

109. बीतना {3} बीत {998} बीतत {443} बीती {332}

110. बुलाना {1} बुला {332}

111. बैठना {1} बैठेगा {225}

112. बैठाना {1} बैठाया {225}

113. बोलना {3} बोलते {1333} बोलिहै {1009} बोलौ {775}

114. भजना {4} भज {991} भजिये {993} भजहि {996} भजो {997}

115. भटकना {3} भटकता {1003} भटकत {1009} भटक्यो {1008}

116. भया {2} भये {1008} भयो {224}

117. भरना {6} भर {1113} भरते {332} भर्यो {331} भरा {118} भरी {117} भरे {1119}

118. भूलना {9} भूल {115} भूलकर {332} भूलता {664} भूला {1003} भूली {553} भूलि {1009} भूले {1003} भूल्यौ {667} भूला {332}

119. भोगना {4} भोगूँ {113} भोगे {330} भोगौं {118} भोगी {664}

(120) मचलना (1) मचला (556)

121. मटकाना (1) मटकाकर (332)

122. मंडराना (1) मंडराते (113)

123. मनाना (2) मनाता (1003) मनाया (332)

124. मरना/मारना (4) मरना (1120) मरने (1110) मरा (664) मारी (225)

125. मलना (1) मलता (991)

126. माँगना (2) माँग (995) माँगों (1223)

127. मानना (8) मान (4) मानता (118) मानत (1009) मानती (3)
मानते (332) मानहिं (1006) माना (1003) माने (669)

128. मिटना (11) मिट (991) मिटा (332) मिटे (225) मिटता (1332)
मिटे (7) मिटें (225) मिटता (1332) मिटता (995)
मिटाकर (995) मिटी (1111) मिटै (440)

129. मिलना (9) मिलता (1002) मिलती (1003) मिले (633) मिला (336)
मिल्यौ (1000) मिलेगी (1110) मिलि (1009)
मिलै (1004) मिली (225)

130. मुस्काना (3) मुसकत (223) मुसकाते (332) मुसकाता (992)

131. रखना (8) रखा (551) रख (117) रखता (115) रखती (118)
रखा (557) रखो (227) रखोगे (1110) रखि (670)

132. रचना (3) रच (1441) रचता (995) रचकर (115)

133. रोना (8) रोऊँ (444) रोकर (444) रोता (113) रोती (448)
रोना (332) रोनों (330) रोवै (1001) रोवत (341)

134. लखना/लखाना (2) लखात (1009) लखि (2)

135. लगाना (4) लगाकर (1444) लगाता (115) लगे (332) लगी (996)

136. लजाना (2) लजात (1009) लजा (2)

137. ललचाना (2) ललचात (2) ललचाता (552)

138. लहराना (2) लहराता (557) लहरत (553)

139. लाना (11) लाकर (1003) ला (336) लाती (773) लिया (557)
लिये (117) ली (225) लीन्हे (443) लूँ (115) लै (221) ले (115)
लो (111)

140. सिखना/सिखाना{3} सिखी {116} सिखा {116} सिखाता{1110}

141. सकना{5} सकता {332} सकते {332} सकती {332} सके {662}
सकेगा {334}

142. सकुचाना{1} सकुचाता {1003}

143. सजना/सजाना{4} सज {115} सजो {775} सजाता {116} सजिये{993}

144. सताना{2} सतात {1009} सताती {664}

145. सझना /समझाना{11} समझ {332} समझकर {1003} समझा {1003}
समझते {1339} समझती {3} समझाती {332} समझेंगे{1335}
समझो {553} समुझि {330} समझत {229} समझौ{331}

146. सुनना/सुनाना{8} सुन {225} सुना {332} सुनत {220} सुनते {225}
सुनाते{332} सुनने {1337} सुनाऊँ {334} सुनिबे{2}

147. सु ाना{2} सुहाती {775} सु ावै {775}

148{ सूखना{1} सूखे {334}

149. सेवना {1} सेवत {1004}

150. सोना {4} सोता {1003} सोना {1002} सोने {1003}सोवै{1001}

151. सो ना{1} सोहत {221}

152. हरना {3} हरता { } हरनी {221} हराने {9}

153. हँसना {3} ~~xxx~~ हँसते {1227} हँसे {225} हँसो{1223}

154. हटना {4} हटा {118} हटो {553} हट {1003} हटे {446}

155. हरना {3} हर {6} हरत {9} हरता {1335}

156. होना {19} ~~होकर~~ हूँ {111} है {3} हैं {330} होकर {332} होगा
{997} होंगे {332} होत {1000} होती {115} होता
{3} होते {3} होतो {443} होना {1110} होये{440}
होवे {1001} ~~होंहि~~ होहिं {1009} था {111} थी {332}

राग रागनियों का विवरण आवृत्ति के संदर्भ में निम्नलिखित है —

(1) लावनी-6 (2) केदार-2 (3) पीलू-4
(4) मांड-5 (5) भीमपलासी-4 (6) देस-2
(7) परज-5 (8) तर्ज गजल-1 (9) बहार-1
(10) गौरी-1 (11) भैरव-2 (12) भैरवी-10
(13) गारा-1 (14) बागेश्री-5 (15) बसन्त-1
(16) आसावरी-2 (17) बिहाग-2 (18) ईमन-2
(19) शिवरंजनी-4 (20) जौनपुरी-1 (21) खमाज-2
(22) भूपाली-2 (23) यमन-1 (24) सारंग-1
(25) कलिंगड़ा-2 (26) तोड़ी-5 (27) जंगला-4
(28) तर्ज रसिया-1 (29) काफी-3 (30) गौरखकल्याण-1
(31) मालकोश-1 (32) तैलंग-1 (33) जोगिया-1
(34) सोहनी-1 (35) रामकली-1 (36) हमीर-1
(37) गौड़ मलार-1 (38) बिलावल-1 (39) हिंडोल-1
(40) दादरा-1

राग रागनियों के संकलन में प्रथम पाँच स्थानों का विवरण इस प्रकार है [1]:-

(1) रागभैरवी -10 (2) भैरव-9 (3) पाँचराग-(लावनी-6, मांड-5, परज-5, बागेश्वरी-5, तोड़ी-5) (4) चार राग(भीमपलासी-4, पीलू-4, शिवरंजनी-4, जंगला-4, (5) काफी-3.

---

(1) व्यापक सर्वेक्षण के अन्तर्गत प्रथम पाँच स्थानों पर निम्नलिखित राग हैं- (1) भैरवी(118) (2) सर्वलावनी(112) (3) भीमपलासी(79)(4) पीलू(77) (5) जंगला, भैरव(75,60).

प्रकरण- 11

सांख्यकीय अध्ययन

11.1 शब्दानुशासन-शब्द प्रयोग आवृत्ति

11.2 अध्याय निर्देशांक विवरण

11.3 पदरत्नाकर -

पद पंक्ति संख्या

पद के प्रथम शब्द के अनुसार पद संख्या

पद सम्बोधन

11.4 राग आवृत्ति

11.5 आरती

11.6 गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण

11.1. शब्दों की [illegible] आवृत्ति

(पद रत्नाकर के 100पदों का रैण्डम सैम्पलिंग के आधार पर)

क्रम संख्या	शब्द	आवृत्ति
1.	नहीं	114
2.	है	103
3.	[illegible]	92
4.	राधा	86
5.	निरख	72
6.	जय	67
7.	राटे	6
8.	मन	64
9.	सदा	64
10.	कृष्ण	63
11.	निज	62
12.	सब	59
13.	कर	59
14.	रहे	50

शब्दानुशीलन

[100 पदों में]

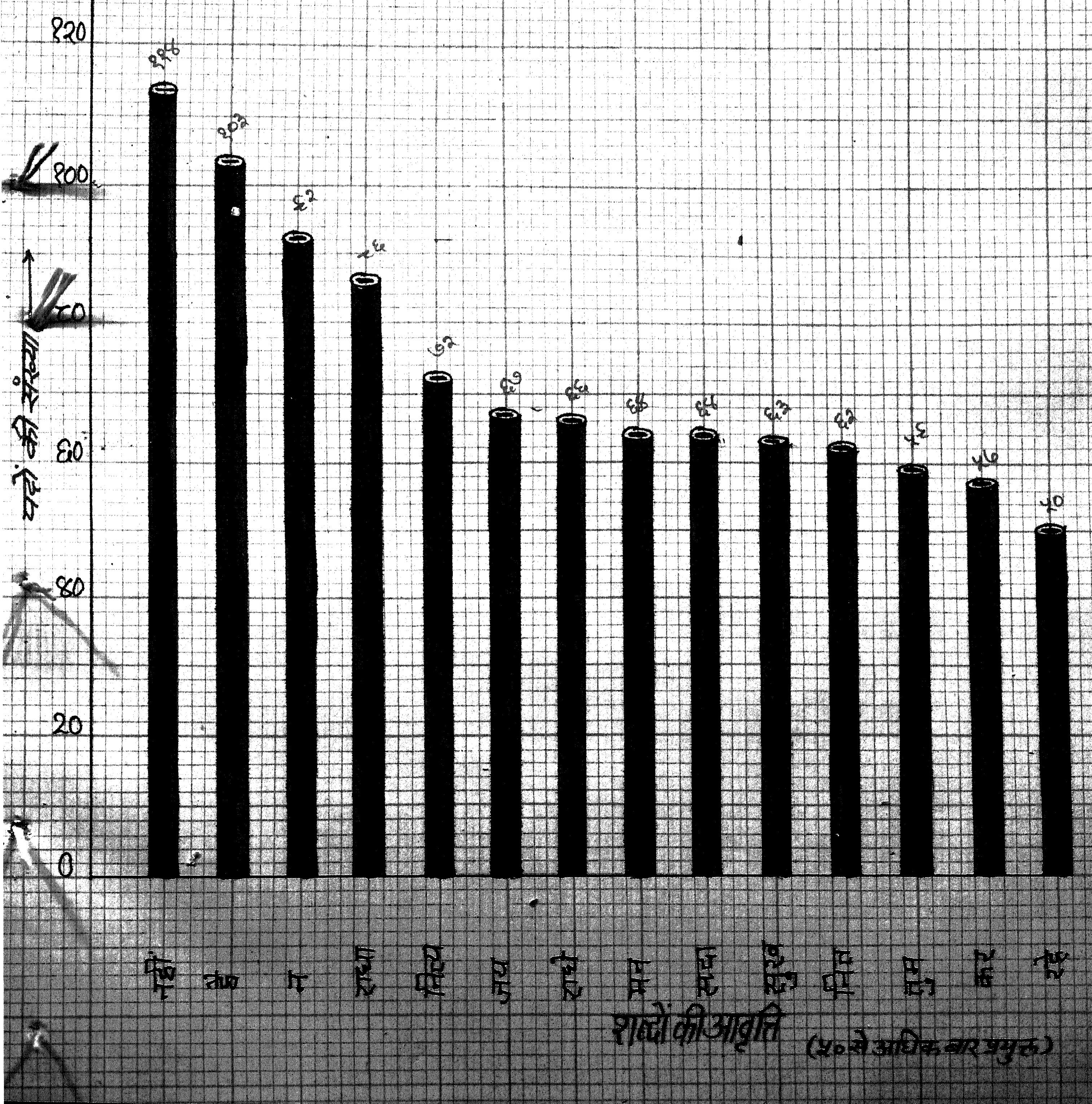

11.2. कल्याण के विशेषांकों का विवरण (पृष्ठ एवं प्रकाशित प्रतियाँ)

क्र०सं०	विशेषांक का नाम	प्रकाशित होने का मास एवं संवत्	पृ० संख्या	प्रकाशित प्रतियाँ
1.	(प्रथम वर्ष विशेषांक नहीं निकला)			
2.	भगवन्नामाङ्क	श्रावण 1984	110	11,000
3.	भक्तांक	.. 1985	246	15,000
4.	श्रीमद्भगवद्गीतांक	.. 1986	505	16,000
5.	श्रीरामायणांक	.. 1987	592	20,250
6.	श्रीकृष्णांक	.. 1988	512	17,500
7.	ईश्वरांक	.. 1989	618	21,000
8.	शिवांक	.. 1990	666	22,500
9.	शक्ति अंक	.. 1991	784	25,600
10.	योगांक	.. 1992	884	34,100
11.	वेदान्तांक	.. 1993	744	36,500
12.	संत-अंक	.. 1994	874	35,000
13.	मानसांक	.. 1995	928	93,600
14.	गीतातत्वांक	.. 1996	1072	50,600
15.	साधनांक	.. 1997	792	55,600
16.	श्रीमद्भागवतांक	.. 1998	1072	65,100
17.	संक्षिप्त महाभारतांक	.. 1999	937	70,600
18.	संक्षिप्त वाल्मीकि रामायणांक	आश्विन2000	536	57,600
19.	संक्षिप्त पद्मपुराणांक	श्रावण2001	360	90,100
20.	गो-अंक	आश्विन2002	744	1,01,300
21.	संक्षिप्त मार्कण्डेय ब्रह्मपुराणांक	माघ 2003	725	1,01,400

11.3

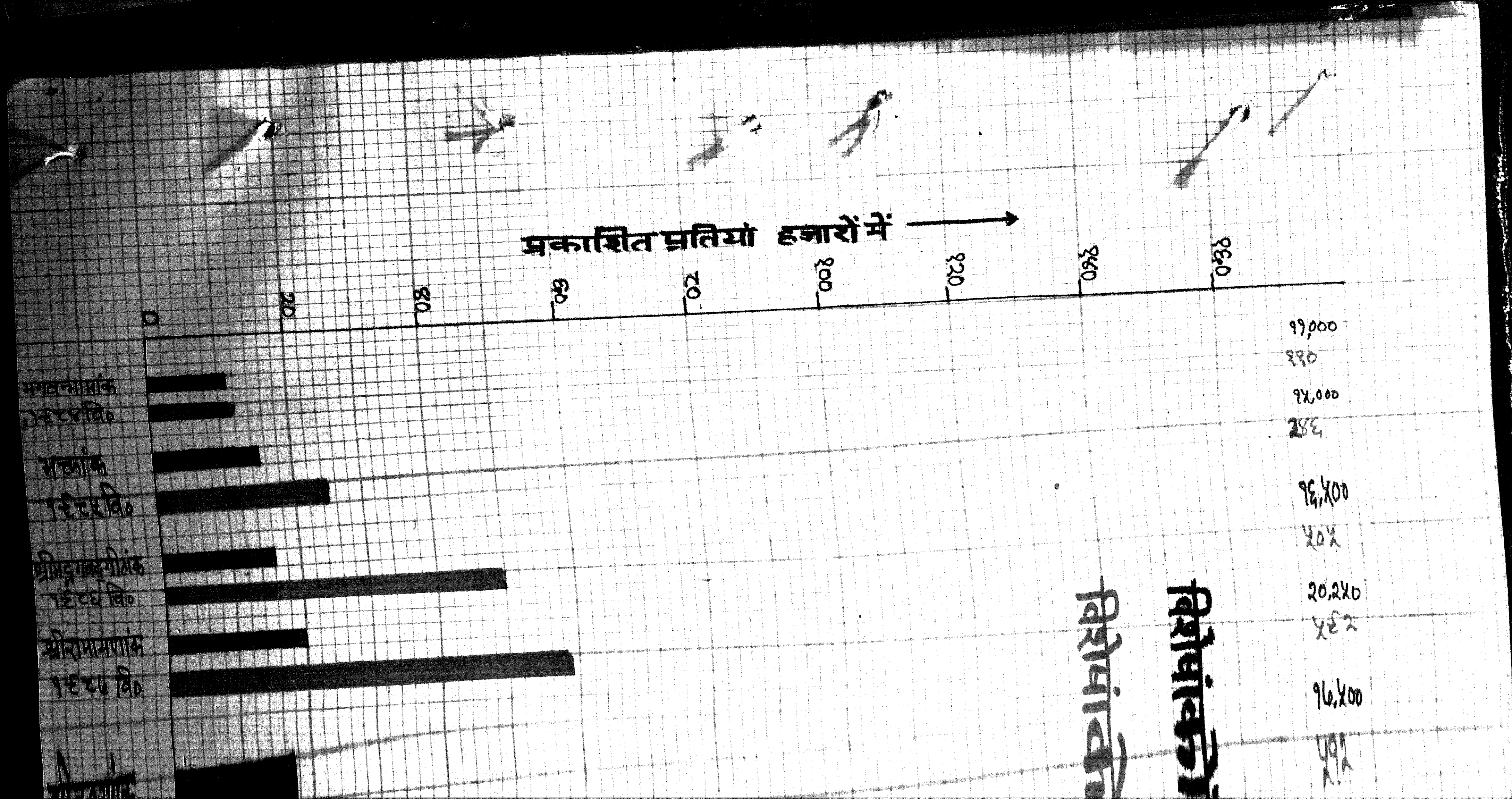

प्रकाशित प्रतियां हजारों में
भक्तांक
श्रीमद्भगवद्गीतांक
श्रीरामायणांक

22.	नारी अंक	सन्	2004	800	1,15,900
23.	उपनिषद् अंक	..	2005	776	1,07,000
24.	हिन्दू संस्कृति अंक	..	2006	904	1,25,000
25.	संक्षिप्त स्कन्द पुराणांक	..	2007	882	1,10,000
26.	भक्त चरितांक	..	2008	80[illegible]	1,20,400
27.	बालकांक	..	2009	800	1,1[illegible],900
28.	संक्षिप्त नारदविष्णु	..	2010	800	1,19,900
29.	पुराणांक				
29.	संत-वाणी-अंक	..	2011	800	1,23,700
30.	सत्कथांक	..	2012	704	1,21,100
31.	तीर्थांक	..	2013	704	1,20,000
32.	भक्ति अंक	..	2014	703	1,15,000
33.	मानवतांक	..	2015	704	1,15,000
34.	संक्षिप्त देवी भागवतांक	..	2016	704	1,25,000
35.	संक्षिप्त योगवासिष्ठ अंक	..	2017	700	1,31,000
36.	संक्षिप्त शिव पुराणांक	..	2018	704	1,51,000
37.	संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्त पुराणांक	..	2019	602	1,41,000
38.	श्रीकृष्णवचनामृतांक	..	2020	692	1,35,000
39.	श्रीभगवन्नाम-महिमा प्रार्थनांक	..	2021	700	1,42,000
40.	धर्मांक	..	2022	700	1,50,000
41.	श्रीरामवचनामृतांक	..	2023	704	1,50,000
42.	उपासनांक	..	2024	700	1,50,000
43.	परलोकऔरपुनर्जन्मांक	..	2025	696	1,60,000
44.	अग्निपुराण,गर्ग संहितांक	..	2026	700	1,65,000

11.3 पद रत्नाकर में प्रयुक्त पंक्तियों का विवरण

पद रत्नाकर (1557) में कुल 19,670 पद पंक्तियाँ है । प्रति पद 12.6 पंक्तियाँ प्रयोग में लायी गयी है । पंक्तियों का विवरण निम्न लिखित है :—

पंक्ति संख्या	पद संख्या	कुल पंक्तियाँ
8	327	2,616
4	207	0,828
10	195	1,950
6	183	1,098
12	119	1,428
14	81	1,224
16	78	1,248
2	54	108
22	41	902
18	36	648
20	34	680
26	18	468
24	17	408
28	17	476
9	17	153
7	11	77
32	10	320
40	10	400
15	7	105
30	7	210

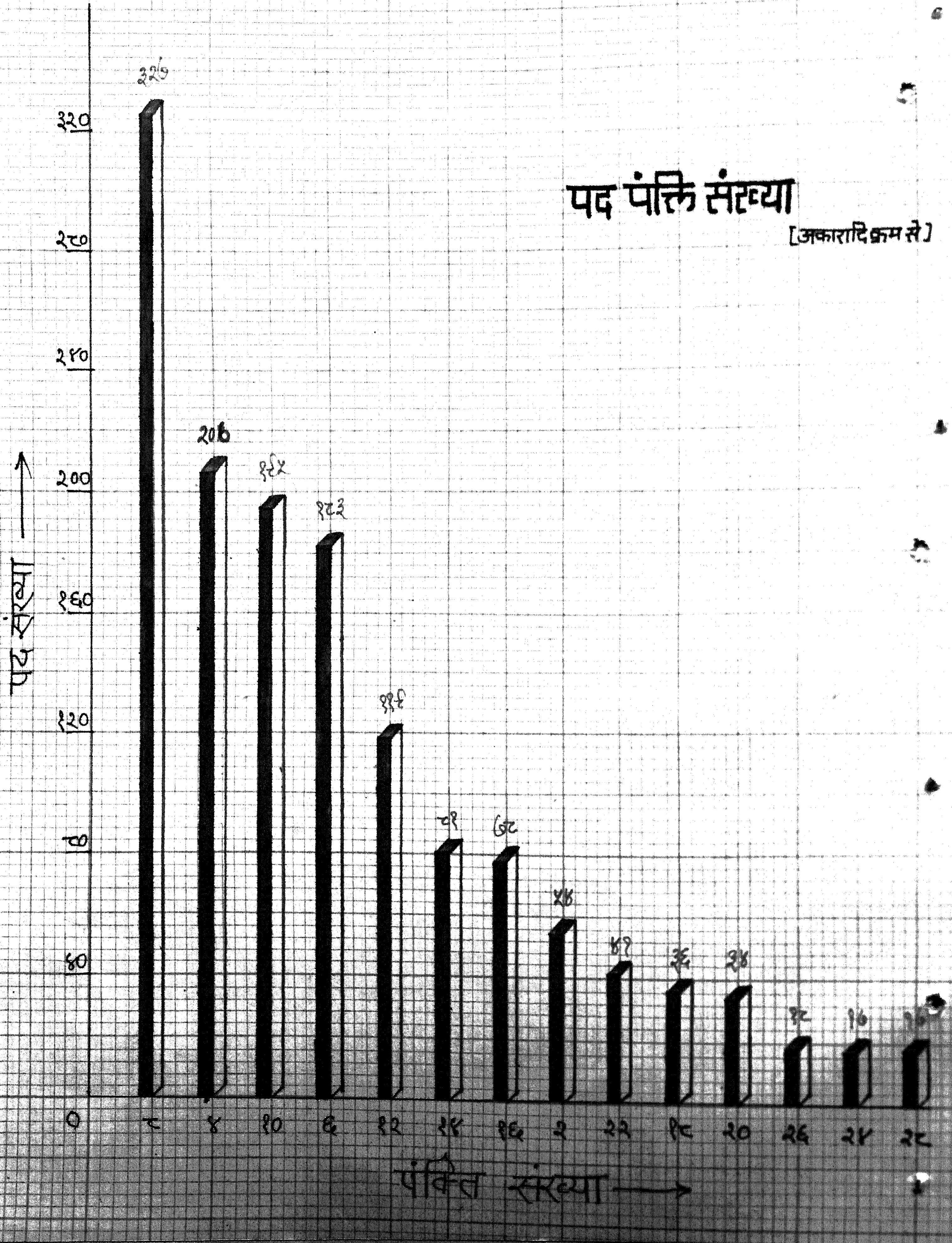
पद पंक्ति संख्या
[अकारादि क्रम से]
पद संख्या
३२०
२८०
२४०
२००
१६०
१२०
८०
४०
0
८
४
१०
६
१२
१४
१६
२
२२
१८
२०
२६
२४
२८
पंक्ति संख्या

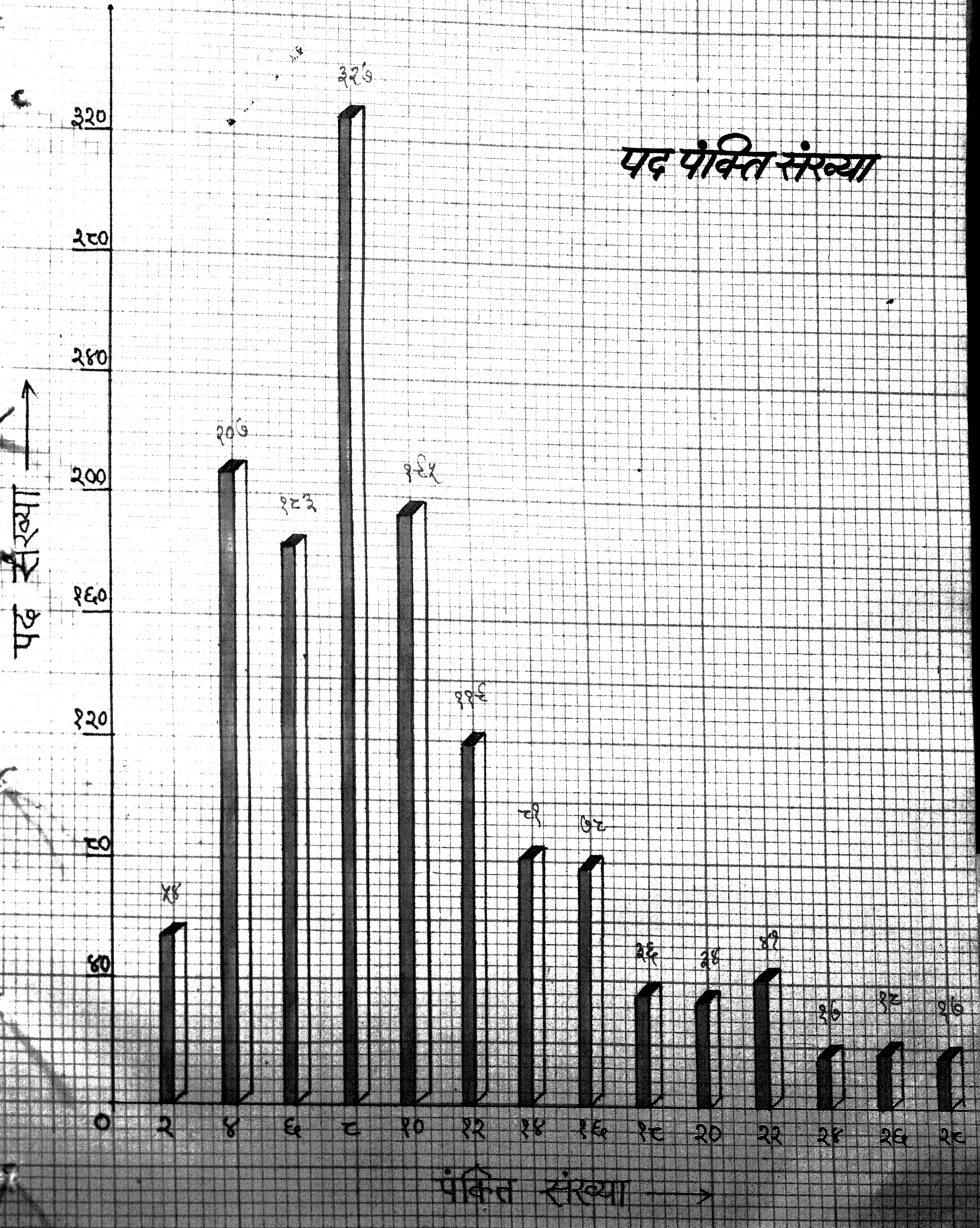
पद पंक्ति संख्या
पद संख्या
पंक्ति संख्या
३२०
२८०
२४०
२००
१६०
१२०
८०
४०
०
२
४
६
८
१०
१२
१४
१६
१८
२०
२२
२४
२६
२८
२०७
१८३
३२७

1	2	3
23	6	138
34	6	204
13	6	78
5	6	30
36	5	180
48	4	192
46	4	184
42	4	168
38	4	152
17	4	68
56	3	168
21	3	63
19	3	57
11	3	33
27	2	54
62	2	124
66	2	132
68	2	136
3	1	3
25	1	25
31	1	31
33	1	33
45	1	45
50	1	50
52	1	52

1	2	3
58	1	58
60	1	60
72	1	72
83	1	83
88	1	88
94	1	94
124	1	124
160	1	160
200	1	200
484	1	484
546	1	546

11.3- पद संरचना में प्रयुक्त पद के प्रथम अक्षर का विवरण

(प्रथम पद आवृत्ति)

पद का प्रथम अक्षर	प्रथम पद में प्रयोग संख्या
स	160
ब	138
[illegible]	132
[illegible]	114
[illegible]	94
[illegible]	84
[illegible]	7[illegible]
म	76
द	75
[illegible]	72
[illegible]	52
[illegible]	47
श	47
[illegible]	43
ट	35
आ	32
न	22
ख	19
व	15
म	15

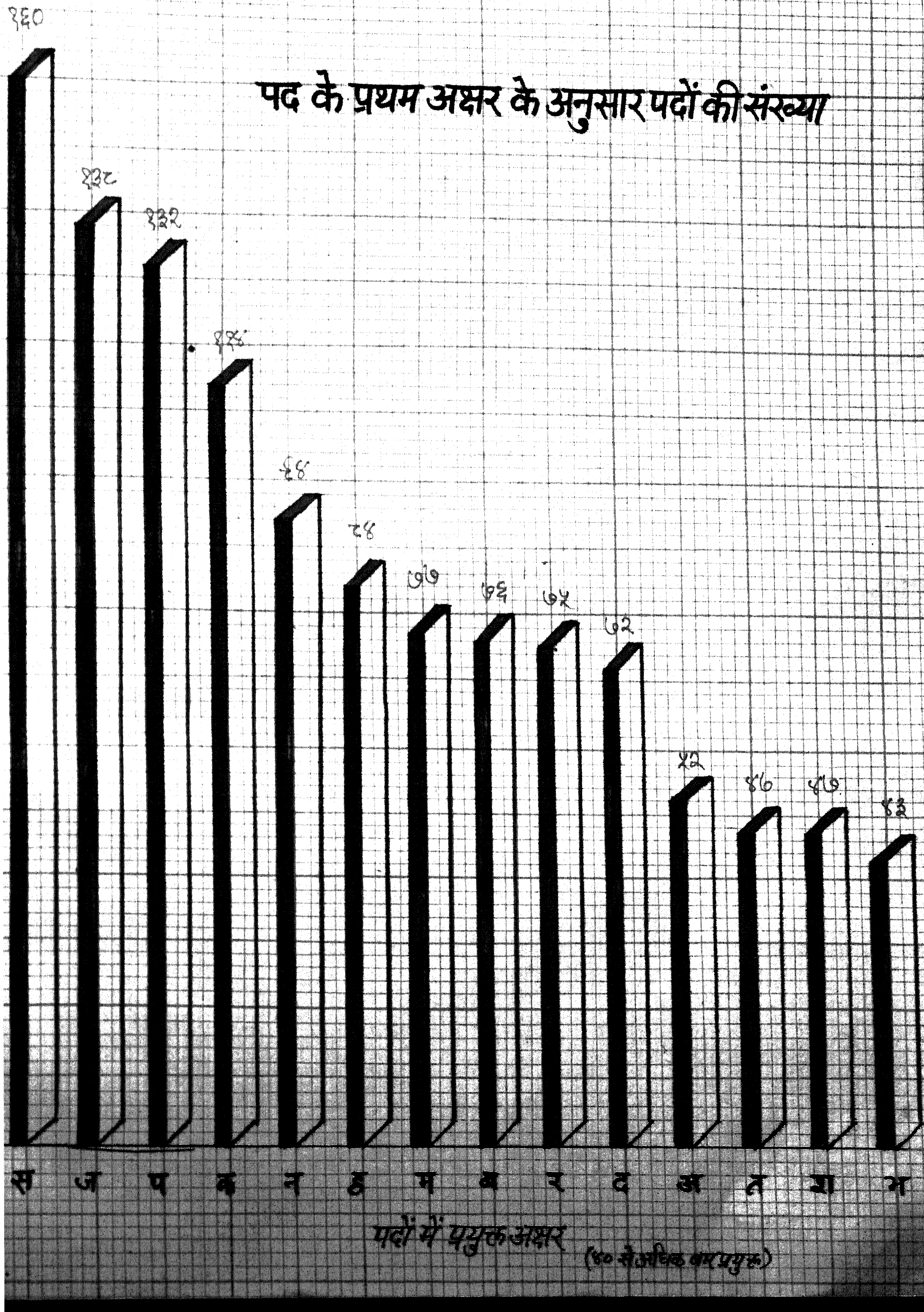
पद के प्रथम अक्षर के अनुसार पदों की संख्या
१६०
१३८
१३२
११४
९४
८४
७७
७६
७५
७२
५२
४६
४७
४३
स ज प क न ह म ब र द अ त ग भ
पदों में प्रयुक्त अक्षर
(४० से अधिक बार प्रयुक्त)

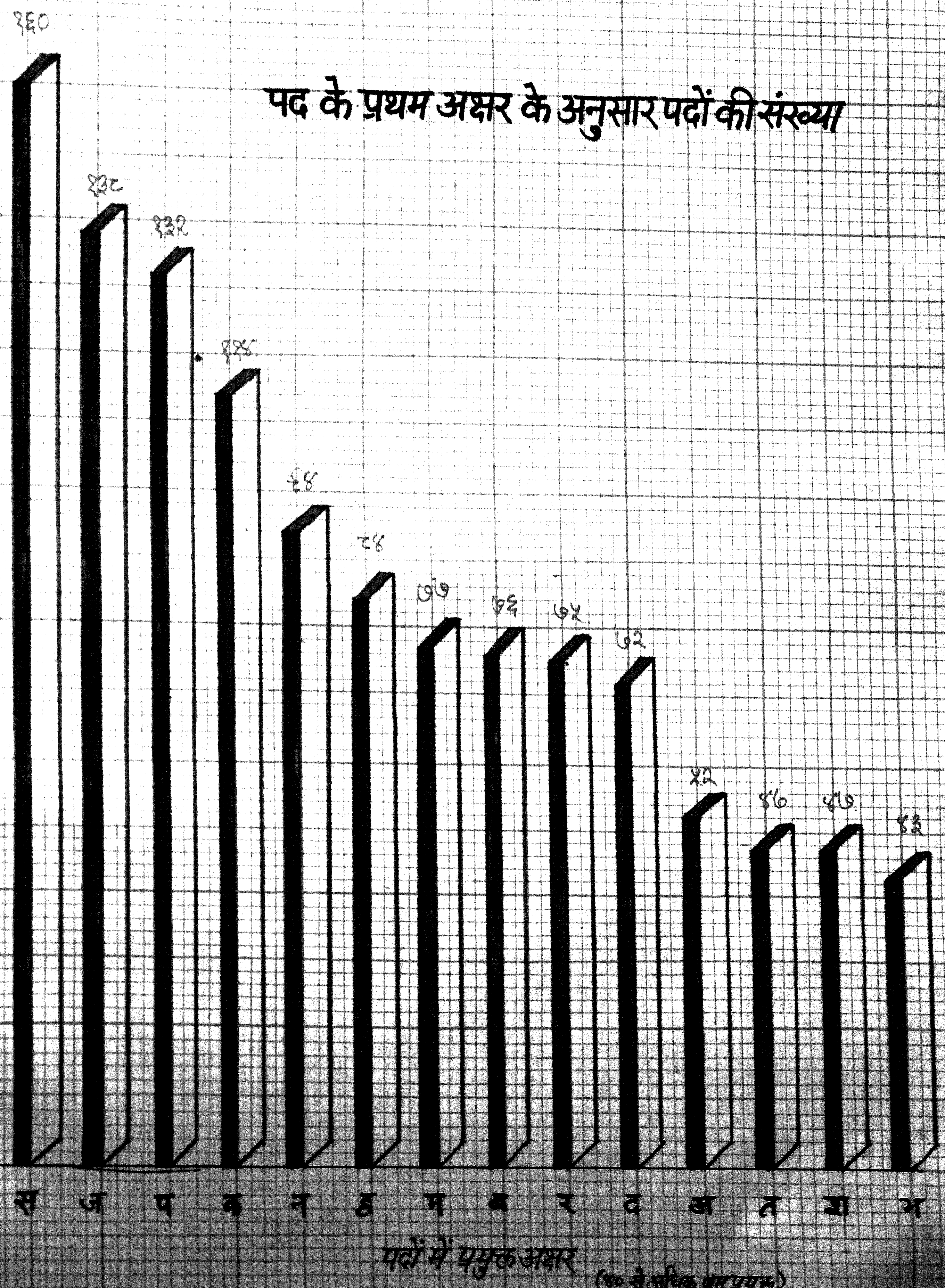
पद के प्रथम अक्षर के अनुसार पदों की संख्या
१६०
१३८
१३२
११६
९४
८४
७७
७६
७५
७२
५२
४६
४७
४३
स ज प क न ह म ब र द अ त य भ
पदों में प्रयुक्त अक्षर
(४० से अधिक बार प्रयुक्त)

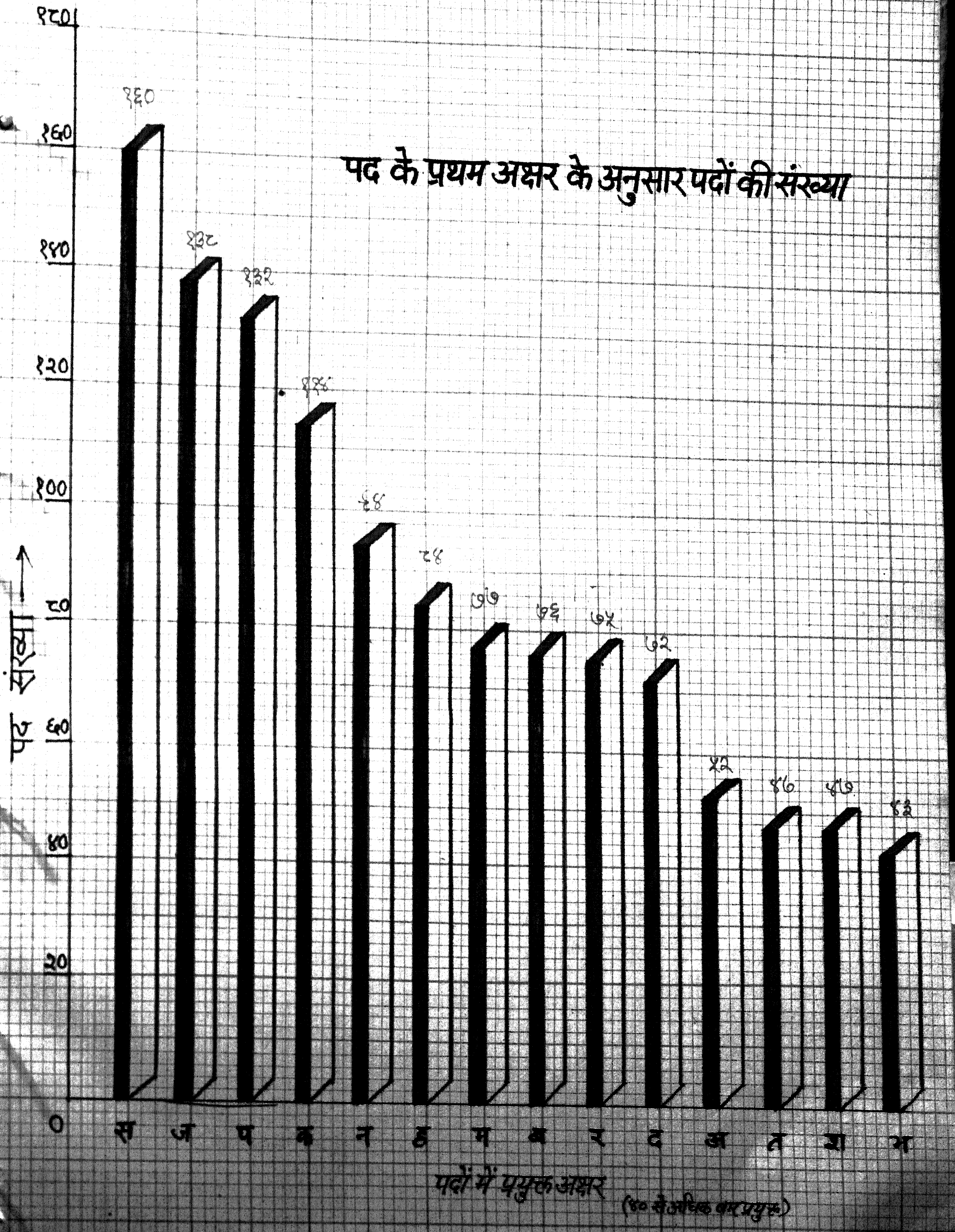
पद के प्रथम अक्षर के अनुसार पदों की संख्या
पद संख्या →
१८०
१६०
१४०
१२०
१००
८०
६०
४०
20
0
१६०
१३८
१३२
९४
८४
७७
७६
७५
७२
५२
स ज प क न ह म ब र द अ त ग भ
पदों में प्रयुक्त अक्षर
(४० से अधिक बार प्रयुक्त)

1	2
अ	14
ए	14
इ,ई	13
उ	13
ख	11
[illegible]	8
[illegible]	7
य	7
[illegible]	5
ओ	3
.	3
ऐ	2
ध	2
[illegible]	1
क	1
ड	1

11.3 पद रचनाकार प्रयुक्त पद सम्बोधन का प्रयोग

(अधिकाधिक आवृत्ति)

पद सम्बोधन	आवृत्ति
नाथ	54
प्रभु	[illegible]
प्रियतम	31
प्यारे	29
प्रिये	27
सखी	27
सखि	26
राधे	26
ऊधो	22
प्रभो	15
भगवान	13
मैया	13
उद्धव	12
हरि	12
प्राणाधार	10
प्रियतमे	10

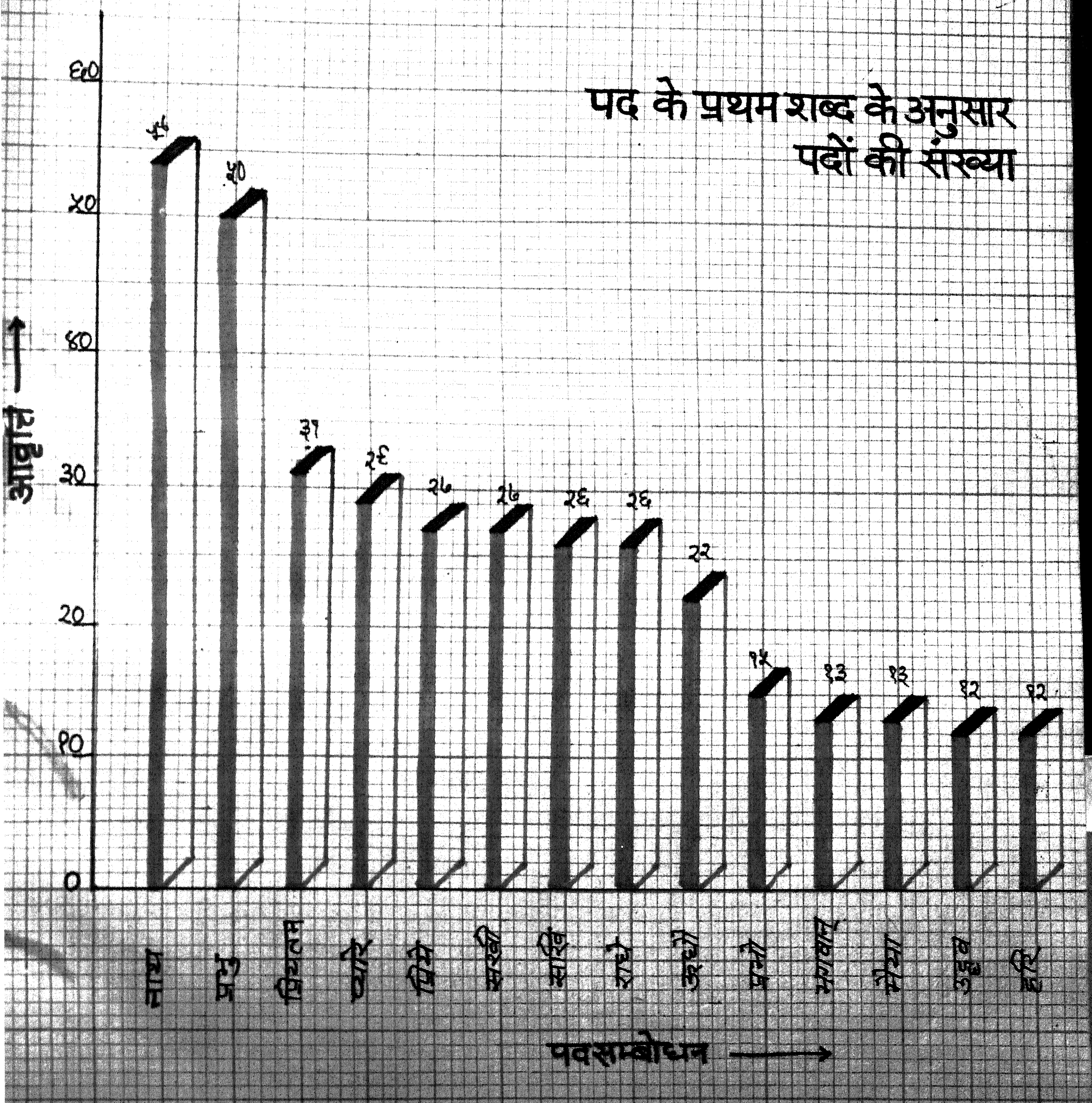
पद के प्रथम शब्द के अनुसार
पदों की संख्या
आवृत्ति
पदसम्बोधन
0
10
20
30
40
50
60
५६
५०
३१
२९
२८
२८
२६
२६
२२
१५
१३
१३
१२
१२

11.4

पद रत्नाकर के पदों में प्रयुक्त रागों की आवृत्ति

(रागों का प्रतिशत)

क्र०सं०	राग का नाम	आवृत्ति	क्र०सं०	राग का नाम	आवृत्ति
1.	भैरवी	118	2.	लावनी	112
3.	भीम पलासी	79	4.	पीलू	79
5.	जंगला	75	6.	भैरव	60
7.	देस	59	8.	बागेश्वरी	56
9.	परज	55	10.	आसावरी	53
		योग - 746। 48% ।			
11.	मांड	52	12.	टोड़ी	49
13.	बिहाग	43	14.	शिवरंजनी	41
15.	इमन	36	16.	दोहा	31
17.	काफी	31	18.	खमाज	30
19.	कलिंगड़ा	26	20.	खम्भा	26
		योग - 365। 23% ।			
21.	सोहनी	22	22.	भूपाली	19
23.	सारंग	18	24.	मालकोंस	17
25.	गजल	17	26.	आरती	13
27.	हमीर	12	28.	केदार	12
29.	झिंझोटी	11	30.	जोगिया	10
		योग-151। 10% ।			

नोट:- क्र०सं० 1 से 10 तक के रागों का रेखांकन किया गया है।

राग आवृत्ति

[उन रागों की आवृत्ति जिनमें ४० से अधिक पद रचे गए]

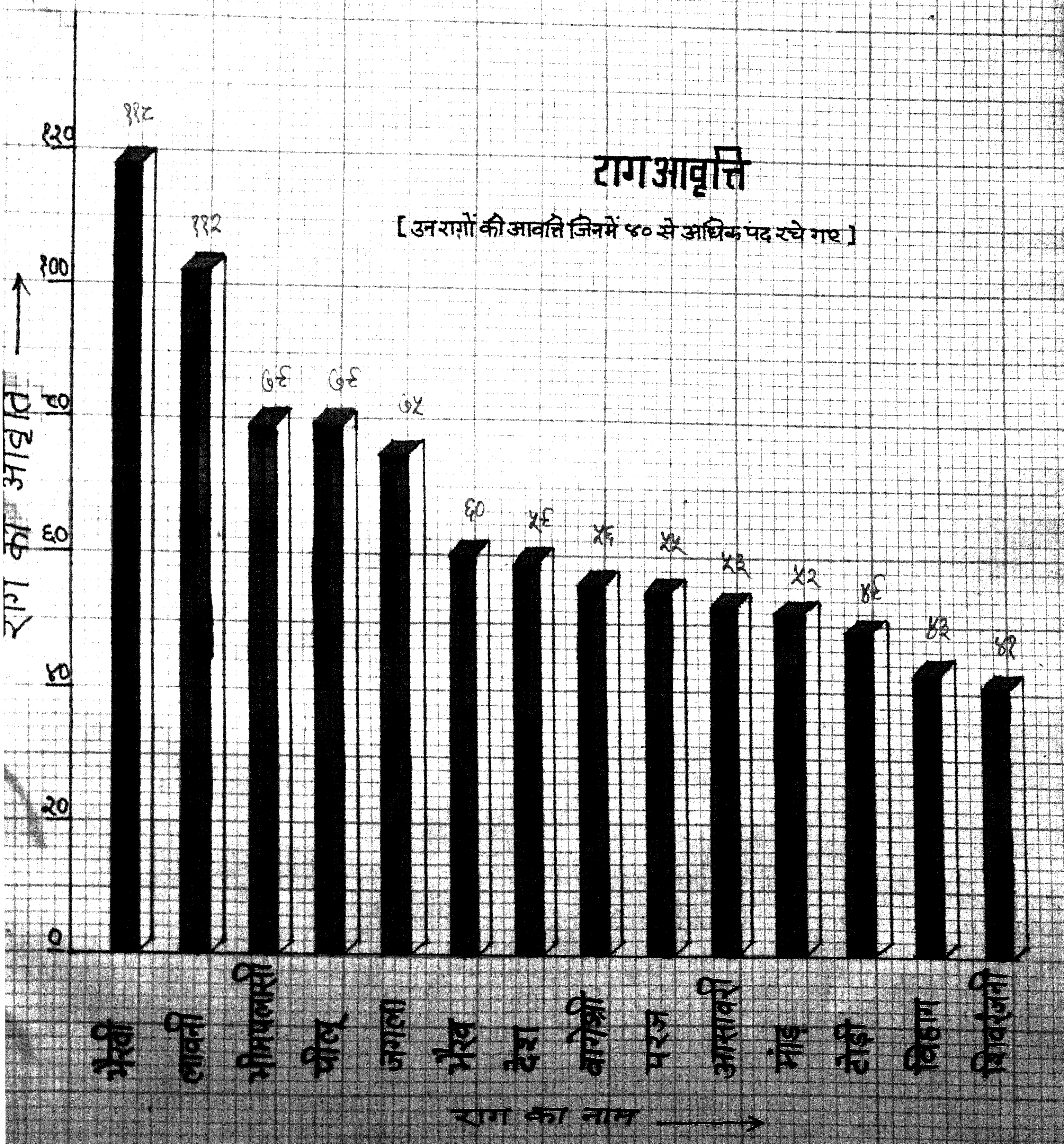

1	2	3	1	2	3
31.	बहार	8	32 .	बिलावल	8
33.	मल्हार	8	34.	नट	8
35.	पूर्वी	7	36.	धनाश्री	7
37.	कल्याण	7	38.	केदार	6
39.	पूरिया	6	40.	[illegible]	6
41.	गौरी	6	42.	अड़ाना	6
43.	गौड़सारंग	6	44.	गुनकली	6
45.	मधुवन्ती	5	46.	ललित	5
47.	रसिया	5	48.	रामकली	5
49.	जैजैवन्ती	5	50.	खट	5
51.	कान्हरा	5	52.	बिहागरा	5
53.	तिलंग	5	54.	यमन	4
55.	[illegible]	4	56.	जौनपुरी	4
57.	गूजरी	4	58.	कामोद	4
59.	शंकरा	4	60.	पटदीप	4
61.	गौड़ मल्हार	4	62.	हिंडोल	3
63.	विभास	3	64.	[illegible]	3
65.	रागेश्वरी	3	66.	प्रदीप	3
67.	देवगांधार	3	68.	जौन	3
69.	गारा	3	70.	मालव	3
71.	श्याम कल्याण	3	72.	[illegible]	2
73.	भूपाल तोड़ी	2	74.	होरीकाफी	2
75.	भूपाल	2	76.	[illegible]	2
77.	शुद्ध सारंग	2	78.	बिलासखानी	2
79.	पीलु बरवा	2	80.	पहाड़ी	2
81.	नारायणी	2	82.	मालगुंजी	2

1	2	3	1	2	3
83.	दुर्गा	2	84.	तिलंग	2
85.	तिलक कामोद	2	86.	जैत कल्याण	2
87.	छाया नट	2	88.	चन्द्रकोश	2
89.	जोगिया	2	90.	अहीर भैरव	2
91.	खंबावती	2	92.	मालगुंज	2
93.	मलार	2	94.	जौनपुरी तोड़ी	2
95.	मेघरंजनी	2	96.	सूहा बिलावल	2
97.	आभोगी	2	98.	हंस नारायणी	2
99.	भूप कल्याण	2	100.	राग विलम्बित	2
101.	हंसध्वनि	1	102.	सोरठ	1
103.	सिंदूरा	1	104.	शंखध्वनि	1
105.	शिवभैरव	1	106.	शनि आरती	1
107.	वृन्दावनीसारंग	1	108.	बिलास तोड़ी	1
109.	सर्व बागेश्री	1	110.	बराड़ी	1
111.	राजकल्याण	1	112.	पहाड़ी	1
113.	बिहारी	1	114.	पलास	1
115.	प्रभाती	1	116.	सर्व बरज	1
117.	नूरसारंग	1	118.	नायकी	1
119.	[illegible]	1	120.	देवगिरि	1
121.	दिव्य हिंडोल	1	122.	दरबारी	1
123.	जोगी	1	124.	केसरी कल्याण	1
125.	जैत	1	126.	गौरव कल्याण	1
127.	गान्धारीतोड़ी	1	128.	[illegible]	1
129.	कीर्तन	1	130.	कौशिक कान्हड़ा	1
131.	चंपक	1	132.	कलावती	1
133.	[illegible]	1	134.	आनन्द	1
135.	हुसैना	1			

योग = 231 197

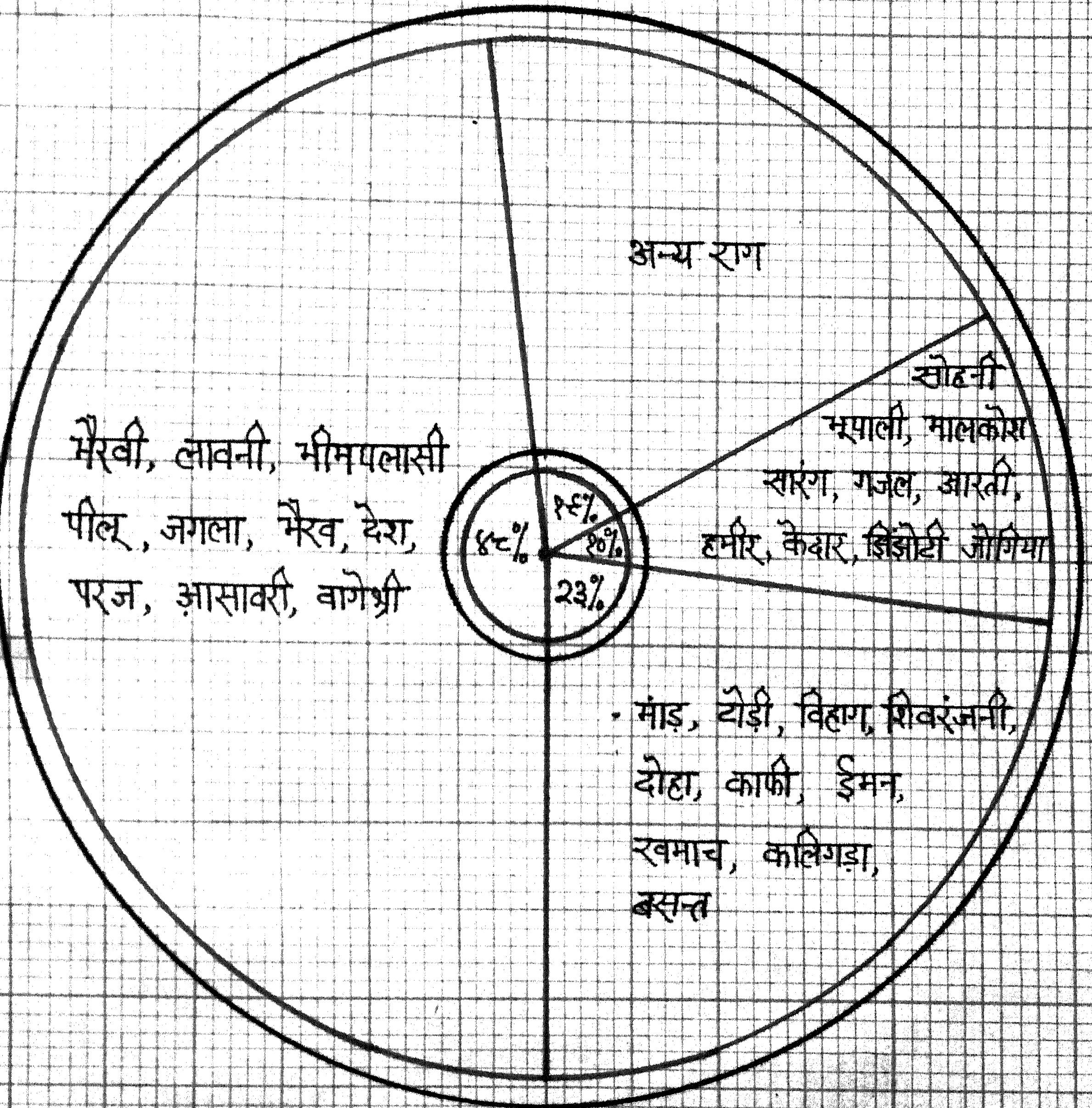

प्रयुक्त रागों का प्रतिशत

11.5- पद रत्नाकर में प्रयुक्त आरतियों का विवरण

नाम	पद क्रमांक	प्रयुक्त पद पंक्तियाँ	योग
श्री कृष्ण	790 तथा 791	22+27	49
श्रीराधा	792 तथा 793	18+18	36
गायत्री	892 तथा 893	22+14	36
शंकर	888	32	32
दुर्गाजी	891	28	28
महादेव	889	23	23
श्री राधा-माधव	794	22	22
श्रीराम	823	18	18
श्री जगदीश्वर	886	18	18
श्रीमद्भागवत्	894	18	18
श्रीदेवी भागवत	895	18	18
गोमाता	896	18	18
जानकी जी	824	14	14
श्रीनृसिंह भगवान्	887	14	14
श्री गणेश	890	14	14
श्रीमद्भगवतगीता	962	14	14
श्री हनुमान	825	10	10
श्री रामचरित मानस	1534	9	9

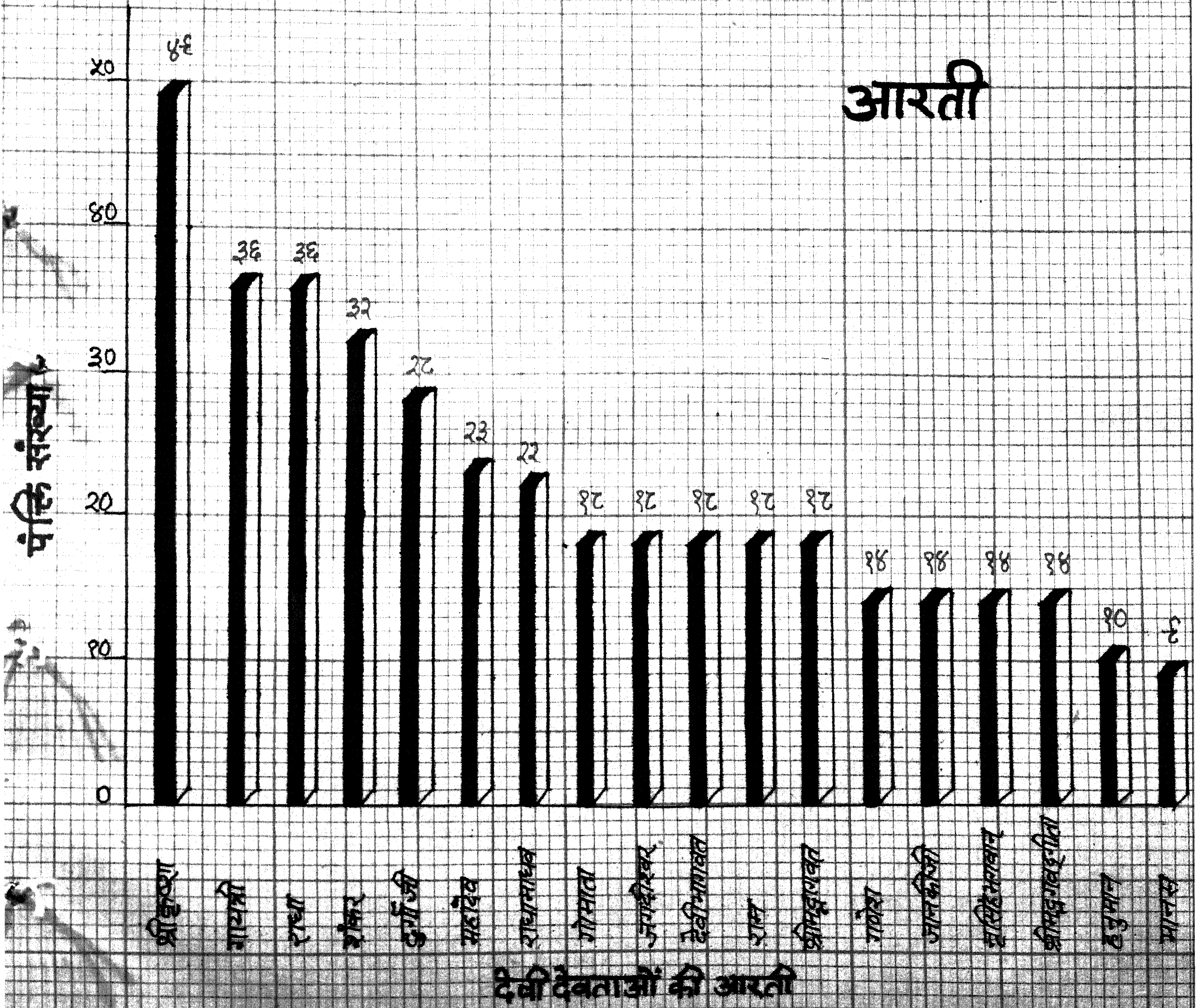

आरती
पंक्ति संख्या
० १० २० ३० ४० ५०
४९ ३६ ३६ ३२ २८ २३ २२ १८ १८ १८ १८ १८ १४ १४ १४ १४ १० ९
श्रीकृष्ण
गायत्री
राधा
शंकर
दुर्गा जी
महादेव
राधामाधव
गौमाता
जगदीश्वर
देवीभागवत
राम
श्रीमद्भागवत
गणेश
जानकी जी
नृसिंह भगवान
श्रीमद्भगवद्गीता
हनुमान
मानस
देवी देवताओं की आरती

11.6 - गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण

(1) रामचरितमानस

ड	श्लोक सं0	श्लोक पंक्ति	दोहा/सोरठा सं0	दोहा/सोरठा पंक्ति	छंद सं0	छंद पंक्ति	चौपाई संख्या	योग
0	7	18	395	790	60	240	2968	4016
0	3	8	327	654	13	52	2603	3317
0	2	8	58	116	33	94	516	734
[illegible]	2	8	34	68	3	12	301	389
0	3	12	63	126	8	64	526	608
	3	10	159	318	71	219	1118	1665
0	7	20	222	444	47	132	1177	1773
	27	84	1258	2516	233	773	9209	12,582

11.6- गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण

(1) रामचरितमानस

ड	श्लोक सं0	पंक्ति	दोहा/सोरठा सं0	पंक्ति	छंद सं0	पंक्ति	चौपाई संख्या	योग
0	7	18	395	790	60	240	2968	4016
0	3	8	327	654	13	52	2603	3317
10	2	8	58	116	33	94	516	734
80	2	8	34	68	3	12	301	389
70	3	12	63	126	8	64	526	688
1	3	10	159	318	71	219	1118	1665
0	7	20	222	444	47	132	1177	1773
	27	84	1258	2516	233	773	9209	12,582

11.6- गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण

(1) रामचरितमानस

काण्ड	श्लोक		दोहा/सोरठा		छंद		चौपाई	योग
	सं0	पंक्ति	सं0	पंक्ति	सं0	पंक्ति	संख्या	
बाल0	7	18	395	790	60	240	2968	4016
अयो0	3	8	327	654	13	52	2603	3317
अरण्य0	2	8	58	116	33	94	516	734
किष्कि0	2	8	34	68	3	12	301	389
सुन्दर0	3	12	63	126	8	64	526	688
लंका0	3	10	159	318	71	219	1118	1665
उत्तर0	7	20	222	444	47	132	1177	1773
योग	27	84	1258	2516	233	773	9209	12,582

काण्ड	[2] गीतावली पद	[2] गीतावली पंक्ति	[3] विनयपत्रिका पद	[3] विनयपत्रिका पंक्ति	[4] पद रत्नाकर पद	[4] पद रत्नाकर पंक्ति
बाल०	410	1012				
अयो०	89	862				
अरण्य०	17	182				
किष्कि०	2	16				
सुन्दर०	51	519				
लंका०	23	239				
उत्तर०	38	572				
योग	330	3402	279	3229	1557	19,620

तुलसीदास | पोद्दार जी

	ग्रन्थ का नाम	कुल पंक्ति संख्या	ग्रन्थ का नाम	कुल पंक्ति सं०
[1]	रामचरित मानस	12,582	पद रत्नाकर	19,620
[2]	विनय पत्रिका	3,221		
[3]	गीतावली	3,402		
	योग	19,205		19,620

11·16

गोस्वामी तुलसीदास एवं पोद्दार जी द्वारा रचित पंक्तियों का तुलनात्मक विवरण

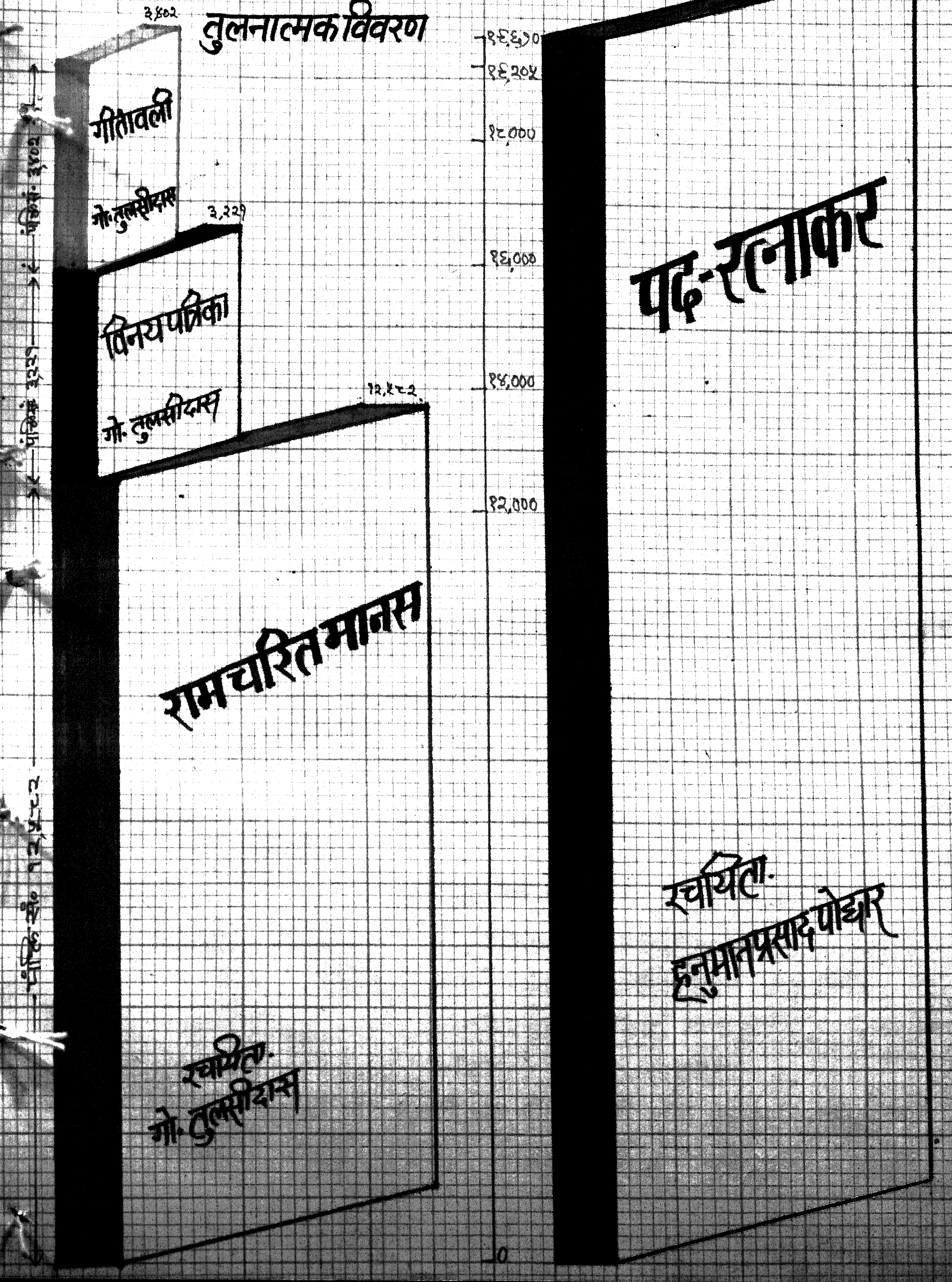

उ प सं हा र

व्यक्तित्व :

- श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व का प्रभाव
- व्यक्तित्व मापन तथा मूल्यांकन
- व्यक्तित्व की उपसंहृति
-

कृतित्व :

- तकनीकी अंग
- विशेषतायें
- ग्रन्थ

प्रश्नावली :

- इस युग को उनकी देन
- समाज/राष्ट्र पर प्रभाव
- उनके किस कार्य को पूरा किया जाय
- उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि
- समसामयिकता

मौलिकतायें :

- प्रामाणिक जीवन काल क्रम एवं घटनाक्रम
- व्यक्तित्व मापन, निर्धारण
- प्रश्नावली प्रयोग, विवादास्पद बिन्दु निर्णय
- कृतित्व-रचना प्रक्रिया, शब्दानुशीलन, लिपि का अध्ययन
- रेखांकन, चित्रांकन, सारणीयन

अनुगामी शोध दिशायें तथा शोधार्थी की अपेक्षा स्व अपूर्ति, स्वीकृतियाँ

व्यक्तित्व का प्रभाव

श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर शोधकार्य करते हुए यह निश्चित धारणा बनी कि ऐसी महान विभूतियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का आलंबन प्रेरणाप्रद है, मार्गदर्शक है तथा प्रोत्साहित करने वाला है उन साधकों को जो जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जागरूक हैं, उन संसारी प्राणियों को जो अपनी व्यस्तताओं तथा संसारी झंझटों में शान्ति का एक घूंट पीने के लिए आकुल-व्याकुल हैं, उस नई पीढ़ी को जो टूटते मान-मूल्यों एवं बिखरती सांस्कृतिक भूमि के संदर्भ में अपने आपको संबल एवं आधार-विहीन अनुभव कर रहे हैं तथा भटक कर हिंसा या मादक द्रव्यों की शरण ले रहे हैं कि किन्तु यह कार्य सरल नहीं है तथा ऐसे महान व्यक्तित्व की भावभूमि को यथातथ्य पकड़ पाना और भी दुष्कर है। यह अनुभव के क्षेत्र की बात है तथा साधारण अध्येता इस ऊँचाई तक कैसे पहुँच सकता है। अस्तु, उपसंहार की प्रणति में कैसे कहा जाय कि विषय का सर्वांगीण अध्ययन- अनुशीलन संभव हुआ है। अपनी ओर से भरसक प्रयास किया गया है, यही विनम्र निवेदन किया जा सकता है। यह अवश्य है कि प्रस्तुत शोधकार्य के माध्यम से महामहिम श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रति प्रीति-प्रतीति एवं श्रद्धाभक्ति जागृत हुयी है तथा ऐसा लगता है कि आगे कुछ न कुछ इस सन्दर्भ में कार्य करने की ललक बनी रहेगी और अध्ययन की अन्यान्य दिशा में कार्य होता रहेगा। यों शोध कार्य की सार्थकता भी इसी में है कि शोध जीवन का लक्ष्य बन जाये तथा शोध उपाधि, शोधकार्य का भी पाथेय ही सिद्ध हो। व्यक्तित्व के निर्धारण की दिशा में पाश्चात्य एवं पौर्वात्य मनीषियों के मतों के विवेचन के साथ भागवत व्यक्तित्व का विवेचन किया गया है।

संत व्यक्तित्व का निर्धारण श्रीमद् भगवद् गीता, मानस, श्रीमद्भागवत् आदि ग्रन्थों के आधार पर किया गया है । श्री पोद्दार जी ने स्वयं व्यक्तित्व निर्धारण की दिशा में पहल की है । अतएव अन्यान्य स्त्रोतों से व्यक्तित्व निर्धारण के मापक की श्री पोद्दार जी के मानों से तुलना की जा सकी है ।

व्यक्तित्व मापक :-

श्री पोद्दार जी से ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी साधना का अनुशीलन किया है तथा उसके संदर्भ में व्यक्तित्व के मापक निर्धारण किये है । उन्होंने मानव व्यक्तित्व, साधक व्यक्तित्व, भक्त व्यक्तित्व, संत व्यक्तित्व किंवा कृष्ण व्यक्तित्व के वर्गीकरण के संदर्भ में व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है । उनके मानक के आधार पर ही उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया गया है । यह कहकर कि इस मूल्यांकन की दृष्टि से श्री पोद्दार जी पूर्ण खरे उतरे हैं, कोई विशेष वक्तव्य नहीं दिया जा सकता । वास्तविकता यह है कि श्री पोद्दार जी अपनी कथनी और करनी में पूर्णतया एक थे और यह उनके व्यक्तित्व की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता थी । इसलिये जो मानक उन्होंने निर्धारित किये थे, वे उनके आचरण के साधारण अंग बने हुए थे । उन्हें उनके लिये कोई प्रयास करने का प्रश्न ही नहीं उठता था । इस प्रकार व्यक्तित्व की आदर्श व्याख्या उनके जीवन की साधारण चर्या थी । उन्हें महामानव कहें, महापुरुष कहें, युग पुरुष कहें, सब कुछ हम अपनी दुर्बलताओं एवं अशक्ति के संदर्भों में ही कहते हैं । उन्हें यह सब कुछ सहज था । उनके मानवीय व्यक्तित्व की कोई ऐसी दुर्बलतायें कहीं संदर्भित नहीं है जो उन्हें परिताप एवं प्रायश्चित की वेदना देतीं तथा उनकी अनुगामी व्यक्तियों पर कालिमा ला सकतीं । कहना यह चाहिये कि श्री पोद्दार जी जन्म से एक संस्कारी व्यक्ति थे तथा उनको मानवीय आदर्शों की प्रतिष्ठा में सहज गति मिली, कहीं कोई प्रयास नहीं करना पड़ा ।

व्यक्तित्व निर्धारण की कठिनाइयाँ होती हैं । अथवा व्यक्तियों के अभिमत पूर्वाग्रह पूर्ण होते हैं किन्तु श्री पोद्दार जी के संदर्भ में कुछ परिस्थितियाँ ऐसी बनी कि पूर्वाग्रहीत अभिमत का प्रश्न ही नहीं उठा । अपने जीवन काल में उन्होंने सावधानी पूर्वक अपनी प्रशंसा, अभिनन्दन आदि के अवसर नहीं आने दिए । ऐसे आयोजनों की प्रस्तावना को ही आग्रह पूर्वक निरस्त करा दिया उनके निर्वाण के पश्चात् श्री श्रद्धा-सम्मान के भाव एवं भावनायें जनमानस में फूट पड़ी और "भाई जी पावन स्मरण" जैसे वृहद ग्रंथ का प्रकाशन हुआ । इन अभिमतों में भी तत्कालीन भावावेश की स्थिति हो सकती थी । किन्तु प्रश्नावली के द्वारा अनुना संकलित सामग्री पूर्णतया निष्पक्षीय एवं पूर्वाग्रह प्रश्नावली से उन्हीं तथ्यों की पुनरावृत्ति हुई है । जो "भाई जी [रचित है] पावन स्मरण" में है । यह निश्चय ही बड़े हर्ष का विषय है कि एक स्वर से सब उनकी प्रशंसा करते है और उनके अनुग्रह के प्रति नतमस्तक होते है । श्री पोद्दार जी का महिमामय व्यक्तित्व इसी उच्चकोटि का है । यही कामना की जानी चाहिए । कि जन-जन उनसे प्रेरणा ले तथा आत्म कल्याण के मार्ग में अग्रसर हो । [व्यक्तित्व की उपसंहृति] भाई जी के अद्भुत अलौकिक व्यक्तित्व को समझने के लिये उनके साधनागत व्यक्तिगत अनुभवों का अनुशीलन करना आवश्यक होगा । भगवान् का साक्षात्कार उनको हुआ । उन्हें परिचय दिया । उनमें भगवत्सत्ता प्रकट हुई आदि प्रसंग रोमांचक एवं कुतूहल पूर्ण है । उनके व्यक्तित्व की यही उच्च उप-संहृति है ।

भाई जी भगवान् का परिचयप्राप्त करने की बात करते हुये [करते हुए] कहते है -

"....पर मैंने कुछ श्रद्धा से जो कुछ समझ पाया है और भगवान् श्री कृष्ण, श्री राधा और श्री गोपाङ्गनाओं ने अनन्त कृपापूर्वक मुझ नगण्य को अपना जैसा जो कुछ परिचय प्रदान किया है, उसके अनुसार और विशेष कर राधामाधव की अहैतुकी कृपा से मेरी दृष्टि में —

[1] श्री कृष्ण परात्पर ब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तम साक्षात् भगवान् हैं ।

[2] श्री राधा उन्हीं भगवान् श्री कृष्ण की स्वरूपभूता उनसे नित्य अभिन्न नित्य शक्ति हैं ।

[3] श्री गोपाङ्गनाएँ श्री राधा का ही अनुसरण करने वाली उन्हीं की कायव्यूह रूपा भगवद् की ही शक्तियाँ है ।x

उन्हें भगवद्दर्शन तथा लीला में सम्मिलित होने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है । संत की यह उच्चतम स्थिति दुर्लभ ही होती है ।

"मन ने शत-शत विविध विचित्र लीलाएँ एवं श्री राधाकृष्ण की अनूप रूप-माधुरी देखी, सखी और किसी-किसी लीला में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त किया......."0

"संत क्या करते है तथा उच्चकोटि के संत कौन है? इस मानक के अन्तर्गत श्री पोद्दार जी की सम्पूर्ण जीवन लीला आती है । उनके जीवन का लक्ष्य और जीवन का कृतित्व असंख्य प्राणियों का उद्धार करना था । अनेक संदर्भ ऐसे हैं जिनमें इस तथ्य की ओर स्पष्ट संकेत ही नहीं किये गये प्रत्युत प्रसंग वशात् स्पष्ट उल्लेख किया गया है । कतिपय संदर्भ अवलोकनीय है ——

"पाठक-पाठिकागण इन पुण्य पुराणों के सार को पढ़कर लाभ उठावें और लोक-परलोक में सुखशान्ति और मानव जीवन के परम और चरम लक्ष्य भगवान् को प्राप्त करें ।"x

---

[1] x श्री राधा जन्माष्टमी महोत्सव प्रवचन 3.9.1965 की मुद्रित प्रति सेपु

[2] 0 पद रत्नाकर सं0 - 2035, निवेदन पृ0 ५.

[3] x नारद-विष्णु-पुराण-अंक का0 54 पृ0 800.

भगवान् के दर्शन होने पर भगवान् ने जो आदेश दिये थे, उनमें एक आदेश जगत् का भला करने का था ।

"जगत् का कुछ भला करना हो तो भेद छोड़कर नाम का प्रचार कर लोगों से कह दे कि इस काल में नाम से ही सब कुछ हो जायेगा । मेरे अवतार में भी नाम ही हेतु होगा ।"[0]

श्री पोद्दार जी प्राणियों के उद्धार की इस कुंजी को प्राप्त कर नाम के प्रचार-प्रसार में लग गये ।

कल्याण के अंकों में "श्री भगवन्नाम जप के लिये सादर प्रार्थना" विशेष स्तम्भ नियमित रूप से [विशेष नियमित रूप से] निकलता था । गीता प्रेस में "नामजप विभाग" खोला गया था जहाँ प्राप्त सूचनाओं के आधार पर नामजप का विवरण रखा जाता था । लगभग 20करोड़ नाम जप का वार्षिक लक्ष्य बन जाता था । गीतावाटिका में अखण्ड नामकीर्तन तथा अखण्ड मानस पाठ का आयोजन उनके द्वारा प्रारम्भ हुआ था जो वर्षों तक लगातार चलते हुये आज भी यथावत् चल रहा है ।

श्रीगीता रामायण प्रचार संघ तथा साधक संघ की भी स्थापना की गई थी । इनका भी पृथक प्रकोष्ठ था । गीता-रामायण के नित्य नियमित पाठ करने की प्रेरणा देना इस संघ का अभीष्ट था । साधक संघ के सदस्यों की संख्या कालान्तर में हजारों में पहुँच गई थी । इन सदस्यों की साधन संबंधी कठिनाइयों का निराकरण श्री पोद्दार जी करते थे तथा इनके कल्याण एवं उद्धार के लिये चिन्तित रहते थे उनके भक्तों का एक वृहद समाज बन गया था जो उनसे प्रेरणा एवं मार्ग दर्शन प्राप्त करता था तथा अपने उद्धार के लिये उनको अपना सच्चा हितैषी समझता था। इन भक्तों स्नेही एवं प्रेमी जनों के यह आदर्श थे । उनके संबंध में श्री पोद्दार जी ने "कल्याणकारी आचरण" पुस्तक में लिखा है ।-

---

[0] भा०प०ता०भा० पृ० ५९५.

"मेरे प्रति सद्भाव, स्नेह और प्रीति रखने वाले बहुत से पुरुष और देवियाँ बार-बार पूछा करते हैं कि "मेरा आध्यात्मिक सिद्धान्त" तथा किस विषय में क्या विचार है, मैं लोगों को कैसे विचार तथा आचरण वाले देखना चाहता हूँ । वह स्पष्ट रूप से अलग-अलग बता दूँ........"x

श्री पोद्दार जी ने मार्ग दर्शन के लिए प्राप्त पत्रों के उत्तर लिखे हैं । यह पत्र साहित्य आध्यात्मिक साधना के लिए स्थायी प्रकृति की अनुभव-आधृत महत्वपूर्ण रचना है जो सरल एवं सुबोध भाषा में अध्यात्म विद्यास के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करती है । श्री पोद्दार जी की साधन-सहायक एवं पथ प्रदर्शक भूमिका के संबंध में एक संदर्भ अवलोकनीय होगा ।

"....... उन दिनों श्री भाई जी "सद्गुरु" के समान साधकों को पथ-प्रदर्शन करते थे । सत्संग में बैठने वाले प्रायः साधक होते थे । सबको अपनी नित्य साधना के विषय में, नित्य चर्या के विषय में डायरी रखनी पड़ती थी । साधन का कुछ क्रिया नैत्तिक होती थी कुछ अनिवार्य, चरित्र की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया जाता था । इसलिये साधक लोग अपनी भूलें भी लिखकर लाते थे । साधक लोग अपनी डायरी श्री भाई जी को दिखलाते थे और साधना के विषय में परामर्श करके साधन-पथ में अग्रसर होने का प्रयास करते थे ।"x

फिर भी भाई जी ने किसी संप्रदाय या मत को अपनी ओर से नहीं चलाया तथा न अपने इस साधन सहायक कार्य को अपनी अहम् तुष्टि का साधन समझा । अनासक्त भाव से प्रभु की आज्ञा एवं प्रेरणा का पालन ही उनका अभीष्ट था जिसमें उन्होंने अपने सर्वस्व एवं

x कल्याणकारी आचरण संवत् 2026 पृ०

x भा०भा०द०मा० पृ० - 313 कुछ सुखद स्मृतियाँ.

अरिमता की किसी छाप के न आने देने का सतर्कता से ध्यान रखा और मन में कभी ऐसा भाव भी [ऐसा भाव भी] नहीं आने दिया ।

श्री पोद्दार जी भगवान् के "आप्त पार्षद एवं आधिकारिक पुरुष" थे तथा "जीवों के हृदयों में परमात्मस्वरूप को जानने की जिज्ञासा और परमात्मा को प्राप्त करने की शुभाकांक्षा उत्पन्न करते थे ।"

इस संदर्भ में भगवान् के दर्शन और साक्षात्कार की घटनायें तो उल्लेखनीय हैं, साधु ही परम तत्व की भाँति उनकी अलौकिक क्षमता एवं चमत्कारिक सर्वव्यापक सर्वज्ञता एवं समर्थता संबंधी संदर्भ भी विशेष रूप से अवलोकनीय हैं जिसके द्वारा स्पष्ट होता है कि श्री पोद्दार जी संत की उस उच्च स्थिति को प्राप्त थे जहाँ संत और भगवन्त में कोई अन्तर नहीं रहता, दोनों एक सार एवं एक तान हो जाते हैं ।

"जो भगवान् का स्वरूप है, वही संत का स्वरूप है । संत का कोई लक्षण बतलाया नहीं जा सकता । जो सब है, जो सबसे अलग है और जिसमें सबको प्रत्यक्षाभाव है, वही संत है । उसे ब्रह्म कहो, ईश्वर कहो, जगद् कहो अथवा संत कहो, सबकुछ एक ही बात है ।"[1] "सुश्री किशोरीबाई ने पूज्य भाई जी को अपने आपरेशन के समय अपने सामने खड़े देखा था जबकि वास्तव में वह गीतावाटिका में थे ।"[2]

"श्री दिलीप कुमार बरतिया से उन्होंने अपनी सर्वव्यापकता का विशेष परिस्थिति में स्पष्ट उल्लेख किया था — "....मैं आपके दोनों आपरेशनों के समय आपरेशन थियेटर के अन्दर था । मैं आप सबको देख रहा था, पर मुझे कोई नहीं देख पा रहा था । मैं आपरेशन थियेटर के बाहर लोगों के साथ भी था और थियेटर के अन्दर भी । मैं आपसे जो कुछ कह रहा हूँ, बिल्कुल सत्य कह रहा हूँ । मुझे झूठ बोलकर आपसे क्या लेना है ।"[3]

[1] भा०प०ता०स्म० पृ० 338. [2] भा०प०ता०स्म० पृ० 259.
[3] भा०प०ता०स्म० पृ० 543.

श्री रियाज अहमद अन्सारी उनकी सर्वज्ञता का उल्लेख करते हैं — "......मैं सोचने लगा "अपने सिवा मैंने इस इरादे से किसी को भी बाखबर नहीं किया, फिर इन्हें कैसे मालूम हुआ? जरूर इनमें कोई गैबी ताकत है ।"........मेरे इस इरादे का आपको कैसे पता चला? उन्होंने ने फरमाया—"भाई साहब दिल को दिल से राह होती है । आपके दिल में जो बात आयी, वह मेरे दिल को हासिल हो गयी ।"[1]

अन्यान्य विभिन्न महानुभावों को उनके चमत्कारिक व्यक्तित्व के दर्शन हुये तथा उन्होंने उनकी पुष्टि की ।

बहिन कृष्ण कुमारी को भगवान वृन्दावन बिहारी ने स्वप्न में आज्ञा दी "मुझे पाने के लिए और मुझसे प्रेम होने के लिए... हनुमानप्रसाद से उपदेश लो ।"[2]....श्री पुरुषोत्तमदास टंडन का भाई जी के दिव्य दर्शन हुये उनसे प्राप्त पत्र के संबंध में भाई जी उत्तर देते हुये उनके पत्र का सन्दर्भ देते हुये लिखते हैं — "......साथ पेज के पत्र में शुरू से अन्त तक केवल मेरे दिव्य स्वरूप की महिमा, दिव्य दर्शन से परमानन्द तथा उससे प्राप्त लाभ और मेरे गुणों की बार-बार बहुत ही बड़े बड़े रूप में स्तुति करी है.।...।"[3]

श्री गोविन्द बल्लभपन्त ने स्वप्न तथा प्रत्यक्ष में श्रीभाई जी के चमत्कार देखे तथा लिखा जिसके उत्तर में लिखते हुये भाई ने उनके लेख के उद्धरण देते हुये लिखा था:... आपने मेरे लिये लिखा कि "आप इतने महान है, कि इतने श्रेष्ठ महामानव हैं कि भारतवर्ष को क्या सारी मानवीय दुनियाँ को इसके लिए गर्व होना चाहिए । मैं आपके स्वरूप के महत्व को न समझकर ही आपको "भारत रत्न" की उपाधि देकर सम्मानित करना चाहता था ।...."[4]

---

[1] भा०प०वि० पृ०-309. [3] भा०प०वि० पृ०-528.
[2] भा०प०वि० पृ०-525. [4] भा०प०वि० पृ०-528.

इस प्रकार श्री पोद्दार जी ने मानव से भक्त और भक्त से संत के परम उच्च व्यक्तित्व को प्राप्त कर साधना के क्षेत्र में एक अन्यतम आदर्श प्रस्तुत किया है । उनके समग्र व्यक्तित्व का आंकलन करते हुए कतिपय विशेषतायें उल्लेखनीय है —

श्री पोद्दार जी का व्यक्तित्व एक खुली पुस्तक की भाँति स्पष्ट एवं प्रत्यक्ष था उसमें कहीं किसी स्तर पर भी दुराव, छिपाव, रहस्य या गूढ़ता नहीं थी । साधना में गोपनीयता रखी जाती है । प्रभुदर्शन जैसी उच्च अवस्था का विवरण तो और भी गोपनीय रखा जाता है किन्तु श्री पोद्दार जी के लिये यह भी खुला और प्रत्यक्ष था । उन्होंने स्वयं इस प्रकार की जिज्ञासा भी की थी —

"भगवान् ने कृपा करके सबके सामने इस प्रकार का अपूर्व प्रभाव दिखाया जो कार्य बहुत एकान्त में होता है, वह इतने लोगों के समक्ष क्यों हुआ और केवल मुझे ही दर्शन क्यों हुए.....।"[1]

जिस प्रकार उन्होंने साधना प्रारंभ की और आगे बढ़े उसका खुला विवरण उन्होंने प्रस्तुत ही नहीं किया प्रत्युत सभी लोगों को उसके लिये प्रेरित किया । " उन्होंने असंख्य व्यक्तियों को भगवान की ओर उन्मुख किया ।"

"मानव सेवा ही भगवद्-सेवा है" का आदर्श उन्होंने प्रस्तुत किया । यह मानव सेवा मानव में भगवद् स्वरूप के दर्शन करके की जाती थी । यह उच्च आदर्श भक्ति की व्यावहारिकता के प्रति आग्रह करता है तथा साधना को अभिनव रूप प्रदान करता है । उनके महान व्यक्तित्व की निम्नलिखित उपलब्धियाँ है —

---

1. भा०प०पो०स्मृ० ग्र० – 492.

सनातन धर्म के देवी-देवताओं तथा धार्मिक ग्रन्थों के प्रति श्री पोद्दार जी की अटूट आस्था थी तथा सभी लोगों का उन्होंने इन पर श्रद्धा-विश्वास करने हेतु आह्वान किया और इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त की । हिन्दू संस्कृति एवं धर्म की ध्वजा को सम्पूर्ण देश में फहराने का उनको अप्रतिम श्रेय है ।

उन्होंने भगवान् के दर्शन किये तथा भगवान् की आज्ञापालन रूप में धर्म का प्रचार-प्रसार किया । वह अपने आपको भगवान् का यंत्र समझते थे तथा इसी कारण किसी भी रूप में अपने कर्तृत्व का आभास तक नहीं कर पाते थे । जो कुछ प्रशंसा होती थी उसको उस करने वाले प्रभु की ही प्रशंसा समझते थे । इसी भाव के संदर्भ में उन्होंने अपने लिए प्रस्तावित अभिनन्दनों एवं उपाधियों को सदा विनम्रता पूर्वक अस्वीकार कर दिया ।

श्री पोद्दार जी प्रेम के अवतार थे । प्रेम ही उनकी साधना का एक मात्र साधन था । उनके प्रेम से प्रभावित होकर ही प्रभु प्रेम प्रवाहित हुआ था ।

भगवान् की निश्चित कृपा का उन्होंने पूर्ण विश्वास दिलाया तथा जन-जन को भगवान् के प्रति विश्वास रखने का आग्रह किया ।

साधना की बड़ी सरल पद्धति "नाम कीर्तन" के रूप में उन्होंने प्रस्तुत की तथा "नाम जप" के महत्व को स्वयं अनुभव किया और अपने प्रेमी साधकों को कराया । वर्तमान कलियुगीन विषम परिस्थितियों में ऐसा सरल उपाय ही आत्मोद्धार के लिये गृहीत हो सकता था ।

वह संत की उस उच्च अवस्था को प्राप्त हो गये थे जहाँ संत और भगवान् एक हो जाते हैं । भगवान् ही संत के रूप में क्रियाशील

बनाते हैं तथा मानवमात्र का उद्धार करते हैं ।

यह भी विशेष उल्लेखनीय है कि श्री पोद्दार जी ने मानव की भूमिका का आधार लेकर संत की उच्चता को प्राप्त किया । जन सामान्य के लिये उनका उदाहरण प्रेरणाप्रद तथा आशा का संचार करने वाला सिद्ध हुआ । इसी कारण उनके मिशन को अभूतपूर्व सफलता मिली तथा आत्मोद्धारका एक आंदोलन चलने लगा । धार्मिक सत्साहित्य का प्रचुर प्रसार-प्रचार हुआ और एक परंपरा प्रारंभ हुई जो भविष्य में वर्षों तक जीवन्त रहेगी ।

हर्ष का विषय है कि भाई जी आज भी देह का आधार त्याग देने पर भी अपने प्रेमीजनों का मार्ग दर्शन यथावत् कर रहे हैं । इस प्रकार के अनेक संदर्भ उपलब्ध हुये हैं । उन जैसे परमभागवत व्यक्तित्व के लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है ।

इस प्रकार श्री पोद्दार जी ने भारतीय संस्कृति का पुनरुद्धार किया तथा जन मानस में आशा और विश्वास का संचार किया। बिखरते हुए मान-मूल्यों की परिस्थितियों में संस्कृति का संबल प्रदान कर भटकने की स्थिति से समाज की रक्षा की ।

श्री पोद्दार जी अन्यथा मौलिक चिन्तक एवं आर्ष मनीषी थे । उन्होंने राधातत्व, कृष्ण तत्व, लीलातत्व आदि की मौलिक व्याख्याएं प्रस्तुत की है जो उनके व्यक्तिगत भावलोक के अनुभवों पर आधृत थी । इस दृष्टि से साधना के क्षेत्र में एक नवीन "तत्वदर्शन" का आविर्भाव हुआ ।

श्री पोद्दार जी ने नैमित्तिक शास्त्रीय कर्मकाण्ड एवं हिन्दू धर्म के देवी-देवताओं के प्रति पूर्ण श्रद्धा भाव जागृत किया और जनमानस में इन धार्मिक मूल्यों के प्रति आस्था एवं विश्वास उत्पन्न कर समाज की

॥

चेतना एवं चिन्तन को स्थिरता निश्चित दिशा दी ।

भगवान के दर्शन हो सकते है और वह हमारे योगक्षेम का पूर्ण दायित्व ले लेते हैं, यह अलौकिक अनुभव भक्त और भगवान्, नाम और राम, दीन और दीनानाथ के सुखद स्वप्नों को साकार करने की प्रेरणा देने लगा और समाज की चिन्तन दृष्टि ही बदल गई । इससे अधिक दूरगामी प्रभुत्व और क्या हो सकता था ।

श्री पोद्दार जी के कृतित्व के संदर्भ में दो शोध प्रबन्ध इससे पूर्व गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्रस्तुत एवं स्वीकृत हो चुके हैं। उनकी भक्ति तथा उनके संपादन का व्यापक अध्ययन इन प्रबन्धों में किया गया है । अतएव प्रस्तुत प्रबन्ध के लिए कृतित्व के तकनीकी अंगों को लेना उचित समझा गया ।

कृतित्व तकनीकी अंग :-

पाठालोचन, टीका, प्रकाशन विशेषतायें, विषय विकास, रचना प्रक्रिया, रचना हेतु एवं प्रयोजन, व [काव्यधारणा] (काव्यादर्श) रचना प्रवृत्ति, लिपि तथा सांख्यकीय अध्ययन के अन्तर्गत अभिनव शीर्षों पर कार्य किया गया है । कृतित्व की अपनी गरिमा है तथा अपनी विशिष्टतायें है ।

कृतित्व की विशेषतायें :-

सरल सुबोध परिनिष्ठित भाषा त्रुटि रहित, स्पष्ट एवं आकर्षक मुद्रण, अच्छा कागज, रंगीन एवं सुंदर चित्रों से साज-सज्जा, साधारण किन्तु टिकाऊ जिल्दबंदी, कम से कम मूल्य में उपलब्धि ऐसे आदर्श है जो अभी तक अन्य किसी प्रकाशन संस्था के द्वारा पूरे नहीं हो सके है और अब भारी मँहगाई के समय में तो पूरा होने का प्रश्न ही नहीं उठता ।

पोद्दार जी के कृतित्व की एक बहुत बड़ी विशेषता यह रही है

कि उनमें से वह झाँकते हुए स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकाशन नहीं मानो वह स्वयं पाठक से बातकर रहे हैं। इसी संदर्भ को दृष्टिगत रखते हुए उनके कृतित्व को उनका प्रकाशित व्यक्तित्व कहना समीचीन समझा गया है । उनके अटल विश्वास का ही यह परिणाम था कि प्राचीन धार्मिक ग्रंथों का प्रकाशन एवं पुनः मुद्रण का कार्य उन्होंने अपने हाथ में लिया तथा प्रचुर धार्मिक साहित्य प्रकाशितकिया । आज घर-घर में गीता रामायण एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थ उपलब्ध है, इसका सम्पूर्ण श्रेय [ग्रन्थ] श्री पोद्दार जी को है । प्रकाशन के संबंध में महात्मा गांधी ने उन्हें परामर्श दिया था कि विज्ञापन न ले । इसका उन्होंने कठोरता से पालन किया तथा कई भी किसी विज्ञापन दाता के कनौड़े नहीं हुए । उनके प्रकाशन व्यक्तित्व की यह गरिमा एवं महिमा है जो एक आत्मविश्वासी दृढ़ भक्त की भाँति अडिग एवं अटल है हाथ फैलाना जिसकी शान के खिलाफ है ।

श्री पोद्दार जी के प्रचुर साहित्य से निश्चय रूप से राष्ट्र भाषा का मान-सम्मान बढ़ा है तथा धार्मिक साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय समृद्धि हुई है जो अनुगामी साहित्य जगत के लिए एक आदर्श एवं चुनौती बनी है ।

प्रश्नावली :-

प्रश्नावली के माध्यम से मतसंग्रह का कार्य किया गया जिससे यह ज्ञात हो सके कि श्री पोद्दार जी के संबंध में अधुना क्या अभिमत था। उनके निर्वाण के पश्चात् जो भाव विभोर श्रद्धांजलियाँ प्रस्तुत हुई थी उनको तत्कालीन परिस्थिति जन्य भावावेश के संदर्भ में देखा जा सकता है किन्तु आज इतने अन्तराल के पश्चात् संकलित मत निश्चित रूप से स्थायी प्रभाव के सूचक है [एक प्रश्न था। — "इस निश्चितरूप से स्थायी प्रभाव के सूचक है"] एकप्रश्न था — "<u>इस युग को उनकी देन</u>" । इस प्रश्न के उत्तर में 128 प्रबुद्ध वर्ग का चिन्तन एवं बोध यह रहा है कि "ब्र रसाप्लुत, किंवा राधाकृष्ण के प्रति नई दिशा एवं मौलिक चिन्तन प्रदान किया ।" इस देन की चर्चा इससे

पूर्ण कर चुके है । यह निश्चय ही श्री पोद्दार जी की अनुपम एवं मौलिक चिन्तन दिशा थी जिससे राधातत्व कृष्णतत्व, लीलातत्व, जैसे मौलिक दार्शनिक विषय का प्रतिपादन हुआ । दूसरा बिन्दु55ऽ भारतीय संस्कृति के नैतिक एवं शाश्वत मूल्यों का पुनरुद्धार था जिसके संदर्भ में सेवा, भक्ति, त्याग, लोकमंगल, निष्काम प्रेमभाव से प्राणिमात्र की सेवा, असंख्य लोगों को कल्याण मार्ग पर चलना आता है । यह दोनों महत्वपूर्ण बिन्दु आज भी पोद्दार जी के प्रेमी जनों में है, यह बड़े हर्ष का विषय है । [illegible]

[दूसरा प्रश्न था] राष्ट्र या समाज पर प्रभाव :-

इसके संदर्भ में दो महत्वपूर्ण उत्तर प्राप्त हुए । प्रभाव की दृष्टि से भारतीय संस्कृति के नैतिक और शाश्वत मूल्यों का पुनरुद्धार महत्वपूर्ण उपलब्धि थी जिसके संदर्भ में सेवाभक्ति त्याग, निष्काम प्रेमभाव, लोक कल्याण, आदि कार्यों पर बल दिया गया । दूसरे उत्तर में रसाद्वैत एवं राधातत्व जैसी भक्ति की नई दिशाओं की ओर उत्तरदाताओं का ध्यान गया । यह 12ऽ का उत्तर था । निश्चय ही यह अन्यथा प्रबुद्ध वर्ग रहा होगा ।

आगे प्रश्न था कि श्री पोद्दार जी के किस कार्य को पूरा किया जाय । इसके उत्तर में तीन कार्यों की ओर उत्तरदाताओं की दृष्टि गई है ——

[1] नामजप, गीता नारायण प्रचार, भक्ति साहित्य का प्रसार आदि कार्य चलते रहने चाहिये ।

[2] उनके साहित्य का अन्य भाषाओं में अनुवाद कराया जाना चाहिये । उनकी "वसुधैव कुटुम्बकम्" दृष्टि थी । अतएव वह इस कार्य को अवश्य कराते ।

(3) गीतापरक समता दृष्टि तथा मानवता की रक्षा का कार्य चलता रहना चाहिये । यह जीवन का परम लक्ष्य है तथा समाज अथवा दृष्टि की अपेक्षा को पूरा करता है ।

प्रश्नावली का एक और महत्वपूर्ण प्रश्न था उनके लिये क्या किया जाय?

इस प्रश्न का उत्तर, बड़ी सूझबूझ का प्राप्त हुआ । उत्तरदाता का मन्तव्य था कि उनके लिये क्या किया जा सकता है? जो कुछ अपने लिये किया जा सके जो उनकी आशा अपेक्षाओं के अनुकूल हो, वही करणीय है और वही उनके लिये करना होगा । अतएव उत्तर मिला- उनके विचारों पर चला जाय, उनके जैसा त्याग का आचरण अपनाया जाय, उनके साहित्य के अध्ययन अनुशीलन के लिये प्रेरणा प्रदान की जाय जिससे औरों का भी कल्याण हो ।

उनको सच्ची श्रद्धांजलि क्या होगी? इस महत्वपूर्ण प्रश्न के बड़ी भावपूर्ण अपेक्षा की गई । उनके बताए मार्ग पर चले तथा उनकी कथनी, करनी रहनी की तरह रहे । एक-दो सिद्ध साधकों ने इसकी परिणति का आभास भी किया और उत्तर दिया । कि इससे उनसे भावात्मक मिलन संभव होगा । समाज अथवा राष्ट्र को उनके लिये क्या करना चाहिये। इस प्रश्न के उत्तर में दो अच्छे सुझाव प्राप्त हुये ।

(1) उनकी जयन्ती मनायें और उनकी सेवाओं का आकलन करें ।

(2) उनकी स्मृति में संत-साहित्य शोध संस्थान की स्थापना की जाय जहाँ उनके विचारों, संदेशों, सिद्धान्तों, का प्रतिपादन हो, प्रचार-प्रसार हो तथा गीताज्ञान का प्रचार-प्रसार, जिसे जिसे वह आजीवन करते रहे, यथावत् होता रहे ।

एक अन्य प्रश्न उनकी समसामयिकता पर था । इसके उत्तर में कई बिन्दु उठायें गये —

[1] पोद्दार जी का साहित्य शाश्वत एवं सार्वकालिक महत्व का है । इसलिये समसामयिक है ।

[2] उनका एक देशसेवक, भक्त, समाजसुधारक मानवतावादी व्यक्तित्व समसामयिक है ।

[3] नैतिक मूल्यों की गिरावट के संदर्भ में उनका वैराग्य एवं ज्ञान विधायक तथा चरित्र निर्माण संबंधी साहित्य समसामयिक है ।

[4] युवक-युवतियों के जीवन में दिशा निर्देश के लिए उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व समसामयिक है ।

[5] सेवाकार्य की प्रतिष्ठा समसामयिक है ।

उनके संबंध में कोई और बात कहने के लिये उत्तरदाता को आमंत्रित किया गया था जिसके उत्तर में अनुभवी साधक ने लिखा "मनुष्य के रूप में स्वयं भगवान थे" अतएव उनका चरित्र अकथनीय था, अलौकिक व्यक्तित्व था तथा हिन्दुत्व, संस्कृति, दर्शन, आध्यात्मिकत्व [आध्यात्मिकता] स्मृति आदि के लिये गौरव, महान और आदर्श थे ।

मौलिकता :-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की प्रस्तुति अपने मूलरूप में मौलिक है ही । साथ ही कतिपय विशेष बिन्दु भी उल्लेखनीय है जो "व्यक्तित्व एवं कृतित्व"शोध विषय के लिये अभिनव प्रयोग कहे हैं ।

[1] प्रामाणिक जीवन काल क्रम एवं घटना क्रम इससे पूर्व श्री पोद्दार जी के जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व संबंधी प्रचुर साहित्य उपलब्ध था । फिर भी जीवन कालक्रम एवं घटनाक्रम का क्रम बद्ध विवरण का अभाव था । इसकी पूर्ति की गई है । इसमें विक्रम संवत् के साथ ईसवी संवत् भी दिया गया है तथा घटनाक्रम के साथ तत्कालीन आयु का भी उल्लेख कियागया है । साथ ही वर्गीकृत शीर्षों में भी यह विवरण प्रस्तुत किया

है×। है । इस अनुशीलन में कई घटनाक्रमों के काल का विवरण विवादास्पद मिला । उसका समाधान तर्कपूर्ण तथ्यों से किया गया और प्रामाणिक जीवनक्रम प्रस्तुत किया जा सका ।

[2] व्यक्तित्व मापक निर्धारण :-

पाश्चात्य, पौर्वात्य मनोविज्ञानों मतों के आकलन के साथ श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवत रामचरितमानस आदि के आधार पर व्यक्तित्व की आदर्श अपेक्षाओं का विवरण प्रस्तुत किया गयाहै । पुनः श्री पोद्दार जी ने स्वयं अपने साहित्य में स्थान-स्थान व्यक्तित्व निर्धारण के मापक प्रस्तुत किये है तथा अपनी दृष्टि से मानव साधक भक्त, संत व्यक्तित्वों का वर्गीकरण किया है । इस प्रकार व्यक्तित्व मापक के निर्धारण में प्रचुर तथ्यों का आकलन कर तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करने का अवसर मिला है और मानक व्यक्तित्व मापक निर्धारित हो सके है । विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है जैसा कि इससे पूर्व विवेचन कर चुके है कि श्री पोद्दार जी ने अपने जीवन में स्वयं उतार कर मापक प्रस्तुत किये है । इसलिये उनकी व्यावहारिकता भी असंदिग्ध हुई× सिद्ध हुई है ।

[3] प्रश्नावली प्रयोग :-

शोध की [विधा] के अंतर्गत प्रश्नावली प्रयोगका प्रयोग का अपना महत्वपूर्ण स्थान है । व्यक्तित्व निर्धारण के लिये इसका प्रयोग प्रस्तुत शोध ग्रंथ में मौलिक प्रयास है । प्रश्नावली के द्वारा बड़े महत्वपूर्ण उत्तर एवं सुझाव प्राप्त हुए है तथा श्री पोद्दार जी के प्रति जन मानस की प्रतिबद्धता एवं अविरल श्रद्धा भक्ति प्रकाश में आई है । कृतित्व के अंतर्गत शोध के तकनीकी अंगों को लिया गया है जो मौलिक प्रयास है । रचनाप्रक्रिया, रेंज-सैम्पलिंग के आधार पर शब्दानुशीलन, लिपि का अध्ययन

रेखांकन, चित्रांकन, सारणीकरण के माध्यम से वाङ्मय साक्ष्य के रूप में महत्वपूर्ण तथ्यों का उद्धार हुआ है । शोध की दिशायें यह मौलिक एवं अभिनव प्रयोग है तथा साहित्य के शोध को एक नई दिशा प्राप्त हुई है । इस संदर्भ में अन्यान्य रेखांकनों के अतिरिक्त पंक्ति संख्या के संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं तथा श्री पोद्दार जी के पद रत्नाकर का तुलनात्मक रेखांकनविशेष कुतूहलपूर्ण है । श्री पोद्दार के पद रत्नाकर की पंक्ति संख्या का कुल भार तुलसीदास जी के मानस विनय पत्रिका और गीतावली की पंक्ति संख्या को मिलाकर बराबर बैठता है ।

<u>अनुगामी शोध दिशायें तथा शोधार्थी की अपेक्षा-आपूर्ति स्वीकृतियाँ:-</u>

श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर कार्य करते हुए शोध की अन्यान्य दिशाओं का भान हुआ जिनका उल्लेख आवश्यक है —

उनकी कृतियों का विस्तार से अध्ययन होना चाहिये । काव्य - अनुशीलन, पत्रसाहित्य अनुशीलन, टीका साहित्य अनुशीलन निबन्ध साहित्य अनुशीलन के रूप में पृथक-पृथक अध्ययन की अपेक्षा है ।

श्री पोद्दार जी के राधातत्व, कृष्ण तत्व, लीलातत्व• की दार्शनिक पृष्ठभूमि का पृथक अनुशीलन होना चाहिये ।

अभी उनके अन्तेवासी एवं अंतरंग के महानुभाव उपलब्ध है । अतएव उनसे व्यापक प्रश्नावली के माध्यम से उनके जीवन के ललित पक्ष तथा सार्वजनिक पक्ष को उजागर करने के लिये प्रयास किये जाने चाहिए । यह सामग्री निश्चय ही आधुनिक पीढ़ी के लिये प्रेरणाप्रद एवं महत्वपूर्ण होगी ।

श्री पोद्दार जी के समस्त साहित्य के शब्द भण्डार के संकलन आनुपातिक अध्ययन तथा प्रयोग वैशिष्ट्य के माध्यम से उनकी आत्मा के

मूलभूत शब्दों एवं उन शब्दों की आत्मा का उद्घाटन पृथक शोध प्रबंध के रूप में करना चाहिये । यह कार्य कदाचित् कम से कम दो शोधार्थी पूरा कर पावेंगे ।

उपर्युक्त शोध दिशाओं की पूर्ति एक शोधार्थी के वशवर्ती नहीं है । फिर भी प्रस्तुत शोधकार्य करते हुए मुझे अपेक्षा-आनुषंगिक अपराध का भास हुआ है और मैं क्षमा प्रार्थी हूँ ।

यही नहीं जो कार्य मैंने किया है उसकी विस्तार की व्यापक सीमायें है उसको सीमित तथा कदाचित संक्षिप्त रूप में ही अध्ययन कर सका हूँ । इस संदर्भ में मैं परमपिता परमात्मा से यही प्रार्थना करूँगा कि श्री पोद्दार जी मेरे अध्ययन अनुशीलन के इष्ट बने और जीवन में इस सेवा को कर सकूँ । श्री पोद्दारजी की जीवन गाथा, मानव-मूल्यों की ऊँचाई, मानवीय गुणों की विशदता इतनी अधिक है कि उसका पार पाना कठिन ही है । उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए पूज्य माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर [गुरुजी] ने ठीक ही कहा था —

"भाई जी के संबंध में कोई लिखने वाले लिखे और दीर्घकाल तक लिखता ही रहे तो भी उसे कहना पड़ेगा—"तदापि तव गुणानां पारं न याति ।"

"तस्मै श्री पोद्दार देवाय नमः"

---0---

प रि शि ष्ट

- प्रश्नावली
- प्रश्नावली विश्लेषण
- साक्षात्कार सूची
- पुंज सूत्र
- जीवन धारा क्रम
- सहायक ग्रन्थ सूची

प्रेषक,

सद्गुरुशरण विद्यार्थी
शोध-छात्र
३१, हजारीपुरा, उरई
जनपद-जालौन (उ०प्र०)

सेवा में,

श्री ... ...

... ...

... ...

महानुभाव,

इस प्रश्नावली का उद्देश्य श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी के व्यक्तित्व के निर्धारण सम्बन्धी सर्वेक्षण सन्दर्भ एकत्र करना है। बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी के अन्तर्गत डा० बी० बी०लाल (अवकाश प्राप्त प्राचार्य) के निर्देशन में हिन्दी शोध उपाधि के लिये स्वीकृत विषय "श्री हनुमान-प्रसाद पोद्दार : व्यक्तित्व एवं कृतित्व" की अपेक्षाओं की पूर्ति हेतु यह प्रश्नावली आपकी सेवा में प्रस्तुत करके सादर अनुरोध है कि कृपा कर शोध एवं संस्तुति के सन्दर्भों के संकलन में अपना योग देकर अनुग्रहीत करें। अधुना मूल्यों के ह्रास एवं विघटन के चिन्तनीय परिवेश में महामना पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर इस प्रकार से किया गया चिन्तन-मनन, मूल्यों के समर्थन में अपना योगदान दे सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

आपके द्वारा भेजा गया उत्तर इस प्रयास में सहायक होगा। उत्तरदाता का नाम पूर्णतया गोपनीय रहेगा। यदि कहीं नाम देने की आवश्यकता हुई तो पूर्व अनुमति प्राप्त की जायेगी। उत्तर की प्रतीक्षा में हार्दिक आभार सहित।

भवदीय,

सद्गुरुशरण विद्यार्थी
शोध-छात्र
३१, हजारीपुरा, उरई
जनपद-जालौन (उ० प्र०)

विशेष— इस प्रश्नावली का निरीक्षण श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रमुख अध्येता तथा उनके भावलोक एवं भक्ति के सहृदय उत्तराधिकारी यशस्वी सन्त, साहित्यकार श्रद्धेय डा० भगवतीप्रसाद सिंह जी ने किया है, तथा यथास्थान संशोधन कर इसको शोध उपयोगी बनाया है।

सद्गुरुशरण विद्यार्थी

१— आप :- प्रश्नावली के उत्तरदाता महानुभाव ।

(अ) शुभ नाम ....

(आ) स्थायी पता ....

वर्तमान पता ....

(इ) आयु ....

(ई) शिक्षा ....

(उ) कल्याण के ग्राहक हैं ? यदि हाँ तो ग्राहक सं० ....

(ऊ) कब से कल्याण के ग्राहक हैं ? ....

(ए) कल्याण के विशेषांकों को आप सुरक्षित रखते हैं, ...

यदि हां तो कितने विशेषांक आपके पास हैं ? ....

(ऐ) कल्याण के विशेषांक एवं अन्य अंकों को आप पूरा पढ़ लेते हैं या आंशिक रूप में ? ....

(ओ) आप कल्याण के किन अंशों को निश्चित रूप से पढ़ना चाहते हैं ? ....

(औ) कल्याण के ग्राहक बनने की प्रेरणा आपको कैसे मिली ? ....

....

(क) किन-किन अन्य पत्र-पत्रिकाओं के आप ग्राहक हैं ? ....

(ख) कल्याण के पठन का आपकी दिनचर्या पर सामान्य प्रभाव ....

(i) क्या कोई विशेष प्रभाव भी पड़ा है ? ....

(ii) कल्याण में उल्लिखित किसी साधन, अनुष्ठान को आपने किया ? ....

(iii) आपके कल्याण अंक को आपके अतिरिक्त परिवार के/अन्य सम्पर्क में आने वाले पाठकों पर प्रभाव :

सामान्य ....

विशेष ....

(iv) कल्याण में उल्लिखित सच्ची घटनाओं का आप / परिवार / अन्य पर प्रभाव :

सामान्य :...

विशेष :...

२— श्री पोद्दार जी से आपका परिचय किस तरह हुआ ? :

(अ) केवल कल्याण के संपादक अथवा अन्यान्य धार्मिक ग्रन्थों के लेखक/ संपादक के रूप में ? ......

....

(आ) पत्राचार के माध्यम से जो साधना सम्बंधी जिज्ञासाओं के समाधान के लिये किया गया हो ?

(१) कितने पत्र आपके द्वारा लिखे गए होंगे ? ....

(२) कितने उत्तर पोद्दार जी से आपको प्राप्त हुए ? ....

(३) कितने पोद्दार जी के पत्र आपके पास सुरक्षित हैं ? ....

(इ) व्यक्तिगत भेंट/साक्षात्कार :

(१) प्रथम भेंट कब हुई तथा कारण ? ....

(२) भेंट के कितने अन्य अवसर मिले ? ....

(ई) सम्पर्क द्वारा :

(१) नित्य का सम्पर्क :...

(अ) सम्पर्क का कारण :..

(आ) सम्पर्क की अवधि :..

(२) यदाकदा सम्पर्क :

(अ) सम्पर्क का कारण :..

(आ) सम्पर्क की अवधि :..

[उ] स्नेह सम्बन्ध :

(१) पारिवारिक सम्बन्ध :..

(२) व्यक्तिगत सम्बन्ध :..

(३) कार्य व्यवसाय सम्बन्ध :..

(४) आकस्मिक सम्बन्ध :..

[ऊ] अंतरंग सम्बन्ध :

(१) किस रूप में :..

(२) किस हेतु :..

(३) विचार – विमर्श के प्रमुख विषय :..

[ए] स्वप्न सम्बन्ध :

(१) पोद्दार जी से सम्पर्क करने के निर्देश :..

(२) पोद्दार जी के दिव्य दर्शन :..

(३) देवी-देवताओं के दर्शन और उनका पोद्दार जी से सम्पर्क करने सम्बन्धी निर्देश :..
....

(४) ऐसी ही कोई अन्य बात :..

[ऐ] भाव सम्बन्ध :

(१) किसी विशेष भावदशा में पोद्दार जी से सम्पर्क :..

(२) किसी चमत्कार / रहस्य का श्री पोद्दार जी से संदर्भ :..

(३) पोद्दार जी के दिव्य दर्शन एवं परमानन्द :..

(४) कोई अन्य सम्बद्ध सम्बन्ध :..

(५) क्या उनका चित्र आपके पूजागृह की शोभा है ?..

(६) क्या अब भी उनसे आपका सम्पर्क है ?..

३— श्री पोद्दार जी के सम्बन्ध में आपकी जानकारी :..

(१) जीवन सम्बन्धी :..
....

(२) परिवार सम्बन्धी :..
....

(३) किसी विशेष घटना सम्बन्धी :..

४— श्री पोद्दार जी का प्रभाव :

(१) आप पर :..

(अ) आचार-व्यवहार में :..

(आ) चिन्तन-मनन में :..

(इ) भजन–पूजन में : ... ... — ... ... — ... ... —

(ई) साधन में : – ... ...

(उ) अन्य : ... ...

(ऊ) कोई प्रभाव नहीं : ... ... — ... ...

(२) आपके परिवार / प्रियजन आदि पर तथा किस रूप में : ... ...

.. ..

(३) क्या आप कामना करते हैं कि उनके सम्पर्क में आते और उनके प्रभाव में जीवन–कल्याण होता ?

... ...

५– श्री पोद्दार जी के सम्बन्ध में आपका अभिमत :

(१) एक विशेषण द्वारा : ... ...

(२) उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में एक–दो पंक्ति में : ... ... – ... ... — ... ...

... ...

(३) क्या आप उनको स्मरण करते हैं ? यदि हां तो :

(अ किस रूप में : ... ... — ... ...

(आ) किस सन्दर्भ में : ... ...

६– (१) श्री पोद्दार जी की पुस्तक विशेष जो आपको बहुत प्रिय है ? ... ...

(२) इस पुस्तक के सन्दर्भ में आपका प्रतिक्रिया रूप अभिमत ? ... ... — ... ...

— ... ... - ... ... — ... ...

७– श्री पोद्दार जी की रचना / पद विशेष जो आपको बहुत प्रिय है, कंठस्थ है तथा आपकी साधना / मनःशान्ति का साधन है ? : ... ...

... ... — ... — ... ...

... ...

इस रचना विशेष का प्रतिक्रिया रूप अभिमत ? ... ...

.. .. — ... ...

८– आपसे प्रार्थना की जाय कि श्री पोद्दारजी को आप साहित्य में/पत्रकारिता में/भक्ति में/देश सेवा में/भक्त/महात्माओं में कोई स्थान निर्धारित करें तो आपकी क्या प्रतिक्रिया होगी ? आप किसके समान कहना चाहेंगे ? किससे बड़ा कहना चाहेंगे ? या अप्रतिम कहेंगे ?

... ... — ... ... — ... ...

... ...

... ...

९- "इस युग को उनकी देन" शीर्षक से आप कुछ कहना चाहेंगे ? ... ...

... ...

... ...

समाज/राष्ट्र पर उनके प्रभाव को किन शब्दों में आंकलित करेंगे ? ... ...

... .

... ...

उनके किस कार्य को पूरा किया जाय / आगे बढ़ाया जाय ? ... ...

... ...

उनके लिये क्या किया जाय ? ... ...

(अ) उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि क्या होगी ? ... ...

... ...

(आ) समाज/राष्ट्र को उनके लिये क्या करना चाहिये ? ... ...

... ...

... ...

(इ) उनकी समसामयिकता का प्रतिपादन किन सन्दर्भों में सम्भव होगा ? ... ...

... ...

... ...

... ...

(ई) श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कोई ऐसी बात जो आप कहना चाहते हों, इस प्रश्नावली में आंकलित न हुई हो।

... ...

... ...

धन्यवाद !

सद्‌गुरुशरण विद्यार्थी
शोध-छात्र
३१, हजारीपुरा, उरई
जनपद-जालौन (उ० प्र०)

श्री पोद्दार-वंश-वृक्ष

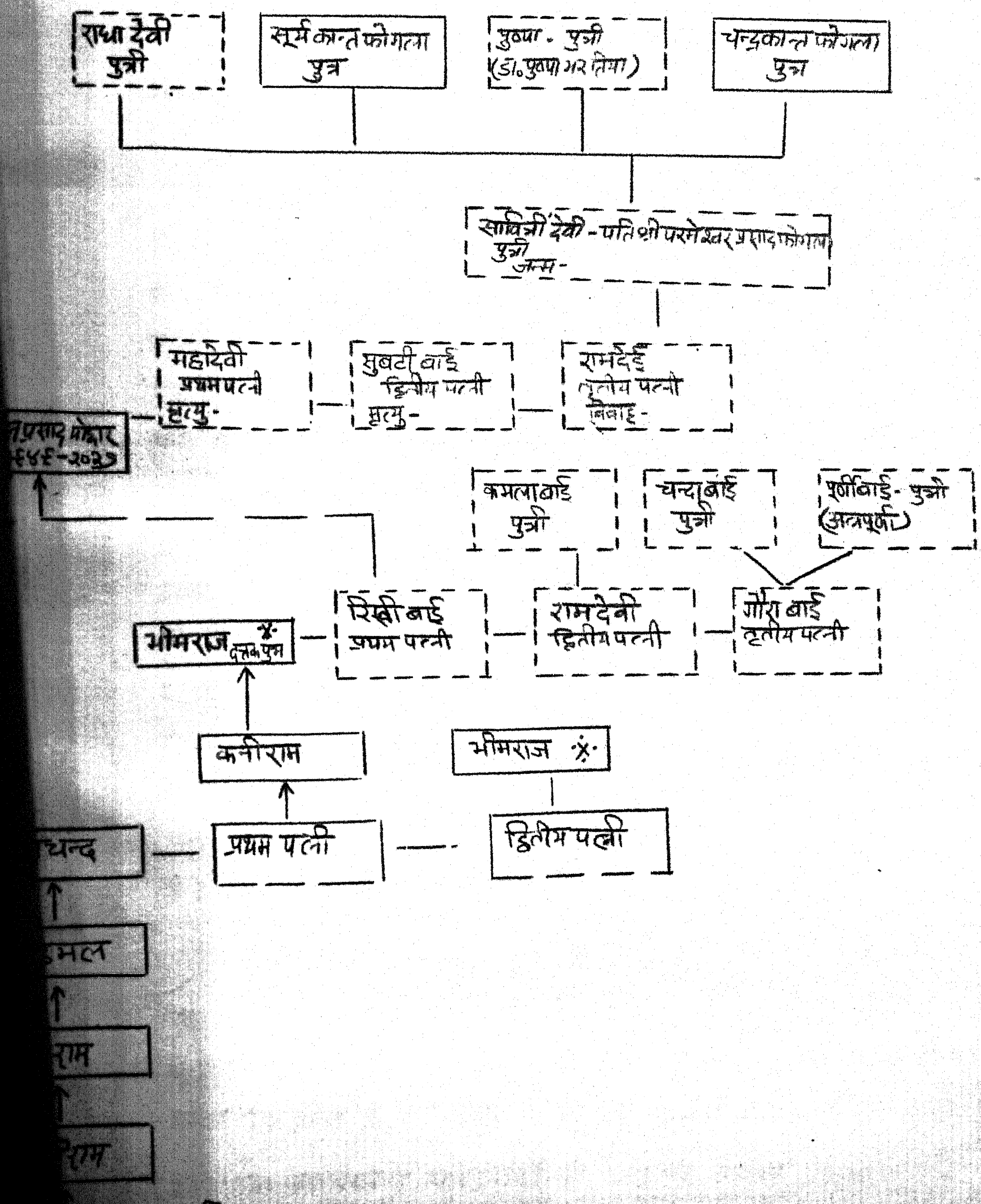

र वंश के पूर्वज

श्री पोद्दार-वंश-वृक्ष

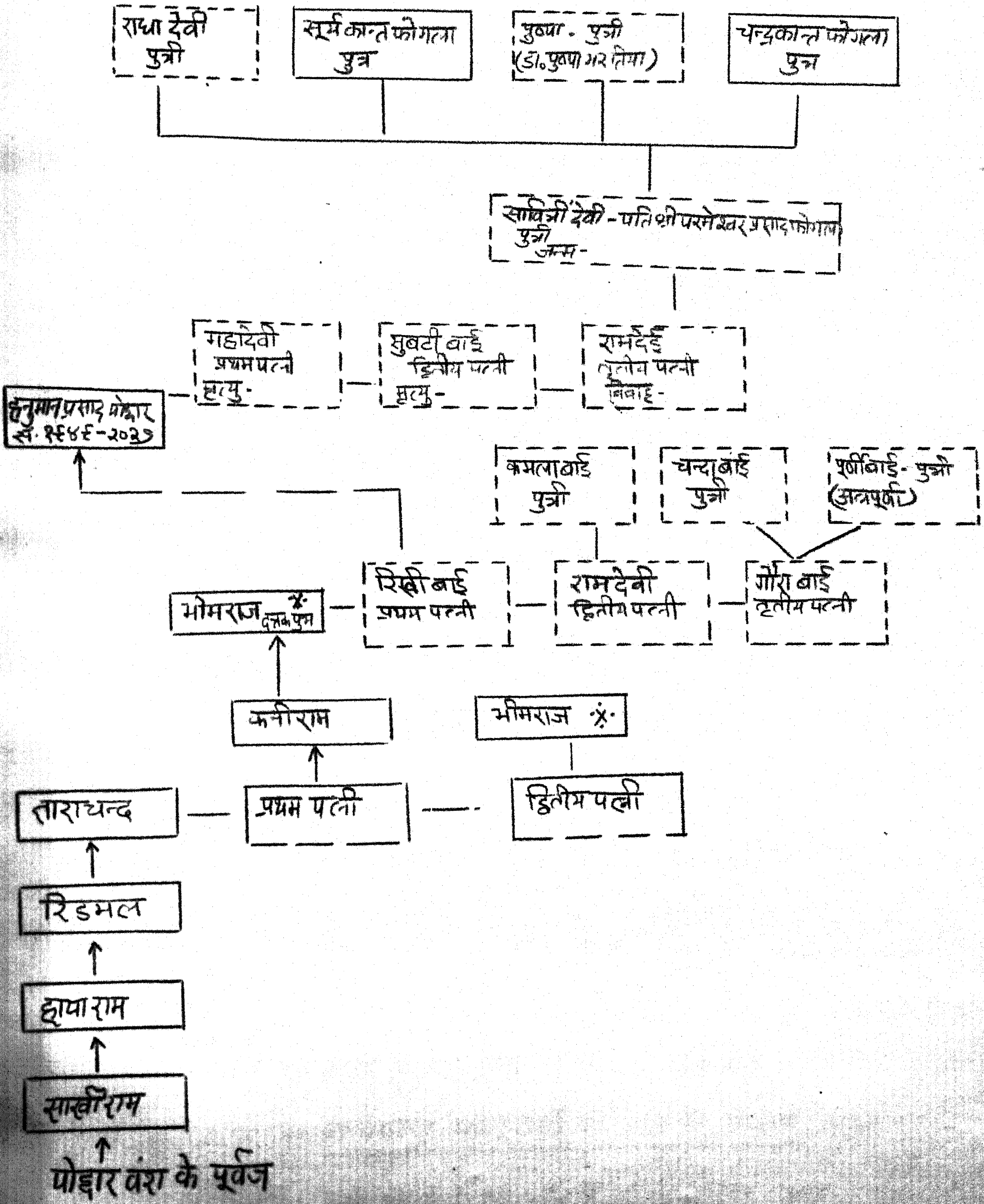

प्रश्नावली के प्राप्त उत्तरों का विश्लेषणात्मक विवेचन

प्रश्नावली में 9 प्रश्न रखे गये थे। प्रथम दो प्रश्नों में उत्तरदाताओं से उनकी आयु, शिक्षा, कल्याण के ग्राहक होने व उनके अध्ययन क्षेत्र के तथा उनका जीवन पर प्रभाव एवं श्री पोद्दार जी से उनका परिचय किस तरह से हुआ था, की जानकारी मांगी गई थी। तीसरे प्रश्न में श्री पोद्दार जी के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं की जानकारी भेजने तथा चौथे प्रश्न में उत्तरदाता एवं उनके परिवार-वालों पर श्री पोद्दार जी के सम्पर्क में आने अथवा उनकी प्रवचना या कल्याण के पढ़ने प्रभाव के सम्बन्ध में बताने का निवेदन किया गया था। पांचवे प्रश्न में उत्तरदाताओं से श्री पोद्दार जी के प्रति उनके अभिमत को लिखने का अनुरोध किया गया था। छठवें एवं सातवें प्रश्न में श्री पोद्दार जी की उस पुस्तक विशेष या लेख, कविता जिसने उत्तरदाता को प्रभावित किया हो, का वर्णन लिखने की अपेक्षा की गई थी। आठवें प्रश्न में साहित्य, पत्रकारिता, देशसेवा, भक्ति, महात्माओं के मध्य स्थान निर्धारण के लिये उत्तरदाताओं से अनुरोध किया गया था। तथा नवें प्रश्न में श्री पोद्दार जी की "इस युग को देन" तथा समाज/राष्ट्र पर प्रभाव एवं उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि क्या होगी? समाज/राष्ट्र को उनके प्रति क्या करना चाहिये, के बारे में उत्तरदाताओं से अपनी राय लिखने का आग्रह किया गया था।

प्रश्नावली के प्राप्त उत्तरों के वर्गीकरण, गणना, तथा विश्लेषण से बहुत महत्वपूर्ण तथ्य सामने आये हैं जो श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के मापन के सन्दर्भ में विशद प्रकाश डालते हैं। इनका बिन्दुवार विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

(1) (क) उत्तरदाता महानुभावों की आयु का विवरण

(अ) 40वर्ष से कम आयु के   १४

(ख) 40 वर्ष से 50 वर्ष के बीच के	10%
(ग) 50 वर्ष से 60 वर्ष के बीच के	34%
(घ) 60 वर्ष से अधिक आयु के	42%
	100%

इस प्रकार स्पष्ट है कि 40वर्ष से 60 वर्ष की आयु के व्यक्तियों की श्री पोद्दार जी के प्रति विशेष श्रद्धा-भक्ति है एवं आकर्षण है ।

(1) :ई: <u>उत्तरदाताओं का शिक्षा स्तर</u>

(क) मिडिल स्कूल तक शिक्षा प्राप्त	20%
(ख) माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त	28%
(ग) उच्च शिक्षा प्राप्त	48%
(घ) नियमित रूप से किसी विद्यालय में न पढ़ने वाले	4%
	100%

इससे प्रकट है कि उत्तरदाताओं में से लगभग आधे व्यक्ति उच्च शिक्षा प्राप्त तथा चौथाई माध्यमिक स्तर तक शिक्षाप्राप्त व्यक्ति है, जो पोद्दार जी के लेखों, पुस्तकों एवं उनके व्यक्तित्व के प्रति गहरी रुचि रखते है ।

(1) :उ: <u>कल्याण के ग्राहक</u>

(क) कल्याण के ग्राहक उत्तरदाता	80%
(ख) उत्तरदाता जो ग्राहक नहीं हैं	20%
	100%

उत्तरदाता कल्याण पत्र में प्रकाशित लेखों को उत्तम एवं हितकारी मानते हैं और इस कारण 80% प्रा व्यक्ति कल्याण के ग्राहक बने है ।

(1):उ: ग्राहक अवधि

(क) 1 से 20 वर्ष तक	15%
(ख) 20 से 40 वर्ष तक	30%
(ग) 40 से 50 वर्ष तक	8%
(घ) 50 से वर्ष से अधिक	27%
	80%

उत्तरदाताओं में से 65% व्यक्ति 20 वर्षों से अधिक अवधि से कल्याण के ग्राहक है । निश्चित रूप से वे कल्याण में प्रकाशित होने वाली आध्यात्मिक एवं प्रेरणा प्रद लेखों से लाभान्वित हुए होंगे तभी इतनी लम्बी अवधि से ग्राहक बने हुये है ।

(1) :ए: कल्याण के विशेषांकों का सुरक्षित रखना

(क) एक से 10 अंक तक	18%
(ख) 10 से 20 अंक	17%
(ग) 20 से 30	15%
(घ) 30 से 40	5%
(ङ) 40 से अधिक अंक	18%
	73%
सुरक्षित नहीं रखते	9%
अनुत्तरित	18%
	100%

उक्त विवरण से प्रकट है कि 73% उत्तरदाता कल्याण के विशेषांकों को सुरक्षित रखते हैं, वे भविष्य में अपने तथा परिवारीजनों के पढ़ने एवं लाभ उठाने की दृष्टि से ऐसा करते होंगे । इससे उनकी दृष्टि में कल्याण के विशेषांकों की प्रकाशित सामग्री के प्रति श्रद्धाभावना प्रकट होती है ।

{1}:ऐ: कल्याण के विशेषांकों तथा अन्य अंकों में प्रकाशित लेखों के अध्ययन का ढंग

{क}	अंकों को पूरा पढ़ने वाले	25%
{ख}	आंशिक रूप से पढ़ने वाले	65%
{ग}	अनुत्तरित	10%
		100%

इससे प्रकट होता है कि कल्याण पत्र ने उत्तरदाताओं को प्रभावित किया है। 25% उत्तरदाता सभी लेखों को पढ़ते हैं। निश्चित रूप से वे इस पत्र के आने की प्रतीक्षा करते होंगे। 65% प्रतिशत उत्तरदाता कल्याण को अपनी समझ के अनुसार आवश्यक अंकों को पढ़ते हैं।

{1} :ओ: कल्याण के किन अंकों को पढ़ते हैं?

{क}	भाई जी के लेखों को पढ़ने वाले	18%
{ख}	भक्ति, अध्यात्म से सम्बन्धित लेख	22%
{ग}	सामाजिक, व्यावहारिक, तथा चरित्र निर्माण सम्बन्धी लेख	13%
{घ}	कल्याण के "पढ़ो, समझो, करो,	10%
{ङ}	साधकों के प्रति	9%
{च}	कल्याण "मित्र"	2%
{छ}	अन्य अंश/लेख	18%
{ज}	अनुत्तरित	12%
		100%

इससे प्रकट होता है कि कल्याण को आंशिक रूप में पढ़ने वाले

व्यक्ति में अधिकांश व्यक्ति भाई जी के लेख, भक्ति, आध्यात्मिक तथा चरित्र निर्माण एवं व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित लेखों को पढ़ते हैं ।

(1) :उ: <u>कल्याण के ग्राहक बनने की प्रेरणा</u>

(क) पारिवारिक संस्कार, मित्र या गुरुजनों की प्रेरणा से	18%
(ख) सन्मित्रों एवं संतजन की प्रेरणा से	30%
(ग) स्वयं कहीं कल्याण पढ़ने से	12%
(घ) अन्य लोगों की प्रेरणा से	18%
(ङ) अनुत्तरित	22%
	100%

इससे प्रकट होता है कि कल्याण लोकप्रिय पत्र है तथा वे के परिवार के व्यक्ति, गुरुजन, सन्मित्र, आदि ग्राहक बनने की एवं पढ़ने की प्रेरणा देते हैं ।

(1):क: <u>अन्य पत्रिकाओं के ग्राहक</u>

सत्संग सुधा	24%	श्रीकृष्ण संदेश	10%
परमार्थ	5%	अखण्ड ज्योति	5%
मानस भारती	5%	आनन्द बोध	5%
चिन्तामणि	5%	रामसंदेश, संतसंदेश	7%
मानसमणि	2%	श्रीरामदूत	2%
साधना, आरोग्य	4%	जीवन दर्शन	5%

धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कादम्बिनी, विमान, आदि

उत्तरदाताओं में से 63% व्यक्ति कल्याण के अतिरिक्त अन्य धार्मिक, आध्यात्मिक पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक हैं । इनमें से सत्संग सुधा 24%, श्री कृष्ण संदेश 10%, के अधिक ग्राहक हैं । इसके

प्रकट होता है कि उत्तरदाता प्रबुद्ध व्यक्ति हैं । अतः इनके उत्तर महत्व रखते हैं ।

(1):ख: कल्याण के पठन का दिनचर्या पर प्रभाव

(क) भारतीय संस्कृति पर आस्था तथा भगवान पर विश्वास बढ़ने तथा ध्यान, स्वाध्याय में वृद्धि	45%
(ख) कर्तव्यनिष्ठा बढ़ने एवं सदाचारी बनने की प्रेरणा	20%
(ग) जीवन में सुख-शान्ति बढ़ी क्रोध, लोभ, कमी,	13%
(घ) कुल मिलाकर जीवन पर अच्छा प्रभाव	15%
(ङ) अनुत्तरित	7%
	100%

(1):ख:1 जीवन पर विशेष प्रभाव(यदि कोई हो)

(क) जीवन को भगवत सेवा के लिये ढालने का प्रयास नाम स्मरण जप, भक्ति में वृद्धि	25%
(ख) भगवान के मंगल विधान पर विश्वास बढ़ना	17%
(ग) ईमानदारी व सत्यनिष्ठा बढ़ी	13%
(घ) स्वाध्याय, आध्यात्म में रुचि बढ़ी	13%
(ङ) परहित-चिन्तन	4%
(च) सामान्य प्रभाव	12%
(छ) अनुत्तरित	18%
	100%

इससे प्रकट होता है कि कल्याण के अध्ययन से भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धाभाव बढ़ा, स्वाध्याय, सत्संग में रुचि बढ़ी । भगवन्नाम जप, स्मरण में वृद्धि हुई । परहित-चिन्तन तथा ईमानदारी बढ़ी । भगवान के विधान के प्रति संतोष एवं मंगल भावना का अनुभव हुआ ।

{ख}2- कल्याण में उल्लिखित साधन, अनुष्ठान का आयोजन

{क}	भगवन्नाम जप	30%	{ख}	भक्ति प्रधान साधन	7%
{ग}	गीता अ0 2 का पाठ	5%	{घ}	रोग निवारण हेतु उपाय	3%
{ङ}	नकारात्मक	20%	{च}	अनुत्तरित	35%
					100%

कल्याण से प्रभावित होकर साधन, अनुष्ठान, उत्तरदाताओं में से 45% ने किये हैं।

{ख}3- परिवार के व्यक्तियों तथा सम्पर्क में आने वालों पर प्रभाव का आंकलन

{क}	धर्म के प्रति आस्था, भक्ति भावना, तथा सत्संग के प्रति रुचि में वृद्धि	24%
{ख}	धर्म में घर में धार्मिक वातावरण का निर्माण एवं सदाचारी बनने की प्रेरणा-जागरूकता बढ़ी	16%
{ग}	परिवार पर सामान्य किन्तु अच्छा प्रभाव	48%
{घ}	अनुत्तरित	12%
		100%

उक्त विवरण से प्रकट है कि कल्याण के पढ़ने से उत्तरदाताओं के परिवारीजनों पर अच्छा प्रभाव पड़ा है। घरों में धार्मिक वातावरण बना है।

{ख}4- कल्याण में प्रकाशित सच्ची घटनाओं का उत्तरदाता तथा परिवारीजनों पर प्रभाव का आंकलन

{क}	पापों एवं बुराईयों से बचने में सहायता	10%

(ख) सही कार्य करने की प्रवृत्ति, सत्यनिष्ठा बढ़ी	18%
(ग) भगवान में आस्था तथा आत्मबल में वृद्धि	24%
(घ) सामान्य प्रभाव	30%
(ङ) अनुत्तरित	18%
	100%

कल्याण में प्रकाशित घटनाओं एवं लेखों को पढ़कर उत्तर-दाताओं के परिवार के व्यक्तियों में अच्छा प्रभाव पड़ा है। बुरे कार्यों से बचने एवं सत्कार्यों में रुचि बढ़ी। भगवान की सत्ता पर विश्वास बढ़ा। साथ ही आत्म बल में भी वृद्धि हुई।

(2):3: <u>श्री पोद्दार जी से आपका परिचय किस प्रकार हुआ</u>

(अ) (उत्तरदाताओं में से श्री पोद्दार जी का परिचय होने का अवसर)

(क) कल्याण सम्पादक के रूप में, धार्मिक ग्रंथों के लेखक के रूप में, धार्मिक ग्रन्थों के सम्पादक के रूप में,	56%
(ख) तीर्थयात्रा की स्पेशल ट्रेन में भ्रमण करते समय	9%
(ग) सिद्ध सन्त के रूप में	7%
(घ) अन्य पूज्य महानुभावों के माध्यम से	6%
(ङ) दूर के सम्बन्धी होने के नाते और प्रेमी भाइयों के द्वारा	18%
(च) गीताप्रेस में काम करने के नाते	5%
	100%

विश्लेषण से प्रकट होता है कि उत्तरदाता महानुभावों में से 56% का परिचय उनके कृतित्व गीताप्रेस से प्रकाशित पत्र तथा साहित्य के द्वारा हुआ। 44% का परिचय उनके धार्मिक एवं संत व्यक्तित्व के प्रभाव से हुआ।

(2):अ: साधना सम्बन्धी पत्राचार

(क) पत्राचार करने वाले उत्तरदाता महानुभाव 38%

(ख) लगभग सभी पत्रों के उत्तर प्राप्त हुए

(ग) सभी ने उन उत्तरों को सुरक्षित रखा

इससे स्पष्ट है कि जिन व्यक्तियों ने साधनासम्बन्धी जिज्ञासाओं के समाधान के लिए पत्र लिखा था पोद्दार जी ने सभी के उत्तर भी दिये थे और वे पत्र उनकी समस्या का समाधान करने वाले थे और वे उन्हें पुण्य धरोहर के रूप में सुरक्षित रखते हैं। यह भी तथ्य स्पष्ट है कि श्री पोद्दार जी सभी पत्रों का उत्तर देते थे।

(2):ब: श्री पोद्दार जी से भेंट/साक्षात्कार का अवसर

(क) स्वर्गाश्रम (ऋषिकेश) के सत्संग के अवसर पर	40%
(ख) बम्बई प्रवास के अवसर पर	3%
(ग) कलकत्ता में	3%
(घ) स्पेशल ट्रेन में यात्रा करते समय	9%
(ङ) गोरखपुर सत्संग अथवा साधना हेतु	23%
(च) गीताप्रेस में नौकरी पाने की दृष्टि से गोरखपुर में	2%
(छ) निराश्रित अवस्था में आश्रय पाने हेतु गोरखपुर में	4%
(ज) क्लेश तथा अन्य सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु	4%
(झ) नकारात्मक अथवा अनुत्तरित	48%
	100%

52% महानुभावों को ही श्री पोद्दार जी के दर्शन करने का सौभाग्य उत्तरदाताओं को प्राप्त हुआ था। कुछ साधन सम्बन्धी समाधान कुछ पारिवारिक परिस्थितियों का निदान जानने कुछ नौकरी

अथवा सहारा प्राप्त करने हेतु उनके पास पहुँचे थे इससे प्रकट होता है कि आज के पाश्चात्य संस्कृति-प्राधान्य काल में कुछ सान्त्वना प्राप्त करने, यहाँ से लाभ पाने के लिए ऐसे लोग पोद्दार जी के पास जाते थे जो थे साक्षात् कल्पवृक्ष हो जिनके पास जाने पर सभी मनोकामनाओं की पूर्ति हो जाती है ।

[2]:[ङ]: श्री पोद्दार जी से परिचय सम्पर्क

2.ङ.1.I

[क] संत के पास रहने	4%
[ख] साधना के लिए	12%
[ग] व्यक्तिगत तथा व्यवहार सम्बन्धी कठिनाइयों का समाधान	9%
[घ] पुस्तक पर सम्मति लेने के लिये	12%
[ङ] गीताप्रेस में कार्य करने के कारण	5%
[च] अनुत्तरित	58%
	100%

2.ङ.1.II

[क] अल्प अवधि	26%
[ख] आवश्यकता पड़ने पर	13%
[ग] कुछ वर्ष की अवधि	2%
[घ] 50 वर्ष की अवधि	2%
[ङ] जीवन पर्यन्त	5%
[च] अनुत्तरित	52%
	100%

2.ङ.2.I प्रत्यक्ष सम्पर्क का विवरण

[क] व्यक्तित्व से प्रभावित होकर सहायक	40%

[ख] अपने घर के बुजुर्गों के साथ	4%
[ग] अन्य कार्य वश	4%
[घ] अनुत्तरित	52%
	100

2.[2.3] <u>सम्पर्क की अवधि</u>

[क] सम्पर्क की अवधि 1-2 घण्टे	17%
[ख] एक दिन की अवधि	23%
[ग] कुछ वर्षों तक	4%
[घ] अनुत्तरित	56%
	100%

इससे प्रकट होता है कि यदा-कदा सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति उनके संत/भागवत व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके पास दर्शन तथा भगवत् प्रेम की पुष्टि से पहुँचे थे और सत्संग में शामिल होने तथा प्रवचन सुनने तथा समस्या विशेष का समाधान प्राप्त करने के लिए गये थे ।

2.3. <u>स्नेह सम्बन्ध का आंकलन</u>

[क] पारिवारिक सम्बन्ध	9%
[ख] सत्संग सम्बन्ध	17%
[ग] धार्मिक जिज्ञासाओं के समाधान	15%
[घ] कार्य व्यवसाय सम्बन्धी	2%
[ङ] आकस्मिक अन्य कार्यवश	17%
[च] अनुत्तरित	40%
	100%

2.3 अंतरंग सम्बन्ध

(क) संत स्वरूप में दर्शन	12%
(ख) निजजन एवं सेवक के रूप में	28%
(ग) मार्ग दर्शन के रूप में	6%
(घ) सामाजिक समस्याओं के समाधान	14%
(ङ) अनुत्तरित	40%
	100%

विचार-विमर्श के प्रमुख विषय

(क) अध्यात्म व धार्मिक जिज्ञासा	24%
(ख) साधन सम्बन्धी प्रश्नोत्तर	17%
(ग) भगवद् चिन्तन	28%
(घ) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष संबंधी प्रश्नोत्तर	10%
(ङ) दहेज सम्बन्धी	4%
(च) अनुत्तरित	73%
	100%

ऊपर के विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि श्री पोद्दार जी के पास धार्मिक जिज्ञासाओं के समाधान, सत्संग तथा साधन सम्बन्धी कठिनाइयों को हल करने एवं सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु जाते थे तथा समुचित समाधान पाते भी थे ।

2.4 स्वप्न सम्बन्धों का अंकन

(क) श्री पोद्दार जी से सम्पर्क करने के निर्देश	00%
(ख) श्री पोद्दार जी के स्वप्न में दर्शन	7%
(ग) देवी देवताओं द्वारा पोद्दार जी से सम्पर्क करने के निर्देश	00%

2.3 <u>अंतरंग सम्बन्ध</u>

[क] संत स्वरूप में दर्शन	12%
[ख] निजजन एवं सेवक के रूप में	28%
[ग] मार्ग दर्शन के रूप में	6%
[घ] सामाजिक समस्याओं के समाधान	14%
[ङ] अनुत्तरित	40%
	100%

<u>विचार-विमर्श के प्रमुख विषय</u>

[क] अध्यात्म व धार्मिक जिज्ञासा	24%
[ख] साधन सम्बन्धी प्रश्नोत्तर	17%
[ग] भगवद् चिन्तन	28%
[घ] धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष संबंधी प्रश्नोत्तर	10%
[ङ] दहेज सम्बन्धी	4%
[च] अनुत्तरित	73%
	100%

ऊपर के विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि श्री पोद्दार जी के पास धार्मिक जिज्ञासाओं के समाधान, सत्संग तथा साधन सम्बन्धी कठिनाइयों को हल करने एवं सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु जाते थे तथा समुचित समाधान पाते भी थे ।

2.4 <u>स्वप्न सम्बन्धों का अंकन</u>

[क] श्री पोद्दार जी से सम्पर्क करने के निर्देश	00%
[ख] श्री पोद्दार जी के स्वप्न में दर्शन	7%
[ग] देवी देवताओं द्वारा पोद्दार जी से सम्पर्क करने के निर्देश	00%

[घ] अन्य मानस में पोद्दार जी की छवि
रहती है-उनकी याद आती है 3%

इस प्रश्न के प्राप्त उत्तरों से यह प्रकट होता है कि कुछ 7% साधकों को स्वप्न में दर्शन हुए है । कुछ के मन में पोद्दार जी की छवि रहती है ।

2.2 **भाव सम्बन्ध**

[क] भाव सम्बन्ध में दर्शन	9%
[ख] कृपा की अनुभूति होती है	8%
[ग] स्वप्न में दो बार दर्शन हुए	7%
[घ] पिता के रूप में भाव सम्बन्ध	12%
[ङ] कल्याण में प्रकाशित लेखों	29%
[च] पोद्दार जी की पुस्तकों के माध्यम से भाव सम्बन्ध बना है ।	25%
[छ] चित्र पूजा गृह में रखते हैं	64%
[ज] प्रेरणा हेतु चित्र रखते हैं	22%

इस प्रश्न के प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण से प्रकट हुआ कि उत्तरदाताओं में से 64% के पूजागृह में श्री पोद्दार जी का चित्र रहता है तथा 22% व्यक्ति अपने घर में श्री पोद्दार जी का चित्र प्रेरणा हेतु रखते हैं ।

2. **जीवन सम्बन्धी जानकारी**

[क] श्री पोद्दार जी की जीवन सम्बन्धी जानकारी	48%
[ख] जानकारी होना लिखा है किन्तु गुप्त रखा पाता है	2%
[ग] परिवार सम्बन्धी जानकारी	20%

(घ) अकाल, बाढ़ सेवा आदि की जानकारी लिखी गई है	10%
(ङ) अनुत्तरित (घटना विशेष की जानकारी नहीं दी गई)	12%
	100%

उक्त विश्लेषण से प्रकट है कि उत्तरदाताओं में से लगभग आधे व्यक्तियों को उनके जीवन सम्बन्धी घटनाओं की जानकारी है उनमें से व्यक्तियों को (कुछ को) परिवार सम्बन्धी जानकारी है कुछ सदस्यों ने जानकारी होना तो लिखा है किन्तु उसे गुप्त रखना उचित लिखा है ।

5. श्री पोद्दार जी के प्रभाव का आकलन

5.1.अ आचरण पर:

(क) पोद्दार जी द्वारा बनाये नियमों के अनुसार जीवन बनाने का प्रयास	8%
(ख) आचार-व्यवहार की शुद्धता	18%
(ग) सरलता, सच्चाई, कर्मठता	16%
(घ) सत्कर्म करने की सुदृढ़ भावना	6%
(ङ) भगवद् विश्वास में वृद्धि	15%
(च) मन की शान्ति	5%
(छ) प्राणी मात्र में सद्भाव	7%
(ज) अनुत्तरित	25%
	100%

5.1.आ. चिन्तन-मनन पर प्रभाव

(क) पुस्तकों द्वारा भक्तिभाव व स्वाध्याय	31%
(ख) पूर्ण समर्पण भाव	12%

[घ] अकाल, बाढ़ सैलाब आदि की जानकारी लिखी गई है	10%
[ङ] अनुत्तरित [घटना विशेष की जानकारी नहीं दी गई]	12%
	100%

उक्त विश्लेषण से प्रकट है कि उत्तरदाताओं में से लगभग आधे व्यक्तियों को उनके जीवन सम्बन्धी घटनाओं की जानकारी है उनमें से व्यक्तियों को [कुछ को] परिवार सम्बन्धी जानकारी है कुछ स्वजनों ने जानकारी होना तो लिखा है किन्तु उसे गुप्त रखना उचित लिखा है ।

5. <u>श्री पोद्दार जी के प्रभाव का आकलन</u>

<u>5.1.अ</u> <u>आचरण पर</u>:

[क] पोद्दार जी द्वारा बताये नियमों के अनुसार जीवन बनाने का प्रयास	8%
[ख] आचार-व्यवहार की शुद्धता	18%
[ग] सरलता, सच्चाई, कर्मठता	16%
[घ] सत्कर्म करने की सुदृढ़ भावना	6%
[ङ] भगवद् विश्वास में वृद्धि	15%
[च] मन की शान्ति	5%
[छ] प्राणी मात्र में सद्भाव	7%
[ज] अनुत्तरित	25%
	100%

<u>5.1.आ.</u> <u>चिन्तन-मनन पर प्रभाव</u>

[क] पुस्तकों द्वारा भक्तिभाव व स्वाध्याय	31%
[ख] पूर्ण समर्पण भाव	12%

[ग] सिद्धान्त, आचरण समन्वय	5%
[घ] चिन्तन, मनन पर प्रभाव	13%
[ङ] भगवद्भजन में वृद्धि	11%
[च] अन्य प्रकार का प्रभाव	20%
[छ] अनुत्तरित	11%
	100%

५.१.इ. भजन, पूजन पर प्रभाव

[क] राधा कृष्ण भक्ति पर आस्था	12%
[ख] धार्मिक ग्रन्थ व लेख पढ़ने में वृद्धि	25%
[ग] भजन, पूजन में वृद्धि	12%
[घ] उन जैसा बनने का प्रयास	3%
[ङ] अनुत्तरित	48%
	100%

५.१.ई. साधन पर प्रभाव

[क] सब कार्य भगवान्‌द्वारा कराये गये	8%
[ख] भगवद् विधान को हितकारी मानना	6%
[ग] अनुकूल प्रभाव	14%
[घ] बहुत अधिक	15%
[ङ] साधारण प्रभाव	35%
[च] अनुत्तरित	20%
	100%

५.१.उ. अन्य प्रभाव

[क] उनसे प्रेरणा बराबर मिलती रहना	14%
[ख] उनकी नित्य अनुभूति	8%

[ग] कर्तव्य का बोध	12%
[घ] संसार परिवर्तनशील है ऐसा भाव	10%
[ङ] लोक व्यवहार में शालीनता	3%
[च]	

प्रश्न ५ के प्राप्त उत्तरों का विश्लेषण करने से प्रकट हुआ कि श्री पोद्दार जी के संपर्क में आने से तथा उनकी पुस्तकों एवं कल्याण पढ़ने से उत्तरदाताओं के आचरण, पर उनके चिन्तन-मनन पर, उनके साधन भजन पर प्रभाव पड़ा है । कुछ भगवान के विश्वासी बने हैं । आध्यात्मिक और धार्मिक लेखों के पढ़ने की रुचि जागृति हुई है । आचार-व्यवहार में शुद्धता तथा सच्चाई बढ़ी है । जन सेवा करने का प्रयास करने की प्रेरणा मिली है । इस प्रकार उत्तरदाताओं पर अच्छा प्रभाव पड़ा है । जन सामान्य में उनके सुझाव, सेवा भक्ति, एवं सद्व्यवहार का रचनात्मक प्रभाव पड़ा है ।

५.२. परिवारीजनों पर प्रभाव

[क] परिवार में भगवद् भक्ति की वृद्धि, ध्यान, स्मरण	46%
[ख] ईमानदारी एवं अपनी कमाई पर निर्भररहना	6%
[ग] उनके बताये मार्ग पर चलने से लाभ	20%
[घ] दया, भावना व सहृदयता की वृद्धि	12%
[ङ] घर में शान्ति	6%
[च] अनुत्तरित	10%
	100%

इससे प्रकट होता है कि पोद्दार जी के ग्रंथों के पढ़ने से, परिवार के पोद्दार जी के सम्पर्क में आने तथा कल्याण के पढ़ने से पारिवारिक वातावरण सौमनस्य पूर्ण हुआ भगवान् की भक्ति में वृद्धि हुई । ईमानदारी, सच्चाई पर चलने की प्रेरणा मिली है ।

5.2 पोद्दार जी के सम्पर्क में आने की कामना

(क) इच्छा थी किन्तु अवसर नहीं मिला	24%
(ख) यदि सम्पर्क हो जाता तो कल्याण हो जाता जीवन धन्य हो जाता	66%
(ग) अनुत्तरित	10%
	100%

इससे प्रकट होता है कि पोद्दार जी के इहलीला संवरण से अब लोगों का प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं हो सकता इसका लोगों को दुःख है। यदि जीवन काल में सम्पर्क हो पाता तो उत्तरदाताओं का ख्याल है कि उनका कल्याण हो जाता।

5.3 श्री पोद्दार जी के सम्बन्ध में अभिमत/एक विवेचन द्वारा।

(क) सच्चे भगवद् भक्त	16%	(ख) सच्चे गृहस्थ संत	30%
(ग) दिव्य विभूति	2%	(घ) प्रभु के निजी पार्षद	4%
(ङ) अद्वितीय महापुरुष	5%	(च) महान व्यक्तित्व	6%
(छ) दुखियों के मसीहा	2%	(ज) आधुनिक चैतन्य	2%
(झ) भारतीय संस्कृति के आलोक स्तंभ	2%	(ट) धर्म उद्धारक उच्च कोटि के धार्मिक व्यक्ति	10%
(ठ) परम विद्वान	10%	(ड) गुणाकर, सहृदयी	4%
(ढ) अनुत्तरित	7%		
	100%		

इसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 30% व्यक्ति उन्हें उच्चकोटि के महान संत मानते है तथा 16% व्यक्ति उन्हें सच्चे भगवद् भक्त 4% व्यक्ति उन्हें भगवान के पार्षद मानते हैं 26% व्यक्ति उन्हें भारतीय संस्कृति के एवं धर्म के उद्धारक तथा व्याख्याता मानते हैं।

।

5.2. श्री पोद्दार जी के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में एक दो पंक्ति में

उत्तरदाताओं ने अपनी मान्यता के अनुसार आदर भावना से भिन्न-भिन्न शब्दावलियों में व्यक्तित्व के बारे में लिखा है । कुछ उदाहरण स्वरूप कथन अंकित किये जाते हैं ।

[क] उनका व्यक्तित्व सराहनीय एवं अनुकरणीय है 8%

[ख] उनका व्यक्तित्व हिमालय सा विशाल है 4%

[ग] उनका व्यक्तित्व अकथनीय है वे सरल संत पुरुष थे 8%

[घ] वे बड़े विद्वान थे 8%

[ङ] वे निस्वार्थ भाव से समाज सेवक थे 4%

[च] वे करुणामूर्ति परहित चिन्तक अनन्यभक्त एवं अत्यन्त दयालु थे 4%

[छ] वे महान व्यक्तित्व के असाधारण जीवधे थे अपार स्नेह था उनका 5%

[ज] सहजता, सरलता, विनम्रता, अध्यवसाय एवं कर्तव्यनिष्ठ के प्रति समर्पित जीवन थे 8%

[झ] सनातनधर्म तथा भारतीय संस्कृति के मूर्तिरूप थे, 3%

[ञ] उनका व्यक्तित्व उदात्त एवं आकर्षक था 4%

[ट] उनका व्यक्तित्व अथाह समुद्र था जिस व्यक्ति की जो इच्छा रहती थी वही उसने पाया 5%

[ठ] असामान्य गृहस्थ संत, परमभागवत कर्मयोगी निःस्वार्थिता एवं प्रेम के प्रतीक थे 5%

[ग] सबके सुहृद सरलचित, दया के सागर राधामाधव की लीला में नित्य लीन 4%

[घ] पोद्दार जी साधु प्रकृति के निर्लोभी, परोपकारी, 5%

उत्तरदाताओं के मंतव्यों से प्रकट है कि श्री पोद्दार जी के प्रति अब भी वैसी ही मान्यता है जैसी कि उनके निर्वाण के समय

महापुरुषों तथा साधु संतों ने स्वागत की थी । उनके भगवद् धाम जाने के 15-16 वर्ष बाद भी जनता के हृदय में आदरपद स्थान अक्षुण्ण रूप में बना है ।

5.3. <u>श्री पोद्दार जी को आप किस रूप में स्मरण करते हैं।</u>

(क)	भगवान के रूप में	5%
(ख)	मार्गदर्शक, दिव्य सन्त के रूप में	5%
(ग)	संत के रूप में	26%
(घ)	भक्त के रूप में	7%
(ङ)	परम विद्वान् धर्मोपदेशक के रूपमें	10%
(च)	अच्छे लेखक, ग्रंथ कार के रूप में	5%
(छ)	संपादक के रूप में	10%
(ज)	अपने पन के भाव से	5%
(झ)	सनातन धर्म के मसीहा के रूपमें	5%
(ञ)	अनुत्तरित	22%
		100%

उक्त विवरण से प्रकट है कि 33% प्रतिशत उत्तरदाता श्री पोद्दार जी को संत/भक्त के रूप में स्मरण करते है 5% उत्तरदाता उन्हें दिव्य संत व मार्गदर्शक के रूप में तथा 5% भगवान के रूप में, 25% व्यक्ति उन्हें विद्वान, अच्छे लेखक व सम्पादक के रूप में, 5% उनसे अपनत्व मानते हैं तथा 5% उन्हें सनातन धर्म का मसीहा मानकर याद करते हैं । श्री पोद्दार जी का स्मरण उत्तरदाताओं में से जब भक्तों की एवं कल्याण कारी बातों की चर्चा होती है, धार्मिक क्रियाओं की चर्चा तथा भगवान से उनका सम्पर्क होने के प्रसंग पर, संत व भगवद्भक्त के रूप में, पूजा एवं पाठ एवं राधाकृष्ण की उपासना के अवसर पर श्री पोद्दार जी को कुछ महानुभाव गीता परिकर के रूप में,

याद करते हैं। आज के पत्रकारिता जगत में ऐसे अनाचार का प्रसंग आने पर श्री पोद्दार जी को आदर्श पत्रकार के रूप में, भारतीय संस्कृति की रक्षा एवं पुनर्जागरण के प्रसंग में स्मरण किया जाता है।

6.0 श्री पोद्दार जी की पुस्तक का नाम जो प्रिय हो

[क] पद रत्नाकर	18%	[ख] राधामाधव चिन्तन	8%
[ग] काम के पत्र	6%	[घ] राधामाधव रस सुधा	13%
[ङ] सुखी जीवन	2%	[च] कल्याणकारी आचरण	4%
[छ] भगवच्चर्चा	3%	[ज] दीन-दुखियों के प्रति कर्तव्य	3%
[झ] कल्याण के विशेषांक	8%	[ञ] सभी पुस्तक	17%
[ट] अनुत्तरित	18%		

100%

इससे प्रकट है कि उत्तरदाताओं में से 18प्रतिशत ने पद रत्नाकर को, 13% ने राधामाधव रससुधा [षोडशगीत] को तथा 8% ने राधामाधव चिन्तन को अपना प्रिय ग्रंथ माना है। पद रत्नाकर को प्रिय ग्रन्थ मानने का कारण इसमें रोग, शोक तथा मृत्यु को भगवान के रूप में, मंगल विधान के रूप में, दर्शाया गया है। कुछ ने इस ग्रन्थ को सूरसागर की तरह भक्ति रस तरंगिनी के रूप में माना है। राधामाधव चिन्तन को पसंद करने का कारण यह लिखा है कि मन सहज ही ईश्वर चिन्तन में लग जाता है, कुछ ने राधाभक्ति के मार्ग में मार्गदर्शन देने वाला कुछ ने, राधाकृष्ण के दिव्य प्रेम की आवश्यक व्याख्या करने वाला अपने तरह की अद्भुत पुस्तक है। काम के पत्रों को व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने वाला तथा कल्याण कारी अवश्य आचरण को सांसारिक जीवन को सुधारने की प्रेरणा देने वाली पुस्तक के रूप में अंकित किया है -

2.0 श्री पोद्दार जी की रचना विशेष जो प्रिय लगी हो

इस प्रश्न के उत्तर में कुछ उत्तरदाताओं ने ग्रन्थों के नाम कल्याण कुंज, लोक-परलोक का सुधार, पद रत्नाकर, प्रार्थना, पद रत्नाकर, षोडश गीत, कुछ ने "पोद्दार जी की सभी रचनाएं" तथा कुछ ने उनके द्वारा रचित पदों की पहली पंक्ति उद्धृत की है। ये प्रथम संदर्भानुसार पंक्तियाँ है।

[1] कर प्रणाम तेरे चरणों में लगता हूँ अब तेरे काज। [122]

[2] तुम हो मंत्री, मैं यंत्र, काठ की पुतली मैं, तुम सूत्रधार [597]

[3] नाथ मैं थारो ही थारो।
चोखो बुरो कुटिल अरु कामी, जो कुछ हूँ सो थारो ।[125]

[4] दोउ चकोर, दोउ चन्द्रमा, दोउ अलि पंकज दोउ [9]

[5] सौंपा दी मन प्राण तुम्हीं को सौंप दिया ममता अभिमान [439]

[6] मन्मथ-मंथन मन मथन वाले मुस्कान अंग [2]

[7] अनोखा यह अभिनय संसार [1217]

[8] माता-पिता सेवक के घर, पतिव्रता नारी के घर
इन्द्रिय विजय नरवर के घर, अतिथि परायण के सुनि घर ।।[1229]

एक ने षोडश अक्षर मंत्र हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे, हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। को श्री पोद्दार जी की रचना मानकर प्रिय कहा है। श्री पोद्दार जी इस मंत्र को जपने की अपील हर वर्ष कल्याण में निकालते थे। कल्याण सम्पादन विभाग में अलग नाम-जप विभाग स्थापित है। अब भी अक्टूबर। के अंक में कार्तिक पूर्णिमा से लेकर चैत्र पूर्णिमा तक अधिकाधिक इस षोडश मंत्र के जपने का अनुरोध कल्याण से किया जाता है।

उत्तरदाताओं में कुछ ने रचनाओं का नाम देने के बाद रचना के प्रति अपना अभिमत व्यक्त करते हुये लिखा है, "मन को शान्ति मिलती है, मुश्किल के समय में भी शान्ति प्राप्त होती है"कुछ ने

पाते समर्पण का भाव जाग्रत होता है । यह सृष्टि भगवत्स्वरूप है ऐसा मानकर कार्य करने की एवं मन को निर्मल एवं निष्काम बनाने की प्रेरणा मिलती है ।

नोट :- उत्तरदाताओं द्वारा उद्धृत पंक्तियाँ पद रत्नाकर के जिस पद में आती है तथा उत्तरदाता का आशय जिस पूरे पद से था उसको इंगित करने के लिए पंक्ति के सामने पद रत्नाकर की पद संख्या अंकित कर दी गई है ।

9.0 <u>श्री पोद्दार जी का स्थान निर्धारण</u>

उत्तरदाताओं ने श्री पोद्दार जी को सच्चा भगवद्भक्त, गृहस्थ वेश में परमसंत, उच्चकोटि के समाज सेवक, देश भक्त, गोभक्त, तथा श्रेष्ठ सम्पादक कहा है । कुछ ने भक्ति के क्षेत्र में उन्हें भक्तवर हनुमान, कुछ ने, चैतन्य महाप्रभु का दूसरा रूप लिखा है । कुछ की राय में वे 20वीं शदी के सूरदास थे । कुछ ने उनकी समता गोस्वामी तुलसीदास जी से की है । देश सेवा के क्षेत्र में कुछ ने उन्हें लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, तथा दयानन्द सरस्वती के समान लिखा है । प्रमुख उत्तरदाताओं के उक्त कथन के अतिरिक्त दो ने प्राचीन काल से अब तक उनके समान बहुमुखी व्यक्तित्व के व्यक्ति का नाम नहीं सुना गया लिखा है । 24% उत्तरदाताओं ने श्री पोद्दार जी को "अप्रतिम" शब्द से अभिहित किया है ।

9.01. <u>इस युग को श्री पोद्दार जी की देन</u>

इस प्रश्न के उत्तर में प्रमुख वर्ग के उत्तरदाताओं ने व्यक्त किया है कि श्री पोद्दार जी ने साध्यसाधक का एकत्व बोध (अद्वैत भावना) तथा उनके दिव्य स्वरूप का अनुकूल दर्शन देकर भक्त समाज को एक नयी दिशा दी है । उनका यह मौलिक चिन्तन, युग को उनकी प्रमुख देनों में से एक है । 12% उत्तरदाताओं का यह मत रहा है ।

इसके अतिरिक्त 55% उत्तरदाताओं ने श्री पोद्दार जी की देन "भारतीय संस्कृति के नैतिक एवं शाश्वत मूल्यों का पुनरुद्धार" लिखा है । इसके अन्तर्गत भारतीय संस्कृति के मूल मूल्यों को जन सामान्य तक कम मूल्य में उपलब्ध कराना, निष्काम भाव से प्राणीमात्र की सेवा, गोवंश की रक्षा, भगवन्नाम जप, लोक मंगल के कार्यों का सम्पादन तथा असंख्य लोगों को कल्याण मार्ग पर चलाना आदि सम्मिलित है ।

9.2 समाज एवं राष्ट्र पर श्री पोद्दार जी का प्रभाव

श्री पोद्दार जी द्वारा भारतीय संस्कृति के नैतिक एवं शाश्वत मूल्यों के पुनर्जीवन सम्बन्धी कार्यों प्रत्यक्ष रूप से समाज पर प्रभाव पड़ा है । कल्याण पत्र ने जहाँ एक ओर समाज में त्याग, सत्यनिष्ठा, भगवान में आस्था, मानवमात्र में एकता बन्धुत्व की भावना भरी है उसके विशेषांकों ने हिन्दूधर्म के प्राचीन धर्ममूल्यों के प्रति श्रद्धाजागृति की है । ज्ञानवर्धक उत्तम साहित्य का प्रचुर प्रकाशन करके राष्ट्रभाषा को समृद्ध किया गया है । अंग्रेजी भाषा में कल्याण कल्प तरु प्रकाशित करके विदेशों में हिन्दू धर्म मूल्यों, हिन्दू संस्कृति के प्रति आदर भावना उत्पन्न की गई है । श्री राधाकृष्ण के दिव्य एवं अलौकिक प्रेम राज्य जिसमें त्याग ही त्याग है, गोपीभाव की व्याख्या देकर रीतिकालीन कवियों की संकुचित दृष्टि एवं उससे फैलने वाली भावना को परिष्कृत किया गया है ।

9.3 श्री पोद्दार जी के किन कार्यों को पूरा किया जाय/आगे बढ़ाया जाय

इस सम्बन्ध में उत्तरदाताओं ने तीन प्रमुख कार्यों को किये जाने की राय व्यक्त की है ।

[1] नाम जप, गीता रामायण प्रचार, भक्त/संत साहित्य का प्रचार आदि कार्य चलते रहना चाहिये ।

[2] श्री पोद्दारजी के लेखों का अन्य भाषाओं में अनुवाद कराया जाय

उनकी "वसुधैव कुटुम्बकम्" भावना को चरितार्थ करने हेतु यह आवश्यक कदम होगा ।

§3§ गीता परक समता दृष्टि का प्रचार तथा मानवता की रक्षा सम्बन्धी कार्य किया जाना चाहिए ।

9.4 श्री पोद्दार जी के लिए सच्ची श्रद्धांजलि क्या होगी?

उत्तरदाताओं ने व्यक्त किया है कि उनके विचारों के अनुसार उनका जैसा त्याग एवं सेवामय जीवन क्रम अपनाया जाय, उनके साहित्य के अध्ययन-अनुशीलन के लिए प्रेरित किया जाय जिससे पाठकों एवं अध्येताओं का कल्याण हो । ऐसा करना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी ।

9.5 समाज और राष्ट्र को श्री पोद्दार जी के लिए क्या करना चाहिए

इस प्रश्न के उत्तर में दो अच्छे सुझाव प्राप्त है है हुये है-

§1§ श्री पोद्दार जी की जयन्ती मनाई जावे तथा उनकी सर्वविधि से की गई सेवाओं का आकलन किया जावे ।

§2§ उनकी स्मृति में संत साहित्य शोध संस्थान की स्थापना की जावे जहाँ उनके विचारों, सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुये उनके सन्देशों का प्रचार प्रसार हो, उनकी तरह ही गीता और रामचरित मानस का प्रचार प्रसार हो ।

9.6 श्री पोद्दार जी की समसामयिकता का प्रतिपादन

इस सम्बन्ध में जो उत्तर प्राप्त हुये है उनका विश्लेषण करने से निम्नांकित 5 तथ्य सामने आये है -

§1§ श्री पोद्दार जी का साहित्य शाश्वत एवं सार्वकालिक महत्व का है इस कारण वह समसामयिक है ।

§2§ श्री पोद्दार जी का व्यक्तित्व देश सेवक, क्रान्तदृष्टा, समाज सुधारक, मानवता वादी था, अतः वह समसामयिक है ।

[3] नैतिक मूल्यों के गिरावट के सन्दर्भ में उनका भक्ति, त्याग, वैराग्य एवं सच्चे ज्ञान का बोध कराने वाले तथा चरित्र निर्माण सम्बन्धी साहित्य समसामयिक है । और रहेगा ।

[4] आज के भोग प्रधान प्रवृत्ति के युग में युवक युवतियों के सही दिशा निर्देश करने वाला उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व समसामयिक है ।

[5] प्राणीमात्र में भगवद्दर्शन करते हुए सेवा भाव की प्रतिष्ठा समसामयिक है ।

9.7 श्री भाईजी हनुमान प्रसाद पोद्दार के सम्बन्ध में अन्य कुछ बात कहने के लिए उत्तरदाताओं को लिखा गया था । उनमें कुछ उनके सान्निध्य का लाभ उठाने वाले उत्तरदाता महानुभावों ने व्यक्त किया है कि श्री पोद्दार जी "कलयुग के परिवेश में स्वयं भगवान थे" " आचार्य परम्परा के महान आचार्य , स्मृति कार महान संत, दार्शनिक एवं साहित्यकार" थे । "उनका व्यक्तित्व अलौकिक था उनके व्यक्तित्व की विशेषता दूसरों के प्रति अपार स्नेह तथा दूसरों के कष्टों को देखकर द्रवित हो जाना था ।" "वे भारतीय संस्कृति, कला ज्ञान के संरक्षक और प्रसारक थे ।"

प्रश्नावली से महत्वपूर्ण तथ्य सामने आये है और उनके उत्तरों से श्री पोद्दार जी के भागवत एवं सन्त व्यक्तित्व के विषय में उन गुणों की पुष्टि होती है जो श्रद्धांजलियों के उनके महाप्रयाण के बाद व्यक्तिशः व्यक्त की गई थी तथा जिनका प्रकाशन "भाई जी पावन स्मरण" नामक ग्रन्थ में हुआ था ।

साक्षात्कार सूची

1. श्री राधा बाबा
2. श्रीमती रामदेई [धर्मपत्नी श्री भाई जी]
   [श्री भाई जी के अभिन्न स्वरूप बाबा जी के एवं उनकी धर्मपत्नी के दर्शन करने एवं भाई जी पर शोध कार्य हेतु आशीर्वाद लेने]
3. डा० भगवती प्रसाद सिंह
   [श्री भाई जी पर विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखने वाले, यशस्वी लेखक से आशीर्वाद लेने तथा प्रश्नावली के संशोधन एवं भाई जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सम्बन्धित अन्य सामग्री की जानकारी हेतु]
4. दादा राम स्नेही
   [श्री भाई जी के अनन्य सेवक, से आशीर्वाद लेने हेतु]
5. श्री कृष्णचन्द्र अग्रवाल
   [श्री भाई जी के अनन्य सेवक, गीतावाटिका के प्रबन्धक से आशीर्वाद, जानकारी तथा भाई जी के अप्रकाशित साहित्य की जानकारी हेतु]
6. श्री हरिकृष्ण दुजारी
7. श्री राधेश्याम बंका
8. पं० शिवनाथ दुबे
9. श्री भीमसेन चोपड़ा
10. पं० जानकी प्रसाद शर्मा
   [श्री भाई जी के जीवन एवं कृतित्व के सम्बन्ध में जानकारी लेने हेतु एवं प्रश्नावली को भराने हेतु]
11. डा० कृष्णा बरतिया
12. डा० सदानन्द गुप्त
   [इनके द्वारा श्री भाई जी पर किये गये शोध की जानकारी तथा शोध प्रबन्ध देखने, प्रश्नावली को भरवाने हेतु]

[इन समस्त कार्यकर्ताओं से गोरखपुर में भेंट की]

श्री पोद्दार वंश-वृक्ष

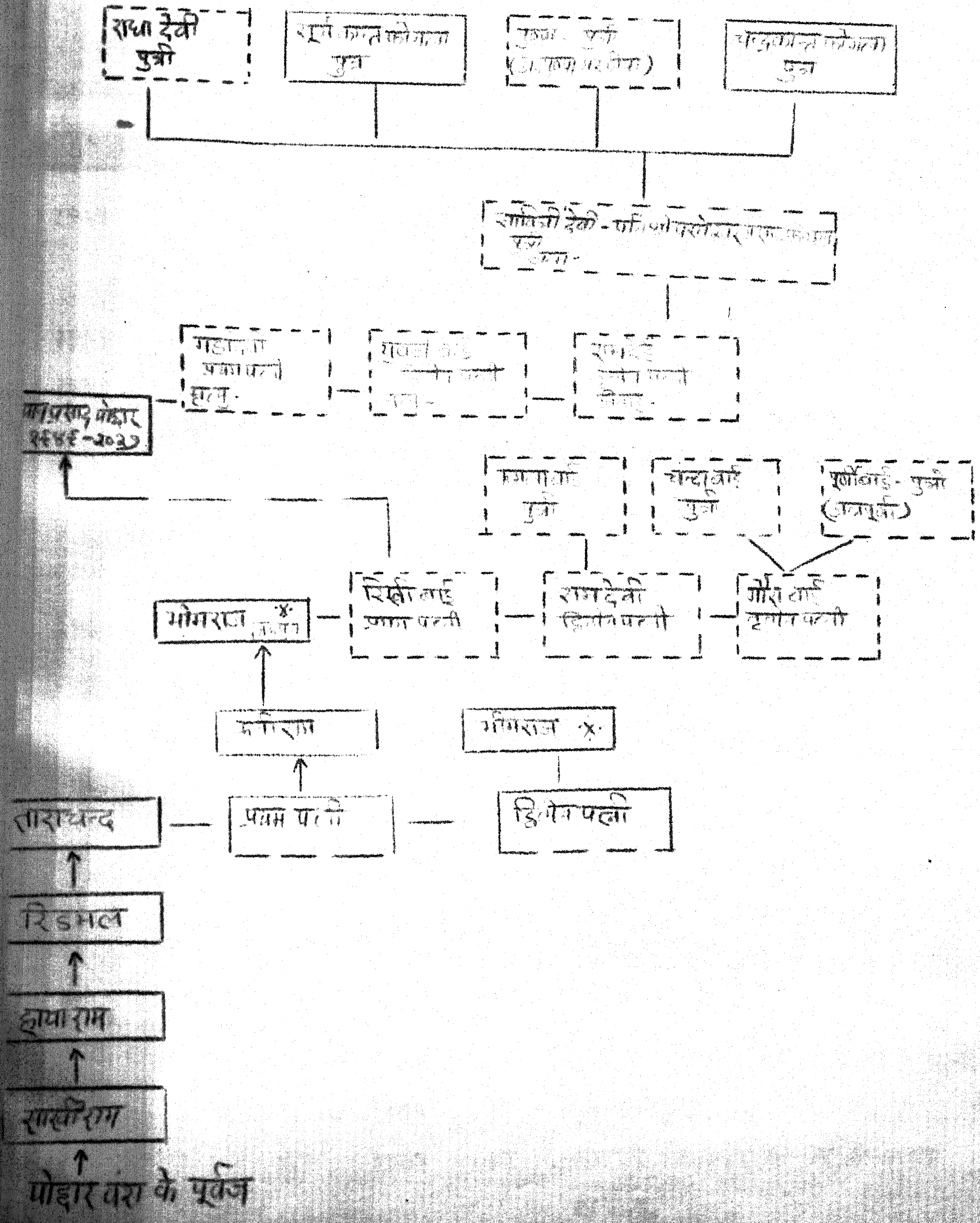

श्री भाई जी की जन्म से लेकर महाप्रयाण तक जीवन यात्रा

(हिन्दी तिथि, अंग्रेजी महीने एवं आयु के अनुसार)

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1949	आश्विन कृष्ण 12	17सि0 92	-	-शनिवार को शिलांग में जन्म
	मार्गशीर्ष कृष्ण			-सेठतारा चन्द्र जी का निधन
1951	श्रावण कृष्ण 1	1894	1वर्ष8माह	माता रिखीबाई का निधन
1953		1896	4	-भूकम्प से रक्षा
1956	मार्गशीर्ष शुक्ल 1	1899	7	श्री कनीराम जी का निधन
1957		1900	8	-निम्बार्क पीठ बाबा गेहरदास के प्रशिष्य श्री ब्रजदास से दीक्षा. -पं0 गौरीलाल जी से यज्ञोपवीत दीक्षा.
1958		1901	9	-श्री भीमराज का शिलांग से सपरिवार कलकत्ता आगमन.
1961	ज्येष्ठ कृष्ण 4	1904	12	-श्री सुखलाल हरलिया की पुत्री महादेवी बाई से विवाह.
1962		1905	13	-लार्ड कर्जन द्वारा बंगविच्छेद की घोषणा. -खादी का प्रयोग प्रारम्भ.
1964		1907	15	-कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में तथा वे एक सदस्य के रूप में सम्मानित हुई.
1966	ज्येष्ठ कृष्ण	1909	17	-पुत्र का जन्म.
	ज्येष्ठ शुक्ल 6	1909	17	-प्रथम पत्नी महादेवी बाई का निधन.
	श्रावण कृष्ण 14	1909	17	-पुत्र की मृत्यु.
		1909	17	-स्वामी शंकरानंद जी का कलकत्ता आगमन.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1967		1910	18	-सेठ जयदयाल गोयन्दका का कलकत्ता आगमन एवं भेंट.
	पौष	1911	19	-"मर्यादा" मासिक पत्रिका में प्रथम लेख "मातृभूमि की पूजा" प्रकाशित.
1968	वैशाख शुक्ल 3	1911	19	-श्री मंगतराम जी सरावगी की पुत्री सुभटीबाई से द्वितीय विवाह.
1969		1912	20	-मारवाड़ी युवकों द्वारा मारवाड़ी सहायक समिति की स्थापना.
		1912	20	-माँ आनन्दमयी से प्रथम भेंट(ढाका में).
	श्रावण कृष्ण 5	1912	20	-श्री भीमराज जी की मृत्यु(रतनगढ़ में).
1971		1914	22	-पं0 मदन मोहन मालवीय का कलकत्ता आगमन एवं भेंट एवं पोद्दार जी द्वारा योगदान.
1972		1915	23	-महात्मागांधी का कलकत्ता आगमन एवं भेंट.
1973	माघ कृष्ण 12	1916	24	-पुत्र का जन्म.
	माघ कृष्ण 14			-पुत्र की मृत्यु.
	माघ शुक्ल 5			-पत्नी सुभटी बाई की मृत्यु.
	वैशाख शुक्ल3			-श्री सीताराम सांगनेरिया की पुत्री रामदेई बाई से तृतीय विवाह.
	श्रावण कृष्ण 5	16जुलाई1916		-राजद्रोह के अपराध में कलकत्ता के डुरान्डा हाउस जेल में भेजे गए।
	श्रावण शुक्ल 5	31जुलाई1916		-अलीपुर जेल स्थानान्तरित किये गए।
				-भगवन्नाम जप का श्री गणेश, साधना जीवन की शुरुआत।

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-"नारद भक्ति-सूत्र" की टीका लिखी, जो "प्रेमदर्शन" के नाम से गीताप्रेस, गोरखपुर, से प्रकाशित हुई ।
1975	वैशाख शुक्ल 4	4 मई 1918		-नजरबन्दी समाप्त.
				-बंगाल से निष्कासन व रतनगढ़ प्रस्थान
	भाद्र			-रतनगढ़ से बम्बई प्रस्थान.
				-बम्बई में व्यावसायिक जीवन में प्रवेश.
1976		1919		-शांताक्रुज रेल्वे स्टेशन पर अज्ञात व्यक्ति द्वारा प्राण रक्षा.
				-बालगंगाधर तिलक के अनुयायी के रूप में अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन में सम्मलित.
	आषाढ़ शुक्ल 4			-छोटी बहिन अन्नपूर्णा का विवाह
				-अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की स्थापना.
1977		1920		-पुत्र का जन्म.
				-लाला लाजपतराय के सभापतित्व में महात्मा गांधी व मो०अली जिन्ना के साथ अखिल भारतीय कांग्रेस के विशेष अधिवेशन, कलकत्ता में सम्मलित हुए।
				-देश बन्धु चितरंजन दास जी से भेंट.
				-अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन, नागपुर में सम्मलित हुए ।
				-अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा" की प्रान्तीय शाखा बम्बई के मंत्री चुने गए ।

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1978		1921	29	-पुत्र की मृत्यु
				-हकीम अजमल खाँ के सभापतित्व में अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन, अहमदाबाद में सम्मिलित.
				-अ०भा०अधिवेशन अहमदाबाद में कांग्रेसजनों में धार्मिक मतभेद होने के कारण अधिवेशनों में सम्मिलित होना बंद कर दिया.
1979	पौषकृष्ण 13	1922	30	-सेठ जयदयाल जी का सत्संग मण्डली सहित बम्बई आगमन.
				-श्री शिवनारायण नेमाणी की बाड़ी में सेठ जी का प्रवचन.
				-सेठ जी के आदेशानुसार "नेमाणी की बाड़ी" में पोद्दार जी द्वारा सत्संग का आरम्भ तथा गीता व रामायण पर नियमित प्रवचन.
				-भगवान श्री राम के दर्शन.
				-सामूहिक जप व यज्ञ का भी श्रीगणेश.
	ज्येष्ठ शुक्ल 6			-दूसरी छोटी बहिन चन्दाबाई का रतनगढ़ में विवाह.
1980	फाल्गुन शुक्ल 15	1923	31	-बम्बई में वृहद नाम जप यज्ञ का आयोजन.
	वैशाख शुक्ल 13			-दादी रामकौर देवी का निधन.
				-बीकानेर प्रान्त के भक्त श्री गंभीर चन्द्र जी दुजारी से प्रथम भेंट ।

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
1982	वैशाख शुक्ल 1	1925	33	-मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का सातवाँ अधिवेशन फतेहपुर (राजस्थान) में सम्मिलित हुए। -पारसी प्रेत से साक्षात्कार बम्बई में हुआ एवं उसके लिए श्राद्ध की व्यवस्था की गई। -सेठ जमनालाल बजाज के साथ खादी प्रचार के लिए बीकानेर यात्रा.
1983	चैत्र शुक्ल 1,2,3	13,14,15 अप्रैल, 1926	34	-मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का दिल्ली में वार्षिक अधिवेशन. -अधिवेशन में धार्मिक पत्रिका निकालने का प्रस्ताव. -सेठ जी, भाई जी, सेठ [illegible] आदि के साथ रेल यात्रा में खिलानी और रेवाड़ी के मध्य में "कल्याण" मासिक पत्रिका निकालने का निर्णय.
	श्रावण कृष्ण 11	अगस्त 1926		-"कल्याण" के प्रथम अंक का व्यंकटेश्वर प्रेस सत्संग भवन, बम्बई से प्रकाशन.
1984	चैत्र शुक्ल	1927	35	-मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का अधिवेशन कलकत्ता में सम्मिलित हुए.
	श्रावण शुक्ल 7			-कल्याण का प्रथम विशेषांक "भगवन्नामांक" बम्बई से प्रकाशित हुआ.
	भाद्र कृष्ण 12	अगस्त		-कल्याण कार्यालय का बम्बई से गोरखपुर स्थानान्तरण एवं भाई जी की बम्बई से गोरखपुर यात्रा प्रस्थान.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/आयु	
	भाद्र	अगस्त		-गीताप्रेस से "कल्याण" का प्रकाशन प्रारम्भ.
	आश्विन कृष्ण 6			-जसीडीह में 10-12 व्यक्तियों के समक्ष भगवान विष्णु के दर्शन.
	आश्विन कृष्ण 6	23 अक्टूबर 1927		-शांति बाबू के बगीचे के कमरे में भगवानविष्णु के दर्शन.
	आश्विन कृष्ण 12	8 अक्टूबर 1927		-शांति बाबू के बगीचे के कमरे में भगवान विष्णु के दर्शन.
	कार्तिक कृष्ण 12			-भगवान विष्णु के दर्शन.
	कार्तिक कृष्ण 30			-गोरखपुर में संकीर्तन का प्रारम्भ.
	मार्ग शीर्ष कृष्ण 10			-भगवन्नाम प्रचारार्थ 16 व्यक्तियों -सहित तीर्थ यात्राका प्रारम्भ.
	मार्ग शीर्ष शुक्ल 11			-पोद्दार जी की अध्यक्षता में गीता जयन्ती का मनाया जाना.
1985	चैत्र शुक्ल	1928		-अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के साम अधिवेशन, बम्बई में सम्मिलित एवं भाषण.
	वैशाख शुक्ल 4			-गोरखपुर में साधन कोठी की स्थापना.
	वैशाख शुक्ल 7			-श्री चिम्मन लाल गोस्वामी जी का गोरखपुर आगमन एवं भाई जी से भेंट वार्ता.
1986	वैशाख शुक्ल 4	1929		-गोरखपुर में "साधन समिति" की स्थापना.
1986	वैशाख शुक्ल 8,9	1929		-बाबा राघव दास जी के प्रयत्न से "अग्रवाल" के आयोजन में पोद्दार जी अपने परिकरों

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-सहित सम्मिलित हुए। वहीं पर स्वामी अखण्डा नन्द जी के प्रस्ताव से रु05000/- की धनराशि "गीता ज्ञान यज्ञ" के लिए वचन दिया जिसे बाद में अदा किया।
1986	आश्विन शुक्ल 2	1929	37	-महात्मा गांधी का गोरखपुर आगमन एवं गीता प्रेस में आगमन.
	मार्गशीर्ष कृष्ण 6			-प्रातः सात बजे कन्या का जन्म.
	पौष कृष्ण 9			-श्री वियोगी हरि का गोरखपुर एवं पोद्दार जी भेंट.
	पौष शुक्ल 14			-प्रयाग के कुंभ में गीता ज्ञान यज्ञ का त्रिवेणी तट पर आयोजन में सम्मिलित.
				-मदन मोहन मालवीय द्वारा शुभारम्भ.
				-पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर की नियमित कथा में सम्मिलित हुए।
	फाल्गुन शुक्ल 1			-हिन्दी साहित्य सम्मेलन का गोरखपुर में वार्षिक अधिवेशन तथा साहित्यकारों का आतिथ्य-सत्कार.
				-साहब गंज गोरखपुर में प्लेग सेवा रोगियों प्राणपण सेवा शुश्रूषा.
1987	आषाढ़ शुक्ल 1	1930	38	-गोरखपुर में बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
1987	भाद्र कृष्ण 12	1930	38	-"रामायणांक" की सामग्री जुटाने हेतु परिवारों सहित यात्रा.
1988	चैत्र कृष्ण	नवम्बर 1931	39	-परमहंस विशुद्धानन्द जी का काशी में दर्शन.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र प्रविधि/	
	चैत्र कृष्ण 9			-श्री कृष्णांक की तैयारी हेतु व्रजभूमि गए ।
1989		1932	40	-गोरखपुर जेल में देवदास गांधी और कृष्ण कान्त मालवीय से भेंट एवं उनकी देखभाल.
	श्रावण शुक्ल 7			-देवदास गांधी को काशी पहुंचाने काशी गये।
	भाद्र कृष्ण 4			-बिड़ला बंधुओं से वियोगी हरि का परिचय एवं हरिजन सेवक निकालने की व्यवस्था.
	आश्विन कृष्ण 2			-गीता एवं रामायण की परीक्षा समिति की स्थापना.
[illegible]	आश्विन कृष्ण 3			-सेठ लक्ष्मीराम जी चूड़ीवाला के निमंत्रण पर लक्ष्मणगढ़ गए एवं धर्मसंन्यास की स्थापना की.
				-रतनगढ़ प्रवास के समय अण्डकोष में भीषण दर्द हुआ.
				-गीताप्रेस के कर्मचारियों द्वारा हड़ताल । पत्र द्वारा हड़ताल की समाप्ति .
	माघ शुक्ल 10			-कलकत्ता में अण्डकोष का ऑपरेशन हुआ.
	चैत्र कृष्ण 13			-गोरखपुर वापस लौट आए ।
1990	कार्तिक कृष्ण 7	1933	41	-नियम पालन में असावधानी बरतने के कारण साधन समिति भंग की गई ।
	माघ कृष्ण 2	1934	42	-श्री गौरी शंकर द्विवेदी के नेतृत्व में गीताप्रेस में हड़ताल.
	माघ शुक्ल 8	1934	42	-सदस्यों (साधन समिति) के अनुरोध पर साधन समिति की पुनर्स्थापना.
				-श्री चिम्मनलाल गोस्वामी का "कल्याण कल्पतरु" के संपादन कार्य हेतु गोरखपुर आगमन.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	प्रवृत्ति/
	चैत्र कृष्ण 9			-श्री कृष्णांक की तैयारी हेतु वृजभूमि गए ।
1989		1932	40	-गोरखपुर जेल में देवदास गांधी और कृष्ण कान्त मालवीय से भेंट एवं उनकी देखभाल.
	आषाढ़ शुक्ल 7			-देवदास गांधी को काशी पहुंचाने काशी गये।
	भाद्र कृष्ण 4			-बिड़ला बंधुओं से वियोगी हरि का परिचय एवं हरिजन सेवक निकालने की व्यवस्था.
	आश्विन कृष्ण 2			-गीता एवं रामायण की परीक्षा समिति की स्थापना.
[illegible]	आश्विन कृष्ण 3			-सेठ लच्छीराम जी चूड़ीवाला के निमंत्रण पर लक्ष्मणगढ़ गए एवं [illegible] की स्थापना की.
				-रतनगढ़ प्रवास के समय अण्डकोष में भीषण दर्द हुआ.
				-गीताप्रेस के कर्मचारियों द्वारा हड़ताल । पत्र द्वारा हड़ताल की समाप्ति .
	माघ शुक्ल 10			-कलकत्ता में अण्डकोष का ऑपरेशन हुआ.
	चैत्रकृष्ण 13			-गोरखपुर वापस लौट आए ।
1990	कार्तिक कृष्ण 7	1933	41	-नियम पालन में असावधानी बरतने के कारण साधन समिति भंग की गई ।
	माघ कृष्ण 2	1934	42	-श्री गौरी शंकर द्विवेदी के नेतृत्व में गीताप्रेस में हड़ताल.
	माघ शुक्ल 8	1934	42	-सदस्यों [साधन समिति] के अनुरोध पर साधन समिति की पुनर्स्थापना.
				-श्री चिम्मनलाल गोस्वामी का "कल्याण कल्पतरु" के संपादन कार्य हेतु गोरखपुर आगमन.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-रतनगढ़ में शिवशक्ति का साक्षात्कार
[illegible]	फाल्गुन कृष्ण 7	1934	42	-हरिबाबा (स्वामी स्वतः प्रकाश) का गोरखपुर आगमन.
	फाल्गुन कृष्ण 12	1934	42	-हरिबाबा के अनुरोध पर परिकरों के साथ भाई जी बांध उत्सव देखने गए .
1991	श्रावण भाद्र	1934	42	-गोरखपुर जिले में बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
	माघ शुक्ल	1934	42	-बिहार के प्रलयंकारी भूकम्प में पीड़ितों की सहायता.
		जनवरी 1935		-श्री राधाकृष्ण प्रेम भिखारी (श्री रोनाल्ड निक्सन) को [illegible] के दर्शन.
1992	वैशाख कृष्ण 8	1935	43	-श्री केशराव पाण्डेय (नागपुर निवासी) को "साधन पथ" नामक पुस्तक स्वप्न में मिली.
	भाद्र कृष्ण 14			-प्रभुदत्त ब्रह्मचारी द्वारा भगवन्नाम कीर्तन (झूंसी) में परिकरों सहित सम्मिलित हुए ।
		2 मई 1935		-सतना जिले की एक महिला को पोद्दार जी से उपदेश ग्रहण करने के लिए आकाशवाणी ने आदेश दिया ।
1993	आषाढ़ शुक्ल 11	1936	44	-संकीर्तन सप्ताह का गोरखपुर में प्रारम्भ.
	आषाढ़			-गोरखपुर में बाढ़ का प्रकोप.
	आषाढ़			-पं०नेहरू का बाढ़ निरीक्षण संबंध में गोरखपुर आगमन भाई जी ने उन्हें अपनी गाड़ी बरहज तक जाने के लिए दी.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
	श्रावण			-बाढ़ पीड़ितों की सहायता.
				-तत्कालीन कलेक्टर द्वारा "राय बहादुर" उपाधि का भाई जी को दिया जाना एवं भाई जी का विनम्रता पूर्वक उपाधि लेना अस्वीकार करना.
				-गीता वाटिका, गोरखपुर में.....
				-देवर्षि नारद एवं महर्षि अंगिरा से भाई जी को दर्शन एवं साक्षात्कार.
				-बम्बई के एक मित्र को स्वप्न में दर्शन एवं उपदेश.
	माघ कृष्ण 1,2			-पं0 मदनमोहन मालवीय का गोरखपुर आगमन एवं गीतावाटिका में निवास.
	शरद पूर्णिमा			-बाबा [illegible] का गोरखपुर आगमन.
1994	श्रावण शुक्ल 9	1937	45	-संपादकीय विभाग के सदस्यों के साथ रतनगढ़ के लिए प्रस्थान.
				-कल्याण के भावी विशेषांक संत अंक के संबंध में वार्ता करने हेतु सेठ जयदयाल जी गोयन्दका जी का रतनगढ़ आगमन.
				-"संत अंक" विशेषांक का प्रकाशन.
	माघ कृष्ण			-गोरखपुर जेल में देवदास गांधी से पत्र व्यवहार.
1995	कार्तिक कृष्ण	1938	46	-राजस्थान में भयंकर अकाल पड़ा.
	कार्तिक शुक्ल 8			-राजस्थान के अकाल पीड़ितों की सहायता.
1996	भाद्र शुक्ल 12	1939	47	-सेठ जी से अनुमति लेकर तीन महीने की एकान्त साधना के लिए दादरी[हरियाणा] प्रवास.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/आयु	
	चैत्र कृष्ण 2	25 मार्च 1940	48	-बाढ़-पीड़ितों की सहायता.
1997		1940	48	-बंगाल के अकाल पीड़ितों की सहायता -एकान्त साधना के लिये रतनगढ़ प्रवास.
1998		1941	49	-दादा श्री रामसनेही जी का गोरखपुर आगमन.
	मार्गशीर्ष शुक्ल 10			-पुत्री सुश्री सावित्रीबाई का विवाह.
	पौष शुक्ल 4	1942	50	-द्वितीय विश्व युद्ध से कलकत्ते से भागे हुए यात्रियों की रतनगढ़ स्टेशन पर सेवा व्यवस्था.
	पौष			-रतनगढ़ में वस्त्र दान यज्ञ का आयोजन.
1999	भाद्र कृष्ण 10	1942	50	-बीकानेर में अतिवृष्टि से पीड़ित जनता की सेवा.
	चैत्र कृष्ण 3	1942	51	-रतनगढ़ में प्रहर संकीर्तन एवं विष्णुयज्ञ का आयोजन.
2000	श्रावण	1943	51	-रतनगढ़ में भाई जी की बीमारी एवं चिकित्सा के लिए दिल्ली.
	कार्तिक			-भाई जी पुनः अस्वस्थ.
	मार्गशीर्ष शुक्ल 10			-रतनगढ़ से अजमेर की यात्रा की तथा डा० अम्बालाल के चिकित्सालय में गुदा के फोड़े का ऑपरेशन हुआ.
2001	पौष शुक्ल 15	1944	52	-"हिन्दू कोड बिल" के विरोध में एक अभियान चलाया.
2002	श्रावण	1945	53	-गीताप्रेस के कर्मचारियों की हड़ताल.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				—पोद्दार जी द्वारा ट्रस्टियों पर दबाव डालकर कर्मचारियों को कुछ आर्थिक सुविधाएँ दिलवाकर हड़ताल का समापन करवाया.
2003	श्रावण	1946	54	—गीताप्रेस के कर्मचारियों द्वारा प्रबंधकों को हड़ताल का नोटिस एवं पोद्दार जी द्वारा हड़ताल रोकने का असफल प्रयास.
	श्रावण	6जुलाई46		—गीता प्रेस अनिश्चित कालीन बंद.
[illegible]	आश्विन	अगस्त 46		—श्री पोद्दार जी के अनुरोध पर बाबा राघवदास जी की मध्यस्थता में हड़ताल समाप्त.
				—नोआखली काण्ड.
				—नोआखली काण्ड से पीड़ित हिन्दुओं की सहायता के लिए गीताप्रेस गोरखपुर सेवा मण्डल द्वारा उनकी व्यवस्था.
	मार्गशीर्ष			—नोआखली काण्ड अंक के रूप में पंचमाल्वीय अंक, मानवता, हिन्दू धर्म रक्षार्थ अनेक सुझाव एवं योजनाओं के प्रस्तुतीकरण सहित, प्रकाशन.
2006	मार्गशीर्ष	1949	57	—हिन्दू धर्म रक्षा अभियान का सूत्रपात.
2008	पौष शुक्ल	1950	58	—रामजन्मभूमि, अयोध्या में मूर्तिप्रकट होने के अनन्तर अखण्ड कीर्तन की व्यवस्था.
2008	चैत्र		58	—रतनगढ़ में जीव दया की घटना.
2008	तिलक जयंती	1951	59	—तिलक जयंती के पुण्य पर्व पर गोरखपुर में कुष्ठ सेवाश्रम की स्थापना.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
		1952		-राजस्थान में भयंकर अकाल पड़ा श्री पोद्दार जी द्वारा अकाल पीड़ितों की व्यापक सहायता.
2010	वैशाख कृष्ण 6	1953	61	-गो सेवक परिषद्, दिल्ली के अध्यक्ष पद से भाषण. -प्रयाग कुंभ पर्व पर सत्संग एवं प्रवचन.
	ज्येष्ठ कृष्ण 2			-श्री पोद्दार जी द्वारा श्री मोहन जी की पारिवारिक समस्याओं के निराकरण हेतु सुझावों सहित एक पत्र लिखा. -"कुष्ठ सेवाश्रम" का पंजीकरण करा करके उसका स्थायीकरण किया गया.
2011		1954	62	-उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल के बाढ़-पीड़ितों के प्रति सहायता कार्य.
	आषाढ़ शुक्ल 13	13जुलाई54		-मोटरबोट में नाम जप स्मरण का अद्भुत चमत्कार.
2012	चैत्र, वैशाख	1955	63	-गीताप्रेस के नए द्वार का निर्माण कार्य पूर्ण हुआ.
	वैशाख शुक्ल 8	1955	63	-राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी द्वारा गीताप्रेस के नये प्रवेशद्वार एवं लीलाचि मंदिर का उद्घाटन. -पूर्वांचल में बाढ़ का प्रकोप पोद्दार जी द्वारा पीड़ितों की सहायता. -तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री संपूर्णानन्द जी द्वारा श्री पोद्दार जी का बाढ़पीड़ितों

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				-के सहायतार्थ 2000/-रुपये भिजवाए.
	भाद्र शुक्ल 3	20अगस्त55		-केन्द्रीय सरकार के गृहमंत्री श्रीगोविन्द वल्लभ पंत का गोरखपुर आगमन एवं सरकार की ओर से 5000/-रुपये बाढ़ पीड़ितों के लिए दिए गए.
				-भाई जी सुदर्शन चक्र की रक्षा संबंधी घटना.
				-गोरखपुर में किराये के भवन में "मूक बधिर विद्यालय" की स्थापना.
	पौष शुक्ल 6			-वार्षिक अंक की सामग्री जुटाने हेतु बनारस यात्रा.
				-तीर्थों के भ्रमण हेतु स्पेशल ट्रेन से यात्रा.
2013	वैशाख कृष्ण 1	1956	65	-लगभग 4 महीनों के भ्रमण के पश्चात् स्पेशलतीर्थ यात्रादल की गोरखपुर वापसी.
	आषाढ़ कृष्ण 13			-स्वास्थ्य लाभ हेतु स्वर्गाश्रम चले गए।
				-अभीष्ट सिद्धि का साक्षात दर्शन.
2015	भाद्र कृष्ण 8	1958	66	-श्रीकृष्ण जन्मभूमि मथुरा के मंदिर उद्घाटन उत्सव में सम्मलित.
				-गीता मंदिर का निर्माण कार्य करवाना.
2016	माघ कृष्ण	1960	68	-श्री पोद्दार जी की कलकत्ता यात्रा.
	माघ कृष्ण 9			-कलकत्ता में गोविन्द भवन का शिलान्यास.
	माघ शुक्ल 9			-एक स्वजन के विवाह के संबंध में कलकत्ता यात्रा पुनः हुई.
	माघ शुक्ल			-सेठ जयदयाल जी गोयन्दका के आँख ऑपरेशन होने की बात मालूम होते ही बाँकुड़ा प्रस्थान

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
	माघ शुक्ल			-स्वजनों के अनुरोध पर बाँकुड़ा से शिमलापाल की दूसरी बार यात्रा अपने परिजनों के साथ की ।
2019		1962	70	-विशाल श्री कृष्ण चबूतरे का निर्माण करवाया.
2021	माघ कृष्ण 10	27जनवरी 1965	72	-"भारतीय चतुर्धाम वेद-भवन-न्यास" के लिए श्री गोरखनाथ मंदिर में विचार गोष्ठी का आयोजन उसमें सम्मिलित. -"भारतीय चतुर्धाम वेद-भवन-न्यास की स्थापना में सहयोग.
	माघ शुक्ल 10	11फर01965		-श्री कृष्ण जन्म भूमि मथुरा में "विशाल 'भागवत भवन" की योजना एवं शिलान्यास".
	ज्येष्ठ शुक्ल	20जून1965		-श्रीसालासर जी(राजस्थान)के हनुमान जी मंदिर के पूजा बर्तनों आदि की व्यवस्था. -"मूक बधिर विद्यालय"के लिए पृथक् भवन का निर्माण करवाया.
2023			74	-बिहार में अकाल पीड़ितों की सेवा सहायता
		25मई66		-गोहत्या पर प्रतिबन्ध एवं साधुओं से सद्व्यवहार के लिए श्री पोद्दार जी ने पत्र द्वारा सरकार से अपील की.
		28जून		-सरकार द्वारा गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने हेतु पोद्दार जी द्वारा की गई अपील पर ध्यान न देकर उपेक्षापूर्ण करने पर खेद प्रकट लिखा जिसे "अमेरिकनएक्सप्रेस"ने प्रकाशित भी किया.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
		3जुलाई		-गौभक्तों को एक मंच पर लाने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्कालीन संचालक श्री मा०स० गोलवलकर को पत्र लिखा.
		अगस्त		-परित्यक्त बालिका [सरोज उम्र लगभग 16-17वर्ष] की देखभाल.
		30अगस्त		-बेतियाहाता, गोरखपुर में श्री हनुमान मंदिर का शिलान्यास.
		2सितम्बर		-परित्यक्त बालिका [सरोज] को उसके परिवार-जनों को बुलाकर वापस उनके साथ घर भेजा ।
		7नवम्बर	75	-गोहत्या विरोध में आंदोलनकारियों पर लाठी चार्ज एवं गोलीबार की द्वारा अभियान चलाया जाना.
		नवम्बर, दि०		-सर्वदलीय गोरक्षा आन्दोलन समिति का गठन किया.
2024		1967	75	-तिहाड़ काण्ड, जेल पीड़ितों की सहायता. -गोहत्या विरोधी आन्दोलन जोरों पर था दिन भर की दौड़ धूप के बाद भी वे रात में लगभग 10बजे ध्यान समाधि में लीन हो जाते थे ।
		24सितम्बर	76	-गोरखपुर से उपरामता सम्बन्धी विचारों वाला एक पत्र लिखा.
2025		1968-68	76	-राजस्थान में भयंकर सूखा पड़ा पशुओं के लिए चारे एवं पिंजरापोल की व्यवस्था की

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
				एवं दुःखी लोगों की व्यवस्था भी की।
		3जून68		-इन सलाहों से "कल्याण" के सम्पादन में विघ्न पड़ता है वह चेतना शून्य रहती है ऐसा विचार एवं संपादन विभाग के वरिष्ठ सदस्य को भेजे गये पत्र से मालूम होता है।
2025-26		1969		-गीताभवन, गोरखपुर से वृत्तियों के शून्य होने की प्रक्रिया तीव्र होने की सूचना सहित एक पत्र लिखा.
2025-26		1969		-राजस्थान में भीषण अकाल पड़ा। अकाल पीड़ितों एवं गोवंश की प्राणरक्षार्थ वृहद् सेवायोजना। बीकानेर में गायों की सेवा का कार्य प्रारम्भ। अपनी धर्मपत्नी से 5000/-रु. लेकर यह कार्य प्रारम्भ किया। बाद में लगभग 15लाख रुपये व्यय हुए।
2026		1969		-आसाम में तूफानग्रस्त क्षेत्रों का दौरा एवं पीड़ितों की सेवा एवं यथाशक्ति सहायता।
2027	आषाढ़ शुक्ल 5		76	-गीताभवन स्वर्गाश्रम से "मनुष्य को भगवद्-प्राप्ति के लिए भेजा जाता है" आराम करन
		1जून70	76	-गीतावाटिका, गोरखपुर से "त्याग प्रेम की आधार भूमि है" इस विचार पत्र लिखना.
		8 जून		-तत्कालीन अव्यवस्था का जिक्र करते हुए स्वर्गाश्रम के तत्कालीन महामंत्री श्री देवधर शर्मा को पत्र.

संवत्	तिथि	सन्	वर्ष/उम्र	
		21जून	-	—गीता वाटिका, गोरखपुर से "मंगल साधन न हो सके तो मंगल विचार में लीन रहिए" आशय का पत्र.
		नवम्बर	77	—पेट में शूल(वायु गोले) का भीषण दर्द हुआ.
		दिसम्बर	77	—पं० गोपीनाथ कविराज को "मेरे अंतर मानस में दिव्य-भगवल्लीलाएँ चलने लगती हैं" आशय का पत्र लिखा.
				—पूर्वी पाकिस्तान के तूफान पीड़ितों की सहायता.
2027		16फरवरी 1971	77	—पीलिया का अनुभव, गंभीर रूप से अस्वस्थ.
				—सन् 1928 से लेकर अब तक श्री पोद्दार जी का लेखन एवं सम्पादनकार्य चलता रहा.
	चैत कृष्ण 10	22मार्च1971	77	—गीतावाटिका, गोरखपुर में प्रातः 7बजकर 55 मिनट पर महाप्रयाण.

-: सहायक ग्रन्थ :-

****

संस्कृत के ग्रन्थ

उपनिषद् -

{1} ईशादिनौ उपनिषद्, व्याख्या0 श्री हरिकृष्ण दास गोयन्दका, गीताप्रेस गोरखपुर सं2043.

{2} कठोपनिषद्, शंकर भाष्य, गीताप्रेस गोरखपुर : संवत् 2041.

{3} तैत्तिरीयोपनिषद्, शंकर भाष्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

{4} माण्डूक्योपनिषद्, शांकर भाष्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

योगदर्शन -

{1} पातंजल योगप्रदीप, स्वामी ओमानन्द तीर्थ, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2030.

{2} योगदर्शन, व्याख्या0 श्री हरिकृष्ण दास गोयन्दका, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत 2040.

गीता -

{1} श्रीमद्भगवद्गीता {पदच्छेद अन्वय एवं भाषाटीका} गीताप्रेस, गोरखपुर, संवत् 2038.

{2} श्रीमद्भगवद्गीता, {तत्त्व विवेचना हिन्दी टीका} टीका0 श्री जयदयाल जी गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2040.

{3} श्रीमद्भगवद्गीता, शांकर भाष्य, टीका0 श्री हरिकृष्ण दास गोयंदका, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2041.

[4] श्रीमद्भगवद्गीता, [साधक संजीवनी हिन्दी टीका] टीका० स्वामी रामसुखदास, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2042.

[5] श्रीमद्भगवद्गीता, [मधुसूदनी संस्कृत हिन्दी व्याख्या, व्याख्या0 स्वामी सनातन देव, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, सं0 2039.

[6] श्रीमद्भागवद्गीता रहस्य, बालगंगाधर तिलक, अनु0 श्री0 माधव रावसप्रे0 दी0 तिलक, पूना, सन् 1984.

पुराण -

श्रीमद्भागवत, [दो खण्डों में] हिन्दी टीका सहित, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2043.

रामायण एवं महाभारत -

[1] श्रीमद् वाल्मीकीयरामायण, अनु0 पं0 राम नारायण दत्त शास्त्री, गीताप्रेस गोरखपुर, [दो भागों में] संवत् 2042.

[2] संक्षिप्त महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर, [दो भाग में] संवत् 2040.

हिन्दी के ग्रन्थ

[1] अग्रवाल, श्रीकृष्णचन्द्र एवं श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, श्रीराधाकृष्ण साधना केन्द्र के विकास हेतु श्रीमद्भागवत परायण एवं कथा यज्ञ स्मारिका, श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार स्मारक समिति, गीतावाटिका, गोरखपुर.

[2] उपाध्याय, देवराज [सं0] साहित्यिक शोध के सिद्धान्त और समस्यायें, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, सन् 1967.

[3] कविराज, डा0 गोपीनाथ एवं डा0 भगवती प्रसाद सिंह [सं0] भाई जी पावन स्मरण, राधामाधव सेवा संस्थान, गोरखपुर.

[4] गुप्त, डा0 सदानन्द, "कल्याण सम्पादक]-श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, गोरखपुर विश्वविद्यालय से पी0एच0डी0 उपाधि हेतु शोध-प्रबन्ध.

[सन् 1977] अप्रकाशित.

[5] गोस्वामी, चिम्मनलाल, श्री राधामाधव रस सुधा [षोडश गीत], सानुवाद, राधामाधव प्रकाशन, बीकानेर, सं0 2023.

[6] गोस्वामी, तुलसीदास, श्री रामचरितमानस, टीका0 हनुमानप्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2042.

[7] .. .. दोहावली, अनु0 श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2040.

[8] .. .. कवितावली, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

[9] .. .. गीतावली, गीता प्रेस, गोरखपुर, सं0 2041.

[10] .. .. विनयपत्रिका, गीता प्रेस गोरखपुर, सं02035.

[11] .. .. वैराग्य संदीपिनी, गीताप्रेस गोरखपुर सं02035.

[12] चौधरी, रामजीवन, श्रद्धा सुमन. , मित्र संगम, इलाहाबाद, सं02031.

[13] जायसवाल, डा0 सीताराम, मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा, हिन्दी समिति, लखनऊ, सन् 1963.

[14] जायसवाल, डा0 सीताराम, व्यक्तित्व मनोविज्ञान, उ0प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, सन् 1974.

[15] जालान, विजय कुमार एवं शर्मा, जगदीश प्रसाद [सं0] निर्माल्य मारवाड़ी विकास संघ गोरखपुर प्रकाशन सन् 1972. [स्मारिका]

[16] डालमिया, राम निवास, एवं शर्मा, जगदीशप्रसाद [सं0], श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार और अवसान के सहायतार्थ आयोजित श्रीमद्भागवत पारायण कथा-यज्ञ स्मारिका, श्री हनुमानप्रसाद स्मारक समिति, गोरखपुर.

[17] दास, बालकृष्ण, श्री पोद्दार जी-एक लोकोत्तर व्यक्तित्व, प्रकाशक श्री राधाकृष्ण साधना मंदिर, गीता वाटिका, गोरखपुर, सं0 2042.

[18] तिवारी, गंभीरचन्द्र जी, भाई जी श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार : संक्षिप्त जीवन परिचय, साहित्य मन्दिर, गीता वाटिका, गोरखपुर सं0 2041.

[19] पोद्दार, हनुमानप्रसाद, अमृतकण, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2039.

[20] .. .. आनन्द की लहरें, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2040.

(21) पोद्दार, हनुमानप्रसाद, उपनिषदों के चौदह रत्न, गीताप्रेस गोरखपुर, 204

(22) .. .. कल्याण कुंज भाग-1, गीताप्रेस गोरखपुर, 2025.

(23) .. .. भाग-2, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02040.

(24) .. .. भाग-3, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02043.

(25) .. .. भाग-4, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02026.

(26) .. .. भाग-5, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02026.

(27) .. .. भाग-6, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02026.

(28) .. .. कल्याणकारी आचरण, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02036.

(29) .. .. गीता चिंतन, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2043.

(30) .. .. गीता में विश्वरूप दर्शन, गोरखपुर, सं0 2021.

(31) .. .. गौ का भारत का अंक, एवं गाय का माहात्म्य,
गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2038.

(32) .. .. गोपीप्रेम, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2031.

(33) .. .. जीवन में उतारने की सोलह बातें, गीताप्रेस गोरखपुर
संवत् 2033.

(34) .. .. दिव्य संदेश, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2040.

(35) .. .. दीन-दुखियों के प्रति कर्तव्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02037

(36) .. .. दैनिक कल्याण सूत्र, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2040.

(37) .. .. नारी शिक्षा, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2040.

(38) .. .. पद रत्नाकर, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2041.

(39) .. .. मधुकर, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2035.

(40) .. .. प्रार्थना, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

(41) .. .. प्रार्थना पीयूष, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2038.

(42) .. .. प्रेम-दर्शन, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2039.

(43) .. .. परमार्थ की मन्दाकिनी, गीता वाटिका, गोरखपुर, सं02034

(44) .. .. वर्तमान शिक्षा, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2035.

(45) .. .. व्यवहार और परमार्थ, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2036.

(46) पोद्दार, हनुमानप्रसाद, ब्रह्मचर्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2041

(47) .. .. भगवच्चर्चा भाग-1, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2035.

(48) .. .. .. भाग-2, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2036.

(49) .. .. .. भाग-3, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2041.

(50) .. .. .. भाग-4, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2042.

(51) .. .. .. भाग-5, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2042.

(52) .. .. .. भाग-6, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2042.

(53) .. .. भगवन्नाम, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2043.

(54) .. .. भगवन्नामचिन्तन, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2043.

(55) .. .. भवरोग की रामबाण दवा, गीताप्रेसगोरखपुर सं0 2039.

(56) .. .. मधुर भाग-1, गीताप्रेस गोरखपुर. सं0 2025.

(57) .. .. .. भाग-2, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2025.

(58) .. .. मन को वश में करने के कुछ उपाय, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

(59) .. .. मनुष्य सर्वप्रिय और सफल जीवन कैसे बने, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2021.

(60) .. .. मानव जीवन का लक्ष्य, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02039.

(61) .. .. मानव धर्म, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2039.

(62) .. .. रस और भाव, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2022.

(63) .. .. लोक परलोक का सुधार (काम के पत्र) भाग-1, गीताप्रेसगोरखपुर, सं0 2042.

(64) .. .. लोक परलोक का सुधार (काम के पत्र) भाग-2 गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

(65) .. .. लोक परलोक का सुधार (काम के पत्र) भाग-3 गीता प्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

(66) .. .. लोक परलोक का सुधार (काम के पत्र) भाग-4 गीता प्रेस गोरखपुर सं0 2042.

{67} पोद्दार, हनुमानप्रसाद, लोक परलोक का सुधार {काम के पत्र} भाग-5
गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2042.

{68} .. .. वर्तमान शिक्षा, गीताप्रेसगोरखपुर, सं0 2035.

{69} .. .. व्यवहार और परमार्थ, गीताप्रेस गोरखपुर, सं020[illegible]

{70} .. .. विवाह में दहेज, गीताप्रेस गोरखपुर सं0 2036.

{71} .. .. श्रीराधामाधव चिन्तन, गीताप्रेस गोरखपुर
सं0 2039.

{72} .. .. श्री राधामाधव रस-सुधा, {षोडश गीत}
गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2043.

{73} .. .. श्रीराधा जन्माष्टमी महोत्सव, गीताप्रेस
गोरखपुर, सं0 2022.

{74} .. .. स्त्रीधर्म प्रश्नोत्तरी, गीताप्रेस गोरखपुर सं02040.

{75} .. .. सत्संग के बिखरे मोती, गीताप्रेस गोरखपुर
सं0 2035.

{76} .. .. साधन पथ, गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2037.

{77} .. .. समाज किस ओर जा रहा है, गीताप्रेस वाटिका,
गोरखपुर, सं0 2038.

{78} .. .. सुख शान्ति का मार्ग, गीताप्रेस गोरखपुर सं0203[illegible]

{79} .. .. सुखी बनो, गीता वाटिका, गोरखपुर, सं02036.

{80} .. .. सुखी बनने के उपाय, गीताप्रेस गोरखपुर, सं02041.

{81} .. .. सिनेमा, मनोरंजन या विनाश का साधन,
गीताप्रेस, गोरखपुर, सं0 2042.

{82} झंवर, राधेश्याम, माँ और बाबू जी, आर्यावर्त प्रकाशन कलकत्ता,
सं0 2024.

{83} .. .. रससिद्ध सन्त श्री पोद्दार जी, श्रीराधाकृष्ण
साधना मन्दिर, गीतावाटिका, गोरखपुर, सं02042

{84} प्रकाश, डा0 कृष्णा, श्री पोद्दार जी का कवि साहित्य-[illegible]

{84} अध्ययन, गोरखपुर विश्वविद्यालय से पी०एच०डी० उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध, सन् 19 अप्रकाशित.

{85} महात्मा गांधी, अनासक्ति योग, नवजीवन, प्रकाशन, सन् 1984.

{86} रावत, चन्द्रभान एवं खण्डेलवाल, राजकुमार, शोध प्रविधि और प्रक्रिया जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सन् 1989.

{87} वर्मा, जगदीशचन्द्र, व्यक्तित्व और विकास, सौभाग्य प्रकाशन, दिल्ली, सन् 1979.

{88} वर्मा, बृजलाल, आधुनिक भारत के निर्माता-श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, सन् 1984.

{89} वर्मा, डा०रामचन्द्र, वृहद् हिन्दी शब्द सागर, काशी नागरी प्रचारणी सभा, सं०

{90} वर्मा, किरणचन्द्र, केशवदास; जीवनी कला और कृतित्व, भारतीय साहित्य मण्डल, दिल्ली, सन् 1961.

{91} स्वामी, अखण्डानन्द सरस्वती, दो आध्यात्मिक महाविभूतियों के प्रेरक प्रसंग, श्रीकृष्ण जन्म स्थान सेवासंघ, मथुरा, सन्-1977.

{92} सिंह, चन्द्र मोहन, कबीर:व्यक्तित्व एवं कृतित्व, ज्ञान लोक, इलाहाबाद सन् 1972.

{93} सिंह, भगवती प्रसाद, कल्याणपथ,: निर्माता और राही, राधामाधव, सेवा संस्थान, गीतावाटिका, गोरखपुर, सं० 2037.

{94} ,, ,, साहित्य और संस्कृति: कुछ अन्तर यात्रायें, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, सन् 1980.

{95} ,, ,, साहित्य सुधा, साहित्य मंदिर, गीता वाटिका, गोरखपुर, सं० 2045.

{96} सिंह, डा०, रामलाल, तुलसी काव्य दर्शन, लोक भारती, इलाहाबाद सन् 197

{97} सिन्हा, डा० सावित्री, नन्ददास : जीवन और काव्य , शोध प्रबन्ध, प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1978.

{98} सत्यम, मनमोहन, हिन्दी शोध तन्त्र की रूपरेखा, पंचशील जयपुर, सन् 1979.

पत्रिकाएँ

[1] आनन्द बोध, सं0 स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती, स्वामी, अखण्डानंद सरस्वती, सेवा संस्थान, वाराणसी, सितम्बर 1986.

[2] कल्याण, सम्पादक हनुमानप्रसाद पोद्दार, प्रारम्भ से अब तक के 44 विशेषांक एवं कल्याण के अंक.

[3] गोधन, सम्पादक श्री विशम्भर प्रसाद शर्मा, श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार स्मृति अंक, वर्ष- 15, अंक-7, जुलाई,1971. गोधन कार्यालय,दिल्ली.

[4] विनोबा चिंतन,[भागवत धर्म मीमांसा भाग-1], अंक 39, अप्रैल,1969. सर्व सेवासंघ प्रकाशन, अहमदाबाद,

[6] विनोबा चिंतन,[भागवत धर्म मीमांसा भाग-2], अंक 40-41, मई-जून 1969, सर्व सेवासंघ प्रकाशन, अहमदाबाद.

[7] रस वृन्दावन, सम्पादक, विष्णुकान्त शास्त्री, श्री राधामाधव संकीर्तन मण्डल, नई दिल्ली, वर्ष-1, अंक-8, अक्तूबर, 1979.

[8] मातंग सुधा, प्रारम्भ से फरवरी 1987 तक के सभी अंक, गीतावाटिका गोरखपुर.

-----------0-----------